BNHN401DCT

हिन्दी गद्य साहित्य

एन ई पी -2020 पाठ्यक्रम पर आधारित

बी. ए.(हिन्दी)

(चतुर्थ सेमेस्टर के लिए)

दूरस्थ एवं ऑनलाइन शिक्षा केंद्र

मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी

हैदराबाद-32, तेलंगाना, भारत

Copyright © 2025, Maulana Azad National Urdu University, Hyderabad
All right reserved. No part of this publication may be reproduced or transmitted in any form or by any means, electronically or mechanically, including photocopying, recording or any information storage or retrieval system, without prior permission in writing form the publisher (registrar@manuu.edu.in)

ISBN : 978-81-68324-33-6
Course : Hindi Gadya Sahitya (NEP)
First Edition : August 2026
Copies : 300
Price : 380/- (The price of the book is included in admission fee of distance mode students)

Course Coordinator

Dr. Aftab Alam Baig
Assistant Registrar, CDOE, MANUU

Editorial Board/Editors

Prof. Rishabha Deo Sharma
Former Head, P.G. and Research Institute,
Dakshin Bharat Hindi Prachar Sabha,
Hyderabad
Consultant (Hindi), CDOE, MANUU

Prof. Shyamrao Rathod
Professor, Department of Hindi
EFL University, Hyderabad

Dr. Gurramkonda Neeraja
Associate Professor, PGRI,
DB Hindi Prachar Sabha, Chennai

Dr. Aftab Alam Baig
Assistant Registrar, CDOE, MANUU

Dr. Wajada Ishrat
Assistant Professor (Hindi)
CDOE, MANUU

Dr. L. Anil
Assistant Professor (Cont.)
CDOE, MANUU

Production

Prof. Nikhath Jahan, Professor (Urdu), CDOE, MANUU

Mr. P Habibulla, Assistant Registrar, Purchase & Stores Section, MANUU

Dr. Mohd Akmal Khan, Assistant Professor (C), CDOE, MANUU

Mohd Abdul Naseer, Section Officer, CDOE, MANUU

Shaik Ismail, UDC, CDOE, MANUU

Syed Faheemuddin, LDC, Purchase & Stores Section, MANUU

On behalf of the Registrar, Published by:

Centre for Distance and Online Education

Maulana Azad National Urdu University
Gachibowli, Hyderabad-500032 (TG), India
*Director:*dir.dde@manuu.edu.in*Publication:*ddepublication@manuu.edu.in
Phone number: 040-23008314 Website: manuu.edu.in

CRC Prepared by Dr. L. Anil, Faculty of Hindi, CDOE, MANUU
Printed at : Print Time & Business Enterprises, Hyderabad

विषयानुक्रमणिका

संदेश		कुलपति	5
संदेश		निदेशक	6
भूमिका		पाठ्यक्रम–समन्वयक	7
क्र. सं.	**इकाई**	**लेखक**	**पृ. सं.**
1	आधुनिक हिंदी गद्य का विकास	डॉ. गुर्रमकोंडा नीरजा	9
2	उपन्यास, कहानी एवं निबंध: परिभाषा, स्वरुप और तत्व	डॉ. एल. अनिल	23
3	जैनेन्द्र : एक परिचय	प्रो. गोपाल शर्मा	45
4	'त्यागपत्र' (जैनेंद्र) : तात्विक विवेचन	प्रो. गोपाल शर्मा	57
5	प्रेमचंद : एक परिचय	डॉ. डॉली	75
6	'नमक का दरोगा' (प्रेमचंद) : तात्विक विश्लेषण	डॉ. डॉली	90
7	जयशंकर प्रसाद : एक परिचय	डॉ. सुपर्णा मुखर्जी	102
8	'आकाश दीप' (जयशंकर प्रसाद) : तात्विक विवेचन	डॉ. सुपर्णा मुखर्जी	117
9	यशपाल : एक परिचय	डॉ. वाजदा इशरत	131
10	'परदा' कहानी : तात्विक विवेचन	डॉ. वाजदा इशरत	143
11	उषा प्रियंवदा : एक परिचय	डॉ. अविनाश के	154
12	'वापसी' (उषा प्रियंवदा): तात्विक विवेचन	डॉ. अविनाश के	167
13	रामचंद्र शुक्ल : एक परिचय	डॉ. चंदन कुमारी	182
14	'लोभ और प्रीति' (रामचंद्र शुक्ल) कि विवेचना	डॉ. चंदन कुमारी	196
15	हजारी प्रसाद द्विवेदी : एक परिचय	डॉ.एन लक्ष्मीप्रिया	210
16	'कुटज' (हजारी प्रसाद द्विवेदी) कि विवेचना	डॉ.एन लक्ष्मीप्रिया	225
	परीक्षा प्रश्न पत्र का नमूना		240

लेखक विविरण

डॉ. गुर्रमकोंडा नीरजा, एसोसिएट प्रोफेसर, उच्च शिक्षा और शोध संस्थान, दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, चेन्नै	Dr. Gurramkonda Neeraja, Associate Professor, Higher Education and Research Institution, Dakshin Bharat Hindi Prachar Sabha, Chennai
डॉ. एल. अनिल. असिस्टेंट प्रोफेसर (संविदा), दूरस्थ एवं ऑनलाइन शिक्षा केंद्र, हैदराबाद	Dr. L. Anil, Assistant Professor (C) CDOE , MANUU
प्रो. गोपाल शर्मा, पूर्व प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, भाषा विज्ञान विभाग, अरबा मींच विश्वविद्यालय, इथोपिया	Prof. Gopal Sharma, Former Professor and Head, Dept. of Linguistics, Araba Minch University, Ethiopia
डॉ. डॉली, असिस्टेंट प्रोफेसर, गुरुनानक कॉलेज, चेन्नै, तमिलनाडु	Dr. Dolly, Assistant Professor, Gurunanak College, Chennai
डॉ. सुपर्णा मुखर्जी, प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, भवन्स विवेकानंद डिग्री कॉलेज, सैनिकपुरी, हैदराबाद.	Dr. Suparna Mukharjee, Lecturer, Bhavan's Vivekananda College, Sainikpuri, Hyderabad
डॉ. वाजदा इशरत, असिस्टेंट प्रोफेसर (हिन्दी), दूरस्थ एवं ऑनलाइन शिक्षा केंद्र, मानू	Dr. Wajada Ishrat, Assistant Professor (Hindi) CDOE , MANUU
डॉ. अविनाश के. असिस्टेंट प्रोफेसर (संविदा), हिंदी विभाग, डॉ. बी. आर. आंबेडकर सार्वत्रिक विश्वविद्यालय हैदराबाद.	Dr. Avinash K, Assistant Professor (Contractual) Dept. of Hindi, Dr. B. R. Ambedkar open University, Hyderabd
डॉ. चंदन कुमारी, पूर्व प्राध्यापक, हिंदी विभाग, भवन्स श्री ए. के. दोषी महिला कॉलेज, जामनगर	Dr. Chandan Kumari, Former Lecturer, Dept. of Hindi, Bhavans Shree A. K. Doshi Mahila College, Jamnagar
डॉ. एन. लक्ष्मीप्रिया, प्राध्यापक (हिन्दी), महात्मा गांधी सरकारी कॉलेज, मायाबंदर (अंडमान निकोबार)	Dr. N. Lakshmipriya, Asst. Prof., Mahatma Gandhi Govt College, Maya Bandar (Adaman Nicobar)

प्रूफ रीडर (Proof Readers) :

1. डॉ. एल. अनिल, असिस्टेंट प्रोफेसर (सं), दूरस्थ एवं ऑनलाइन शिक्षा केंद्र, हैदराबाद
2. डॉ. वाजदा इशरत, असिस्टेंट प्रोफेसर, दूरस्थ एवं ऑनलाइन शिक्षा केंद्र, हैदराबाद
3. डॉ. आफ़ताब आलम बेग, असिस्टेंट रजिस्ट्रार, दूरस्थ एवं ऑनलाइन शिक्षा केंद्र, हैदराबाद

मुख पृष्ठ (Title Page) : श्री. इब्राहीम अकरम सिद्दीकी

संदेश

मौलाना आज़ाद राष्ट्रीय उर्दू विश्वविद्यालय की स्थापना 1998 में संसद के एक अधिनियम द्वारा की गई थी। यह एक केंद्रीय विश्वविद्यालय है जिसे NAAC द्वारा ग्रेड A+ प्रदान किया गया है। विश्वविद्यालय का उद्देश्य है, 1. उर्दू भाषा का प्रचार-प्रसार, 2. उर्दू माध्यम में व्यावसायिक और तकनीकी शिक्षा को सरल भाषा में उपलब्ध कराना, 3. पारंपरिक और दूरस्थ शिक्षा माध्यमों के द्वारा शिक्षा प्रदान करना, 4. महिलाओं की शिक्षा पर विशेष ध्यान देना। ये विशेषताएँ इस केंद्रीय विश्वविद्यालय को अन्य सभी केंद्रीय विश्वविद्यालयों से अलग और विशिष्ट बनाती हैं। राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 में भी मातृभाषाओं और क्षेत्रीय भाषाओं में शिक्षा प्राप्त करने पर विशेष बल दिया गया है।

उर्दू माध्यम से ज्ञान प्रसार का मुख्य उद्देश्य यह है कि उर्दू जानने वाले समुदाय को समकालीन ज्ञान और विभिन्न विषयों तक सहज पहुँच मिल सके। लंबे समय तक उर्दू में पाठ्य सामग्री की कमी रही है। अब उर्दू विश्वविद्यालय के पास उर्दू में 350 से अधिक पुस्तकों का भंडार है, और यह संख्या हर सेमेस्टर के साथ बढ़ती जा रही है।

उर्दू विश्वविद्यालय को यह गर्व है कि वह राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 के अनुसार मातृभाषा/घरेलू भाषा में सामग्री उपलब्ध कराने के राष्ट्रीय मिशन का हिस्सा है। इसके परिणामस्वरूप, उर्दू भाषी समुदाय अब अद्यतन ज्ञान, उभरते हुए क्षेत्रों की जानकारी और मौजूदा विषयों में नवीन ज्ञान प्राप्त करने में पिछड़ा हुआ नहीं रह गया है, क्योंकि अब उर्दू में पढ़ने योग्य सामग्री उपलब्ध है। इन ज्ञान क्षेत्रों से संबंधित विषय-वस्तु की उपलब्धता ने ज्ञान प्राप्त करने के प्रति एक नई जागरूकता उत्पन्न की है, जो उर्दू जानने वाले समुदाय की बौद्धिक प्रगति पर महत्वपूर्ण प्रभाव डाल सकती है।

दूरस्थ एवं ऑनलाइन शिक्षार्थियों के लिए शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को सुगम बनाने हेतु, विश्वविद्यालय का दूरस्थ एवं ऑनलाइन शिक्षा केंद्र संबंधित विषयों में स्व-अध्ययन सामग्री तैयार करना सुनिश्चित करता है। विश्वविद्यालय दूरस्थ एवं ऑनलाइन शिक्षा के छात्रों को यह स्व-अध्ययन सामग्री नि:शुल्क प्रदान करता है। यही सामग्री ज्ञान प्राप्त करने में रुचि रखने वाले किसी भी व्यक्ति के लिए नाममात्र मूल्य पर भी उपलब्ध है। शिक्षण तक पहुँच को और अधिक व्यापक बनाने के उद्देश्य से उर्दू/हिंदी/अंग्रेज़ी/अरबी में स्व-अध्ययन सामग्री(eSLM) विश्वविद्यालय की वेबसाइट से नि:शुल्क डाउनलोड की जा सकती है।

मुझे अत्यंत हर्ष हो रहा है कि संबंधित संकाय के परिश्रम और लेखकों के पूर्ण सहयोग से चारवर्षीय स्नातक (4YUG) कार्यक्रम के अंतर्गत बी.ए.(आनर्स), बी. एस. सी.(आनर्स) और बी.काम. (आनर्स) पाठ्यक्रमों के लिए पुस्तकों के प्रकाशन की प्रक्रिया बड़े पैमाने पर आरंभ हो चुकी है। दूरस्थ एवं ऑनलाइन शिक्षा प्राप्त करने वाले छात्रों को सुविधा प्रदान करने हेतु स्व-अध्ययन सामग्री(Self-Learning Material) की तैयारी और प्रकाशन की प्रक्रिया विश्वविद्यालय के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है।

मेरा विश्वास है कि हम अपनी स्व-अध्ययन सामग्री के माध्यम से एक व्यापक समुदाय की आवश्यकताओं को पूरा कर सकेंगे और इस विश्वविद्यालय के उद्देश्य को सफलतापूर्वक निभाते हुए देश में अपनी उपस्थिति को सार्थक सिद्ध कर पाएँगे। मैं विश्वविद्यालय से जुड़े सभी विद्यार्थियों को इस परिवार का अंग बनने के लिए हृदय से बधाई देता हूँ और यह विश्वास दिलाता हूँ कि मौलाना आज़ाद राष्ट्रीय उर्दू विश्वविद्यालय का शैक्षिक मिशन सदैव उनके लिए ज्ञान का मार्ग प्रशस्त करता रहेगा। शुभकामनाओं सहित!

प्रो. सैयद ऐनुल हसन

कुलपति

संदेश

वर्तमान युग में दूरस्थ शिक्षा को पूरी दुनिया में एक बहुत ही प्रभावशाली और उपयोगी शिक्षा प्रणाली के रूप में मान्यता प्राप्त है और बड़ी संख्या में लोग इस शिक्षा प्रणाली से लाभान्वित हो रहे हैं। मौलाना आज़ाद राष्ट्रीय उर्दू विश्वविद्यालय ने भी उर्दू भाषी जनसंख्या की शैक्षणिक आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए अपनी स्थापना के समय से ही दूरस्थ शिक्षा प्रणाली को अपनाया है। विश्वविद्यालय की स्थापना 1998 में दूरस्थ शिक्षा निदेशालय के साथ हुई थी और नियमित कार्यक्रमों की शुरुआत 2004 से हुई, इसके पश्चात विभिन्न विभागों की स्थापना की गई।

भारत में शिक्षा प्रणाली को प्रभावी ढंग से नियंत्रित करने में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। दूरस्थ एवं ऑनलाइन शिक्षा केंद्र (Centre for Distance and Online Education) के तहत चलाए जा रहे विभिन्न कार्यक्रम, जो ओपेन और दूरस्थ शिक्षा मोड में हैं, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग – दूरस्थ शिक्षा ब्यूरो द्वारा अनुमोदित हैं। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग – दूरस्थ शिक्षा ब्यूरो ने दूरस्थ और नियमित शिक्षा के पाठ्यक्रमों को समन्वित करने पर जोर दिया है, ताकि दूरस्थ शिक्षा के छात्रों के स्तर को बढ़ाया जा सके। चूंकि मौलाना आज़ाद राष्ट्रीय उर्दू विश्वविद्यालय एक ड्यूल मोड विश्वविद्यालय है, जो दूरस्थ और पारंपरिक दोनों प्रकार की शिक्षा प्रदान करता है, इसलिए UGC-DEB के दिशानिर्देशों के अनुरूप अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए चॉइस बेस्ड क्रेडिट सिस्टम (CBCS) लागू किया गया और स्नातक एवं स्नातकोत्तर कार्यक्रमों के लिए नई स्व-अध्ययन सामग्री तैयार की गई है।

दूरस्थ एवं ऑनलाइन शिक्षा केंद्र फिलहाल उन्नीस (19) कार्यक्रम चला रहा है, जिनमें स्नातक, स्नातकोत्तर, बी.एड., डिप्लोमा और सर्टिफिकेट कार्यक्रम शामिल हैं। इसके साथ ही, तकनीकी कौशल आधारित कार्यक्रम भी शुरू किए जा रहे हैं। इस केंद्र ने अब राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 (NEP-2020) के अनुसार जुलाई 2025 से 4-वर्षीय स्नातक (4YUG) कार्यक्रम प्रारंभ किया है। ऑनर्स कार्यक्रम B.A., B.Sc. और B.Com राष्ट्रीय पाठ्यचर्या फ्रेमवर्क (NCF) के अनुसार डिजाइन किए गए हैं, जो छात्रों को ऑनर्स डिग्री प्राप्त करने में सहायता करेंगे। वर्ष 2025-2026 से MBA कार्यक्रम ODL मोड में शुरू किया गया है।

छात्रों की सुविधा के लिए 9 क्षेत्रीय केंद्र (बैंगलोर, भोपाल, दरभंगा, दिल्ली, कोलकाता, मुंबई, पटना, रांची तथा श्रीनगर) और 6 उप-क्षेत्रीय केंद्र (हैदराबाद, लखनऊ, जम्मू, नूह, वाराणसी तथा अमरावती) का एक विशाल नेटवर्क स्थापित किया गया है। इसके अलावा, विजयवाड़ा में एक विस्तार केंद्र भी स्थापित किया गया है। इन क्षेत्रीय और उप-क्षेत्रीय केंद्रों के अंतर्गत 157 से अधिक लर्नर सपोर्ट सेंटर (LSCs) और बीस कार्यक्रम केंद्र एक साथ संचालित किए जा रहे हैं, ताकि छात्रों को शैक्षणिक और प्रशासनिक सहायता प्रदान की जा सके। दूरस्थ एवं ऑनलाइन शिक्षा केंद्र अपनी शैक्षणिक और प्रशासनिक गतिविधियों में ICT का पूर्ण उपयोग करता है, और अपने सभी कार्यक्रमों में प्रवेश केवल ऑनलाइन मोड से ही प्रदान करता है।

छात्रों के लिए स्व-अध्ययन सामग्री (SLM) की सॉफ्ट कॉपी दूरस्थ एवं ऑनलाइन शिक्षा केंद्र की वेबसाइट पर उपलब्ध कराई जाती है और ऑडियो व वीडियो रिकॉर्डिंग के लिंक भी वेबसाइट पर उपलब्ध हैं। इसके अलावा ई-मेल और व्हाट्सएप समूहों की सुविधाएँ छात्रों को प्रदान की जा रही हैं, जिनके माध्यम से पाठ्यक्रम पंजीकरण, असाइनमेंट, काउंसलिंग, परीक्षाओं आदि जैसे कार्यक्रम के विभिन्न पहलुओं के बारे में छात्रों को सूचित किया जाता है। नियमित काउंसलिंग के अलावा, पिछले दो वर्षों से छात्रों के शैक्षणिक स्तर को सुधारने के लिए अतिरिक्त ऑनलाइन रेमेडियल काउंसलिंग की सुविधा भी प्रदान की जा रही है।

आशा है कि दूरस्थ एवं ऑनलाइन शिक्षा केंद्र शैक्षिक और आर्थिक रूप से पिछड़ी आबादी को समकालीन शिक्षा की मुख्यधारा में लाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा। नई शिक्षा नीति (NEP-2020) के अनुसार शैक्षिक आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए विभिन्न कार्यक्रमों में बदलाव किए गए हैं, इससे ओपेन और दूरस्थ शिक्षा प्रणाली को और अधिक प्रभावी और कुशल बनाने में मदद मिलेगी।

प्रो. मोहम्मद रज़ाउल्लाह खान
निदेशक,
दूरस्थ एवं ऑनलाइन शिक्षा केंद्र

भूमिका

'हिन्दी गद्य साहित्य' शीर्षक यह पुस्तक मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी, हैदराबाद के 'बी.ए (हिन्दी) - चतुर्थ सत्र' के दूरस्थ एवं ऑनलाइन शिक्षा माध्यम के छात्रों के लिए तैयार की गई है। इसकी संपूर्ण योजना विश्वविद्यालय अनुदान आयोग(यूजीसी) के निर्देशों के अनुसार नियमित माध्यम के पाठ्यक्रम के अनुरूप रखी गई है।

हिन्दी में गद्य लेखन 19वीं शताब्दी के मध्य अर्थात आधुनिक युग में शुरू हुआ। इस पाठ्यक्रम का उद्देश्य हिन्दी गद्य की विकासयात्रा के साथ विभिन्न गद्य विधाओं के स्वरूप से छात्रों को परिचित कराना है। साथ ही उन्हें विभिन्न गद्य पाठों के विश्लेषण, आस्वादन और समीक्षा करने की दृष्टि देना भी इसका प्रयोजन है। इन लक्ष्यों को ध्यान में रखते हुए संपूर्ण सामग्री को चार खंडों में संयोजित 16 इकाइयों के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

पुस्तक के पहले खंड में आधुनिक हिन्दी गद्य के विकास का संक्षिप्त ब्योरा देने के बाद उपन्यास, कहानी एवं निबंध विधा पर चर्चा की गई है। इसी खंड में एक प्रमुख उपन्यासकार के रूप में जैनेंद्र का परिचय देते हुए उनके कालजयी उपन्यास 'त्यागपत्र' का तात्विक विवेचन किया गया है। दूसरे खंड में दो प्रमुख कहानीकारों के रूप में प्रेमचंद और जयशंकर प्रसाद की कहानीकला के बारे में बताते हुए उनकी एक-एक प्रतिनिधि कहानी का तात्विक विवेचन किया गया है। इसी प्रकार तीसरा खंड यशपाल और उषा प्रियंवदा की कहानीकला और उनकी एक-एक प्रतिनिधि कहानी के तात्विक विवेचन पर आधारित है। पुस्तक का चौथा खंड हिन्दी के दो प्रमुख निबंधकारों आचार्य रामचंद्र शुक्ल और आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी पर आधारित है। इसमें इन दोनों की निबंध कला पर चर्चा करने के उपरांत इनके एक-एक प्रतिनिधि निबंध की विवेचना की गई है।

मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी के छात्रों के लाभार्थ तैयार की गई इस समस्त पाठ सामग्री में विषय और प्रस्तुति की गुणवत्ता का निर्वाह करते हुए भाषा की सुबोधता और सहज प्रेषणीयता को ध्यान में रखा गया है। आशा की जाती है कि इस पाठ्यक्रम के अध्ययन से विद्यार्थियों की साहित्यिक समझ और भाषिक क्षमता दोनों में विस्तार होगा।

इस पाठ सामग्री को तैयार करने में हमें जिन लेखकों, विद्वानों, पुस्तकों, पत्रिकाओं और संदर्भ सामग्रियों से सहायता मिली है, उन सबके प्रति हम कृतज्ञता प्रकट करते हैं।

डॉ. आफ़ताब आलम बेग

पाठ्यक्रम समन्वयक

हिन्दी गद्य साहित्य

इकाई 1 : आधुनिक हिन्दी गद्य का विकास

रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 मूल पाठ : आधुनिक हिन्दी गद्य का विकास
1.3.1 गद्य की पृष्ठभूमि
1.3.1.1 ब्रजभाषा गद्य
1.3.1.2 खड़ी बोली गद्य
1.3.2 आधुनिक हिन्दी गद्य का उद्भव और विकास
1.3.3 भारतेंदु युग के प्रमुख गद्य-लेखक
1.3.4 द्विवेदी युग के प्रमुख गद्य-लेखक
1.3.5 छायावाद युग के प्रमुख गद्य-लेखक
1.3.6 छायावादोत्तर युग के प्रमुख गद्य-लेखक
1.3.7 स्वातंत्र्योत्तर युग के प्रमुख गद्य-लेखक
1.4 पाठ सार
1.5 पाठ की उपलब्धियाँ
1.6 शब्द संपदा
1.7 परीक्षार्थ प्रश्न
1.8 पठनीय पुस्तकें

1.1 प्रस्तावना

आधुनिक काल को गद्य काल भी कहा जाता है। रामचंद्र शुक्ल ने इस काल को 'गद्य काल' कहा क्योंकि इस काल में गद्य का विकास हुआ। आधुनिक काल में अर्थात उन्नीसवीं शताब्दी में पद्य के स्थान पर गद्य को बढ़ावा मिला। उस समय के रचनाकारों ने समाज सुधार एवं जन जागरण के लिए गद्य का सहारा लिया। आधुनिक काल से पूर्व भी कुछ गद्य रचनाएँ प्राप्त हुई हैं लेकिन उनका विशेष महत्व नहीं है। गद्य का वास्तविक विकास आधुनिक काल से ही माना जाता है। छात्रो! इस इकाई में आधुनिक हिन्दी गद्य के विकास की स्थिति पर चर्चा करेंगे।

1.2 उद्देश्य

छात्रो! आप इस पाठ्यक्रम के प्रथम इकाई में आधुनिक हिन्दी गद्य के विकास के बारे में पढ़ने जा रहे हैं। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप -

- आधुनिक हिन्दी गद्य के उद्भव और विकास के बारे में जान सकेंगे।
- हिन्दी गद्य की पृष्ठभूमि से परिचित हो सकेंगे।
- ब्रज भाषा तथा खड़ी बोली गद्य के संबंध में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- गद्य के विकास में फोर्ट विलियम कॉलेज की भूमिका पर प्रकाश डाल सकेंगे।

- विभिन्न युगों के प्रमुख गद्यकारों के योगदान को रेखांकित कर सकेंगे।

1.3 मूल पाठ : आधुनिक हिन्दी गद्य का विकास

छात्रो! वस्तुतः लोक से प्राप्त अनुभव और स्वभाव ही साहित्य का कच्चा माल है। इसे साहित्यकार अपनी कल्पना के माध्यम से एक नए रूप में प्रस्तुत करता है। लेकिन हर अभिव्यक्ति को साहित्य नहीं कहा जा सकता। आधुनिक काल से पहले काव्य का प्रचलन था। आधुनिक काल के आगमन के साथ ही गद्य का विकास होने लगा। आइए, गद्य के इस विकास पर चर्चा करेंगे।

1.3.1 गद्य की पृष्ठभूमि

उन्नीसवीं शताब्दी से पूर्व हिन्दी साहित्य में गद्य की रचनाएँ अधिक नहीं थीं। उस समय साहित्य की भाषा ब्रज थी। भावों की अभिव्यक्ति काव्य-भाषा में होती थी लेकिन बोलचाल की भाषा तो गद्य ही थी। हिन्दी गद्य के विकास की दृष्टि से ब्रज भाषा एवं खड़ी बोली गद्य में रचित रचनाओं के बारे में भी चर्चा करेंगे।

1.3.1.1 ब्रज भाषा गद्य

आधुनिक काल से पूर्व साहित्य की भाषा ब्रज भाषा ही रही। अतः आधुनिक काल से पूर्व जो गद्य रचनाएँ प्राप्त होती हैं, उनकी भाषा ब्रज भाषा ही है। ब्रज भाषा में जब काव्य सृजन हो रहा था, उसी समय जन साधारण में ब्रज भाषा का गद्य रूप विकसित होने लगा। साहित्यिक भाषा और बोलचाल की भाषा में अंतर होता है। संत, महात्मा, कवि आदि अपने-अपने मत या संप्रदाय के संदेश को जनता तक पहुँचाने के लिए ब्रज की बोलचाल की भाषा को अपनाने लगे। 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' में आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने यह स्पष्ट किया है कि हिन्दी पुस्तकों की खोज में हठयोग और ब्रह्मज्ञान से संबंध रखने वाले कई गोरखपंथी ग्रंथ प्राप्त हुए हैं, जिनका रचना काल 1300 ई. के आसपास है। अतः इसमें संदेह नहीं कि हिन्दी गद्य का प्रारंभिक रूप गोरखपंथी साधुओं की रचनाओं में मिलता है। यह राजस्थानी और ब्रज भाषा का मिश्रित भाषा रूप है।

ध्यान देने की बात है कि भक्तिकाल में कृष्णभक्ति शाखा के भीतर गद्य ग्रंथ मिलते हैं। गोसाईं विट्ठलनाथ ने 'शृंगार रस मंडन' नामक ग्रंथ में ब्रज भाषा गद्य का प्रयोग किया है। इसके गद्य रूप को रामचंद्र शुक्ल अपरिमार्जित और अव्यवस्थित मानते हैं। उदाहरण के लिए भाषा का स्वरूप देखें -

> "प्रथम की सखी कहतु है। जो गोपीजन के चरण विषै सेवक की दासी करि जो इनको प्रेमामृत में डूबि कै इनके मंद हास्य ने जीते हैं। अमरूत समूह ता करि निकुंज विषै शृंगाररस श्रेष्ठ रसना कीनौ सो पूर्ण होत भई।" (हिन्दी साहित्य का इतिहास, रामचंद्र शुक्ल, पृ.277)

इसके बाद दो और ग्रंथ लिखे गए - 'चौरासी वैष्णवों की वार्ता' और 'दो सौ बावन वैष्णवों की वार्ता'। इनका रचनाकाल विक्रम की 17वीं शताब्दी का उत्तरार्ध माना जाता है।

इनमें वैष्णव भक्तों और आचार्यों की महिमा प्रकट करने वाली कथाएँ अंकित हैं। इन कथाओं की भाषा बोलचाल की ब्रज भाषा है। एक उदाहरण देखें -

> "सो श्री नंदगाम में राहतो हतो। सो खंडन ब्राह्मण शास्त्र पढ्यो हतो। सो जीतने पृथ्वी पर मत हैं सबको खंडन करतो; ऐसो वाको नेम हतो।" (हिन्दी साहित्य का इतिहास, रामचंद्र शुक्ल, पृ.277)

संवत 1660 के आस-पास नाभादास ने ब्रज भाषा में 'अष्टयाम' नामक पुस्तक की रचना की थी। इसमें भगवान राम की दिनचर्या का वर्णन है। संवत 1680 के आस-पास वैकुंठमणि शुक्ल ने ब्रज भाषा गद्य में 'अगहन माहात्म्य' और 'वैशाख माहात्म्य' नामक दो छोटी-छोटी पुस्तिकाएँ लिखीं। संवत 1767 में संस्कृत से कथा लेकर सुरति मिश्र ने 'बैताल पच्चीसी' लिखी। उस युग में ब्रजभाषा में गद्य की रचनाएँ कम लिखी जाती थीं। इसका प्रमुख कारण यह हो सकता है कि ब्रजभाषा में गद्य की क्षमता का विकास न हो पाना। ब्रजभाषा का क्षेत्र भी सीमित था। वह ब्रज क्षेत्र के बाहर संपर्क भाषा के रूप में स्थापित नहीं हो पाई। अतः गद्य का विकास उस तरह से नहीं हो पाया जिस तरह से होना चाहिए था। इसलिए खड़ी बोली ही गद्य की भाषा के रूप में विकसित हुई।

बोध प्रश्न

- हिन्दी गद्य का प्रारंभिक रूप किनकी रचनाओं में मिलता है?
- वैष्णव भक्तों और आचार्यों की महिमा प्रकट करने वाली कथाएँ किन ग्रंथों में अंकित हैं?
- 'शृंगार रस मंडन' की भाषा के संबंध में आचार्य रामचंद्र शुक्ल का क्या कथन है?
- 'बैताल पच्चीसी' के रचनाकार कौन हैं?

1.3.1.2 खड़ी बोली गद्य

ब्रज भाषा गद्य की परंपरा कई कारणों से आगे नहीं बढ़ पाई। ब्रज भाषा के स्थान पर खड़ी बोली गद्य का विकास होने लगा। क्योंकि खड़ी बोली जन साधारण की बोलचाल की भाषा थी। धीरे-धीरे खड़ी बोली पद्य और गद्य की भाषा बनने लगी। ब्रज भाषा के बाद खड़ी बोली में साहित्य सृजन होने लगा। इसका क्षेत्र भी विस्तृत था। तत्कालीन राजनैतिक परिस्थितियों ने भी खड़ी बोली के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

खड़ी बोली 14 वीं शती में दिल्ली और उसके आस-पास के क्षेत्रों में बोली जाने लगी थी। मुगल काल में संपर्क भाषा के रूप में खड़ी बोली का प्रयोग प्रारंभ हुआ। उनकी मातृभाषा फारसी थी। फारसी मिश्रित खड़ी बोली की एक नई शैली का जन्म हुआ जिसे हिंदुई, हिंदवी आदि नामों से जाना जाने लगा। अमीर खुसरो ने चौदहवी शताब्दी में खड़ी बोली में पहेलियाँ और मुकरियाँ लिखीं।

अमीर खुसरो के बाद खड़ी बोली का विकास दक्षिणी राज्यों के रचनाकारों ने किया। दक्खिनी हिन्दी के रूप में अनेक ग्रंथों की रचनाएँ हुईं। 1635 ई. में मुल्ला वजही ने अपने प्रसिद्ध ग्रंथ 'सबरस' की रचना की। अकबर के समय गंग कवि ने 'चंद छंद बरनन की महिमा' नामक एक पुस्तक खड़ी बोली में लिखी थी।

वस्तुतः खड़ी बोली हिन्दी का गढ़ मेरठ है। हिन्दी साहित्य के इतिहास में जो स्थान अठारह सौ सत्तावन की क्रांति का है, वही स्थान इस जनपद की साहित्यिक चेतना का है। हापुड़ क्षेत्र के बाबूगढ़ छावनी के समीप स्थित गाँव रसूलपुर में संत गंगादास का जन्म 1823 ई. में बसंत पंचमी के दिन हुआ था। ये आधुनिक काल में 'खड़ीबोली के प्रथम कवि' हैं। इन्हें 'खड़ी बोली के पितामह' भी कहा जाता है।

अठारहवीं शताब्दी में रामप्रसाद निरंजनी ने 'भाषा योगवशिष्ठ' नाम का गद्य ग्रंथ खड़ी बोली में लिखा था। रामचंद्र शुक्ल के अनुसार 'भाषा योगवशिष्ठ' परिमार्जित गद्य की प्रथम पुस्तक है और रामप्रसाद निरंजनी प्रथम प्रौढ़ गद्य लेखक।

बोध प्रश्न

- खड़ी बोली के पितामह कौन हैं?
- आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार परिमार्जित गद्य की प्रथम पुस्तक कौन सी है?
- मुगल काल में किस भाषा शैली का विकास हुआ?

1.3.2 आधुनिक हिन्दी गद्य का उद्भव और विकास

आधुनिक हिन्दी खड़ी बोली गद्य के विकास में फोर्ट विलियम कॉलेज (1800) की भूमिका को नहीं भुलाया जा सकता। भारत में अंग्रेजों ने अपना राज्य स्थापित किया। उस समय उन्हें भारत की भाषा सीखने की आवश्यकता हुई। इस हेतु उन्हें उर्दू और हिन्दी दोनों प्रकार की पुस्तकों की आवश्यकता हुई। इसलिए फोर्ट विलियम कॉलेज की ओर से जॉन गिल क्राइस्ट के निर्देश में उर्दू और हिन्दी गद्य पुस्तकें लिखने की व्यवस्था की गई। लेकिन उसके पहले भी हिन्दी खड़ी बोली में गद्य की कई पुस्तकें लिखी जा चुकी थीं। मुंशी सदासुखलाल की 'ज्ञानोपदेशावली' और इंशा अल्ला खाँ की 'रानी केतकी की कहानी' लिखी जा चुकी थीं।

छात्रो! भारत में अंग्रेजी साम्राज्य की स्थापना के कारण कई परिवर्तन सामने आने लगे। उनका प्रभाव भारतीय जनजीवन पर पड़ने लगा। इनमें से कुछ परिवर्तनों का संबंध हिन्दी गद्य के विकास के साथ है। इनमें कुछ कारण इस प्रकार हैं -

अ. धर्म : भारत धर्मनिरपेक्ष देश है। यहाँ सभी धर्मों के लोग समान रूप से मिलकर इस देश के विकास में योगदान देते हैं। भारत में ईसाई मिशनरियों की संख्या बढ़ने लगी और उनकी गतिविधियाँ बढ़ने लगीं। इन गतिविधियों ने हिन्दी गद्य के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इन धर्म प्रचारकों ने प्रचार के लिए हिन्दी गद्य में छोटी-छोटी पुस्तकें तैयार की। बाइबल का हिन्दी गद्यानुवाद किया गया। इसने भी हिन्दी गद्य के विकास में महती भूमिका निभाई।

आ. पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन : अंग्रेज अपनी सुविधा हेतु मुद्रण, यातायात और दूरसंचार के साधनों का प्रयोग करने लगे। अनेक पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन प्रारंभ हुआ। पुस्तकें प्रकाशित होने लगीं। परिणामस्वरूप हिन्दी गद्य लेखन तेजी से विकसित होने लगा। 1826ई. में पंडित जुगल किशोर शुक्ल ने हिन्दी के प्रथम साप्ताहिक पत्र 'उदंत मार्तंड' का प्रकाशन प्रारंभ किया। लेकिन 1827 ई. में यह बंद हो गया। 1829 ई. में 'बंगदूत' का प्रकाशन प्रारंभ हुआ। 1845 ई. में 'प्रजामित्र', 'बनारस अखबार' तथा 1846 ई. में 'मार्तंड'

का प्रकाशन हुआ। इन पत्र-पत्रिकाओं ने हिन्दी गद्य को खूब विकसित और परिमार्जित किया।

इ. शिक्षा का प्रसार : मैकाले ने भारत में 1835 ई. में शिक्षा प्रसार के लिए अंग्रेजी शिक्षा पद्धति की नींव रखी। इससे पूर्व भारत में फारसी और संस्कृत के माध्यम से शिक्षा दी जाती थी। 1823 ई. में आगरा कॉलेज की स्थापना हुई। इसमें हिन्दी शिक्षण का विशेष प्रबंध हुआ। 1824 ई. में फोर्ट विलियम कॉलेज में हिन्दी पढ़ाने का विशेष प्रबंध किया गया। 1825 ई. से लेकर 1862 ई. के बीच शिक्षा संबंधी अनेक पुस्तकें हिन्दी में प्रकाशित हुईं। उनमें से प्रमुख हैं पं. वंशीधर की पुष्पवाटिका, भारत वर्षीय इतिहास और जीविका परिपाटी।

ई. समाज सुधार आंदोलन : आधुनिक काल समाज सुधार का काल था। इसी काल में भारतीय समाज में व्याप्त अनेक बुराइयों को दूर करने के लिए अनेक आंदोलन हुए। जनता तक अपनी बात को पहुँचाने के लिए समाज सुधारकों के लिए जनभाषा की आवश्यकता पड़ी। हिन्दी गद्य के विकास में दयानंद सरस्वती (आर्य समाज), राजा राममोहन राय (ब्रह्म समाज), केशवचंद्र सेन (प्रार्थना समाज), विवेकानंद आदि समाज सुधारकों का योगदान उल्लेखनीय है।

बोध प्रश्न

- हिन्दी गद्य के विकास के कुछ प्रमुख कारण बताइए।
- हिन्दी गद्य के विकास में पत्र-पत्रिकाओं की क्या भूमिका रही?
- हिन्दी के प्रथम साप्ताहिक पत्र का प्रकाशन कब प्रारंभ हुआ? उस पत्र का नाम बताइए।

छात्रो! आपने गद्य के विकास के कुछ प्रमुख कारण जान ही चुके हैं। आइए, अब हम प्रारंभिक गद्य लेखन की चर्चा करेंगे।

फोर्ट विलियम कॉलेज की स्थापना के बाद जॉन गिल क्राइस्ट ने हिन्दी और उर्दू में पुस्तकें लिखवाने के लिए अनेक विद्वानों की नियुक्ति की। सदासुखलाल 'नियाज' फारसी के अच्छे कवि और लेखक थे। इन्होंने 'विष्णु पुराण' के उपदेशात्मक प्रसंग लेकर एक पुस्तक लिखी थी। इसके बाद उन्होंने श्रीमद्भागवत कथा के आधार पर 'सुख सागर' की रचना की। इसकी गद्य व्यवस्थित थी। इंशा अल्ला खाँ ने 'उदयभान चरित' या 'रानी केतकी की कहानी' लिखी। लल्लू लाल ने 'प्रेम सागर', 'बैताल पच्चीसी', 'सिंहासन बत्तीसी' आदि ग्रंथ लिखे। सदल मिश्र ने 'नासिकेत्पाख्यान' लिखी। इसमें संदेह नहीं कि भारतेंदु के पूर्व खड़ी बोली गद्य को आगे बढ़ाने में सदासुखलाल, इंशा अल्ला खाँ, लल्लू लाल और सदल मिश्र प्रमुख हैं।

इसी प्रकार आधुनिक हिन्दी गद्य के विकास में भारतेंदु से पहले दो राजाओं, राजा शिवप्रसाद 'सितारे हिंद' और राजा लक्ष्मण सिंह का योगदान उल्लेखनीय है। राजा शिवप्रसाद 'सितारे हिंद' 'आम फहम और खास पसंद' भाषा के प्रबल पक्षधर थे। 'आम फहम' से उनका अभिप्राय है, जनता की भाषा और 'खास पसंद' का अर्थ है उस जमाने का अरबी-फारसी पढ़ा शिक्षित समाज। वे ऐसी हिन्दी चाहते थे जिसमें अरबी-फारसी के शब्दों का अधिक प्रयोग हो। इनकी कृतियों में राजा भोज का सपना, आलसियों का कोडा, वीरसिंह का वृत्तांत, अंग्रेजी अक्षरों को सीखने का उपाय, हिंदुस्तान के पुराने राजाओं का हाल आदि उल्लेखनीय हैं। राजा लक्ष्मण

सिंह हिन्दी और उर्दू को दो अलग-अलग भाषाएँ मानते थे। उन्होंने 1841 में आगरा से 'प्रजा हितैषी' नामक पत्र निकाला। उन्होंने सरल, सुबोध और सरस हिन्दी का आदर्श उपस्थित किया।

बोध प्रश्न

- भारतेंदु के पूर्व खड़ी बोली गद्य को आगे बढ़ाने वालों का नाम बताइए।
- किस रचनाकार ने सरल, सुबोध और सरस हिन्दी का आदर्श उपस्थित किया?

1.3.3 भारतेंदु युग के प्रमुख गद्य-लेखक

उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध तक हिन्दी गद्य का व्यापक प्रसार हुआ। साहित्य रचना के पर्याप्त अवसर भी प्राप्त हुए। इसी समय भारतेंदु हरिश्चंद्र (1850 ई.-1885 ई.) ने साहित्य के क्षेत्र में कदम रखा। इन्होंने हिन्दी गद्य को एक नई दिशा दी। रामचंद्र तिवारी के अनुसार भारतेंदु हरिश्चंद्र 'आधुनिक हिन्दी साहित्य के जन्मदाता और भारतीय नवोत्थान के प्रतीक' हैं तो रामविलास शर्मा अनुसार 'हिन्दी की जातीय परंपरा के संस्थापक'। भारतेंदु हरिश्चंद्र ने खड़ी बोली गद्य को साहित्यिक रूप प्रदान किया और इसी साहित्य के माध्यम से उन्होंने जन जन तक अपनी बात पहुँचाई। 'कवि वचन सुधा' (1867), 'हरिश्चंद्र मैगजीन' और 'हरिश्चंद्र चंद्रिका' के माध्यम से उन्होंने हिन्दी साहित्य को नया आयाम प्रदान किया। उन्होंने गद्य के विविध विधाओं जैसे नाटक, निबंध, समालोचना आदि में नई परंपरा का सूत्रपात किया। वे भाषा के विकास के प्रबल पक्षधर थे। उनका मानना था कि

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल।
बिनु निज भाषा शान के, मिटत न हिय को शूल।

भारतेंदु हरिश्चंद्र ने अपने समय के अनेक गद्य लेखकों को प्रेरित किया। उनके संबंध में आचार्य रामचंद्र शुक्ल का कथन है कि "साहित्य के एक नवीन युग के आदि में प्रवर्तक के रूप में खड़े होकर उन्होंने यह भी प्रदर्शित किया कि नए या बाहरी भावों को पचाकर इस प्रकार मिलाना चाहिए कि अपने ही साहित्य के विकसित अंग से लगें। प्राचीन नवीन के इस संधिकाल में जैसी शीतल कला का संचार अपेक्षित था वैसी ही शीतल कला के साथ भारतेंदु का उदय हुआ, इसमें संदेह नहीं।" (हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ.315)

भारतेंदु के कुछ मौलिक नाटक हैं वैदेही हिंसा हिंसा न भवति, प्रेम योगिनी, भारत दुर्दशा, नील देवी, अंधेर नगरी आदि। उन्होंने अनेक नाटकों का अनुवाद भी किया है। उनकी रचनाओं में प्रबल रूप से समाज सुधार और देशभक्ति की भावना को देखा जा सकता है।

भारतेंदु हरिश्चंद्र के जीवन काल में ही लेखकों का एक मंडल तैयार हो गया। उन्हें भारतेंदु मंडल के नाम से जाना जाता है। भारतेंदु युग के प्रमुख गद्य लेखकों में बालकृष्ण भट्ट, बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन', प्रताप नारायण मिश्र, श्रीनिवास दास, राधाकृष्ण दास, जगन्नाथ दास रत्नाकर, बालमुकुंद गुप्त आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। इन सभी लेखकों ने गद्य के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

बालकृष्ण भट्ट ने 'हिन्दी प्रदीप' के माध्यम से गद्य का विकास किया। वे अपने युग के सशक्त प्रगतिशील लेखक थे। उनके निबंध विचारात्मक होते हैं। मनोवैज्ञानिक विषयों पर गंभीर चिंतन का कार्य प्रारंभ करने का श्रेय भट्ट जी को जाता है। शुक्ल जी का कथन है कि "वे स्थान-

स्थान पर कहावतों का प्रयोग करते थे, पर उनका झुकाव मुहावरों की ओर अधिक रहा है। व्यंग्य और वक्रता उनके लेखों में भी भरी रहती हैं और वाक्य भी कुछ बड़े होते हैं। ठीक खड़ी बोली के आदर्श का निर्वाह भट्ट जी ने भी नहीं किया है। पूरबी प्रयोग बराबर मिलते हैं।" (हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ.318)। वे आँख, नाक आदि विषयों पर ललित निबंध भी लिखे। उनके उपन्यासों में सौ अजान एक सुजान तथा नूतन ब्रह्मचारी उल्लेखनीय हैं तो नाटकों में चंद्रसेन, शिशुपाल वध और पद्मावती।

प्रतापनारायण मिश्र ने 'ब्राह्मण' पत्रिका के माध्यम से हिन्दी गद्य को आगे बढ़ाया। उनकी भाषा में व्यंग्यपूर्ण वक्रता को देखा जा सकता है। बालमुकुंद गुप्त ने हिन्दी निबंध को समृद्ध किया। प्रेमघन ने आनंद कादंबिनी, नागरी नीरद जैसे साहित्यिक पत्रिकाओं के माध्यम से हिन्दी में आलोचना का सूत्रपात किया। 'परीक्षा गुरु' के लेखक श्रीनिवास दास ने कथा साहित्य के लिए बोलचाल की भाषा के प्रयोग का मार्ग प्रशस्त किया। इन लेखकों के साहित्य में राष्ट्रभक्ति को भलीभाँति देखा जा सकता है।

बोध प्रश्न

- आधुनिक हिन्दी के जन्मदाता कौन हैं?
- भारतेंदु मंडल के साहित्यकारों की प्रमुख प्रवृत्ति क्या है?
- भारतेंदु हरिश्चंद्र के संबंध में रामचंद्र शुक्ल का क्या विचार है?
- मनोवैज्ञानिक विषयों पर गंभीर चिंतन का कार्य किसने प्रारंभ किया?
- प्रेमघन ने किन साहित्यिक पत्रिकाओं के माध्यम से हिन्दी में आलोचना का सूत्रपात किया?

1.3.4 द्विवेदी युग के प्रमुख गद्य-लेखक

इसमें संदेह नहीं कि भारतेंदु युग के लेखकों ने गद्य के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। खड़ी बोली को गद्य की भाषा के रूप में स्थापित किया। अनेक मौलिक एवं अनूदित ग्रंथ तैयार किए। फिर भी इनकी गद्य की भाषा में कई त्रुटियाँ थीं। इन त्रुटियों को दूर करने का श्रेय महावीर प्रसाद द्विवेदी को जाता है। इन्होंने 'सरस्वती' पत्रिका के माध्यम से भाषा को परिमार्जित किया। महावीर प्रसाद द्विवेदी और सरस्वती एक दूसरे के पर्याय बन चुके थे।

1900 में सरस्वती पत्रिका का प्रकाशन प्रारंभ हुआ। 1903 से लेकर 1920 तक आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के संपादकत्व में इस पत्रिका ने प्रतिष्ठा प्राप्त की। उस समय राष्ट्रीय स्वर को दिशा देने में सरस्वती पत्रिका का हाथ है। इतना ही नहीं विज्ञान के क्षेत्र में भी प्रवेश करके यह सिद्ध किया कि हिन्दी में भी कठिन से कठिन विषय को प्रस्तुत करने की क्षमता है। हिन्दी गद्य विधाओं को संपन्न बनाने में इस पत्रिका ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। भाषा में व्याप्त अनगढ़पन और अराजकता को दूर करके उसे सुगढ़ बनाने में इस पत्रिका का योगदान उल्लेखनीय है। महावीर प्रसाद द्विवेदी की इच्छा थी कि खड़ी बोली हिन्दी अपना मानक रूप ग्रहण करे क्योंकि इसके अभाव में महान साहित्य की रचना संभव नहीं है। इसीलिए वे सरस्वती में प्रकाशन के लिए आने वाली रचनाओं की भाषा को सुधार करके उन्हें शुद्ध रूप प्रदान करते थे।

द्विवेदी जी ने अपने समय की राष्ट्रीय चेतना और नवजागरण की भावना को आत्मसात किया। इसीलिए वे मध्य युगीन आदर्शों का विरोध करते थे और रीतिकालीन कलारूपों को अस्वीकार। उन्होंने अपने युग के साहित्यकारों से साहित्य को समाज से जोड़ने के लिए कहा। उनका मानना है कि देश की उन्नति के बारे में जानना हो तो उस देश के साहित्य का अवलोकन करना चाहिए। उन्होंने सरस्वती के माध्यम से प्रेमचंद, मैथिलीशरण गुप्त, माधव मिश्र, बालमुकुंद गुप्त, पद्मसिंह शर्मा, रामचंद्र शुक्ल, अयोध्या सिंह उपाध्याय हरिऔध आदि के साहित्य को समाज तक पहुँचाया।

द्विवेदी युग में निबंध, नाटक, उपन्यास, कहानी, आलोचना आदि क्षेत्रों में अनेक साहित्यकार सामने आएँ। इस युग में नाटक के क्षेत्र में अंग्रेजी, बांग्ला और संस्कृत के नाटक अनूदित होकर हिन्दी में आए। मौलिक नाट्य लेखन में चौपट चपेट, मयंक मंजरी (किशोरीलाल गोस्मावी), रुकमिणी परिणय (अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध') जैसे नाटक लिखे गए। ये सभी सामान्य नाटक थे जिन पर फारसी थियेटर का प्रभाव पड़ा।

उपन्यास के क्षेत्र में देवकीनंदन खत्री ने महत्वपूर्ण कार्य किया। उन्होंने चंद्रकांता और चंद्रकांता संतती के नाम से तिलिस्मी और ऐय्यारी उपनास लिखे। उन्होंने उर्दू-हिन्दी के मिश्रित रूप को स्वीकारा। बाद में प्रेमचंद ने इसी भाषा रूप को अपने लेखन में अधिक विकसित किया। किशोरीलाल गोस्वामी ने छोटे-छोटे 65 उपन्यास लिखे। उन्होंने 'उपन्यास' नामक एक मासिक पत्र भी निकाला। इनके उपन्यासों में चपला, तरुण तपस्विनी, तारा, रज़िया बेगम, लीलावती, लवंगलता आदि उल्लेखनीय हैं। हरिऔध ने ठेठ हिन्दी का ठाठ, अधखिला फूल, लज्जाराम मेहता ने हिंदू धर्म, आदर्श दंपति आदि उपन्यास लिखे।

द्विवेदी युग में कहानी के क्षेत्र में चंद्रधर शर्मा गुलेरी, विश्वंभरनाथ शर्मा कौशिक, सुदर्शन, चतुरसेन शास्त्री, राधिकाप्रसाद सिंह, प्रेमचंद और जयशंकर प्रसाद उल्लेखनीय हैं। निबंध के क्षेत्र में बालमुकुंद गुप्त, पूर्णसिंह और आलोचना के क्षेत्र में रामचंद्र शुक्ल इसी युग का देन है। बालमुकुंद गुप्त ने व्यंग्य और विनोद की शैली को अपनाया। उनकी रचना 'शिवशंभू का चिट्ठा' प्रसिद्ध है।

इन विधाओं के अतिरिक्त आत्मकथा, जीवनी, संस्मरण, यात्रा साहित्य, रेखाचित्र आदि नवीन विधाओं का सूत्रपात इस युग में हुआ।

बोध प्रश्न

- गद्य के विकास में 'सरस्वती' का क्या योगदान है?
- द्विवेदी युग के प्रमुख साहित्यकारों का नाम बताइए।

1.3.5 छायावाद युग के प्रमुख गद्य-लेखक

छायावादी युग में राजनीतिक दृष्टि से महात्मा गांधी का नेतृत्व जनता को सत्य, अहिंसा और असहयोग के माध्यम से स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिए निरंतर प्रेरणा एवं शक्ति प्रदान कर रहा था। 1919 ई. के प्रथम अवज्ञा-आंदोलन की असफलता, जलियाँवाला कांड तथा भगतसिंह की मृत्यु जैसी घटनाओं से जनता का मनोबल कम नहीं हुआ था। साइमन कमीशन के बहिष्कार तथा नमक-कानून-भंग जैसे जन आंदोलनों से इस तथ्य की पुष्टि होती है। (हिन्दी साहित्य का

इतिहास, सं. नगेंद्र, पृ.549)। सामाजिक एवं राजनैतिक परिवर्तनों का प्रभाव छायावाद युग के गद्य साहित्य पर भी दिखाई देता है। द्विवेदी युग में हिन्दी गद्य का व्याकरण सम्मत परिमार्जित रूप स्थिर हो चुका था। अतः विभिन्न गद्य विधाओं का विकास स्वाभाविक था। इसलिए छायावाद युग का गद्य साहित्य द्विवेदी युग की तुलना में अधिक विकासशील और समृद्ध रहा।

नाटक साहित्य की दृष्टि से इस युग को 'प्रसाद युग' कहना उचित होगा। यद्यपि प्रसाद 1918 के पूर्व से ही नाटकों की रचना आरंभ कर दी थी, पर उनकी आरंभिक रचनाएँ (सज्जन, कल्याणी-परिणय, प्रायश्चित आदि) अपरिपक्व थीं। छायावाद युग में रचित अजातशत्रु, स्कंदगुप्त, चंद्रगुप्त, ध्रुवस्वामिनी आदि नाटकों के माध्यम से प्रसाद ने हिन्दी नाटक साहित्य को विशिष्ट स्तर और गरिमा प्रदान की। कलात्मक उत्कर्ष की दृष्टि से प्रसाद के प्रमुख नाटक तीन हैं - स्कंदगुप्त, चंद्रगुप्त, ध्रुवस्वामिनी। इस तथ्य से इनकार नहीं किया जा सकता है कि हिन्दी नाटक को साहित्यिक भूमिका प्रदान करने का प्रयास सर्वप्रथम भारतेंदु हरिश्चंद्र ने किया था। इस युग के अन्य नाटककारों में हरिकृष्ण प्रेमी (रक्षाबंधन, प्रतिशोध), लक्ष्मीनारायण मिश्र (अशोक, संन्यासी, मुक्ति का रहस्य, सिंदूर की होली), रामकुमार वर्मा (बादल की मृत्यु), उपेंद्रनाथ अश्क (लक्ष्मी का स्वागत) आदि उल्लेखनीय हैं।

हिन्दी उपन्यास और कहानी के क्षेत्र में छायावाद युग को 'प्रेमचंद युग' कहा जाता है। सेवासदन, प्रेमाश्रम, रंगभूमि, निर्मला, गबन, कर्मभूमि और गोदान जैसे उपन्यासों के माध्यम से प्रेमचंद ने हिन्दी उपन्यास साहित्य को मनोरंजन के स्तर से ऊपर उठा कर जीवन के साथ सार्थक रूप से जोड़ने का काम किया। "उन्होंने सामयिक समस्याओं को अपने उपन्यासों का आधार बनाने के बावजूद जीवन की सहज-सामान्य धारा को उचित महत्व दिया।" (हिन्दी साहित्य का इतिहास, सं. नगेंद्र, पृ.560)। उन्होंने ईदगाह, नमक का दरोगा, पूस की रात, कफन जैसी अनेक कहानियों का सृजन किया। उनकी कहानियाँ 'मानसरोवर' नाम से आठ भागों में संकलित हैं। शिल्प और भाषा की दृष्टि से भी उन्होंने हिन्दी कथा-साहित्य को विशिष्ट स्तर प्रदान किया। इस युग के अन्य गद्य लेखक हैं चतुरसेन शास्त्री, शिवपूजन सहाय, बेचन शर्मा उग्र, जैनेंद्र, भगवतीचरण वर्मा, राधिकारमण प्रसाद सिंह, वृंदावनलाल वर्मा, राहुल सांकृत्यायन, सूर्यकांत त्रिपाठी निराला, सुदर्शन, विष्णु प्रभाकर, चंद्रगुप्त विद्यालंकार आदि।

निबंध और आलोचना के क्षेत्र में इसे 'शुक्ल युग' कहा जाता है। आचार्य शुक्ल के निबंध 'चिंतामणि' नाम से संकलित हैं। अन्य साहित्यकारों में गुलाबराय, शांतिप्रिय द्विवेदी, विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, श्यामसुंदर दास, रामकुमार वर्मा आदि उल्लेखनीय हैं।

इस युग में विभिन्न गद्य विधाओं की उन्नति हुई। "प्रेमचंद, जयशंकर प्रसाद तथा रामचंद्र शुक्ल इस युग के ऐसे कृतिकार हैं, जिन्होंने एकाधिक गद्य-विधाओं को समृद्ध करने में उल्लेखनीय योगदान दिया।" (हिन्दी साहित्य का इतिहास, सं. नगेंद्र, पृ. 590)। यह युग काव्य के क्षेत्र में ही नहीं बल्कि गद्य के क्षेत्र में भी समृद्ध रहा।

बोध प्रश्न

- कलात्मक उत्कर्ष की दृष्टि से प्रसाद के प्रमुख नाटकों के नाम बताइए।
- प्रेमचंद की कहानियाँ किस नाम से संकलित हैं?

• छायावाद युग में किन कृतिकारों ने गद्य की विधाओं को स्मृद्ध किया?

1.3.6 छायावादोत्तर युग के प्रमुख गद्य-लेखक

हिन्दी गद्य साहित्य की दृष्टि से यह युग सर्वांगीण उन्नति का युग है। इसी युग में भारत ने पराधीनता की बेड़ियाँ तोड़ी। इस युग में विभिन्न गद्य विधाओं का बहुमुखी विकास हुआ। इस युग के लेखकों ने कथासाहित्य, नाटक, आलोचना के साथ-साथ रिपोर्ताज और इंटरव्यू जैसे नए साहित्यिक विधाओं के माध्यम से भावों को अभिव्यक्त करने लगे। इस युग में राष्ट्र के नव निर्माण पर बल दिया जाने लगा। "कथ्य की कलात्मक अभिव्यक्ति के लिए सर्वथा नए प्रतीक, उपमान अथवा बिंब ही प्रयुक्त नहीं हुए, अपितु फ्लैशबैक, चेतना-प्रवाह आदि शैलियों का भी प्रयोग किया गया।" (हिन्दी साहित्य का इतिहास, सं. नगेंद्र, पृ.659)

इस युग के लेखक वस्तुतः मानव-मन के सूक्ष्म संवेदनाओं को सशक्त रूप से अभिव्यक्त करते थे। इस युग के गद्य साहित्य काव्य और शिल्प दोनों दृष्टियों से वैविध्यपूर्ण है। इस युग के प्रमुख नाटककार हैं जगदीश माथुर (कोणार्क, पहला राजा), धर्मवीर भारती (अंधा युग), लक्ष्मीनारायण लाल (मादा कैक्टस, तीन आँखों वाली मछली), मोहन राकेश (आषाढ़ का एक दिन, लहरों का राजहंस), हरिकृष्ण प्रेमी (आहुति, स्वप्नभंग), जगन्नाथ प्रसाद मिलिंद (समर्पण), चंद्रगुप्त विद्यालंकार (न्याय की रात), नरेश मेहता (सुबह के घंटे), मन्नू भंडारी (बिना दीवार का घर), ज्ञानदेव अग्निहोत्री (नेफ़ा की एक शाम) आदि उल्लेखनीय हैं।

प्रेमचंद के बाद हिन्दी उपन्यास कई मोड़ों से गुजरता हुआ दिखाई पड़ता है। इस युग में साहित्यकारों ने अनेक प्रयोग किए। इस क्षेत्र में अज्ञेय (शेखर : एक जीवनी, नदी के द्वीप), इलाचंद्र जोशी (घृणामयी, संन्यासी, ऋतुचक्र), यशपाल (दादा कामरेड), रामेश्वर शुक्ल 'अंचल' (चढ़ती धूप), भगवती चरण वर्मा (चित्रलेखा), अमृतलाल नागर (बूँद और समुद्र, अमृत और विष), हजारी प्रसाद द्विवेदी (बाणभट्ट की आत्मकथा), रांगेय राघव (मुर्दों का टीला), नागार्जुन (रतिनाथ की चाची, बालचनमा), फणीशवरनाथ रेणु (मैला आंचल), रामदरश मिश्र (पानी की प्राचीर), धर्मवीर भारती (गुनाहों का देवता), निर्मल वर्मा (अंधेरे बंद कमरे) आदि का नाम उल्लेखनीय हैं। कहानी के क्षेत्र में विष्णु प्रभाकर, रामदरश मिश्र, निर्मल वर्मा, इलाचंद्र जोशी, रांगेय राघव, मार्कण्डेय आदि उल्लेखनीय हैं।

बोध प्रश्न

• कथ्य की कलात्मक अभिव्यक्ति के लिए साहित्यकार क्या करते हैं?

1.3.7 स्वातंत्र्योत्तर युग के प्रमुख गद्य-लेखक

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद लोगों का मोहभंग होने लगा। मूल्य टूटने लगे। वैयक्तिक महत्वाकांक्षाएँ बढ़ने लगीं। ऐसे में साहित्यकारों ने यथार्थ स्थितियों को उजागर किया। मोहन राकेश ने 'अंधेरे बंद कमरे' के माध्यम से आस्थाविहीन समाज तथा अनिश्चित की स्थिति में लटके हुए मनुष्य को रेखांकित किया। इस दृष्टि से 'वे दिन' (निर्मल वर्मा), 'मछली मरी हुई' (राजकमल चौधरी), 'डाक बंगला' (कमलेश्वर), 'अपने से अलग' (गंगा प्रसाद विमल), 'यह पथ बंधु' (नरेश मेहता), 'राग दरबारी' (श्रीलाल शुक्ल), 'आपका बंटी' (मन्नू भंडारी), 'धरती धन न

अपना' (जगदीश माथुर), 'चित्तकोबरा' (मृदुला गर्ग), 'आधा गाँव' (राही मासूम रज़ा), 'गोबर गणेश' (रमेशचंद्र शाह) आदि उपन्यास उल्लेखनीय हैं।

इस युग में कहानी को लेकर अनेक साहित्यिक आंदोलन हुए। कुछ प्रमुख कहानी आंदोलन हैं - नई कहानी (मोहन राकेश), अ-कहानी (गंगा प्रसाद विमल), सचेतन कहानी (महीप सिंह), समांतर कहानी (कमलेश्वर)। इसी समय आधुनिकताबोध की प्रवृत्ति उभरी। इसके परिणामस्वरूप "भुवनेश्वर की 'सूर्यपूजा' और 'भेड़िए' शीर्षक कहानियों को जैनेंद्र, अज्ञेय और इलाचंद्र जोशी ने पल्लवित किया। 1950 के बाद की कहानियों में क्रमशः वैयक्तिकता का दबाव बढ़ता गया।" (हिन्दी साहित्य का इतिहास, सं. नगेंद्र, पृ.728)। प्रगतिवादी विचारधारा के प्रतिनिधि कहानीकार हैं यशपाल। अज्ञेय ने व्यक्ति के आत्मसंघर्ष का चित्रण किया है। इलाचंद्र जोशी ने अपनी कहानियों में मनोवैज्ञानिक केस हिस्ट्री प्रस्तुत की है। अमृतराय, मोहन राकेश, विष्णु प्रभाकर, भैरवप्रसाद गुप्त, राजकमल चौधरी, श्रीकांत वर्मा, उषा प्रियंवदा, महीप सिंह आदि इस युग के उल्लेखनीय साहित्यकार हैं।

कथा-साहित्य के साथ-साथ यात्रा-साहित्य, रिपोर्ताज, साक्षात्कार, बाल साहित्य, लघुकथा आदि अनेक विधाओं का सूत्रपात हुआ है। आज का युग विमर्शों का युग है। स्त्री, दलित, आदिवासी, वृद्ध, किन्नर, किसान, अल्पसंख्यक, पर्यावरण आदि अनेक विमर्श साहित्य के केंद्र में हैं। प्रभा खेतान, अनामिका, मैत्रेयी पुष्पा, कृष्णा अग्निहोत्री, मृदुला सिन्हा, ओमप्रकाश वाल्मीकि, पुन्नी सिंह, सुशीला टाकभौरे, रणेन्द्र, रमेश उपाध्याय, मौआ माझी आदि अनेक साहित्यकार सामने आ रहे हैं। हिन्दी गद्य-साहित्य का विकास निरंतर हो रहा है।

बोध प्रश्न

- कुछ प्रमुख कहानी आंदोलनों के नाम बताइए।

1.4 पाठ सार

छात्रो! आप इस पाठ के अध्ययन से इस बात से परिचित हो चुके हैं कि आधुनिक काल वास्तविक रूप से गद्य के विकास का काल है। इस काल से पहले भी हिन्दी साहित्य में गद्य लेखन के कुछ ग्रंथ प्राप्त होते हैं। लेकिन इनका परिमार्जित नहीं है। अठारहवीं शताब्दी में रामप्रसाद निरंजनी ने 'भाषा योगवशिष्ठ' नाम का गद्य ग्रंथ खड़ी बोली में लिखा था। रामचंद्र शुक्ल के अनुसार 'भाषा योगवशिष्ठ' परिमार्जित गद्य की प्रथम पुस्तक है और रामप्रसाद निरंजनी प्रथम प्रौढ़ गद्य लेखक। आरंभिक गद्य लेखकों में सदासुखलाल, इंशा अल्ला खाँ, लल्लूलाल और सदल मिश्र प्रमुख हैं। इसी काल में हिन्दी गद्य के स्वरूप को लेकर एक बहस भी छिड़ी। राजा शिवप्रसाद 'सितारे हिंद' जहाँ हिन्दी में अरबी-फारसी शब्दों को स्वीकार करने के पक्षधर थे वहीं राजा लक्ष्मण सिंह इन्हें हिन्दी में स्वीकार करने के पक्ष में नहीं थे। भारतेंदु ने मध्यम मार्ग अपनाकर खड़ी बोली को गद्य के लिए अपनाया। आगे के साहित्यकारों ने इसी खड़ी बोली को साहित्यिक रूप में विकसित किया। भरातेंदु युग, द्विवेदी युग, छायावाद युग, छायावादोत्तर युग, स्वातंत्र्योत्तर युग के प्रमुख गद्य-लेखकों ने हिन्दी गद्य के अनेक विधाओं को समृद्ध किया।

1.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं -

1. हिन्दी गद्य का प्रारंभिक रूप गोरखपंथी साधुओं की रचनाओं में मिलता है। यह राजस्थानी और ब्रज भाषा का मिश्रित भाषा रूप है।
2. 1635 ई. में मुल्ला वजही ने अपने प्रसिद्ध ग्रंथ 'सबरस' की रचना की।
3. अकबर के समय गंग कवि ने 'चंद छंद बरनन की महिमा' नामक एक पुस्तक खड़ी बोली में लिखी थी।
4. आधुनिक काल में परिमार्जित गद्य की प्रथम पुस्तक 'भाषा योगवशिष्ठ' है। इसकी रचना रामप्रसाद निरंजनी ने की थी।
5. फोर्ट विलियम कॉलेज ने जॉन गिल क्राइस्ट के निर्देशन में हिन्दी में पुस्तकें तैयार कराईं, जिससे हिन्दी गद्य शैली का बहुत विकास हुआ।
6. भारत में अंग्रेजी साम्राज्य की स्थापना के कारण कई परिवर्तन सामने आने लगे। उनका प्रभाव भारतीय जनजीवन पर पड़ने लगा।
7. हिन्दी गद्य के विकास में पत्र-पत्रिकाओं का योगदान रहा।
8. भारतेंदु हरिश्चंद्र ने जन साधारण की भाषा को साहित्य के लिए अपनाया। बाद के साहित्यकारों ने भी इसी भाषा को विकसित किया।

1.6 शब्द संपदा

1. अनगढ़पन = शिष्टता का अभाव
2. धर्मनिरपेक्ष = जो सभी धर्मों को समान मानता हो
3. परिमार्जित = स्वच्छ किया हुआ
4. हठयोग = नाथपंथियों में योग का एक प्रकार जिसमें कुंडलिनी जागरण कराकर सकारात्मक तक ले जाया जाता है।

1.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

1.7.1 सही विकल्प चुनिए -

1. 'अष्टयाम' के रचनाकार कौन हैं?

A. विट्ठलनाथ B. नाभादास C. वैकुंठमणि शुक्ल D. सुरति मिश्र

2. आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने किसे प्रथम प्रौढ़ गद्य लेखक माना है?

A. **रामप्रसाद निरंजनी** B. गंगादास C. अमीर खुसरो D. सुरति मिश्र

3. आधुनिक काल में 'खड़ी बोली के पितामह' किसे कहा जाता है?

A. रामप्रसाद निरंजनी B. गंगादास C. अमीर खुसरो D. सुरति मिश्र

4. हिन्दी का प्रथम साप्ताहिक पत्र _____ है।

A. बनारस अखबार B. मार्तंड **C. उदंत मार्तंड** D. प्रजामित्र

5. 'नासिकेतोपाख्यान' के रचनाकार _____ हैं।

A. सदल मिश्र B. लक्ष्मण सिंह C. वियोगी हरि D. इंशा अल्ला खाँ

6. सुमेल कीजिए -

1. राजा लक्ष्मण सिंह	(अ) भारतीय नवोत्थान के प्रतीक
2. अज्ञेय	(आ) सरस्वती
3. महावीर प्रसाद द्विवेदी	(इ) प्रजा हितैषी
4. भारतेंदु हरिश्चंद्र	(ई) नदी के द्वीप

A. 1-इ, 2-ई, 3-आ, 4-अ B. 1- अ, 2-ई, 3-आ, 4- इ

C. 1- आ, 2-ई, 3- इ, 4-अ D. 1- ई, 2- इ, 3- आ, 4- अ

7. आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार, हिन्दी गद्य का प्रारंभिक रूप मुख्य रूप से किनकी रचनाओं में पाया जाता है?

A. ईसाई मिशनरियों के अनुवादों में B. मुगल दरबार के कवियों की रचनाओं में

C. भारतेंदु मंडल के लेखकों की कृतियों में **D. गोरखपंथी साधुओं की रचनाओं में**

8. ब्रजभाषा गद्य के संदर्भ में 'अष्टयाम' नामक पुस्तक की विषय-वस्तु क्या है?

A. भगवान राम की दिनचर्या का वर्णन B. ब्रह्मज्ञान और योग साधना

C. शृंगार रस के विभिन्न स्वरूप D. वैष्णव आचार्यों की कथाएँ

9. आधुनिक काल में 'खड़ी बोली के पितामह' के रूप में किन्हें मान्यता प्राप्त है?

A. लल्लू लाल **B. संत गंगादास** C. रामप्रसाद निरंजनी D. अमीर खुसरो

10. रामप्रसाद निरंजनी की कृति 'भाषा योगवशिष्ठ' को हिन्दी साहित्य में किस विशेष उपलब्धि के लिए जाना जाता है?

A. परिमार्जित गद्य की प्रथम पुस्तक B. ब्रजभाषा गद्य का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण

C. हिन्दी का प्रथम साप्ताहिक समाचार पत्र D. हिन्दी का प्रथम उपन्यास

खंड (ब)

1.7.2 लघु प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. हिन्दी गद्य के उदय की पृष्ठभूमि विवेचित कीजिए।

2. ब्रज भाषा गद्य के बारे में चर्चा कीजिए।
3. भारतेंदु युग के गद्य लेखकों पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
4. छायावाद युग के कौन-सी सामाजिक एवं राजनैतिक परिवर्तनों का प्रभाव साहित्य पर पड़ा? स्पष्ट कीजिए।

खंड (स)

1.7.3 दीर्घ प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. हिन्दी गद्य के विकास के प्रमुख कारणों पर प्रकाश डालिए।
2. हिन्दी गद्य के विकास में महावीर प्रसाद द्विवेदी और सरस्वती पत्रिका की भूमिका की चर्चा कीजिए।
3. स्वातंत्र्योत्तर युग के प्रमुख गद्य-लेखकों पर प्रकाश डालिए।
4. छायावादोत्तर युग के प्रमुख गद्य-लेखकों के बारे में लिखिए।

1.8 पठनीय पुस्तकें

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास : रामचंद्र शुक्ल
2. हिन्दी साहित्य का इतिहास : सं. नगेंद्र
3. हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास : रामस्वरूप चतुर्वेदी
4. हिन्दी साहित्य : उद्भव और विकास : हजारी प्रसाद द्विवेदी

इकाई 2 : उपन्यास, कहानी एवं निबंध : परिभाषा, स्वरूप और तत्व

रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 मूल पाठ: उपन्यास, कहानी एवं निबंध : परिभाषा, स्वरूप और तत्व
2.3.1 उपन्यास
2.3.2 कहानी
2.3.3 निबंध
2.4 पाठ सार
2.5 पाठ की उपलब्धियाँ
2.6 शब्द संपदा
2.7 परीक्षार्थ प्रश्न
2.8 पठनीय पुस्तकें

2.1 प्रस्तावना

हिन्दी साहित्य के आधुनिक काल को गद्य काल कहा जाता है। इस काल में गद्य साहित्य का उत्तरोत्तर विकास हुआ। साहित्य में मनुष्य की संवेदनाएँ होती है। साहित्य पाठक के हृदय को कोमल और संवेदनशील बनाता है। आधुनिक काल में साहित्य में अनेक गद्य विधाओं का विकास हुआ है। इस इकाई में आप उपन्यास साहित्य के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

हिन्दी उपन्यास, कहानी एवं निबंध का विकास बीसवीं शताब्दी के आरंभ में हुआ। कहानी अंग्रेज़ी के 'शॉर्ट स्टोरी' तथा बांग्ला के 'गल्प' विधा के अर्थ में हिन्दी में विकसित हुई। 'मर्यादा' पत्रिका में बांग्ला के 'गल्प' पद को अपनाया गया। जबकि हिन्दी के प्रखर आलोचक आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने 'छोटी कहानी' पद का प्रयोग किया है। कहानी के स्वरूप को विभिन्न विद्वानों ने विविध प्रकार से परिभाषित किया है। किसी ने इसे एक बैठक में पढ़ी जाने वाली रोचक विधा कहा, तो किसी ने आकस्मिक घटनाओं की संघटना को आवश्यक माना। कहानी की परिभाषा, स्वरूप एवं तत्वों की की विवेचना किया गया है।

निबंध गद्य लेखन की विशेष विधा है जो किसी विषय पर विचारपूर्वक क्रमबद्ध रूप से लिखी गई हो। निबंध में किसी विषय विशेष का वर्णन किया जाता है। निबंध विधा के विकास के लिए विकसित तथा सुनिश्चित गद्य परंपरा का होना आवश्यक है। भारतेंदु काल से ही एक नई साहित्यिक विधा के रूप में हिन्दी में 'निबंध' विधा का सूत्रपात हुआ।

2.2 उद्देश्य

छात्रो! आप इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप -

- उपन्यास, कहानी एवं निबंध के अर्थ को समझ सेकेंगे।
- उपन्यास, कहानी एवं निबंध का स्वरूप और तत्व को जान सकेंगे।

- उपन्यास, कहानी एवं निबंध के विभिन्न परिभाषाओं के बारे में जान सकेंगे।
- उपन्यास, कहानी एवं निबंध विधाओं के बारे में जान सकेंगे।

2.3 मूल पाठ : उपन्यास, कहानी एवं निबंध : परिभाषा, स्वरूप और तत्व

हिन्दी साहित्य के आधुनिक काल में गद्य की अनेक विधाओं का उद्भव हुआ है। इनमें से प्रमुख है उपन्यास, कहानी एवं निबंध आदि। उपन्यास का दायरा विस्तृत होता है, कहानी का सीमित होता है और निबंध का विस्तार संक्षिप्त एवं समीक्षात्मक होता है। उपन्यास एवं कहानी में यथार्थ एवं कल्पना मिश्रित कहानी को आकर्षक ढंग से प्रस्तुत किया जाता है। उपन्यास, कहानी एवं निबंध किसे कहते हैं? इनके क्या-क्या तत्व हैं? उनके स्वरूप क्या है ? आदि विषयों पर आगे चर्चा करेंगे।

2.3.1 उपन्यास

2.3.1.1 अर्थ और परिभाषा

सबसे पहले हम उपन्यास शब्द के बारे में जानेंगे। 'उपन्यास' शब्द संस्कृत की 'अस' धातु से बना है, जिसका अर्थ है 'रखना'। इसमें 'उप' और 'नि' उपसर्ग हैं, और 'धत्र' अर्थ प्रत्यय का प्रयोग है। इस प्रकार मोटे रूप में उपन्यास का अर्थ है उप स्थापन। इस विधा के विकास के साथ इस शब्द के अनेक लाक्षणिक अर्थ बनते गए, अलग-अलग भाषाओं में उपन्यास का शब्दगत अर्थ अलग-अलग है। अंग्रेजी में इसे 'नॉवेल' कहा जाता है तो गुजराती में 'नवल कथा' तथा तेलुगु में 'नवला', मराठी में 'कादंबरी', उर्दू में 'नाविल' तथा बांग्ला में 'उपन्यास' कहा जाता है। हिन्दी में अंग्रेजी के 'नॉवेल' के अर्थ में 'उपन्यास' शब्द का प्रयोग किया जाता है।

कहा जाता है कि हिन्दी में उपन्यास विधा बांग्ला के माध्यम से अंग्रेजी से आई। अतः अंग्रेजी में इस विधा के संबंध में क्या कहा गया है यह जानना भी अनिवार्य है। आइए! हम देखेंगे कि विभिन्न कोशों में इस शब्द का क्या अर्थ दिया गया है।

न्यू वेबस्टर डिक्शनरी : A lengthy fictitious prose narrative having an almost unlimited range of subject matter and varied techniques containing one or more plot (उपन्यास एक ऐसे कल्पित गद्य विधा है जिसके विषय की सीमा असीम है, शिल्प कौशल में वैविध्य है और उसके एक या अनेक कथानक हो सकते हैं।)

केंब्रिज लर्नर्स डिक्शनरी : Novel (n) : A book that tells a story about imaginary people and events. (उपन्यास एक ऐसी पुस्तक है जो काल्पनिक लोगों अथवा घटनाओं के बारे में कहती है।)

मेक्डोनल शब्दकोश के अनुसार उपन्यास का अर्थ है - intimation, statement, declaration, discussion.

वर्धा शब्द कोश के अनुसार उपन्यास वह कल्पित और लंबी कहानी है जो अनेक पात्रों और घटनाओं से युक्त हो तथा जिसमें जीवन की विविध बातों का चित्रण किया गया हो।

हिन्दी शब्द सागर के अनुसार उपन्यास शब्द का अर्थ है 'पास रखी धरोहर'।

संस्कृत शब्दार्थ कौस्तुभ में उपन्यास शब्द अनेक अर्थों में प्रकट हुआ है - जैसे पास लाना, धरोहर, अमानत, प्रस्ताव, प्रमाण, उपक्रम, संधि का प्रकार, कल्पित या लंबी कहानी।

आइए! अब हम हिन्दी एवं अंग्रेजी विद्वानों द्वारा दी गई परिभाषाओं पर ध्यान केंद्रित करेंगे।

ई.एम. फोस्टर का मत है कि जीवन के गुप्त रहस्यों को अभिव्यक्त करने की विशेषता सबसे अधिक उपन्यास में है।

श्यामसुंदर दास की मान्यता है कि उपन्यास मनुष्य के वास्तविक जीवन की काल्पनिक कथा है। उपन्यास आज के युग की सर्वाधिक लोकप्रिय विधा है।

प्रेमचंद उपन्यास को मानव जीवन का चित्र मात्र समझते हैं। मानव चरित्र पर प्रकाश डालना और उसके रहस्यों को खोलना ही उपन्यास का मूल तत्व है।

गुलाबराय की मान्यता है कि उपन्यास कार्य-कारण शृंखला में बंधा हुआ गद्य कथानक है। इसमें अपेक्षाकृत अधिक विस्तार होता है। वास्तविक जीवन का प्रतिनिधित्व करने वाले व्यक्तियों से संबंधित वास्तविक व कालपनिक घटनाओं द्वारा मानव जीवन के सच को उद्घाटित किया जाता है।

आचार्य नंददुलारे वाजपेयी उपन्यास को आधुनिक युग का महाकाव्य मानते हैं।

देवराज उपाध्याय के अनुसार उपन्यास मानव जीवन का स्वच्छ और यथार्थ गद्यमय चित्र है। इसमें मानव जीवन के रहस्यों का उद्घाटन किया जाता है। उपन्यासकार यह कार्य सफल चरित्र-चित्रण द्वारा करता है।

अज्ञेय का मत है कि उपन्यास व्यक्ति के अपनी परिस्थितियों के साथ संबंध की अभिव्यक्ति के उत्तरोत्तर विकास का प्रतिनिधित्व करता है।

अतः उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर यह कहा जा सकता है कि उपन्यास उस रचना को कह सकते हैं, जो मानव जीवन के किसी विशेष पक्ष को हमारे निकट रखे। उपन्यास मानव समाज की विषमताओं, समस्याओं और बढ़ती आवश्यकताओं को अभिव्यक्त करता है। यह एक ऐसी गद्य विधा है, जिसमें कलात्मकता के साथ जीवन की व्याख्या रहती है। इसका उद्देश्य मनोरंजन भी है और साथ ही यथार्थ को उजागर करना भी। सामान्य रूप से उपन्यास को इस प्रकार परिभाषित किया जा सकता है - उपन्यास एक ऐसी गद्य विधा है जिसे जीवन का महाकाव्य कहा जा सकता है, क्योंकि यह मानव जीवन के समूचे परिदृश्य को कल्पनात्मकता के साथ प्रस्तुत करता है।

बोध प्रश्न

- उपन्यास का शाब्दिक अर्थ क्या है?
- प्रेमचंद ने उपन्यास को किस प्रकार परिभाषित किया है?

2.3.1.2. उपन्यास के तत्व

छात्रो! आप समझ ही चुके हैं कि उपन्यास में मानव जीवन की परिस्थितियों का अंकन होता है। उपन्यासकार किसी काल्पनिक अथवा वास्तविक घटना का चित्रण करता है। उस घटना को रोचक तरह से प्रस्तुत करने के लिए कथा की आवश्यकता होती है। उस कथा को

विस्तार देने में पात्र सहायक सिद्ध होते हैं और उन पात्रों के बीच संवाद कायम होना जरूरी है। इसी प्रकार परिवेश भी महत्वपूर्ण है। और तो और कहने का ढंग और उद्देश्य भी उपन्यास को रचने में सहायक सिद्ध होते हैं। इस प्रकार कथानक, चरित्र, संवाद, परिवेश, शैली और उद्देश्य उपन्यास के प्रमुख तत्व हैं। वस्तुतः उपन्यास के तत्वों को अलग-अलग करना उसी तरह है जिस तरह वनस्पति विज्ञान में फूल की पंखुड़ियों को अलग-अलग करके अध्ययन किया जाता है। बुनावट को जानने के लिए ऐसा करना तर्कसंगत है। तो आइए, इन तत्वों पर विस्तार से चर्चा करेंगे।

कथानक

कथानक अथवा वस्तु उपन्यास का महत्वपूर्ण तत्व है। इसे अंग्रेजी में 'प्लॉट' कहा जाता है। विभिन्न महत्वपूर्ण घटनाओं को लेखक एक क्रम में जब प्रस्तुत करता है तो, उसे कथावस्तु कह सकते हैं। यह उपन्यास का महत्वपूर्ण तत्व है। पाश्चात्य विद्वान विलियम हेनरी हडसन के अनुसार उपन्यास में घटनाएँ परिस्थितियों के अनुसार घटती हैं तो, कुछ देशकाल में किन्हीं व्यक्तियों के द्वारा की जाती हैं। जो घटित होता है और जो किया जाता है, इन सबको मिलाने से जो चीज बनती है उसे कथावस्तु या प्लॉट कहा जाता है। कुछ लेखक कथावस्तु को प्रमुखता नहीं देते फिर भी यह उपन्यास का मूल आधार है। यह नींव की तरह काम करता है। इसी पर उपन्यास का समूचा कलेवर निर्मित होता है। उपन्यास में मानव जीवन को समग्रता में प्रस्तुत किया जाता है। अतः एक मुख्य कथा होती है और साथ ही अनेक प्रासंगिक उप-कथाएँ भी होती हैं। उदाहरण के लिए प्रेमचंद के उपन्यास 'गोदान' में होरी, धनिया की कथा मुख्य है तो गोबर, मालती, मेहता, मातादीन आदि की प्रासंगिक उप-कथाएँ साथ-साथ चलती हैं।

उपन्यास की कथा चरित्र को विकसित करने वाली होनी चाहिए। कथा को विस्तार देते समय यह ध्यान रखना अनिवार्य है कि कहीं कोई प्रसंग असंगत और अप्रासंगिक न हो। उपन्यास की कथा चरित्र को विकसित करने वाली होनी चाहिए। काल्पनिक और अविश्वसनीय लगने वाली घटनाओं से बचना चाहिए। पहले के उपन्यासों में कथा के आरंभ से अंत तक एक शृंखला होती थी। अर्थात आरंभ, मध्य और अंत होता था। लेकिन आज ऐसा नहीं है। आज कथा का आरंभ किसी भी घटना या वर्णन आदि से हो जाता है। कभी-कभी किसी पात्र के अंतर्द्वंद्व से कथा की शुरूआत होती है या कभी संवादों से कथा शुरू होती है। यह भी आवश्यक नहीं कि कथा का कोई निश्चित अंत हो। अर्थात कथा का समापन कहीं भी हो सकता है। कभी-कभी लेखक समापन पाठक पर छोड़ देते हैं।

बोध प्रश्न

- कथावस्तु किसे कहते हैं?
- प्रासंगिक उप-कथाओं से आप क्या समझते हैं?

चरित्र चित्रण

कथावस्तु में जिन घटनाओं का उल्लेख किया जाता है वे कुछ व्यक्तियों के जीवन में घटित होती हैं और कुछ लोगों के द्वारा की जाती हैं या सहन की जाती हैं। और पुरुष या स्त्रियाँ जो इस घटनाक्रम को आगे बढ़ाते हैं वे 'ड्रैमेटिक परसोनी' अथवा चरित्र समूह का निर्माण करते

हैं। कहने का आशय है कि उपन्यास की कथा को आगे बढ़ाने में पात्र महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। जिन व्यक्तियों के जीवन की घटना को लेकर कथा का विकास किया जाता है, वे पात्र कहलाते हैं। पात्रों के चरित्र की विशेषताओं का चित्रण ही चरित्र चित्रण कहलाता है। किसी भी कथा में पात्रों की आवश्यकता होती है क्योंकि उनके बिना घटना का चित्रण असंभव है। इसलिए चरित्र चित्रण उपन्यास के महत्वपूर्ण तत्वों में से एक है। कथा के अनुरूप ही पात्रों का चयन किया जाता है। पात्रों के चयन के अनुरूप ही चरित्र चित्रण भी होता है। पात्र भी अलग-अलग होंगे। कुछ पात्र आदर्श होते हैं, कुछ काल्पनिक होते हैं, कुछ यथार्थ होते हैं, कुछ पात्रों में व्यक्तित्व की प्रधानता होती है। कुछ पात्रों में वर्ग विशेषताएँ होती हैं। कुछ पात्र बहिर्मुखी व्यक्तित्व के होते हैं तो कुछ अंतर्मुखी। बहिर्मुखी व्यक्तित्व के पात्र वे होते हैं जो किसी भी स्थिति में तत्काल प्रतिक्रिया करने को तैयार हो जाते हैं। ये खूब मिलनसार होते हैं। हर काम में रुचि लेते हैं और जरा-जरा सी बात पर चिंतित नहीं होते। वे ज्यादा बातचीत करना पसंद करते हैं और दूसरों की बातों से जल्दी प्रभावित हो जाते हैं। इनके विपरीत अंतर्मुखी व्यक्तित्व वाले पात्र होते हैं। अंतर्मुखी व्यक्ति प्रतिक्रिया करने से पहले झिझकता है। वह संकोची स्वभाव का होता है। वह नई स्थितों को पसंद नहीं करता। कभी-कभी उनसे डरता भी है। वह एकांत-प्रेमी होता है। लोगों से बहुत कम संपर्क रखता है। वह विचार और कल्पनाप्रधान होता है। ज्यादा संवेदनशील होता है। जरा-सी बात भी उसे जल्दी चुभ जाती है और वह चिंतित हो जाता है। वह जिद्दी भी होता है और बहस करना पसंद करता है। अंतर्मुखता और बहिर्मुखता उस व्यक्ति के व्यवहार से पता चलता है।

उपन्यासकार चरित्र चित्रण के लिए कई तरह की विधियाँ अपनाता है। सबसे पहले वह पात्र द्वारा किए जाने वाले कार्यों के माध्यम से चरित्र निर्माण करता है। पात्र के मन में उठने वाले विचार या भावनाओं के माध्यम से भी उसका चरित्र स्पष्ट होता है। एक पात्र दूसरे पात्र के बारे में जो कुछ कहता है वह भी पात्र के चरित्र चित्रण में सहायक सिद्ध होता है। कभी-कभी लेखक स्वयं पात्र के बारे में स्पष्ट करता है।

बोध प्रश्न

- कथा को आगे बढ़ाने में चरित्र चित्रण किस प्रकार सहायक सिद्ध होता है?
- ड्रैमेटिक परसोनी अथवा चरित्र समूह का निर्माण किस तरह से होता है?
- अंतर्मुखी और बहिर्मुखी व्यक्तित्व के बारे में आप क्या जानते हैं?

संवाद

पात्रों के बीच संवाद कायम होने से कथा को विस्तार मिलता है। पात्र आपस में जो बातचीत करते हैं उन्हें संवाद या कथोपकथन कहा जाता है। कथा को विस्तार मिलने के साथ-साथ रोचकता भी प्राप्त होती है। पात्रों के चरित्र पर प्रकाश डालने में संवाद सहायक बनते हैं। पात्रों की आयु, शिक्षा, रुचि एवं स्वभाव के अनुरूप संवाद योजना होनी चाहिए।

बोध प्रश्न

- संवाद योजना किस प्रकार होनी चाहिए?

परिवेश

परिवेश के अंतर्गत देशकाल अथवा स्थान और समय आता है जहाँ उपन्यास की कहानी चलती है। कथावस्तु के अनुरूप ही परिवेश का वर्णन करना चाहिए। जहाँ तक हो सके उपन्यासकार स्वाभाविकता लाने के लिए परिवेश के यथार्थ रूप को प्रस्तुत करता है। अर्थात यदि कथा गाँव की है तो पूरा परिवेश ग्रामीण होना चाहिए। कहने का आशय है कि गाँव की कथा हो तो गाँव के घर, गलियाँ, चौपाल, खेत-खलिहान, रहन-सहन, खान-पान, रीति-रिवाज, मेले-त्योहार, संस्कार आदि की जानकारी देने से ही लेखक ग्रामीण जीवन को सही अर्थों में रचना में प्रस्तुत कर सकता है। अनुभव और जानकारी के बल पर परिवेश का चित्रण हो तो उपन्यास में स्वाभाविकता का पुट मिलता है।

बोध प्रश्न

- परिवेश चित्रण किस प्रकार होना चाहिए?

भाषा-शैली

शैली का अर्थ है रचना करने का ढंग। लेखक की रुचि और विषयवस्तु के कारण शैली में परिवर्तन होता है। उपन्यास में कथावस्तु, पात्र और परिवेश के अनुरूप ही संवादों की भाषा होनी चाहिए। भाषा प्रयोग से कथा जीवंत हो उठती है। सरल और बोलचाल की भाषा प्रयोग रचना को सहज एवं स्वाभाविक बनाता है। हर लेखक की अपनी निजी शैली होती है। कथावस्तु और उद्देश्य को ध्यान में रखकर लेखक आवश्यकतानुसार व्याख्यात्मक, विश्लेषणात्मक, पत्रात्मक, संवादात्मक, प्रत्यक्ष कथन, परोक्ष कथन, डायरी शैली और पूर्वदीप्ति (flashback) शैली का प्रयोग करते हैं। इसे कथन भंगिमा भी कहा जा सकता है। चित्रा मुद्गल का उपन्यास 'पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपरा' पत्रात्मक शैली लिखा गया उपन्यास है।

बोध प्रश्न

- किस प्रकार का भाषा प्रयोग रचना को सहज बनाता है?

उद्देश्य

उपन्यास के उद्देश्य को प्रतिपाद्य भी कहा जाता है। अपने उद्देश्य को सहज रूप से पाठकों तक पहुँचाने में ही उपन्यासकार की सफलता सिद्ध होती है। कथावस्तु की प्रस्तुति द्वारा उद्देश्य स्पष्ट होना चाहिए। उद्देश्य कथित होने से उपदेश बन जाता है। 'गोदान' में किसानों का शोषण व्यंजित हुआ है, न कि प्रेमचंद द्वारा कहा गया है।

उपन्यास लेखन में इन तत्वों के अतिरिक्त लेखक का दृष्टिकोण, उनके विचार और अनुभव आदि भी कुछ मायने रखते हैं। अतः उपन्यास के तत्वों को बाँटकर देखना न्याय संगत नहीं होगा। ऐसी स्थिति में उपन्यास को दो तत्वो में बाँटा जा सकता है - 1. कथा तत्व और 2. संरचना तत्व। कथा तत्व के अंतर्गत कथा, घटनाएँ, अनुभव, लेखक का दृष्टिकोण, विचार और उद्देश्य स्वतः समाहित हो जाएँगे तथा संरचना तत्व के अंतर्गत चरित्र चित्रण, परिवेश, कथन भंगिमा (शैली), भाषा और संवाद आ जाते हैं। ये सभी तत्व एक-दूसरे पर निर्भर हैं और एक-दूसरे को सहायता देते हैं। क्योंकि कथा या वस्तु, घटनाओं का संयोजन आदि संरचना तत्व पर निर्भर रहते हैं। कहा जाए तो उपन्यास में आई हुई कहानी/ कहानियाँ एवं घटनाएँ एक सूत्र में

पिरोई गई होनी चाहिए। उनमें कसाव होना चाहिए। उनकी रचना कौतूहलतापूर्ण होनी चाहिए। वास्तविकता के प्रति आग्रह होना चाहिए। घटनाओं में गति होनी चाहिए। कथा की अभिव्यक्ति प्रभावपूर्ण होना चाहिए। कथन भंगिमा और परिवेश कथा के अनुरूप होने चाहिए। इन तत्वों का सही प्रयोग करने से उपन्यासकार अपने उद्देश्य में सफलता पा सकते हैं। इस संदर्भ में निर्मल वर्मा का यह कथन उल्लेखनीय है - "उपन्यास का गठन लेखक तैयार नहीं करता, स्वयं उसकी दृष्टि उसे निर्धारित करते हैं - जैसे नदी पहले अपना पाट तैयार करके नहीं बहती, स्वयं बहने के दौरान उसका पाट बनता जाता है।"

बोध प्रश्न

- उपन्यासकार अपने उद्देश्य में कब सफल हो सकता है?
- उपन्यास के विभिन्न तत्वों का उल्लेख कीजिए।

2.3.1.3 उपन्यास का रचनागत वैशिष्ट्य

छात्रो! अब तक आप उपन्यास के स्वरूप, तत्व और भेदों से परिचित हो ही चुके हैं। और यह भी जान चुके हैं कि उपन्यास किसे कहते हैं। उपन्यास आधुनिक जीवन के यथार्थ को बहुत निकटता से पहचानकर उसे हमारे समक्ष प्रस्तुत करता है। उपन्यास को किसी एक सुनिश्चित परिभाषा में बाँधना आसान कार्य नहीं। फिर भी उसको पारिभाषित करते हुए कहा जाता है कि उपन्यास आधुनिक गद्य की वह विधा है जो यथार्थ को बहुत सहज रूप से प्रस्तुत करता है। रचनाकार अपने अनुभव जगत को कल्पना से जोड़कर घटनाओं को इस तरह पिरोता है कि पाठक के समक्ष चित्र उभरने लगते हैं। उपन्यास के पात्र जीवंत होते हैं। घटनाएँ भी हमारे बीच की होती हैं। अतः उपन्यास पढ़ते समय हम सब किसी न किसी तरह से कथा के साथ जुड़ ही जाते हैं। कभी कभी तो हम स्वयं पात्र भी बन जाते हैं।

छात्रो! आप में से बहुत लोगों ने कोई न कोई उपन्यास अवश्य पढ़ा होगा। पहले के उपन्यासों में चमत्कार, तिलिस्म आदि से भरपूर अजीब घटनाओं का समावेश रहता था। घटना प्रधान उपन्यासों का भरमार था। पाठक को उस प्रकार के उपन्यासों से आनंद मिलता था। अपने उद्देश्य की पूर्ति भी लेखक घटनाओं के माध्यम से ही करता था। इसकी तुलना में आज का उपन्यासकार वास्तविकता को पाठकों के समक्ष लाने का प्रयास कर रहा है। इसलिए वह अपने पात्रों का चरित्र चित्रण इस प्रकार करता है कि वे काल्पनिक न लगे। पात्रों में सजीवता लाने का भरपूर प्रयास किया जाता है। आज का उपन्यासकार जीवन के यथार्थ को अपने अनुभव जगत के माध्यम से रचना में प्रस्तुत कर रहा है।

उपन्यास का जन्म पश्चिम में हुआ। पश्चिम के उपन्यासकारों ने उपन्यास को नया रूप प्रदान किया। समय के साथ-साथ उपन्यास विधा लोकप्रियता प्राप्त करती गई और समयानुरूप परिवर्तन भी आते गए। उपन्यास की रचना प्रक्रिया पर विचार करते हुए सोचा गया कि उपन्यास क्या है? मानव जीवन से इसका क्या संबंध है? इसे किस उद्देश्य से लिखा जाता है? तो आइए, पहले इन प्रश्नों के उत्तर खाजने का प्रयास करेंगे ताकि उपन्यास के रचना वैशिष्ट्य को आसानी से समझ सकेंगे।

उपन्यास में एक प्रधान कथा के इर्द-गिर्द अनेक उप-कथाएँ बुनी जाती हैं। इसमें जीवन का व्यापक चित्र अंकित होता है। कथा को विस्तार देने के लिए पात्रों के चरित्र का चित्रण किया जाता है। उसके लिए अनेक घटनाओं का समावेश करना पड़ता है। उपन्यास की रचना वैशिष्ट्य पर विचार करेंगे तो आप पाएँगे कि -

1. उसमें किसी घटना का विस्तृत वर्णन रहता है।
2. किसी स्थान विशेष और समय से घटना का संबंध होता है।
3. हर रचनाकार घटना को अपने ढंग से प्रस्तुत करता है।
4. यह घटना किसी पात्र या पात्रों से संबंधित होती है।
5. पात्र आपस में वार्तालाप करते हैं।
6. रचनाकार किसी न किसी उद्देश्य से ही रचना का सूत्रपात करते हैं।

किसी भी उपन्यास में इन बातों का समावेश होना आवश्यक है।

बोध प्रश्न

- उपन्यास के रचना वैशिष्ट्य पर ध्यान देने से क्या स्पष्ट होता है?

2.3.2 कहानी

2.3.2.1 अर्थ एवं परिभाषा

उन्नीसवीं सदी के आरंभ में हिन्दी में गद्य विधा के नवीनतम रूप कहानी का जन्म हुआ। वैसे तो कहानी का लोककथा रूप सदियों से आम जनता में सदैव व्याप्त रहा। हिन्दी कहानी का अर्थ जानने के लिए कहानी और कथा के अंतर को जानना आवश्यक है। कहानी में क्षण में घटित होने वाली संवेदना को प्रस्तुत करने के लिए किसी न किसी कथा का स्वयं ही प्रवेश हो जाता है। अर्थात कहानी में 'कार्य-व्यापार-शृंखला' का संतुलन अपरिहार्य होता है। हिन्दी कहानी अंग्रेजी के 'शार्ट स्टोरी' तथा बंगला के 'गल्प' के हिन्दी संस्करण के रूप में सामने आया। कहानी कहने-सुनने की आदिम परंपरा में मानव सदैव इसका प्रयोग करता आ रहा है, किंतु यह काव्यात्मक स्वरूप में ही अब तक प्रचलन में थी।

भारत में कहानियाँ विविध विषयों को लेकर काव्यात्मकता के साथ जन-जन में प्राचीन काल से ही प्रचलित थीं। इसे धार्मिक, सामाजिक, काल्पनिक, नैतिक तथा राजा-रानी आदि की मनोरंजक कथाओं को साहित्य तथा लोकगीतों में देखा जा सकता है। 'सरस्वती' पत्रिका में कहानी के लिए 'आख्यायिका' शब्द का प्रयोग हुआ, जिसे 'सुदर्शन', 'इंदु', 'वैश्योपकारक' आदि ने भी अपनाया। 'मर्यादा' पत्रिका में बंगला के 'गल्प' के अनुकरण पर कहानी के लिए 'गल्प' का प्रयोग किया जा रहा था।

बोध प्रश्न

- कहानी का अर्थ बताइए।
- 'सरस्वती' पत्रिका में कहानी के लिए किस शब्द का प्रयोग किया गया है?

परिभाषा

कहानी विधा को विविध विद्वानों ने अलग-अलग दृष्टिकोणों से परिभाषित किया है, जो इस प्रकार हैं -

प्रेमचंद के अनुसार 'कहानी वह ध्रुपद की तान है, जिसमें गायक महफ़िल शुरू होते ही अपनी संपूर्ण प्रतिभा दिखा देता है, एक क्षण में चित्त को इतने माधुर्य से परिपूर्ण कर देता है, जितना रात भर गाना सुनने से भी नहीं हो सकता।'

एडगर एलन पो के अनुसार 'कहानी वह छोटी आख्यानात्मक रचना है, जिसे एक बैठक में पढ़ा जा सके, जो पाठक पर समन्वित प्रभाव उत्पन्न करने के लिए लिखी गई हो, जिसमें उस प्रभाव को उत्पन्न करने में सहायक तत्वों के अतिरिक्त और कुछ न हो और जो अपने आप में पूर्ण हो।'

प्लेटो के अनुसार 'शरीर के लिए भोजन तथा व्यायाम और मस्तिष्क के लिए कहानी तथा संगीत अति आवश्यक है।'

एडीसन के अनुसार 'जब हमें शिक्षा दीक्षा या उपदेश देना हो, तब हमें कहानी की रचना करनी चाहिए। कहानी शिक्षण का साधन एवं प्रभावशाली माध्यम है।'

एच जी वेल्स के अनुसार 'कहानी गागर में सागर होती है। अतः लेखक उसमें एक उद्देश्य को लेकर चलता है तथा जैसे ही उद्देश्य चरमावस्था तक पहुँचता है, कहानी समाप्त हो जाती है।'

इस प्रकार कहानी विधा को परिभाषित करते हुए विद्वानों ने कभी उसे ध्रुपद की तान कहा, तो कभी एक बैठक में पढ़ी जाने वाली छोटी रचना कहा, किंतु उसके स्वरूप और महत्व की उपादेयता को सभी ने एकमत से माना। कहानी शिक्षा, उपदेश, मनोरंजन आदि सभी विषयों के लिए एक महत्वपूर्ण विधा के रूप में विकसित हुई। उल्लेखनीय है कि -

> "प्रेमचंद ने 1908 में प्रकाशित अपने पहले कहानी संग्रह 'सोजे वतन' की भूमिका में पहली बार 'शॉर्ट स्टोरी' पद के अर्थ में 'कहानी' पद का प्रयोग किया था, पर हिन्दी में आने के बाद वे अपनी कहानियों को कभी 'कहानी', कभी 'आख्यायिका'और कभी 'गल्प' कहते रहें। उनकी यह दुविधा उनके जीवन भर बनी रही, जिसका प्रमाण 1936 में प्रकाशित 'मानसरोवर' की भूमिका है। पर (आचार्य रामचंद्र) शुक्ल जी की मोहर लगने के बाद चौथे दशक में 'शॉर्ट स्टोरी' के लिए 'छोटी कहानी' (संक्षेप में 'कहानी') पद आलोचकों और कहानीकारों, दोनों के बीच, लगभग मान्य हो गया। (गोपाल राय, हिन्दी कहानी का इतिहास, पृ.18)

बोध प्रश्न

- प्लेटो ने मस्तिष्क के लिए क्या आवश्यक माना है?
- कहानी को 'ध्रुपद की तान' किसने कहा है?
- प्रेमचंद की दुविधा क्या थी?

2.3.2.2 स्वरूप

मानव ने कहने-सुनने की परंपरा को जब मौखिक से लिखित रूप में ढालना शुरू किया तो वह कविता की सरल भावधारा में प्रवाहित होने लगी। मानव ने जैसे-जैसे जीवन के विकास

की गति तीव्र की, उनके जीवन में विषमताओं ने भी उसी तीव्रता से डेरा जमाना शुरू किया। ऐसी ही विषमताओं के परत को खोलने के कार्य में साहित्यकार अलग-अलग गद्य विधाओं के माध्यम से निमग्न रहने लगे। हिन्दी गद्य की कहानी विधा में आदर्श, यथार्थ से आवेष्टित मानवतावाद को सदैव पुष्ट किया जाता रहा है।

कहानी के स्वरूप की चर्चा करते हुए जयशंकर प्रसाद कहते हैं - 'सौंदर्य की एक झलक का चित्रण करना और उसके द्वारा रस की सृष्टि करना ही कहानी का उद्देश्य है। हिन्दी कथासम्राट प्रेमचंद कहते हैं - 'कहानी एक रचना है, जिसमें जीवन के किसी एक अंग या किसी एक मनोभाव को प्रदर्शित करना ही लेखक का उद्देश्य रहता है। उसके चरित्र, उसकी शैली, उसका कथा विन्यास सब उसी भाव को पुष्ट करते हैं।'

पाश्चात्य विद्वान एच.जी.वेल्स कहानी के स्वरूप को इन शब्दों में व्यक्त करते हैं - 'कहानी को आकार में अधिक से अधिक इतना बड़ा होना चाहिए कि वह सरलता से बीस मिनट में पढ़ी जा सके।' इसी भाव को हडसन भी मानते हुए कहते हैं कि - 'कहानी उसी को कहेंगे जो एक बैठक में सरलता से पढ़ी जा सके।'

आर. फ्रांसिस फोस्टर कहते हैं - 'कहानी जीवन की महत्वपूर्ण घटना एवं विषम परिस्थितियों का संक्षिप्त विवरण और मनुष्य के भीतर स्थित आधारभूत गुणों को प्रदर्शित करती है।' कहानी का विषय यथार्थ, आदर्श, कल्पना, अतिकल्पना तथा सत्य का उद्घाटन आदि कोई भी हो सकता है। उसमें राजा-रंक, सामान्य जन अथवा पशु-पक्षी आदि कोई भी मुख्य पात्र के रूप में चित्रित किया जा सकता है। यही कारण है कि कहानी का यह स्वरूप वैदिक काल से आज तक गतिमान बना हुआ है।

मानव की अनुभूतियों तथा संघर्षों को कहानीकारों ने समसामयिकता के धरातल पर जीवंत रूप में प्रस्तुत किया है। कहानी का स्वरूप मानव की अनुभूतियों, विद्रोहों, संघर्षों तथा कठिन समस्याओं से अनुस्यूत होकर आकार ग्रहण करता है। कहानी शिक्षा, सूचना, मनोरंजन तथा ज्ञान से आगे बढ़ते हुए मानव जीवन की त्रासदी के विरेचन का उत्तम माध्यम बन चुकी है। कहानियों में युगानुरूप बोध, तर्क, चिंतन तथा समस्याओं से मुक्ति पथ अन्वेषित करने का प्रयत्न कहानीकार करते हैं। हिन्दी में कहानी की मूल प्रतिस्थापना का विकसित स्वरूप कम ही देखने में आता है। यही कारण है कि आलोचक हिन्दी कहानी के स्वरूप को अलग-अलग दृष्टिकोण से व्याख्यायित करते हैं।

कहानी का स्वरूप युगानुरूप परिवर्तित होता रहा है। प्रेमचंद से पूर्व हिन्दी कहानी मनोरंजन, शिक्षा, उपदेश तथा कल्पना के आकाश में विचरण कर रही थी। प्रेमचंद ने हिन्दी कहानी को धरा पर उतारकर उसे जन-जन तक पहुँचाया। प्रेमचंदोत्तर युग में हिन्दी कहानीकार प्रगतिशीलता की सीढ़ियाँ चढ़ते हुए प्रयोगवाद के छत पर पहुँच कर नए-नए प्रयोगों के साथ नई कहानी का रूप गढ़ने लगे। जीवन विकास की जटिलताओं ने कहानी को मनोवैज्ञानिक गुम्फन की दुनिया में पहुँचाया तो मानवतावादी दृष्टिकोण ने हिन्दी कहानी को दलित, स्त्री तथा आदिवासी विमर्शों की ओर मोड़ा। इस प्रकार हिन्दी कहानी का स्वरूप सतत परिवर्तनशील रहा।

बोध प्रश्न

- कहानी को बीस मिनट में पढ़ी जाने वाली रचना किसने माना?
- किसके अनुसार कहानी में सौंदर्य की एक झलक का चित्रण किया जाता है?

प्रिय छात्रो! जैसा कि आप जानते ही हैं, आधुनिक कथा साहित्य के दो प्रमुख रूप हैं - उपन्यास और कहानी। आम तौर से इन दोनों की पहचान का आधार आकार के भेद को माना जाता है। उपन्यास आकार में बड़ा होता है और कहानी छोटी होती है। लेकिन यह कसौटी काफी उलझी हुई है, क्योंकि 'बड़ा' और 'छोटी' सापेक्ष शब्द हैं जिनकी सीमा तय नहीं की जा सकती। इसकी अपेक्षा यह कहना अधिक उचित होगा कि जिस प्रकार महाकाव्य को संपूर्ण जीवन का तथा खंड काव्य को उसके किसी एक हिस्से का प्रतिनिधि माना जाता है, उसी प्रकार उपन्यास में व्यापक और कहानी में सीमित जीवन का प्रतिनिधित्व होता है। डॉ. गोपाल राय के शब्दों में-

> "जहाँ उपन्यास में मानव जीवन की सच्चाइयों और संवेदनाओं का एक 'विज़न' में समाहार होता है, वहाँ कहानी मात्र एक सच्चाई या संवेदना के बिंदु पर केंद्रित होता है। कहानी का यथार्थ उपन्यास के यथार्थ की तरह जीवन के व्यापक संदर्भों से युक्त नहीं होता। कहानी में उपन्यास की तरह पात्रों का बाहुल्य भी अपेक्षित नहीं होता।" (हिन्दी कहानी का इतिहास, पृ. 21)

इस प्रकार स्पष्ट है कि उपन्यास की तुलना में कहानी कम जटिल होती है। वह आम तौर पर किसी एक प्रसंग पर केंद्रित होती है। कहानी में प्रायः 'कोई एकल कथानक, कोई एकल दृश्य और सीमित संख्या में पात्र होते हैं। तथा वह छोटी कालावधि में नियोजित होती है।'

बोध प्रश्न

- उपन्यास और कहानी में क्या अंतर हो सकता है?

2.3.2.3 तत्व

कहानी विधा की रचना निम्नलिखित प्रमुख तत्वों के आधार पर किया जाता है -

कथावस्तु

कहानी की कथावस्तु प्रायः संक्षिप्त होनी चाहिए। कहानी के कथानक में आरंभ, विकास, कौतूहल, चरमसीमा एवं अंत का अलग-अलग पड़ाव होते हैं। लेकिन ये कथानक के अनिवार्य तत्वों के परिचायक नहीं हैं; क्योंकि प्रत्येक कहानी में इन समग्र तत्वों की अन्विति हो, यह आवश्यक नहीं है। अधिकतर कहानियों में कथानक संघर्ष की स्थिति तक पहुँचकर कौतूहल जगाते हुए चरम स्थिति से होते हुए अपने अंत तक पहुँचकर समाप्त हो जाता है।

पात्र एवं चरित्र-चित्रण

हिन्दी साहित्य के आधुनिक काल में घटना और समाज से अधिक व्यक्ति को प्रधानता दिया जाता है। वर्तमान हिन्दी कहानी में बुद्धिवादी तत्वों की प्रधानता के कारण यथार्थ एवं मनोवैज्ञानिक आधार पर चरित्र-चित्रण पर अधिक बल दिया जा रहा है। कहानी में पात्रों के संघर्ष को विशेष महत्व दिया जाता है। कहानी अपने आकार की संक्षिप्तता के कारण पात्र के सबसे अधिक प्रभावशाली क्षण को ही प्रस्तुत कर पाती है। पात्र केंद्रित कहानी में यथार्थ जगत का सहज चित्रण कहानी को पाठक के पर्याप्त नजदीक पहुँचा देता है। कहानीकार वर्णनात्मक

अथवा प्रत्यक्ष शैली द्वारा पात्र के चरित्र को उद्घाटित करता है। पात्र अपने एकाकी अथवा परस्पर वार्तालाप एवं क्रियाओं द्वारा अपने गुण-दोषों के साथ कहानी में चित्रित होते हैं। पात्रों के चरित्र की सशक्तता कहानी को प्रभावी स्वरूप प्रदान करता है।

देशकाल वातावरण

यद्यपि कहानी में देशकाल, वातावरण के विकास के लिए विशेष स्थान नहीं होता तथापि पात्र की मनःस्थिति को समझने में इनका चित्रण सहायक होता है। उदाहरण के लिए जयशंकर प्रसाद की कहानी 'पुरस्कार' में 'मधुलिका' की मनःस्थिति का चित्रण वातावरण के माध्यम से ही जीवंत बन पड़ा है। मनोवैज्ञानिक, ऐतिहासिक कहानियों में भौतिक वातावरण का सजीव चित्रण पाठक और श्रोता को कहानियों के जीवंत चित्रण से संबद्ध करता है।

संवाद या कथोपकथन

कहानी एक ऐसी विधा होती है, जिसमें लंबे-चौड़े संवाद के लिए कोई स्थान नहीं होता है। प्रेमचंद के 'बड़े भाई साहब' में बड़े भाई के लंबे-लंबे भाषण में भी चुटीलापन दृष्टिगत होता है। प्रायः कहानी में नाटकीयता तथा रोचकता का सृजन छोटे-छोटे संवादों के माध्यम से किया जाता है। इसीलिए संवादों से शुरू होने वाली कहानियाँ पाठकों पर अधिक प्रभाव डालती हैं। कहानियों के संवाद देशकाल, परिस्थितियों एवं पात्रानुसार होनी चाहिए। जब कहानी में संवाद रोचक, प्रवाहमय एवं तर्कयुक्तता के साथ प्रस्तुत किए जाते हैं तो कहानी की गति सहज रूप में प्रवाहित होती है।

भाषा-शैली

कहानीकार को कहानी कला में निपुण होने के लिए यह आवश्यक है कि उसका भाषा पर पूर्ण अधिकार हो। कम में अधिक कहने की कला कहानी को प्रभावी स्वरूप प्रदान करता है। कहानी की सहजता के लिए कहानीकार विषयानुसार शैली का चयन कर सकता है, जैसे आत्मकथात्मक, डायरी, पत्रात्मक, नाटकीय आदि ।

उद्देश्य

कहानी अपने आरंभिक दौर में मनोरंजन, उपदेश प्रधान हुआ करती थीं। किंतु बदलते युग एवं परिवेश ने उसे विविध समस्याओं, दृष्टिकोणों से संबद्ध करते हुए जीवन मूल्यों की नई स्थापनाओं की ओर मोड़ दिया। यही कारण है कि कहानी में निर्मिती एवं एकता का होना अति आवश्यक माना जाता है। कहानी जब पाठक से सीधे जुड़ जाती है, तो कहानीकार की सर्जना उद्देश्यपूर्ण हो जाती है।

बोध प्रश्न

- कहानी के कितने तत्व होते हैं?
- कहानी की कथावस्तु आकार में कैसी होनी चाहिए?
- कहानी के पात्रों की मनःस्थिति को समझने के लिए किसका चित्रण प्रभावी माना जाता है?
- कहानीकार का उद्देश्य कब सार्थक माना जाता है?

2.3.3 निबंध

2.3.3.1 अर्थ एवं परिभाषा

छात्रो! साहित्य का उद्देश्य हमारी अनुभूतियों की तीव्रता को बढ़ाना है। साहित्य का मुख्य लक्ष्य होता है समाज का मार्गदर्शन करना। साहित्य में अनेक विधाओं का समावेश होता है। उनमें से 'निबंध' का भी प्रमुख स्थान है। संस्कृत में निबंध का समानार्थी शब्द 'प्रबंध' है। प्रबंध के अतिरिक्त लेख, संदर्भ, रचना और प्रस्ताव आदि शब्द भी निबंध के पर्याय के रूप में प्रचलित हैं। निबंध में लेखक को अपने विचार तथा विषय को अभिव्यक्त करने में स्वतंत्रता रहती है।

हिन्दी शब्द सागर के अनुसार निबंध वह व्याख्या है, जिसमें अनेक मतों का संग्रह हो। निबंध शब्द की मूल व्युत्पत्ति लेटिन भाषा के इग्जागियम से हुई है और इसका भाव अंग्रेजी के वेइंग के निकट माना जाता है।

निबंध शब्द अंग्रेजी भाषा के 'कम्पोजीशन या ऐस्से' का समानार्थी है, जिसका अर्थ है 'प्रयत्न'। फ्रेंच भाषा में इसका पर्यायवाची 'ऐसाई' है। पाश्चात्य साहित्य के अनुरूप हिन्दी में भी निबंध लेखन का आरंभ गद्य भाषा तथा सामयिक पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से हुआ। प्रथम निबंधकार मोंतेन के अनुसार निबंध में निबंधकार के व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति होनी चाहिए - 'अपने निबंधों में मैं स्वयं को चित्रित करता हूँ और अपनी पुस्तकों में खुद ही विषय हूँ।'

अंग्रेजी निबंध के जनक बेकन निबंध को विकीर्ण चिंतन कहते हैं। उनके अनुसार निबंध विचारों का वह संक्षिप्त विवरण है, जिसमें बुद्धि तत्व की प्रधानता होती है। डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी का मत है कि -

> "निबंध की रचना प्रायः समाज और साहित्य के उदारता वादी कालों में माध्यम विशेष के रूप में अधिक होती है। आंतरिक स्तर पर निबंध का आरंभ यदि उदारतावादी मनःस्थिति से जोड़ा है, तो बाहरी तौर पर पत्र-पत्रिकाओं के विकास के साथ। (हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास, पृ. 154)

'निबंध' शब्द का व्युत्पत्ति परक अर्थ है 'नि + बंध'। अर्थात अच्छी तरह गठा या बंधा हुआ। मानक हिन्दी कोश के अनुसार निबंध ऐसा विचारपूर्ण विवरणात्मक और विस्तृत लेख होता है जिसमें किसी विषय के सब अंगों का मौलिक और स्वतंत्र रूप से विवेचन किया गया हो। हिन्दी में निबंध रचना आधुनिक काल में उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में अर्थात भारतेंदु युग में शुरू हुई। लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय ने बालकृष्ण भट्ट को हिन्दी का पहला निबंधकार माना है। अंग्रेजी में मोंतेन और बेकन ने जिस प्रकार वस्तुनिष्ठ और आत्मनिष्ठ निबंध लिखे उसी प्रकार हिन्दी में रामचंद्र शुक्ल और हजारी प्रसाद द्विवेदी ने निबंध के इन दोनों प्रकारों को स्थापित किया।

रामचंद्र शुक्ल के अनुसार -

"निबंध उसी को कहना चाहिए जिसमें व्यक्तित्व अर्थात व्यक्तिगत विशेषता हो। भावों की विचित्रता दिखाने के लिए ऐसी अर्थ योजना न की जाए जो उनकी अनुभूति की प्रकृति या लोक सामान्य स्वरूप से कोई संबंध ही न रखे, अथवा भाषा से सर्कस वालों की सी कसरतें या हठयोगियों के से आसन न कराए जाएँ, जिनका लक्ष्य तमाशा दिखाने के सिवाय और कुछ न हो।"

रामचंद्र शुक्ल ने निबंध के बारे में कहा है कि - "यदि पद्य कवियों की कसौटी है, तो निबंध गद्य की कसौटी है।" भाषा की पूर्ण शक्ति का विकास निबंधों में ही सबसे अधिक संभव होता है। इस प्रकार हिन्दी के प्रसिद्ध विद्वान तथा आलोचक आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने गद्य साहित्य में निबंध को महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया है। निबंध गद्य की सीमित रचना है। इसमें विषय के विवेचन की स्पष्टता होती है तथा सजीवता भी आवश्यक होती है।

बाबू गुलाबराय ने निबंध की परिभाषा में निबंध के सभी लक्षणों तथा तत्वों का समावेश किया है। "निबंध उस गद्य रचना को कहते हैं जिसमें एक सीमित आकार के भीतर किसी विषय का वर्णन या प्रतिपादन कर एक विशेष निजीपन, स्वच्छंदता, सौष्ठव और सजीवता के साथ ही आवश्यक संगति और सुसंबद्धता के साथ किया गया हो।"

शिवदास सिंह चौहन के अनुसार निबंध गद्य का अत्यंत शक्तिशाली रूप-विधान है।

जयनाथ नलिन के अनुसार निबंध स्वाधीन चिंतन और निश्छल अनुभूतियों का सरस, सजीव और मर्यादित गद्यात्मक प्रकाशन है।

पंडित श्यामसुंदर दास ने निबंध के बारे में कहा है, निबंध वह लेख है जिसमें किसी गहन विषय पर विस्तारपूर्वक और पांडित्यपूर्ण ढंग से विवेचन किया गया हो।

पदुमलाल पुन्नालाला बख्शी ने भी यह माना है कि कहानी की तरह निबंध कला भी आधुनिक युग की रचना है। वे निबंध को मन की स्वच्छंद रचना मानते हैं। अन्य विधाओं से निबंध को अलग करते हुए उन्होंने 'क्या लिखूँ' शीर्षक अपने निबंध में यह लिखा है कि -

"कवि उच्च मार्ग से प्रेरित होकर काव्य की रचना करते हैं। विशेषज्ञ ज्ञान की कसौटी पर सत्य की परीक्षा कर प्रबंध लिखते हैं। कहानीकार कल्पना के द्वारा मनुष्य जीवन का रहस्य खोलने के लिए चरित्रों की सृष्टि करते हैं, पर निबंध तो उस मानसिक स्थिति में लिखे जाते हैं, जिसमें न ज्ञान की गरिमा होती है और न कल्पना की महिमा। जिसमें जीवन का गौरव भूलकर हम अपने में ही लीन हो जाते हैं, जिसमें हम संसार को अपनी दृष्टि से देखते हैं और अपने ही भाव से ग्रहण करते हैं।"

डॉ. रामचंद्र तिवारी के शब्दों में -

"निबंध गद्य की एक आधुनिक विधा है। इसमें लेखक की रुचि एवं मनःप्रवृत्ति के अनुसार विचारों की शृंखला अव्यवस्थित और क्षिथिल अथवा सुगठित एवं व्यवस्थित, दोनों प्रकारों की हो सकती है। आत्मव्यंजना निबंध की मूलभूत विशेषता है। इसकी नितांत उपेक्षा किसी भी स्थिति में नहीं की जा सकती।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि निबंध गद्य की वह लघु रचना है, जिससे लेखक अपने व्यक्तिगत भावों, विचारों एवं अनुभूतियों को निष्पक्ष रूप से सरल शैली में तथा स्वतंत्र रूप से अभिव्यक्त करता है। निबंध एक सुव्यवस्थित और सयंत गद्य रचना है। निबंधकार एक साथ दार्शनिक, ऐतिहासिक, राजनीतिक और साहित्यकार की सम्मिलित प्रतिभा से युक्त दृष्टि जीवन और जगत पर डालता है।

बोध प्रश्न

- निबंध शब्द का अर्थ स्पष्ट कीजिए।
- निबंध को अंग्रेजी में क्या कहते हैं तथा इसकी उत्पति किस भाषा से हुई है?
- साहित्य का मुख्य लक्ष्य क्या है?
- आचार्य शुक्ल ने निबंध के बारे में क्या कहा है?
- निबंध की मूलभूत विशेषता क्या है?

2.3.3.2 निबंध : स्वरूप

छात्रो! आप जान गए हैं कि निबंध विधा का हिन्दी साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान है। यह गद्य की विशेष विधा है जो किसी विषय पर विचारपूर्वक एवं क्रमबद्ध रूप से लिखी गई हो। संस्कृत में 'निबंध' शब्द का अर्थ होता है 'बाँधना' अर्थात भावाभिव्यक्ति हेतु किसी भी विचारों का संगठित रूप निबंध कहलाता है। निबंध को गद्य की कसौटी कहा गया है। भाषा की पूर्ण शक्ति का विकास निबंधों से ही सबसे अधिक संभव होता है।

निबंध कई प्रकार के हो सकते हैं - विचारात्मक, भावात्मक, वर्णनात्मक, व्यंग्य एवं ललित। निबंधकार कलात्मक प्रयास के स्थान पर अपनी स्वयं की मौलिक सोच को विस्तार देता है अतः निबंध एक ऐसी कलाकृति है जिसके नियम लेखक द्वारा ही अस्वीकृत होते हैं। इसी प्रकार सहज, सरल एवं आडंबरहीन आत्माभिव्यक्ति के लिए एक परिपक्व और विचारशील गंभीर व्यक्तित्व की अपेक्षा होती है। यदि उसके कृतित्व में परिपक्वता का अभाव सा दिखता है, परंतु पाठक के साथ लेखक की निकटता और आत्मीयता साहित्य रूप की दृष्टि से हिन्दी में निबंध विधा आधुनिक युग की देन है। निबंध का क्षेत्र वैविध्यपूर्ण है, विषय और शैली की दृष्टि दोनों से।

बोध प्रश्न

- निबंध कैसी विधा है?
- निबंधकार को निबंध लेखन के समय किन बातों का ध्यान रखना पड़ता है?
- निबंध के कितने प्रकार हो सकते हैं?

2.3.3.1 निबंध के तत्व

प्रिय छात्रो! अब तक आप निबंध के अर्थ और स्वरूप से परिचित हो ही चुके हैं। किसी भी विधा को समझने के लिए उसके तत्वों को समझना आवश्यक होता है जिससे हम उस विधा को अन्य विधाओं से अलग कर सकते हैं। लेखक का व्यक्तित्व, उनके विचार और भावात्मक आधार तथा भाषा शैली मुख्य रूप से निबंध के प्रमुख तत्व हैं। निबंधकार का व्यक्तित्व उसके लेखन में

स्पष्ट झलकता है, जैसे आचार्य रामचंद्र शुक्ल, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंधों में इनके व्यक्तित्व को साफ देखा जा सकता है।

वैचारिक और भावात्मक तत्वों के आधार पर देखा जाए तो निबंधों में लेखक अपने विचारों को व्यक्त करता है, जो उनकी भावनाओं को भी स्पष्ट करने में सक्षम होती हैं।

साहित्य में भाषा-शैली का महत्वपूर्ण स्थान है। निबंध की भाषा विषय के अनुरूप होनी चाहिए। वाक्य रचना की दृष्टि से निबंध की दो प्रमुख शैलियाँ हैं - व्यास शैली तथा समास शैली।

व्यास शैली में रचनाकार विस्तारपूर्वक अपनी बात समझाता है। इसमें लंबे वाक्य होते हैं। निबंधकार इसमें उदाहरणों द्वारा विषय को स्पष्ट करता है। विषय को विस्तारपूर्वक समझना इस शैली की प्रमुख विशेषता है।

समास शैली के अंतर्गत लेखक छोटे-छोटे वाक्यों में अपने विचारों को स्पष्ट करता है। इसे समझने के लिए पाठक को बुद्धि पर जोर डालना पड़ता है। इस शैली में लिखे गए निबंधों को समझने के लिए व्याख्या की आवश्यकता होती है।

इसके अतिरिक्त निबंध के तत्व उस विधा के मूल उपकरण होते हैं, जिसमें उस विधा की रचना होती है। सरलता, रोचकता, सुबोधता तथा प्रसाधन क्षमता को निबंध के अन्य तत्वों के रूप में स्वीकार किया जाता है। विषय का चयन तथा मौलिक ढंग से उसका प्रस्तुतीकरण, आकार-प्रकार की मर्यादा का निर्धारण आदि में निबंधकार की कार्यकुशलता मानी जाती है। तत्वों से ही विधा विशेष की रचना होती है।

अनुभूति और अभिव्यक्ति वे तत्व हैं जिससे लेखक विषय या घटना को अनुभूत करके किसी न किसी माध्यम से अभिव्यक्त करता है। अनुभूति का संबंध हृदय से होता है। जीवन में अनेक दृश्य होते हैं जो कोई न कोई अनुभव दे जाते हैं। रचनाकार इस अनुभव को अपनी कल्पना द्वारा रचनात्मक रूप देता है तो यह व्यापक अनुभूति बन जाता है। यही भाव निबंध का रूप ले लेते हैं। अनुभूति ही रचनाकार को संवेदनशील बनाती है। जो जितना संवेदनशील होता है, वह उतना ही उच्च कोटि का निबंधकार होता है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि साहित्य के निर्धारित तत्व हैं अनुभूति, विचार, कल्पना एवं शैली। इन तत्वों के समावेश से ही निबंध को निर्मित किया जा सकता है।

बोध प्रश्न

- व्यास शैली की क्या विशेषता है?
- समास शैली किसे कहते हैं?

विचार

विचार प्रधान अथवा वैचारिक निबंध विश्लेषणात्मक होते हैं। विचारात्मकता निबंध का अनिवार्य अंग है। इसमें विषय की प्रधानता होती है अतः विचार तत्व निबंध में प्रमुख स्थान रखता है। जीवन की किसी भी घटना को देखकर किसी न किसी तरह की प्रतिक्रिया उत्पन्न होती है। इस प्रतिक्रिया के दौरान अनेक विचार उठते हैं तथा इन्हीं के धरातल पर निबंध का सृजन

होता है। विचारों और भावों के समावेश में विचार ही प्रधान होते हैं। विचारशून्य निबंध तो शब्दों का जाल मात्र ही होता है। अतः निबंध का प्रथम तत्व 'विचार' ही है।

शैली

निबंधकार अपने मौलिक विचारों को शैली विशेष में ढालता है। स्वतंत्र विचारों को एक रूप देने के लिए उसे शैलीबद्ध करता है, परिणामस्वरूप विचार निबंध का रूप ले लेता है। अतः स्पष्ट है कि निबंध का दूसरा तत्व शैली है।

निबंध की रचना मात्र अनुभूति एवं विचारों से नहीं होती। भाव एवं विचार कितने भी पुष्ट हों पर उत्कृष्ट शैली के अभाव में निबंध रचना असंभव है। निबंध का आरंभ कैसे हो, बीच में क्या हो रहा, वर्णन किस प्रकार किया जाए, ऐसे किसी निर्देश और नियम को मानने के लिए निबंधकार बाध्य नहीं होता है। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि निबंध एक रचना है और निबंधकार एक साधारण व्यक्ति।

निबंधकार अपनी प्रेरणा और विषय वस्तु की संभावनाओं के अनुसार अपने व्यक्तित्व और रचना का समर्थन करता है। इसी कारण निबंध में शैली का विशेष महत्व है। निबंधकार का व्यक्तित्व, उसकी प्रवृत्तियाँ, रुचियाँ, आस्थाएँ शैली द्वारा प्रकट होती हैं। वर्तमान में अनेक शैलियाँ देखने को मिलती हैं। जैसे समास शैली, व्यास शैली, प्रवाह शैली तथा व्यंग्य-विनोद शैली आदि।

शैली लेखक के व्यक्तित्व का प्रबल पक्ष है, जो उसकी अभिव्यक्ति को जीवंत एवं सशक्त बनाने में सहायक सिद्ध होती है। निबंध की शैली से ही पता चलता है कि निबंधकार कौन है क्योंकि प्रत्येक निबंधकार की निजी शैली होती है। निबंध को पढ़ते ही पता चल जाता है कि यह निबंध विद्यानिवास मिश्र का है या फिर आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का या फिर हरिशंकर परसाई का।

शैली की महत्ता को प्रतिपादित करते हुए गंगाप्रसाद गुप्त ने लिखा है, शैली निबंधों के लिए प्राण है। यदि शैली पर लेखक का पूर्ण अधिकार है, तो नि:संदेह वह उच्च कोटि का निबंधकार होगा। अतः स्पष्ट है कि शैली का सच्चा एवं उत्कृष्ट प्रयोग निबंध रचना में ही दृष्टिगोचर होता है।

कल्पना

कल्पना का स्थान निबंध लेखन में तीसरा है। जब विचारों को शैलीबद्ध किया जाता है, तो कल्पना का भी योगदान रहता है। कल्पना तत्व शैली के सहायक तत्व के रूप में काम करता है। कल्पना से अप्रस्तुत की योजना होती है। भाषा की रचनात्मकता का श्रेय कल्पना तत्व को ही जाता है, जो कि प्रस्तुत को बिंब, ध्वनि, प्रतीक, शब्द सौंदर्य तथा अप्रस्तुतों की योजना द्वारा रचती है।

अनुभूति

निबंधकार विश्लेषण करता है। तर्क की कसौटी पर विषय को कसता है। अतः भावना का स्थान प्रमुख न रहकर गौण रह जाता है। किंतु यह भी द्रष्टव्य है कि साहित्य भावना से अछूता नहीं रह सकता। अतः विचार, शैली और कल्पना के उपरांत निबंध में अनुभूति का महत्वपूर्ण

स्थान आता है। इसका स्थान अंतिम होता है। अतः अनुभूति निबंध में विशेष महत्व रखती है। इसके अभाव में निबंध लेख बनकर रह जाएगा।

अनुभूति का संबंध हृदय से हैं। इस अनुभव को लेखक कल्पना द्वारा रचनात्मक रूप देता है। तो व्यापक होकर अनुभूति बन जाती है। अनुभूति हमें संवेदनशील बनाती है और यह भी श्रेष्ठ निबंधकार का उदाहरण है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि उपर्युक्त तत्वों की सहायता से निबंध की रचना संभव है। सर्वप्रथम विचार ही निबंधकार को निबंध के सृजन हेतु प्रेरित करते हैं। इन विचारों को शैली का रूप दिया जाता है जिसके माध्यम से ही निबंधकार विचारों को प्रस्तुत कर पाता है। इस प्रस्तुतीकरण में भाषा का विशेष महत्व होता है। भाषा की रचनाधर्मिता के लिए ही कल्पना का आश्रय लिया जाता है। तर्क-वितर्क के कारण अनुभूति का स्थान अंतिम होते हुए भी मुख्य है।

बोध प्रश्न

- निबंध के मूल तत्व कौन-कौन से होते हैं?
- निबंध रचना का कौन सा अंग अनिवार्य है?
- निबंध रचना में शैली का क्या स्थान है?

2.4 पाठ सार

छात्रो! आप इस इकाई को सावधानीपूर्वक पढ़ा होगा। आपने देखा कि उपन्यास गद्य साहित्य की एक लोकप्रिय विधा है। जिस बात को पद्य में प्रस्तुत नहीं किया जा सकता उसे उपन्यास के माध्यम से सशक्त रूप से अभिव्यक्त किया जा सकता है। जन-जीवन के अत्यधिक निकट होने के कारण आरंभिक समय से लेकर वर्तमान समय तक उपन्यास ने अपनी जनप्रियता को बनाए रखा है।

आप जान ही चुके हैं कि उपन्यास के महत्वपूर्ण तत्व हैं कथावस्तु, चरित्र चित्रण, परिवेश, संवाद, भाषा-शैली और उद्देश्य। उपन्यास के स्वरूप निर्धारण में इन तत्वों का योगदान महत्वपूर्ण है। आपने इस इकाई में उपन्यास की विविध परिभाषाओं से भी परिचित हो चुके हैं जिससे उपन्यास के स्वरूप का अंदाजा लगाया जा सकता है। सामान्य रूप से कहा जा सकता है कि उपन्यास उस रचना को कह सकते हैं जो मानव जीवन के किसी विशेष पक्ष को हमारे निकट रखे। वह मानव समाज की विषमताओं, समस्याओं और बढ़ती आवश्यकताओं को सफल रूप से अभिव्यक्त करता है।

तत्वों के आधार पर उपन्यासों को सामाजिक, ऐतिहासिक, पारिवारिक, चरित्र प्रधान, घटना प्रधान, भाव प्रधान, पौराणिक, मनोवैज्ञानिक, ग्रामीण, आंचलिक, शहरी, आधुनिकता बोध से युक्त आदि वर्गों में विभाजित किया जा सकता है। पहले के उपन्यासों पर दृष्टि केंद्रित करने से यह बात स्पष्ट होती है कि कथा का शृंखलाबद्ध ढंग से विस्तार होता है। अर्थात आरंभ, मध्य और अंत सुनिश्चित होता है। लेकिन अब ऐसी स्थिति नहीं है। कथा कहीं से भी आरंभ हो सकती है और कहीं भी अंत।

हिन्दी कहानी अंग्रेजी के 'शार्ट स्टोरी' तथा बंगला के 'गल्प' के हिन्दी संस्करण के रूप में सामने आया। कहानी कहने-सुनने की आदिम परंपरा से आज तक मानव सदैव इसका प्रयोग करता आ रहा है, किंतु यह काव्यात्मक स्वरूप में ही अब तक प्रचलन में था। हिन्दी कहानी का विकास बीसवीं शताब्दी के आरंभ में हुआ। यह अंग्रेज़ी के 'शॉर्ट स्टोरी' तथा बांग्ला के 'गल्प' विधा के अर्थ में हिन्दी में विकसित हुई। आरंभ में हिन्दी कहानी विधा के लिए सरस्वती पत्रिका में 'आख्यायिका' पद का प्रयोग किया गया। मानव ने जैसे-जैसे जीवन के विकास की गति तीव्र की, उनके जीवन में विषमताओं ने भी उसी तीव्रता से डेरा जमाना शुरू किया। ऐसी ही विषमताओं के परत को खोलने के कार्य में साहित्यकार अलग-अलग गद्य विधाओं के माध्यम से निमग्न रहने लगे। हिन्दी गद्य की कहानी विधा में आदर्श, यथार्थ से आवेष्टित मानवतावाद को सदैव पुष्ट किया जाता रहा है।

कहानी का स्वरूप मानव की अनुभूतियों, विद्रोहों, संघर्षों तथा कठिन समस्याओं से अनुस्यूत होकर आकार ग्रहण करता है। कहानी शिक्षा, सूचना, मनोरंजन तथा ज्ञान से आगे बढ़ते हुए मानव त्रासदी के विरेचन का उत्तम माध्यम बन चुकी है। कहानियों में युगानुरूप बोध, तर्क, चिंतन तथा समस्याओं से मुक्ति पथ अन्वेषित करने का प्रयत्न कहानीकार करते हैं। हिन्दी में कहानी की मूल प्रतिस्थापना का विकसित स्वरूप कम ही देखने में आता है। यही कारण है कि आलोचक हिन्दी कहानी के स्वरूप को अलग-अलग दृष्टिकोण से व्याख्यायित करते हैं। कहानी का स्वरूप युगानुरूप परिवर्तित होता रहा है।

कहानी के कथानक में आरंभ, विकास, कौतूहल, चरमसीमा एवं अंत का अलग-अलग पड़ाव होते हैं। कहानी में पात्रों के संघर्ष को विशेष महत्व दिया जाता है। यद्यपि कहानी में देशकाल वातावरण के विकास के लिए विशेष स्थान नहीं होता तथापि पात्र की मनःस्थिति को समझने में इनका चित्रण सहायक होता है। बहुत कम में अधिक कहने की कला कहानी को प्रभावी स्वरूप प्रदान करता है। **कहानी जब पाठक से सीधे जुड़ जाती है तो कहानीकार की सर्जना उद्देश्यपूर्ण हो जाती है।** कहानी मानव समाज के जितने निकट होती है वह पाठक या श्रोता को उतनी ही उत्कंठित करती हुई उनकी संवेदनाओं को पुष्ट करती है।

विश्व की महान विभूतियों की कहानियाँ जब मानव जीवन के आरंभिक चरणों में सुनाई जाती है तो उसका व्यक्तित्व के विकास पर अमिट प्रभाव पड़ता है। वर्तमान सूचना प्रौद्योगिकी के विकास काल में भी कहानियों का महत्व यथावत बना हुआ है। कहानी की कहानी मानव सभ्यता के विकास से अपरिहार्य रूप से जुड़ी हुई है। यही कारण है कि विविध विद्वानों, आलोचकों ने कहानी को सार्वकालिक विधा के रूप में प्रतिस्थापित किया है।

निबंध आधुनिक गद्य साहित्य की प्रचलित एवं लोकप्रिय विधा है। उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तर काल में गद्य के विकास के साथ ही निबंधों का भी विकास हुआ। इसे अंग्रेजी में 'एस्से' कहा जाता है। गद्य साहित्य में निबंध की श्रेष्ठता को रेखांकित करते हुए शुक्ल जी ने निबंध को 'गद्य की कसौटी' कहा है। हिन्दी में निबंध विधा का सूत्रपात भारतेंदु काल में हुई। निबंध में गहन विषय पर विचारपूर्वक विवेचन किया जाता है। निबंध गद्य की लघु रचना है, जिसमें विचारों

और भावों को प्रभावशली ढंग से अभिव्यक्त किया जाता है। निबंध में निबंधकार किसी विषय को क्रमबद्ध, सुंदर, सुगठित एवं सुबोध भाषा में प्रस्तुत कर सकता है।

2.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं -

1. उपन्यास में मानव जीवन का चित्रण होता है। इस विधा में मनुष्य के आस-पास के परिवेश को देखा जा सकता है।
2. उपन्यास एक ऐसी गद्य विधा है, जिसे 'जीवन का महाकाव्य' कहा जा सकता है, क्योंकि यह मानव जीवन के समूचे परिदृश्य को कल्पनात्मकता के साथ प्रस्तुत करता है।
3. उपन्यास के प्रमुख रचना तत्व हैं - कथावस्तु, चरित्र चित्रण, संवाद, परिवेश, भाषा-शैली और उद्देश्य।
4.. अपने आधुनिक स्वरूप में हिन्दी 'कहानी' अंग्रेजी की 'शार्ट स्टोरी' तथा बंगला के 'गल्प' के हिन्दी संस्करण के रूप में विकसित विधा है।
5. आरंभ में हिन्दी कहानी विधा के लिए सरस्वती पत्रिका में 'आख्यायिका' नाम का प्रयोग किया जाता था। लेकिन बाद में 'कहानी' नाम रूढ़ हो गया।
6. कहानी का स्वरूप मनुष्य की अनुभूतियों, विद्रोहों, संघर्षों तथा कठिन समस्याओं से गुंथ कर आकार ग्रहण करता है।
7. प्रयोजन की दृष्टि से कहानी शिक्षा, सूचना, मनोरंजन तथा ज्ञान से आगे बढ़ते हुए मानव त्रासदी के विरेचन तक का उत्तम माध्यम बन चुकी है।
8. कहानियों में युगानुरूप बोध, तर्क, चिंतन तथा समस्याओं से मुक्ति का रास्ता खोजने का प्रयत्न भी शामिल रहता है।
9. निबंध एक सुव्यवस्थित और संयत गद्य रचना है, जिसमें विचारों और भावों को प्रभावशली ढंग से अभिव्यक्त किया जाता है।
10. निबंध में भाषा की रचनात्मकता का श्रेय कल्पना तत्व को जाता है क्योंकि लेखक अपने अनुभव को लेखक कल्पना द्वारा रचनात्मक रूप देता है।

2.6 शब्द संपदा

1. अंतर्मुखी = आत्मकेंद्रित
2. अप्रासंगिक = विषय से असंबद्ध
3. अन्विति = एकता या संगति
3. कलेवर = आकार
4. तिलिस्मी = जादू या चमत्कार का वर्णन हो

5. बहिर्मुखी = बाहर की दुनिया में रुचि लेना वाला
6. गुम्फन = गूँथना या गाँठना
8. निर्झरिणी = झरने के जल से बहने वाली नदी या पहाड़ी नदी
9. ध्रुपद = गीतों की विशिष्ट शैली जिसमें स्वर और लय का विचलन न हो
10. पारदर्शी = साफ़
11. बहुज्ञ = बहुत विषयों का ज्ञानी
12. यथार्थ = सत्य/कल्पना से परे

2.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

2.7.1 सही विकल्प चुनिए -

1. पत्रात्मक शैली में लिखा गया उपन्यास कौन सा है?

A. चंद्रकांता B. बाणभट्ट की आत्मकथा **C. नाला सोपारा** D. गोदान

2. इनमें से कौन-सा तत्व कथा तत्व नहीं हैं?

A. कथा B. घटनाएँ C. कथन भंगिमा **D. अनुभव**

3. कहानी के लिए अंग्रेजी में प्रयुक्त शब्द इनमें से क्या है?

A. लिटिल स्टोरी B. **शार्ट स्टोरी** C. मिनी स्टोरी D. कोई नहीं

4. कहानी का स्वर्णिम काल किसे माना जाता है?

A. भारतेंदु युग B. द्विवेदी युग **C. प्रेमचंद** D. उपरोक्त सभी

5. निबंध को गद्य की कसौटी किसने कहा?

A. रामचंद्र शुक्ल B. हजारी प्रसाद द्विवेदी

C. श्यामसुंदर दास D. उपरोक्त सभी

6. निबंध गद्य का शक्तिशाली रूप विधान है। यह किसने कहा?

A. शिवदास सिंह चौहान **B. गुलाबराय** C. श्यामसुंदर दास D. उपरोक्त सभी

7. 'उपन्यास' शब्द की व्युत्पत्ति के अनुसार इसमें किन उपसर्गों का प्रयोग हुआ है?

A. उप और प्र B. प्रति और उप C. अति और नि **D. उप और नि**

8. मराठी भाषा में 'उपन्यास' विधा को किस नाम से पुकारा जाता है?

A. कादंबरी B. गल्प C. नवला D. नवल कथा

9. आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने गद्य साहित्य में किस विधा को 'गद्य की कसौटी' माना है?

A. उपन्यास B. कहानी **C. निबंध** D. नाटक

10. सुमेल कीजिए -

1. चारुचंद्रलेख	(अ) प्रेमचंद
2. बुनियाद	(आ) नरेंद्र कोहली
3. सेवासदन	(इ) मनोहर श्याम जोशी
4. वसुदेव	(ई) हजारी प्रसाद द्विवेदी

A. 1-ई, 2-इ, 3-अ, 4-आ B. 1-ई, 2- अ, 3- इ, 4-आ

C. 1-ई, 2-इ, 3- आ, 4- अ D. 1- आ, 2-इ, 3-अ, 4- ई

खंड (ब)

2.7.2 लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. उपन्यास किसे कहते हैं? स्पष्ट कीजिए।
2. उपन्यास की कथा को आगे बढ़ाने में पात्रों की भूमिका निरूपित कीजिए।
3. 'कहानी' किसे कहते हैं? विभिन्न परिभाषाओं के आधार पर स्पष्ट कीजिए।
4. 'निबंध' किसे कहते हैं? विभिन्न परिभाषाओं के आधार पर स्पष्ट कीजिए।

खंड (स)

2.7.3 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. उपन्यास की परिभाषाओं के आधार पर उसके स्वरूप पर प्रकाश डालिए।
2. कहानी के अर्थ, परिभाषा और स्वरूप पर प्रकाश डालिए।
3. कहानी के तत्वों पर विस्तार से प्रकाश डालिए।
4. निबंध के बारे में आप क्या समझते हैं? अपने शब्दों में लिखिए।
5. निबंध के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए उसके तत्व पर प्रकाश डालिए।

2.8 पठनीय पुस्तकें

1. साहित्यिक विधाएँ - पुनर्विचार : हरिमोहन
2. हिन्दी साहित्य का इतिहास : सं. नगेंद्र
3. हिन्दी कहानी - रचना और परिस्थिति : सुरेंद्र चौधरी
4. हिन्दी कहानी का इतिहास : गोपाल राय
5. हिन्दी निबंधकार : जयनाथ नलिन
6 गद्य के नए आयाम : कृष्ण गोपाल रस्तोगी

इकाई 3 : जैनेंद्र : एक परिचय

रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 मूल पाठ : जैनेंद्र : एक परिचय
3.3.1 जीवन परिचय
3.3.2 रचना यात्रा
3.3.3 रचनाओं का परिचय
3.3.4 हिन्दी साहित्य में स्थान एवं महत्व
3.4 पाठ सार
3.5 पाठ की उपलब्धियाँ
3.6 शब्द संपदा
3.7 परीक्षार्थ प्रश्न
3.8 पठनीय पुस्तकें

3.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो! आप उपन्यास सम्राट प्रेमचंद से परिचित न हों यह हो ही नहीं सकता। हिन्दी उपन्यास साहित्य के विकास-क्रम में उपन्यासकार लाला श्रीनिवास दास (परीक्षा गुरु) के बाद प्रेमचंद का जो स्थान है, प्रेमचंद के पश्चात वही स्थान जैनेंद्र कुमार का है। इस इकाई में आप प्रेमचंद के समकालीन और उनके पश्चात हिन्दी कथाकार के रूप में अपनी अलग पहचान बनाने वाले एक प्रमुख व्यक्तित्व का परिचय प्राप्त करेंगे।

प्रेमचंदोत्तर उपन्यासकारों में जैनेंद्र कुमार का विशिष्ट स्थान है। छायावादोत्तर काल के कथा साहित्य का परिदृश्य जैनेंद्र कुमार से निर्मित होना शुरू होता है। वे प्रेमचंद के मित्र, सहयोगी और शिष्य जैसे हैं। पर अपनी संवेदना और भाषा प्रयोग में प्रेमचंद से आगे निकलते प्रतीत होते हैं। वे हिन्दी साहित्य के उन गिने चुने साहित्यकारों में से एक हैं जो मूलतः पश्चिमी उत्तर प्रदेश अर्थात ठेठ हिन्दी प्रदेश से आते हैं।

जैनेंद्र को हिन्दी उपन्यास और कथा-साहित्य के इतिहास में मनोविश्लेषणात्मक परंपरा के प्रवर्तक के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त है। एक कहानीकार के रूप में 'अपने पथ के अनूठे अन्वेषक' और 'हिन्दी कथा साहित्य के गोर्की' जैनेंद्र कुमार की उपलब्धियाँ अनेक हैं। आपको इनके जीवन और कृतित्व से परिचय प्राप्त करते समय इनकी सादगी, सहजता और विद्वत्ता पर गर्व करने को मन चाहेगा।

3.2 उद्देश्य

आपको इस इकाई के शीर्षक से ही संकेत मिल गया होगा कि यह जैनेंद्र कुमार के परिचय से संबंधित है। इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप -

- जैनेंद्र कुमार के व्यक्तित्व और कृतित्व से परिचय प्राप्त करेंगे।
- जैनेंद्र की प्रमुख रचनाओं के बारे में जान सकेंगे।
- जैनेंद्र कुमार के संपूर्ण रचना संसार को देख सकेंगे।
- हिन्दी कथा साहित्य को उनकी देन का स्वयं आकलन कर सकेंगे।

3.3 मूल पाठ : जैनेंद्र : एक परिचय

3.3.1 जीवन परिचय

जैनेंद्र कुमार का जन्म 2 जनवरी, 1905 ईस्वी को अलीगढ़ (उत्तर प्रदेश) जिले के कौड़ियागंज कस्बे में हुआ था। इनकी माता का नाम रमादेवी बाई और पिता का नाम प्यारे लाल था। सकट-चतुर्थी के दिन जन्म लेने के कारण माँ ने 'सकटुआ' नाम धर दिया किंतु पिता ने पुत्र के तेजोदीप्त प्रसन्न मुख को देखकर नाम रखा - आनंदीलाल।

जैनेंद्र ने बचपन से ही संघर्ष का जीवन जिया। दो वर्ष के थे कि पिता की मृत्यु हो गई। उनके मामा (जो बाद में सुप्रसिद्ध देशभक्त महात्मा भगवानदीन के नाम से विख्यात हुए) उनकी माँ को अपने साथ ले गए, जहाँ वे रेलवे की नौकरी करते थे। लेकिन दो साल बाद ही उन्होंने स्वयं सब कुछ छोड़ संन्यास ले लिया। संघर्षशील माँ ने अपने बल-बूते पर जैनेंद्र को पाला-पोसा। माँ का संघर्ष और मामा का संन्यास जैनेंद्र की चेतना में सदा के लिए बस गए। यह चेतना उनके जीवन और लेखन दोनों में सर्वत्र दिखाई देती है। जैनेंद्र की दो बहनें थी। बड़ी बहन जीवन भर अविवाहित रहीं ।

15 वर्ष की आयु तक वे यही नहीं समझ पाए कि मामा भगवानदीन उनके पिता नहीं, माँ के भाई हैं। आप अब समझ ही गए होंगे कि जैनेंद्र कुमार नाम तो बहुत बाद में पड़ा, जन्म का नाम तो आनंदीलाल था। इनके मामा ने हस्तिनापुर में एक गुरुकुल की स्थापना की थी। वहीं जैनेंद्र की प्रारंभिक शिक्षा दीक्षा भी हुई। यहीं यह नया नामकरण भी हुआ। सन 1912 में उन्होंने गुरुकुल छोड़ दिया। प्राइवेट रूप से दसवीं की परीक्षा देने के लिए बिजनौर आ गए किंतु परीक्षा वे 1919 में पंजाब से ही दे सके।

उच्च शिक्षा काशी हिंदू विश्व विद्यालय में प्रारंभ हुई। 1921 में उन्होंने विश्वविद्यालय की पढ़ाई छोड़कर गांधी जी के द्वारा चलाए जा रहे अंग्रेजी शासन के विरोध में असहयोग आंदोलन में भाग लेने के उद्देश्य से दिल्ली आ गए। कुछ समय के लिए वे लाला लाजपत राय के 'तिलक स्कूल ऑफ पॉलिटिक्स' में भर्ती हुए। फिर उसे भी छोड़कर साहित्य सेवा में रम गए। 1921 से 1923 के बीच कुछ व्यापार, फिर नागपुर में राजनीतिक पत्रों के संवाददाता के रूप में कार्य और गिरफ्तारी के बाद दिल्ली लौट कर लेखन कार्य में ही मन लगाने का प्रयत्न किया। कुछ दिन कलकत्ता में भी बिताए पर बात नहीं बनी।

युवा जैनेंद्र के सामने अपने भविष्य के कर्म क्षेत्र चुनने की समस्या रही क्योंकि देश भर में गांधी जी के नेतृत्व में स्वतंत्रता के लिए आंदोलन चलाए जा रहे थे। वे कुल मिलाकर तीन बार जेल भी गए। जैनेंद्र कुमार ने अपने जीवन संघर्ष का वर्णन करते हुए लिखा है, "मैं दुनिया में आ पड़ा। पर दुनिया में मेरी किसी तरह की जान पहचान न थी। समंदर की लहरों पर तिनका

तैरता है क्योंकि हल्का होता है। मुझमें भी कहीं किसी तरह का वजन नहीं था और बरसों लहरों पर मैं इधर-उधर उतराया किया।"

कर्मनिष्ठा और ईमानदारी का गुण उन्हें दाय में मिला था। कोई काम छोटा बड़ा नहीं होता। इसलिए जैनेंद्र ने जीवन में स्टाम्प-फ़रोशी और कपड़ों की फेरी लगाई और गाँवों की पैंठ में जाकर कपड़ा बेचा। थक-हार कर इन्होंने लेखन कार्य को ही अपना काम मान लिया। जैनेंद्र कुमार का जीवन जितना सरल, सहज और सादा था, वे भीतर से उतने ही गहरे थे। प्रेमचंद ने लिखा है, 'उनमें साधारण सी बात को भी कुछ इस ढंग से कहने की शक्ति है जो तुरंत आकर्षित करती है। उनकी भाषा में एक खास प्रकार की लोच है, एक खास अंदाज है।' आप कह सकते हैं कि जैनेंद्र कुमार में एक आम आदमी, साधारण गृहस्थ, मार्मिक लेखक और सघन विचारक का अद्‌भुत समन्वय है। वे आस्तिक भी थे और जैन भी। उनका महात्मा गांधी, जवाहरलाल नेहरू, राजेंद्र प्रसाद, विनोबा भावे, राधाकृष्णन, जयप्रकाश नारायण, इंदिरा गांधी, राजीव गांधी आदि नेताओं से सीधा संवाद रहा। किंतु यह संवाद राष्ट्रीय हितों की खातिर था, निजी स्वार्थों के लिए कदापि नहीं। गांधी पर उनकी आस्था सदा रही। लेकिन उन्होंने गांधी टोपी कभी न पहनी। स्वतंत्रता आंदोलन में सत्याग्रही अवश्य बने, जेल भी गए किंतु आजादी के बाद राजनीति न की। इमेर्जेंसी के समय इंदिरा गांधी से दो टूक कह दिया कि यह गलत है और इसे तुरंत वापिस लेना चाहिए। जैनेंद्र कुमार ने एक लेखक और साहित्यकार के दायित्व को बख़ूबी निभाया।

जैनेंद्र कुमार की कुल रचनाओं की संख्या 57 बताई जाती है जिसमें से मौलिक उपन्यास 12 हैं। 1927 में उन्होंने एक कहानी लिखी। 'खेल' नामक यह कहानी 'विशाल भारत' में प्रकाशित होकर बहुत लोकप्रिय हुई। 1929 में 'परख' उपन्यास के लिए हिंदुस्तानी अकादमी पुरस्कार, 1966 में लघु उपन्यास 'मुक्तिबोध' के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया। भारत सरकार ने 1971 में उन्हें पद्म भूषण से भी सम्मानित किया। 1985 में उन्हें उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान का सर्वोच्च सम्मान 'भारत भारती' मिला जिसे प्रदान करते हुए तत्कालीन प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने अपने वक्तव्य में जैनेंद्र कुमार को 'आत्मा का शिल्पी' कहा। सही रोजगार की ऊहापोह के साथ-साथ लेखन करते-करते सहज और सरल जीवन बिताकर जैनेंद्र कुमार ने 24 दिसंबर, 1988 को अंतिम साँस ली। लेखक की तरह जिए और लेखक की तरह मरे। किसी का कोई अनुग्रह कभी स्वीकार न किया। विष्णु खरे ने उनके निधन पर अपने संपादकीय में लिखा था, "भारतीय महालेखन में वे व्यास के ज्यादा समीप हैं, वाल्मिकि के कम; कबीर ज्यादा हैं, सूर-तुलसी कम; गालिब-मीर ज्यादा हैं, इकबाल-फ़ैज़ कम। उन्हीं की शैली में जिसकी संक्रामकता घातक है, वे जैनेंद्र ज्यादा हैं, प्रेमचंद कम।" अपनी अलग पहचान बनाकर जैनेंद्र कुमार हिन्दी कथा-साहित्य के अमर हस्ताक्षर बने ।

बोध प्रश्न

- जैनेंद्र कुमार का बचपन का नाम क्या था और उनका यह दूसरा नाम कैसे पड़ा?
- जैनेंद्र कुमार के लालन-पालन में उनके मामा का योगदान क्या रहा?
- जैनेंद्र कुमार को आजीविका के लिए क्या-क्या करना पड़ा?

3.3.2 रचना यात्रा

जैनेंद्र कुमार ने अपनी उर्वर लेखनी से प्रचुर लेखन कर अपने पाठकों को लीक से हटकर कृतियाँ दीं। उन्होंने घिसी पिटी नैतिकता और संकीर्णता से अपने पाठकों को उबारकर उन्हें आत्मचिंतन और आत्मावलोकन का अवसर दिया। डॉ. नगेंद्र के शब्दों में, "हिन्दी उपन्यास के क्षेत्र में जैनेंद्र ने एक पहेली के रूप में पदार्पण किया। पाठक को घिसी पिटी एवं संकीर्ण नैतिकता से निकालकर मूल नैतिकता तक पहुँचाने वाले गहन आत्म-चिंतन की ओर सर्वप्रथम उन्होंने ही प्रवृत्त किया।"

हिन्दी साहित्य में उनका आविर्भाव कथाकार के रूप में हुआ। 'परख' और 'सुनीता' उपन्यासों ने उन्हें प्रेमचंदोत्तर उपन्यासकारों का सिरमौर बनाया और पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित कहानियों ने आम लोगों का ध्यान आकृष्ट किया। उनका कथा साहित्य समाज से विद्रोह का परिचायक बनकर उभरा।

जैनेंद्र कुमार ने उपन्यास-क्षेत्र में एक नई शैली का सूत्रपात किया। उन्होंने अपनी रचनाओं के द्वारा अपने युग की मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनीतिक समस्याओं को अपने सुचिंतित दृष्टिकोण से देखा तथा उनका समाधान भी अपने ही चिंतन एवं अनुभव के अनुसार किया है। उन्होंने इसके लिए जो साँचा तैयार किया उसे 'जैनेंद्रीय साँचा' कहा जा सकता है जिसका ताना बाना जैन संप्रदाय के योजक सिद्धांत, गांधीवादी आत्मपीड़न दर्शन, नवीन समयानुकूल सामाजिक नैतिकता और परिवर्तनशील सामाजिक सांस्कृतिक चेतना के मेल से बनाया गया है। जैनेंद्र कुमार की कहानियों और उपन्यासों में वर्णित सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और मनोवैज्ञानिक समस्याओं का आधार पारंपरिक है किंतु उनका समाधान एकदम नवीन है। इस नवीनता को 'जैनेंद्रीय समाधान' कहा जा सकता है।

जैनेंद्र कुमार के साहित्यिक व्यक्तित्व के निर्माण में तत्कालीन परिस्थितियों का प्रभाव तो है ही, उनकी अपनी मौलिकता और चिंतन भी पृष्ठभूमि में है। स्त्री-सशक्तीकरण को रेखांकित करते हुए जैनेंद्र नारी और पुरुष की अपूर्णता और पारस्परिकता की भावना को इनके संघर्ष का कारण समझते हैं। नई तेवर, नई भाषा, नई सोच और नए रूप विधान के साथ विचारशीलता को लेकर जैनेंद्र कुमार ने अपने पहले तीन उपन्यासों 'परख', 'सुनीता' और 'त्यागपत्र' से धूम मचा कर रख दी थी।

जैनेंद्र की रचनाओं में उनका जीवन दर्शन व्याप्त है। वे ईश्वर की अखंड सत्ता में विश्वास रखते हैं। मनुष्य को समाज के साथ अनुकूलन करने की कोशिश करनी चाहिए। वे जैन दर्शन के अस्ति-आस्तिकवाद में भी विश्वास करते हैं। उनकी कर्म फल में भी गहरी आस्था थी। उनके जीवन दर्शन में जीवन के प्रति गहरी आस्था और उसकी रहस्यमयता पर बल है। उनके अनुसार आत्मव्यथा और अहिंसा एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। वे सबके प्रति प्रेम और सहानुभूति को अनिवार्य मानते हैं। उनके मतानुसार व्यक्ति त्याग और कष्ट सहन के द्वारा दूसरों को सही मार्ग पर ला सकता है। गांधीवादी जीवन-दर्शन की छाप भी उनकी रचनाओं में है। वे प्रत्येक वक्तव्य को सूक्ष्म विवेचन करके ही प्रस्तुत करते हैं। वे अपने-लेखन के केंद्र में मनुष्य-मात्र का हित रखते हैं।

बोध प्रश्न

- जैनेंद्र कुमार को 'पहेली' क्यों कहा गया है?
- जैनेंद्र के उपन्यासों की पहले पहल प्रसिद्धि का सबसे बड़ा कारण क्या रहा होगा?

3.3.3 रचनाओं का परिचय

1921 में जैनेंद्र का कहानी संग्रह 'फाँसी' प्रकाशित हुआ और इसकी सफलता के उपरांत उनका प्रसिद्ध उपन्यास 'परख' भी आया। इन पुस्तकों ने हिन्दी को प्रेमचंद सरीखा एक संपूर्ण कथाकार प्रदान किया। इस उपन्यास में बाल-विधवा के पाखंड पर प्रहार किया गया है। सत्यधन, कट्टो, बिहारी और गरिमा नामक पात्रों के चरित्र पर आधारित यह मनौवैज्ञानिक उपन्यास विधवा विवाह की कथा बड़ी नाटकीय और अविश्वसनीय ढंग से कहता है। आदर्शवाद कथा पर हावी है। सत्यधन आदर्शवादिता में विधवा कट्टो से प्रेम तो कर बैठता है, पर उसे अपनी पत्नी नहीं बना पाता। सत्यधन के प्रेम की परख होती है और वह खोटा सिद्ध होता है।

1935 में जैनेंद्र का दूसरा उपन्यास 'सुनीता' आया। उपन्यास का नायक हरिप्रसन्न एक राष्ट्रीय कार्यकर्ता है। वह अपने मित्र श्रीकांत के यहाँ रहता है और धीरे-धीरे वह सुनीता से प्रेम करने लग जाता है। पर 'सुनीता' के चरित्रों की मानसिक अस्थिरता और कालांतर में हरिप्रसन्न का सुनीता को घर लौटकर हमेशा के लिए चला जाना निरुद्देश्य सा लगता है।

जैनेंद्र की तीसरी कृति 'त्यागपत्र' का प्रकाशन 1937 में हुआ। मृणाल नामक भाग्यहीन युवती के जीवन पर आधारित इस कथा में भतीजा प्रमोद अपनी बुआ मृणाल के मन की पीड़ा को समझता है। कथानायक मृणाल की अनवरत पीड़ा और तदुपरांत मृत्यु से दुखी होकर वह नौकरी से त्यागपत्र देकर दुनिया से विरक्त हो जाता है।

1939 में प्रकाशित उपन्यास 'कल्याणी' में विवाह और डाक्टरी, पत्नीत्व और निजत्व का परस्पर संघर्ष की कहानी है। आत्मकथात्मक शैली में लिखा गया यह उपन्यास अपने परिचितों की जीवनकथा को समेटते हुए डॉ. श्रीमती कल्याणी असरानी के आज की गृहणी बनने की समस्या को कथारूप देता है।

'सुखदा' (1953) उपन्यास की नायिका सुखदा वैचारिक असमानताओं के कारण अपने पति से खुश नहीं रहती और लाल की ओर आकर्षित हो जाती है। 'व्यतीत' (1953) भी सुखदा के समान आत्मचरितात्मक उपन्यास है। उलझी हुई कथा के पात्र जयंत, अनिता, चंद्री, पुरी आदि कठपुतलियों की तरह व्यवहार करते हैं। 'जयवर्धन' (1956) एक डायरीनुमा उपन्यास है।

जैनेंद्र के उपन्यासों की विशेषताएँ हैं - दार्शनिक और आध्यात्मिक तत्वों का समावेश, पात्र बाह्य वातावरण और परिस्थितियों से अप्रभावित, चरित्रों की भरमार नहीं, नारी पात्रों के व्यवहार का मनोवैज्ञानिक चित्रण और घटनाओं की संघटनाओं पर बहुत कम बल आदि। जैनेंद्र ने अपने प्रायः सभी उपन्यास उत्तमपुरुषात्मक या आत्मपुरुषात्मक रूप से डायरी शैली में लिखे हैं। 'हिन्दी उपन्यास साहित्य' में गोपाल राय का कथन है कि जैनेंद्र कुमार के उपन्यासों की कहानी अधिकतर एक परिवार की कहानी होती है और वे शहर की गली और कोठरी की सभ्यता में ही सिमट कर व्यक्ति पात्रों की मानसिक गहराइयों में प्रवेश करने की कोशिश करते हैं। उनके पात्र बने बनाए सामाजिक नियमों को स्वीकार कर उनमें अपना जीवन बिताने की

चेष्टा नहीं करते, अपितु उन नियमों को चुनौती देते हैं। यह चुनौती उनकी नायिकाओं से आती है जो उनकी लगभग सभी रचनाओं में मुख्य पात्र भी हैं।

एक कहानीकार के रूप में भी जैनेंद्र कुमार अप्रतिम हैं। छायावाद के पश्चात कथा साहित्य के परिदृश्य के निर्माण में उनकी भूमिका उल्लेखनीय है। उनकी 'फाँसी' (1929), 'वातायन' (1930), 'नीलम देश की राजकन्या' (1933), 'एक रात' (1934), 'दो चिड़ियाँ' (1935), 'पाजेब' (1942), 'जयसन्धि' (1949) आदि विविध कहानियाँ 'जैनेंद्र की कहानियाँ' शीर्षक से सात भागों में प्रकाशित हैं। इनमें से पहले भाग में राष्ट्रीय और क्रांतिकारी, दूसरे में बाल मनोविज्ञान, तीसरे में दार्शनिक और प्रतीकात्मक, चौथे में प्रेम और विवाह संबंधी, पाँचवें में प्रेम के विविध रूपों की कहानियाँ, छठे में सामाजिक और सातवें में अन्य कहानियाँ हैं। आलोचकों का मत है कि उन्होंने कहानी को 'घटना' के स्तर से उठाकर 'चरित्र' और 'मनोवैज्ञानिक सत्य' पर लाने का प्रयास किया। उन्होंने कथावस्तु को सामाजिक धरातल से समेटकर व्यक्तिगत और मनोवैज्ञानिक भूमिका पर प्रतिष्ठित किया।

जैनेंद्र ने कहानी को एक सीधी रेखा में बढ़ाने के स्थान पर इसे एक नया मोड़ दिया। इस मोड़ से आरंभ होने वाली कहानी अपनी चेतना और संरचना दोनों में नई थी। वे कहीं भी यह आभास नहीं होने देते कि वे किसी मनोवैज्ञानिक सिद्धांत के सहारे आंतरिक सत्य की पहचान उभार रहे हैं। वे तो आसपास के जाने पहचाने पात्रों में मूर्त सत्य को बहुत सहज भाव से पकड़ लेते हैं और उतनी ही सहजता से उसे शब्दों के सहारे अभिव्यक्त भी कर देते हैं।

निबंधकार, अनुवादक और संपादक के रूप में भी इनकी उपलब्धियाँ उल्लेखनीय हैं। यात्रा संस्मरण (मेरे भटकाव आदि), विचार पुस्तकें (साहित्य और संस्कृति आदि) एक दर्जन से अधिक नाटक, बाल साहित्य, सह लेखन (ऋषभ चरण जैन के साथ) आदि भी आपने खूब लिखे हैं। निबंधकार के रूप में जैनेंद्र का विचाराधीन विषयों के व्यापक क्षेत्र में साहित्य, समाज, धर्म, दर्शन आदि से जुड़े प्रश्नों का चिंतन और विश्लेषण किया गया है। जैनेंद्र की दृष्टि में मानव और मानवता केंद्र में हैं जिसे वे गांधीवादी चिंतन के आलोक में देखते परखते हैं। जहाँ एक ओर उनके ग्यारह-बारह उपन्यास और दस कहानी संग्रह प्रकाशित हुए, वहीं उनके निबंध और आलोचना संग्रह भी विचारणीय हैं। इन अनेक पुस्तकों के लेखक के रूप में जैनेंद्र एक गंभीर चिंतक के रूप में हमारे सामने आते हैं। इनके निबंधों के विषय साहित्य, समाज, राजनीति, धर्म, संस्कृति तथा दर्शन आदि हैं।

सुरेश सिन्हा ने 'हिन्दी उपन्यास : उद्भव और विकास' में सही कहा है कि "जैनेंद्र ने व्यक्ति की अतल गहराई में पैठ कर उसकी आंतरिक प्रवृत्तियों को स्पष्ट कर उसके संघर्ष को समाप्त कर दुविधा में पड़े मन को एक निश्चित दिशा देने का प्रयास किया है।" वे अपने समस्त लेखन में किन्हीं प्रश्नों के उत्तर खोजते प्रतीत होते हैं। वे प्रश्नों को टालते नहीं बल्कि उनके सहारे अपनी दृष्टि और अनुभूति को परिष्कृत भी करते हैं। उनके व्यक्तित्व और लेखकीय स्वभाव की यह विशेषता रही है कि वे सदा जीवन और जगत के रहस्यपूर्ण प्रश्नों से उलझते रहे, उनके उत्तर खोजते रहे। इसी कारण वे चिंतक कथाकार कहे जाते हैं। कहना न होगा कि जैनेंद्र का विचारक और चिंतक रूप उनके कथाकार रूप से किसी भी तरह कम नहीं है।

बोध प्रश्न

- जैनेंद्र कुमार के प्रथम उपन्यास 'परख' में किस समस्या को उठाया गया है?
- कथाकार के रूप में जैनेंद्र कुमार की सबसे बड़ी पहचान क्या है?

3.3.4 हिन्दी साहित्य में स्थान एवं महत्व

आपने लक्ष्य किया होगा कि जैनेंद्र के उपन्यासों के कथानक प्रायः 'स्त्री' केंद्रित है। उन्होंने अपने नारी पात्रों के चरित्र चित्रण में सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक दृष्टि का परिचय दिया है। स्त्री के विविध रूपों, उनकी समस्याओं और प्रतिक्रियाओं का विश्वसनीय अंकन किया है। उन्होंने अपनी रचनाओं में पति-धर्म और पत्नी-धर्म दोनों को ही चुनौती दी है। प्रेमचंद के अनुपूरक और उनके द्वारा 'भारत का गोर्की' कहे गए जैनेंद्र कुमार ने हिन्दी कथा साहित्य को नई पारदर्शी भाषा ही प्रदान नहीं की बल्कि शिल्प और कथ्य की ऐसी अनूठी भंगिमा भी दी जिसका पूर्ण परिपाक 'अज्ञेय' (जैनेंद्र कुमार का ही दिया हुआ नाम) के कथा लेखन में हुआ।

जैनेंद्र कुमार ने प्रेमचंद की कथा-परंपरा को आगे बढ़ाते हुए एक नई राह चुनी। उन्होंने प्रेमचंद के द्वारा समर्थित सामाजिक यथार्थ के मार्ग को नहीं अपनाया क्योंकि वे इसकी सीमाओं से बखूबी परिचित हो गए थे। इसलिए वे प्रेमचंद के विलोम नहीं अपितु पूरक बनकर आगे आए। अपनी कथा नैतिकता को उन्होंने और भी अधिक सूक्ष्म और मनोवैज्ञानिक बनाया। काम और परिवार के संबंध को अनूठे ढंग से प्रस्तुत करते हुए मृणालिनी जैसी हाड़-मांस की जीती जागती स्त्रियाँ प्रस्तुत कीं जो अपनी देह का निर्णय स्वयं करने को अपना अधिकार मानती हैं।

स्त्री सशक्तीकरण, नारी-विमर्श और फेमिनिज़्म से प्रभावित वर्तमान में जैनेंद्र के विचार आपको परंपरावादी प्रतीत होंगे। जैसे जैनेंद्र का यह कथन, "अभागिनी है वह जो स्त्री राजनीति में आती है या उसका विचार भी करती है। राजनीति करे वह स्त्री जिसके पास पुरुष न हो।" आपको अजूबा लगेगा। जैनेंद्र कुमार स्त्री मन के चितेरे होने पर भी उसके मन की संपूर्ण थाह न ले सके। वे स्त्री की स्वतंत्रता को सीमा में रखते हुए आदर्श स्त्री की कल्पना को कोई ठोस आकार न दे सके।

प्रिय छात्रो, आपको अपने अध्ययन में धैर्य पूर्वक देखना होगा कि जैनेंद्र अपने स्त्री-विमर्श में कहाँ तक स्त्री के पक्षकार और कहाँ पुरुषवादी मानसिकता रखते प्रतीत होते हैं। आपको लेखक के पाठ से अलग भी यदि अपना कोई समसामयिक पाठ इन उपन्यासों और कहानियों में दिखाई दे तो उसका संज्ञान लें। लेखकीय मंतव्य से अलग आपका यदि कोई मत है तो उसे अवश्य चिह्नित करें। आपको याद रखना होगा कि अपने पहले उपन्यास 'परख' में ही जैनेंद्र कुमार ने पाठकों को संबोधित करते हुए लिख दिया था, "मैंने जगह-जगह कहानी में तार की कड़ियाँ तोड़ दी हैं। वहाँ पाठकों को थोड़ा कूदना पड़ता है। और मैं समझता हूँ, पाठक के लिए थोड़ा अभ्यास वांछनीय होता है, अच्छा ही लगता है।" इसलिए आप भी जैनेंद्र कुमार की रचनाओं को पढ़ते समय यह ध्यान रखें कि जैनेंद्र में कथा के प्रति उदासीनता अवश्य है किंतु उन्होंने इसकी कमी दृश्यात्मकता से पूरी की है। घटनाएँ स्वयं बोलने लगती हैं और कथाएँ नाटक के समान बोलने लग जाते हैं। यही कारण है कि आपको पाठक के रूप में सदा जागरूक रहना होगा।

प्रिय छात्रो! आपको यह स्मरण रखना होगा कि जैनेंद्र का योगदान हिन्दी गद्य के निर्माण में भी बहुत महत्वपूर्ण है। भाषा के स्तर पर उनके द्वारा की गई नक्काशी ने हिन्दी को नई रवानी दी। उन्होंने हिन्दी को एक पारदर्शी भाषा और भंगिमा दी, एक नया तेवर दिया, एक नया 'सिंटेक्स' दिया। जैनेंद्र का गद्य न होता तो अज्ञेय का परिष्कृत गद्य संभव न होता। अज्ञेय ने एक बार कहा था कि आज के हिन्दी आख्यानकारों और विशेषतः कहानीकारों में सबसे अधिक टेक्निकल जैनेंद्र हैं।

जैनेंद्र ने कथा-भाषा को वर्णन के प्राथमिक स्तर से ऊपर उठाया। रामस्वरूप चतुर्वेदी ने जैनेंद्र की कथा-भाषा में 'वर्णन न करके वर्णन को व्यंजित करने की क्षमता' को रेखांकित किया है। उदाहरण के लिए, जैनेंद्र कुमार ने ठेठ खड़ी बोली क्षेत्र की भाषा में निरीह-से दिखने वाले अव्ययों (तो, भी, और, कि) का ऐसा प्रयोग किया जिसका इससे पहले किसी ने ऐसे प्रयोग नहीं किया था। वे नए शब्द गढ़ने में अपनी कुशाग्र बुद्धि का परिचय देते हैं। कुछ शब्द जैसे - असुधार्य, आशाशील आदि पहले कभी प्रयोग में न आए थे और उनके प्रयोग से इन शब्दों ने नई अर्थवत्ता को प्रस्तुत किया। वे वाक्य गठन में भी उदारता बरतते नज़र आते हैं, जैसे- "पर सबको संतुष्ट कर पाऊँ ऐसा मुझसे नहीं बनता। बरसों लहरों पर मैं इधर-उधर उतराया किया।"

जैनेंद्र कुमार तत्सम शब्दों के साथ तद्भव और उर्दू शब्दों का सहज प्रयोग करते हैं, जैसे - तत्सम - परिमित, आमंत्रण, आग्रह आदि; तद्भव - धीरज; उर्दू शब्द - फिजूल, हरज़, दरकार। अँग्रेजी शब्द - पावर, पर्चेजिंग पावर, मनी बैग। संवादों का प्रयोग करके अपनी भाषा-शैली को रोचक बना देते हैं। उदाहरण के लिए -

> सुनीता : तुम क्या चाहते हो हरी बाबू !
>
> हरिप्रसन्न : क्या चाहता हूँ? तुम पूछोगी क्या चाहता हूँ, तुमको चाहता हूँ, समूची तुमको चाहता हूँ !

वक्रोक्ति का प्रयोग करना कोई उनसे सीखे, जैसे- 'दिल बस्तगी की कहानी चाहिए तो हटिए मुझे न सताइए' (सोच विचार, पृ. 46)। भाषा को बाहरी सजावट से दूर करते हुए उसका निपट प्रयोग करते देखकर अशोक वाजपेयी ने उन्हें 'शब्द के संकोच का कथाकार' कहा था। शब्दों को समझ बूझकर करीने से सजाकर मितव्यता और किफायतसारी से प्रयोग करते हुए जैनेंद्र ने एक ऐसे कथा संसार की रचना की जिसका कोई जोड़ नहीं।

बोध प्रश्न

- 'स्त्री केंद्रित' रचना से आप क्या समझते हैं? एक उदाहरण दीजिए।
- 'वर्णन न करके वर्णन को व्यंजित करने की क्षमता' - इस वाक्यांश को स्पष्ट कीजिए।
- 'प्रेमचंद का विलोम नहीं पूरक' कहने से क्या तात्पर्य है?

3.4 पाठ सार

हिन्दी साहित्य के इतिहास में प्रेमचंद के पश्चात जैनेंद्र कुमार उपन्यासकार और कहानीकार के रूप में विख्यात होने वाले साहित्यकारों में प्रमुख स्थान रखते हैं। खड़ी बोली

हिन्दी के क्षेत्र में कोड़ियागंज (अलीगढ़) नामक गाँव में इनका जन्म 2 जनवरी सन 1908 को हुआ था। बचपन का नाम आनंदीलाल था और हस्तिनापुर के गुरुकुल में जैनेंद्र कुमार नाम मिला। उच्च शिक्षा काशी हिंदू विश्वविद्यालय से लेकर आजीविका की खोज की और कोई खास सफलता न मिलने पर केवल मसिजीवी लेखक होकर रह गए।

उपन्यास, कहानी, निबंध, आलोचना, अनुवाद आदि विभिन्न विधाओं और क्षेत्रों में अनवरत लेखन करके 57 मौलिक ग्रंथों की रचना की और हिन्दी उपन्यास के इतिहास में मनोविश्लेषणात्मक परंपरा के प्रवर्तक के रूप में मान्य हुए। 24 दिसंबर, 1988 को इस महान कथाकार का निधन हुआ।

विश्व साहित्य में प्रेमचंद के साहित्य से साथ सदा जैनेंद्र कुमार के लेखन का जिक्र किया जाता रहेगा। अपने उपन्यासों और कहानियों के द्वारा व्यक्ति की प्रतिष्ठा, व्यक्ति और समाज के पारस्परिक संबंध की नई व्याख्या और स्त्री के मनोविज्ञान की परख करते हुए 'आत्मपीड़ा' का दर्शन प्रस्तुत किया है। रचकर जैनेंद्र कुमार ने हिन्दी साहित्य के अमिट हस्ताक्षरों में अपना नाम अंकित कराया है।

जैनेंद्र और प्रेमचंद को एक दूसरे का पूरक, विलोम नहीं, मानकर और उन्हें साथ-साथ रखकर ही एक दूसरे के व्यक्तित्व और कृतित्व को ठीक प्रकार से समझा जा सकता है। प्रेमचंद में नारी शक्ति और स्त्री पुरुष के प्रेम संबंधों की उपस्थिति नगण्य है। जैनेंद्र ने इस अभाव की पूर्ति की। उन्होंने अपने कथा साहित्य में हाड-मांस की जीती जागती ऐसी स्त्री पात्रों को प्रस्तुत किया जो अपनी देह और मन पर ही नहीं अपनी स्वतंत्र निर्णय क्षमता पर भी पूरा अधिकार और भरोसा रखती हैं।

जैनेंद्र का एक महत्वपूर्ण योगदान हिन्दी गद्य को तराशने का भी है। भाषा के स्तर पर उन्होंने अनेक प्रयोग किए। रवींद्र कालिया (वागर्थ, फरवरी-2005) के शब्दों में - "जैनेंद्र ने हिन्दी को एक पारदर्शी भाषा और भंगिमा दी, एक नया तेवर दिया। एक नया 'सिंटेक्स' दिया। जैनेंद्र का गद्य न होता तो अज्ञेय का गद्य संभव न होता। आज के हिन्दी गद्य पर जैनेंद्र की अमिट छाप है।"

3.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं -

1. जैनेंद्र को हिन्दी उपन्यास और कथा-साहित्य के इतिहास में मनोविश्लेषणात्मक परंपरा का प्रवर्तक माना जाता है।
2. एक कहानीकार के रूप में जैनेंद्र 'अपने पथ के अनूठे अन्वेषक' हैं।
3. जैनेंद्र के व्यक्तित्व और लेखकीय स्वभाव की यह विशेषता है कि वे सदा जीवन और जगत के रहस्यपूर्ण प्रश्नों से उलझते रहे, उनके उत्तर खोजते रहे। इसी कारण वे 'चिंतक कथाकार' कहे जाते हैं।
4. जैनेंद्र की दृष्टि में मानव और मानवता केंद्र में हैं, जिसे वे गांधीवादी चिंतन के आलोक में देखते परखते हैं।

5. जैनेंद्र को प्रेमचंद का पूरक कहा जा सकता है। क्योंकि प्रेमचंद में नारी शक्ति और स्त्री पुरुष के प्रेम संबंधों की उपस्थिति नगण्य है। जैनेंद्र ने इस अभाव की पूर्ति की। उन्होंने अपने कथा साहित्य में हाड-मांस के जीते-जागते ऐसे स्त्री-पात्रों को प्रस्तुत किया जो अपनी देह और मन पर ही नहीं, अपनी स्वतंत्र निर्णय क्षमता पर भी पूरा अधिकार और भरोसा रखते हैं।
6. जैनेंद्र ने कथा-भाषा को वर्णन के प्राथमिक स्तर से ऊपर उठा कर 'वर्णन को व्यंजित करने की क्षमता' का विकास किया।
7. जैनेंद्र के महत्व का अनुमान इस तथ्य के आधार पर सहज ही किया जा सकता है कि स्वयं प्रेमचंद ने उन्हें 'भारत का गोर्की' कहा है।

3.6 शब्द संपदा

1. आविर्भाव = प्रकट होना, उत्पत्ति
2. ऊहा-पोह = अनिश्चय की स्थिति में मन में उत्पन्न होने वाला तर्क-वितर्क या विचार
3. ठेठ = जो बिलकुल मूल रूप में हो
4. तेजोदीप्त = चमकदार
5. परिदृश्य = चारों ओर दिखने वाला दृश्य
6. पाखंड = आडंबर, ढकोसला
7. प्रवर्तक = प्रवर्त करने वाला, प्रतिष्ठा करने वाला, किसी मिशन को आरंभ करने या कराने वाला।
8. मसिजीवी = लेखक, पत्रकार
9. मितव्ययता = किफ़ायती
10. सूत्रपात = कार्य का आरंभ
11. स्टाम्प-फ़रोशी = टिकट (रसीदी) बेचने वाला

3.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

3.7.1 सही विकल्प चुनिए -

1. जैनेंद्र कुमार के मामा का नाम था –

A. श्रीनिवास दास B. प्यारे लाल **C. भगवानदीन** D. आनंदीलाल

2. जैनेंद्र कुमार ने आजीविका के लिए यह कभी न किया-

A. स्कूल-मास्टरी B. पत्रकारिता C. फेरी लगाना **D. लेखन कार्य**

3. किस उपन्यास में 'बाल विधवा' की समस्या को उठाया गया है?

A. कल्याणी B. परख **C. सुनीता** D. त्यागपत्र

4. जैनेंद्र कुमार इनमें से क्या नहीं कहे जाते?

A. अपने पथ के अनूठे अन्वेषक **B. हिन्दी कथा साहित्य के प्रेमचंद**

C. आत्मा का शिल्पी D. शब्द के संकोच का कथाकार

5. सुमेल कीजिए

1. प्रथम उपन्यास	(अ) सत्यधन
2. मुक्तिबोध	(आ) परख
3. उपन्यास का पात्र	(इ) आत्मा का शिल्पी
4. जैनेंद्र कुमार	(ई) उपन्यास

A. 1-ई, 2-इ, 3-अ, 4-आ B. 1-ई, 2- अ, 3- इ, 4-आ

C. 1- आ, 2-इ, 3-अ, 4- ई D. 1-ई, 2-इ, 3- आ, 4- अ

6. जैनेंद्र कुमार को हिन्दी कथा-साहित्य के इतिहास में किस विशिष्ट परंपरा के प्रवर्तक के रूप में मान्यता प्राप्त है?

A. ऐतिहासिक परंपरा B. प्रगतिवादी परंपरा

C. मनोविश्लेषणात्मक परंपरा D. आंचलिक परंपरा

7. लेखन के क्षेत्र में पूरी तरह समर्पित होने से पहले, जैनेंद्र कुमार ने अपनी आजीविका चलाने के लिए इनमें से कौन सा कार्य किया था?

A. गाँवों की पैंठ में कपड़ा बेचना B. रेलवे में उच्चाधिकारी

C. सरकारी वकालत D. विश्वविद्यालय में प्राध्यापक

8. जैनेंद्र कुमार के उपन्यास 'त्यागपत्र' की कथावस्तु किस पात्र के जीवन और मानसिक पीड़ा पर आधारित है?

A. मृणाल B. कट्टो C. कल्याणी D. सुनीता

9. किस पुरस्कार को प्रदान करते समय प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने जैनेंद्र कुमार को 'आत्मा का शिल्पी' कहा था?

A. भारत भारती सम्मान B. पद्म भूषण

C. हिंदुस्तानी अकादमी पुरस्कार D. साहित्य अकादमी पुरस्कार

10. जैनेंद्र कुमार की भाषा शैली के संदर्भ में अशोक वाजपेयी ने उन्हें क्या संज्ञा दी थी?

A. शब्द के संकोच का कथाकार B. भाषा का डिक्टेटर

C. कठिन काव्य का प्रेत D. कलम का सिपाही

खंड (ब)

3.7.2 लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. 'जैनेंद्रीय साँचा' के सिद्धांत को अपने शब्दों में प्रस्तुत कीजिए।
2. 'जैनेंद्रीय समाधान' क्या है?
3. जैनेंद्र के उपन्यासों की विशेषताओं का आकलन करते हुए उनके उपन्यासकार रूप को उद्घाटित कीजिए।
4. कहानीकार के रूप में जैनेंद्र कुमार की सहजतापूर्ण लेखन शैली की विवेचना कीजिए।
5. जैनेंद्र कुमार के जीवन-दर्शन पर विचार व्यक्त कीजिए।

खंड (स)

3.7.3 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. जैनेंद्र कुमार के संघर्षपूर्ण जीवन का परिचय देते हुए उस जीवन का उनके लेखन पर प्रभाव को रेखांकित कीजिए।
2. "अपनी रचनाओं में जैनेंद्र कुमार अपने जीवन प्रसंगों को आधार बनाते हैं।" इस कथन की समीक्षा कीजिए।
3. कथाकार के रूप में जैनेंद्र कुमार के व्यक्तित्व और कृतित्व पर प्रकाश डालिए।
4. हिन्दी कथा साहित्य के विकास में जैनेंद्र कुमार के योगदान पर संतुलित दृष्टि से विचार कीजिए।
5. जैनेंद्र के रचे हुए पात्रों की प्रमुख विशेषताएँ क्या हैं?

3.8 पठनीय पुस्तकें

1. जैनेंद्र : साहित्य और समीक्षा : रामरतन भटनागर
2. अनासक्त आस्तिक : ज्योतिष जोशी
3. उपन्यासकार जैनेंद्र - मूल्यांकन और मूल्यांकन : मनमोहन सहगल

इकाई 4 : 'त्यागपत्र' (जैनेंद्र) : तात्विक विवेचन

रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 मूल पाठ : 'त्यागपत्र' (जैनेंद्र) : तात्विक विवेचन
4.3.1 कथासार
4.3.2 तात्विक विवेचन
4.4 पाठ सार
4.5 पाठ की उपलब्धियाँ
4.6 शब्द संपदा
4.7 परीक्षार्थ प्रश्न
4.8 पठनीय पुस्तकें

4.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो! जैसा कि अब आप जान चुके हैं 'त्यागपत्र' जैनेंद्र कुमार की तीसरी औपन्यासिक कृति है और इसका प्रकाशन 1937 में हुआ था। प्रकाशक थे - प्रसिद्ध साहित्यकार नाथू राम प्रेमी (हिन्दी-ग्रंथ रत्नाकर कार्यालय, बंबई) और इसे उन्होंने 'मौलिक सामाजिक उपन्यास' कहा था। सवा रुपये कीमत में सवा सौ से भी कम पृष्ठों का यह उपन्यास आज हिन्दी के कालजयी उपन्यासों में से एक है।

'त्यागपत्र' मृणाल नामक भाग्यहीना की मार्मिक कहानी है। प्रथम पुरुष के रूप में कही गई यह कथा पाठक को भाव-विभोर करके रख देती है। जैनेंद्र कुमार ने अपने अन्य उपन्यासों की भाँति इस उपन्यास में भी दो-चार घटनाओं के बल पर नारी जीवन के एक खंड का नहीं संपूर्ण जीवन का हृदयविदारक चित्रण प्रस्तुत किया है।

इस उपन्यास की कथा समस्त नारी जाति की दुखद नियति को प्रस्तुत करती है। समाज के अन्यायपूर्ण और निर्मम नैतिक विधान पर भी यहाँ तीखी टिप्पणी है। इस उपन्यास की यहाँ प्रस्तुत कथावस्तु आपको बहुत कुछ विचार करने को विवश कर देगी। यह कहानी मृणाल-केंद्रित है किंतु बहुत से पाठक इसे केवल प्रमोद के दृष्टिकोण से पढ़ते और समझते हैं। मेरा आपसे आग्रह होगा कि आप इस कृति को मृणाल के नजरिए से भी पढ़ें। मृणाल ही क्यों? हर उस पात्र के नजरिए से पढ़ें जो इसमें आता है। और हाँ, पाप और पुण्य की अपनी परिभाषा की इस उपन्यास में बताई गई परिभाषा से तुलना करके देखें।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप -

- 'त्यागपत्र' उपन्यास के कथानक के प्रमुख बिंदुओं से परिचित हो सकेंगे।
- उपन्यास के प्रमुख पात्रों और उनके पारस्परिक संबंध को जान सकेंगे।

- घटनाओं और प्रसंगों के आधार पर उनका विवेचन कर सकेंगे।
- 'त्यागपत्र' शीर्षक के विविध निहितार्थों से अवगत हो सकेंगे ।

4.3 मूल पाठ : 'त्यागपत्र' (जैनेंद्र) : तात्विक विवेचन

4.3.1 कथासार

प्रिय छात्रो! सर्वप्रथम हम इस उपन्यास की कथा अति संक्षेप में पढ़ लेंगे। फिर इसका सिलसिलेवार पाठ होगा। इस कथा का प्रारंभ अंत से होता है। पूरा उपन्यास आत्मकथात्मक शैली में लिखा गया है। जस्टिस एम दयाल अपने पद से त्यागपत्र दे देते हैं। क्यों? यही कहानी है जो एम दयाल के बचपन से प्रारंभ होती है। बचपन में वह प्रमोद है। प्रमोद की बुआ (प्रमोद के पिता की बहन) के जीवन के यह दर्द भरी कहानी है। वास्तव में यह कथा उसी के दुख दर्द से शुरू होकर उसी के अंत के साथ समाप्त होती है।

मृणाल के माता-पिता का देहांत हो गया है, इसलिए उसके लालन-पालन और संरक्षण का स्वाभाविक दायित्व उसके बड़े भाई का है। भाई-भाभी के कठोर नियंत्रण को बहुत ध्यान और चिंता से उसका पाँच वर्ष का भतीजा प्रमोद देखता रहता है। पढ़ाई करते समय प्रमोद की बुआ मृणाल का प्रेम उसकी सहेली शीला के भाई से हो जाता है। यह रहस्य खुलने पर पहले तो वह निर्दयतापूर्वक पीटी जाती है और फिर प्रमोद के माता पिता द्वारा एक वयस्क विधुर के साथ जबरन उसका विवाह कर दिया जाता है। एक दिन मृणाल निश्छलतापूर्वक अपने विवाह पूर्व के प्रेमी के तभी आए पत्र की चर्चा अपने पति से कर देती है। वह क्रोधित हो जाता है और मृणाल को मारपीट कर अपने घर से निकाल दूसरे अलग कमरे में ला पटकता है। फिर कभी उसकी सुध भी नहीं लेता है।

मृणाल को विवश होकर एक अनजान कोयला बेचनेवाले का आश्रय स्वीकार कर लेना पड़ता है। कोयलेवाला मृणाल के रूप का लोभी अवश्य है किंतु अपने परिवार, समाज और उनके बारे में लापरवाह होकर तब आता है जब मृणाल को वास्तव में अन्न-जल के भी लाले हैं। उसके साथ रहते वह गर्भवती हो जाती है। एक दिन वह कोयले वाला भी उससे उकताकर और उसे बदजात व्यभिचारिणी मानकर त्याग देता है। प्रमोद उसे घर ले जाना चाहता है किंतु वह मना कर देती है। मृणाल अस्पताल में एक बच्ची को जन्म देती है। बच्ची दस महीने बाद ही कुछ रोग से और कुछ भूख से मर जाती है। कुछ वर्षों के बाद राजनंदिनी नामक सर्वगुणसंपन्न कन्या से प्रमोद का विवाह संबंध बनते-बनते इसलिए टूट जाता है क्योंकि प्रमोद राजनंदिनी के घर में बच्चों को पढ़ाने वाली स्त्री को पहचानकर सबको बता देता है कि यह स्त्री उसकी बुआ मृणाल है। बुआ का वह काम छूट जाता है, स्कूल की नौकरी चली जाती है। फिर वह समाज की 'जूठन' कहे जाने लोगों के बीच जा बसती है।

मृणाल समाज के निम्नवर्गीय लोगों के बीच जीवन व्यतीत करती है और कई बीमारियों से ग्रसित हो जाती है। मायके के बिलकुल स्नेह रहित, रूढ़िवादी और उदासीन परिवार द्वारा उसके प्रेम का अस्वीकार, एक दुहाजू और प्रौढ़ व्यक्ति से उसकी इच्छा के विरुद्ध विवाह, पति का शंकालु कठोर स्वभाव और उसके द्वारा मृणाल का शारीरिक पीड़न और शोषण और अंततः घर

से निष्कासन, यह सब उसके साथ होता है और इसके जवाब में वह आत्महत्या न कर ऐसी जीवन-पद्धति अपनाती है, जो समाज के मुख पर तमाचा है। कुछ वर्षों के बाद सांसारिक कष्टों को किसी प्रकार से झेलते हुए एक दिन उसकी मृत्यु हो जाती है। इस दुख से दुखी होकर प्रमोद अपनी जजी से त्यागपत्र देकर संसार से विरक्त हो जाता है। एम. दयाल जजी छोड़ देते हैं। यह 'त्यागपत्र' है। क्यों? वे दूसरों के लिए रहना न सीख पाए पर इतना निश्चय कर सके हैं कि उतनी ही स्वल्पता से रहेंगे जितना अनिवार्य होगा।

बोध प्रश्न

- मृणाल के भतीजे के बचपन और बड़े होने पर क्या क्या नाम थे?
- सहेली के भाई से प्रेम करने का क्या परिणाम होता है?
- मृणाल का पति उससे दुर्व्यवहार क्यों करता है? मृणाल इसका क्या उत्तर देती है?
- कोयले वाला मृणाल के लिए आश्रयदाता और कष्ट का कारण दोनों है, कैसे?
- राजनंदनी से प्रमोद का संबंध क्यों टूटा?
- बच्चों को पढ़ाने का काम छूट जाने के बाद मृणाल ने कहाँ शरण ली? वहाँ उसका जीवन कैसा था?

छात्रो! अब हम उपन्यास के दो महत्वपूर्ण उद्धरणों (आदि और अंत) के साथ इस कथा की गहराई में उतरेंगे। यह आप ध्यान रखें कि कोष्ठक में दी गई पृष्ठ संख्या इस पुस्तक के प्रथम संस्करण की है। आज तक न जाने इस उपन्यास के कितने संस्करण निकाले जा चुके हैं। उपन्यास का आरंभ कुछ इस प्रकार से होता है-

नहीं भाई। पाप-पुण्य की समीक्षा मुझसे न होगी। जज हूँ, कानून की तराजू की मर्यादा जानता हूँ। पर उस तराजू की जरूरत को भी जानता हूँ। इसलिए कहता हूँ कि जिनके ऊपर राई-रत्ती नाप जोखकर पापी कहकर व्यवस्था देने का दायित्व है, वे अपनी जानें। मेरे बस का वह काम नहीं है। मेरी बुआ पापिष्ठा नहीं थीं, यह भी कहनेवाला मैं कौन हूँ? पर आज मेरा जी अकेले में उन्हीं के लिए चार आँसू बहाता है। मैंने अपने चारों ओर तरह-तरह की प्रतिष्ठा की बाड़ खड़ी करके खूब मजबूत जमा ली है। कोई अपवाद उसको पारकर मुझ तक नहीं आ सकता। पर उन बुआ की याद मुझे अब चैन लेने देगी? उनके मरने की खबर अभी पाकर बैठा हूँ। मुझको नहीं मालूम वह कैसे मरीं? घुल-घुल कर मरीं, इतना तो जानता हूँ (पृ. 1)।

और अंत होता है -

बुआ, तुम गईं। तुम्हारे जीते जी मैं राह पर न आया। अब सुनो, मैं यह जजी छोड़ता हूँ। जगत का आरंभ-समारंभ ही छोड़ दूँगा। औरों के लिए रहना तो शायद नए सिरे से मुझसे सीखा न जाय। आदतें पक गई हैं। पर अपने लिए तो उतनी ही स्वल्पता से रहूँगा जितना अनिवार्य होगा। यह वचन देता हूँ। भगवान, तुम मेरी बात सुनते हो। वैसे चाहे न भी दो, पर वचन तोड़ूँ तो मुझे नरक अवश्य ही देना। पुनश्च - इसी के साथ सही करता हूँ कि जजी से अपना त्याग-पत्र मैंने दाखिल कर दिया है। (पृ. 112)

बोध प्रश्न

- उपरोक्त पंक्तियों के वक्ता का परिचय क्या है?

- वह किसके जीवन के बारे में कह रहा है? उसे क्या हुआ है?
- 'मेरी बुआ पापिष्ठा नहीं थीं' इस कथन का अर्थ क्या है?
- दूसरे अनुच्छेद में कौन किसको कब संबोधित कर रहा है और क्यों?
- आदतें पक जाने का क्या तात्पर्य है? इसमें किस ओर संकेत है?
- 'त्यागपत्र' के कई अर्थ यहाँ हैं, कम से कम दो अर्थ स्पष्ट कीजिए।

'त्यागपत्र' हिन्दी के अनोखे उपन्यासों में से एक है। जब यहाँ कोई कथा नहीं है तो सीधा कथानक कहाँ से होगा? घटनाएँ हैं जो कुछ पात्रों के जीवन में घटती हैं। 'घटनाएँ होती हैं, होकर चली जाती हैं। मृणाल पापिष्ठा थी या नहीं, इसका फ़ैसला न्यायाधीश एम दयाल भी नहीं कर पाते। मृणाल के पहाड़ से जीवन की यही तो छोटी सी कथा है। अब कथा कुछ सिलसिलेवार समझते हैं।

युवा मृणाल अपने माता पिता के देहांत के बाद अपने भाई-भाभी और भतीजे प्रमोद के साथ रहती है, "स्वभाव से हँसमुख और निर्द्वंद्व। जब वह ठहाका मारकर हँसती तो प्रमोद को कहानी की परियों का ध्यान हो आता। रूप का आलम यह कि ऐसा रूप कब किसको विधाता देता है।" इसी दौर में उसके जीवन में एक प्रेमी आ जाता है। वह अपनी सहेली शीला के भाई से प्रेम करने लगती है। फिर तो वह मानो आकाश में पंछी की तरह उड़ना चाहती है। "मैं नहीं बुआ होना चाहती। बुआ! छी! देख, चिड़ियाँ कितनी ऊँची उड़ जाती हैं। मैं चिड़िया होना चाहती हूँ।"

प्रेम मृणाल को बदल कर रख देता है। वह अपनी सहेली के घर देर तक रुकने लगती है। एक दिन तो इतनी देर हो जाती है कि नौकर भेजकर उसे बुलवाना पड़ता है। भेद खुल जाता है। मृणाल की भाभी उसकी पिटाई बहुत निर्ममता से करती है। प्रमोद कहता है, "वह दिन था कि फिर बुआ की हँसी मैंने नहीं देखी ...बुआ का उसी दिन से पढ़ना छूट गया था।" इतना ही नहीं, इसके कुछ समय बाद उसका विवाह भी उससे उम्र में बहुत बड़े एक विधुर व्यक्ति से कर दिया गया। मृणाल का प्रेम करना क्या कोई इतना बड़ा अपराध था? "विवाह से पहले बुआ कई घंटे अपनी छाती से मुझे चिपकाए बहुत-बहुत रोती रहीं।" चिड़िया होने का सपना समाप्त हो गया। वह प्रमोद से कहती है, "तेरी बुआ तो मर गई। तू उसे अब कभी याद मत करियो।" विवाह को निभाने की भरसक कोशिश करती है, "ब्याह के बाद मैंने बहुत सोचा, बहुत सोचा। सोचकर अंत में यही पाया कि मैं छल नहीं कर सकती। छल पाप है। हुआ, जो हुआ, ब्याहता को पतिव्रता होना चाहिए।" वह पूरी ईमानदारी के साथ अपने पति के सामने अपने प्रेमी के खत और उसके उत्तर में लिखे गए अपने खत को रख देती है। किंतु पति उसके इस कार्य में उसकी सच्चाई नहीं देखता। उसका पाप देखता है। यही वह घटना है जो मृणाल के जीवन को फिर बदल कर देती है।

बोध प्रश्न

- 'मृणाल बुआ नहीं चिड़िया होना चाहती है' इसका अर्थ क्या है?
- मृणाल के पत्रों को देखकर उसके पति की क्या प्रतिक्रिया थी?

मृणाल का पति उसे त्याग देता है। शहर के किसी गंदे इलाके में वह एक कोठरी में जा रहती है। उन दो पत्रों में ऐसा कुछ भी न था जिसके लिए कोई पति अपनी पत्नी को इतना बड़ा

दंड दे। पर इस समाज में घर पुरुष का होता है। वह घर का मालिक बनकर अपनी गृहिणी को ही निकाल बाहर करता है। मृणाल प्रमोद से कहती है, "तू जानता है, पति का घर क्या होता है? स्वर्ग होता है। जानता है स्वर्ग क्या होता है? स्वर्ग बड़े आराम की जगह है ... वहाँ देवता रहते हैं।" पति ने अपनी पत्नी पर चरित्रहीन होने का आरोप लगाया। पत्नी के उत्तर नहीं दिया। अपना धर्म निभाया। "वे मुझे देखना नहीं चाहते, यह जानकर मैंने उनकी आँखों के आगे से हट जाना स्वीकार कर लिया।" पति द्वारा निकाल दिये जाने पर उसका संबंध एक कोयले वाले के साथ होता है। कोयले वाले की सहायता और आसरा वह उस पर दया करके स्वीकार करती है। इस 'करुणा' के कारण ही उसने उस कोयलेवाले को अपनी देह सौंप दी।

मृणाल जैसी समझदार से यह क्या हो गया? परिणाम वही होता है जो हो सकता है। वह कोयले वाले का गर्भ लिए है। किसी तरह पता मालूम करके प्रमोद बुआ से मिलने जाता है। वह उसको कोयले वाले से छुड़ाकर अपने साथ ले जाना चाहता है। "मैं बस एक बदजात व्यभिचारिणी स्त्री हूँ।" "जरूर ले चलेगा तो सुन। मैं नहीं जाऊँगी, मैं नहीं जा सकती। तुम मुझको नहीं जानते हो। मैं पति के घर को छोड़ कर आ गई हूँ। पति है, पर दूसरे पुरुष के आसरे रह रही हूँ। ...जिनके सहारे मैं बची, उन्हीं को छोड़ देने की मुझसे कहते हो? मैं नहीं छोड़ सकती। पापिनी हो सकती हूँ, पर उसके ऊपर क्या अकृतज्ञ भी बनूँ, नहीं।"

बोध प्रश्न

- "स्वर्ग बड़े आराम की जगह है। वहाँ देवता रहते हैं।" निहितार्थ स्पष्ट कीजिए।
- मृणाल कोयले वाले को छोड़कर अपने भतीजे के साथ क्यों नहीं गई?

प्रमोद लौट आता है। उसे पता चल चुका है कि उसकी बुआ उसकी नहीं सुनने वाली। वह आत्मव्यथा के द्वारा स्वयं को शुद्ध करने में लगी है शायद। जिंदगी बहती चली जाती है। प्रमोद खोज खबर लेता है तो पता चलता कि कोयले वाला कब का भाग खड़ा हुआ है। प्रमोद के रिश्ते की बात फिर चलती है तो वह राजनंदिनी नामक लड़की के घर जाता है। राजनंदिनी के घर में एक स्त्री बच्चों को ट्यूशन पढ़ा रही है। वह मृणाल है। प्रमोद अपनी बुआ को पहचान लेता है। वह अपनी बुआ से मिलने उसके घर जाता है जहाँ उसे मृणाल द्वारा बताया जाता है कि मृणाल और कोयले वाले की संतान कुछ बीमारी से और कुछ भूख से मर गई है। प्रमोद को पता चलता है कि मृणाल भटकते भटकते यहाँ आकर अब इस स्थान पर स्कूल में पढ़ाती है और घर-घर जाकर ट्यूशन भी पढ़ा देती है। प्रमोद अपनी होने वाली ससुराल वालों को बता देता है कि यह मास्टरनी उसकी बुआ है। उसके ससुर को तो नहीं पर होने वाली सास को इस पर एतराज होता है और रिश्ता बनने से पहले ही टूट जाता है। मृणाल को भी इस कारण अपनी ट्यूशन ही नहीं नौकरी भी गंवानी पड़ती है।

बोध प्रश्न

- प्रमोद का राजनंदिनी से रिश्ता बनने से पहले की क्यों टूट गया। इसका जिम्मेदार कौन था?
- इस प्रसंग से समाज की किस मानसिकता की ओर संकेत है?

बहुत हो गया। कहानी को और कितना बढ़ाया जा सकता है। जैनेंद्र कुमार ने मृणाल की कहानी को और आगे नहीं बढ़ाया। "घटनाएँ होती हैं, होकर चली जाती हैं। हम जीते हैं, और

जीते जीते एक रोज मर जाते हैं।" वहाँ से छूट कर मृणाल उन लोगों के बीच जा बसती है जो समाज की जूठन कहे जाते हैं। प्रमोद मृणाल से पत्र व्यवहार करता है तो मृणाल उसे यही कहती है, 'तुम न आना।' फिर भी वह जाता है। वह बीमार होती है फिर भी साथ नहीं आती। समय अपनी गति से बीतता चला जाता है। और कई वर्षों बाद उसकी मृत्यु का समाचार आता है। कैसे मर गई? जानने की कोई जरूरत नहीं है। "बुआ तुम गईं। तुम्हारे जीते जी मैं राह पर न आया। अब सुनो, मैं यह जजी छोड़ता हूँ।" बालक प्रमोद अब जज एम, दयाल हैं। वे जजी से अपना त्यागपत्र दाखिल कर देते हैं। यही उनका त्यागपत्र है। त्यागपत्र और भी हैं। और कई हैं? हैं, ना।

बोध प्रश्न

- 'समाज की जूठन' से किन लोगों की ओर संकेत है?
- जैनेंद्र कुमार ने कहानी को ओर आगे नहीं बढ़ाया? क्यों?
- 'त्यागपत्र' देकर जज साहब किस बात का पश्चाताप और प्रायश्चित करते हैं?

4.3.2 तात्विक विवेचन

4.3.2.1 'त्यागपत्र' : औपन्यासिक परिवेश

जैनेंद्र कुमार की उपन्यास-कला की सबसे बड़ी विशेषता उनके उपन्यासों का लघुत्व है। वे प्रेमचंद के समान अनेक कथा-सूत्रों को लेकर नहीं चलते। उनके पात्रों की संख्या प्रत्येक उपन्यास में सीमित रहती है। इस विशेषता के कारण कई बार इनके उपन्यासों में दुर्बोधता आ जाती है। पाठक को कहानी के सूत्र खोजने में कभी-कभी बहुत ध्यान रखने की आवश्यकता होती है। यह याद रखने की बात है कि प्रारंभ में उपन्यास 'लघुकाय' ही हुआ करते थे। पंडित गौरी दत्त शर्मा का उपन्यास 'देवरानी जेठानी की कहानी' (1870) आकार में अत्यंत लघु है। बंगला के शरदच्चंद्र के उपन्यास भी कलेवर में लघु ही थे।

जैनेंद्र कुमार के उपन्यासों की दूसरी सीमा उनमें प्राकृतिक चित्रपटी का अभाव है। उनके अधिकांश उपन्यासों में हमें किसी भी प्राकृतिक दृश्य की पृष्ठभूमि नहीं मिलती। उनके उपन्यासों के पात्र नगरों और ग्रामों की तंग गलियों और गली कूँचों से बाहर नहीं जाते। रवींद्रनाथ टैगोर और शरतचंद्र के बंगला भाषा में लिखे उपन्यासों के पाठ से प्रेरित होकर जैनेंद्र कुमार ने अपने उपन्यासों में समाज के प्रति विद्रोह का स्वर तो अवश्य करते हैं किंतु अंत में कहीं-कहीं वे समझौता करते दिखाई देते हैं।

'त्यागपत्र' एक छोटे आकार का उपन्यास है। इसे कोई लघु उपन्यास भी कह सकता है। जैनेंद्र कुमार ने प्रेमचंद के समय से लिखना शुरू किया था। 1929 में जब जैनेंद्र का पहला उपन्यास 'परख' प्रकाशित हुआ था, तब प्रेमचंद ने उसकी सकारात्मक समीक्षा की थी। पर जैनेंद्र ने अपनी राह खुद बनाई, प्रेमचंद के बनाए रास्ते पर वे नहीं चले। कथा-संगठन, पात्र-योजना और विषयवस्तु को जैनेंद्र ने प्रेमचंद से अलग करके प्रस्तुत किया। जैनेंद्र ने कथा की क्रमबद्धता को अधिक महत्व नहीं दिया। उनका कहना था, "मैंने जगह-जगह कहानी के तार की कड़ियाँ तोड़ दी हैं। वहाँ पाठक को थोड़ा कूदना पड़ता है। कहीं एक साधारण भाव को वर्णन से फुला दिया है, कहीं लंबा रिक्त छोड़ दिया है।" उदाहरण के लिए 'त्यागपत्र' में बस इतना भर बताया

गया है, "हम लोगों का असली घर पछाँह की ओर था। पर स्थान का नाम 'युक्त प्रांत के इन-उन जिलों' कह कर टाल दिया गया है।

जैनेंद्र कुमार ने अपनी कृतियों में मनोवैज्ञानिकता, चिंतन और दर्शन पर अधिक बल दिया है। जैनेंद्र कुमार के उपन्यासों में विवरणात्मकता और कल्पना-प्रधानता के साथ-साथ मनोवैज्ञानिक तत्व की प्रचुरता है। उनकी चिंतनशीलता से उन्हें अपने उपन्यासों में सूक्ष्म-कथानक सूत्रों और चरित्र विशेष के आंतरिक विश्लेषण को समन्वित करने में सफलता प्राप्त हुई है। इन्होंने अपने उपन्यासों में सामाजिक एवं राजनीतिक समस्याओं का भी गहन विश्लेषण प्रस्तुत किया है। पारिवारिक समस्याओं का भी चित्रण यहाँ हुआ है। व्यक्तिगत चरित्रों की कुछ मनोवैज्ञानिक समस्याओं जैसे वासना, अहं भावना, अवचेतन तथा अतृप्ति को प्रमुखता से इनके उपन्यासों में विश्लेषित किया गया है।

डॉ. गोपाल राय का कहना है कि जैनेंद्र कुमार 'शहर की गली और कोठरी की सभ्यता' में ही सिमटकर व्यक्ति पात्रों की मानसिक गहराइयों में प्रवेश करने की कोशिश करते हैं। यह कथाकार के सीमित परिवेश पर सारगर्भित टिप्पणी है। वे अपने समय (1930-40) में स्त्री की स्वतंत्रता का प्रश्न उठा रहे थे जब सामाजिक परिवेश उसके लिए तैयार न था। यह देखा जा सकता है कि आज भी, अर्थात 'त्यागपत्र' के लिखे जाने के 80-90 वर्ष बाद भी, स्त्री की दशा में आमूलचूल परिवर्तन नहीं हो सका है। उस समय लेखक ने प्रश्नों को अनुत्तरित छोड़ दिया था, आज भी इनका उत्तर हमारे पास नहीं है। भविष्य द्रष्टा की तरह लेखक अपने समाज और परिवेश को प्रस्तुत करते हुए भी यह मानकर चलते हैं कि स्त्री स्वतंत्रता हाल-फिलहाल दुर्लभ है और कभी इस पर गंभीरता से विचार भी होगा और समाधान भी निकलेंगे।

'त्यागपत्र' की एक बड़ी सीमा उसका परिवेश भी है। इस उपन्यास का परिवेश उतना व्यापक नहीं है कि उसे किसी काल विशेष का प्रतिबिंब कहा जा सके। लगभग एक शताब्दी बीत जाने पर भी यह कथा आज की भी हो सकती है। उपन्यास के प्रारंभ में ही उस पारिवारिक परिवेश की ओर संकेत है जिसमें विवाह से पूर्व मृणाल का जीवन बीता, "इतना ही हम समझे कि मृणाल जितनी कुशल थीं, उतनी कोमल नहीं थीं। मुझसे कोई चार-पाँच बड़ी होंगी। मेरी माता के संरक्षण में मेरी ही भाँति बुआ भी रहती थीं। वह संरक्षण ढीला न था। आज भी मेरे मन में उस अनुशासन की कड़ाई के लाभालाभ पर विचार चला करता हैं।" आज भी कई परिवारों में अनुशासन वैसा ही है।

कहा जा सकता है कि परिवेश की दृष्टि से 'त्यागपत्र' उपन्यास जैनेंद्र के अन्य उपन्यासों की तरह ही बाहरी परिवेश से अधिक भीतरी परिवेश की उथल-पुथल की चिंता करता है। उन्होंने समाज व्यवस्था में स्त्री-पुरुष के स्थान और संबंधों में स्त्री की दयनीय दशा का चित्रण किया है। मृणाल के माध्यम से स्त्री पर परिवार और समाज के बंधनों का चित्रण है और किसी प्रकार के सुधार की ओर संकेत किए बिना ही उपन्यास का अंत हो जाता है। इसलिए यह 'कालातीत' कृति है। इसके सरोकार सदा के लिए हैं। 'त्यागपत्र' के लगभग समस्त कार्य-व्यापार किसी भी छोटे बड़े उत्तर भारतीय नगर में घटे माने जा सकते हैं। वे बस्तियाँ और गली मुहल्ले किसी भी नगर के हो सकते हैं। हाँ, कभी-कभी किसी बात या चर्चा से कुछ अनुमान सा हो जाता

है। उदाहरण के लिए, मिठाई में 'घेवर' का जिक्र, नगरों में 'हरिद्वार' का उल्लेख। स्वयं जैनेंद्र कुमार ने उपन्यास के पहले अनुच्छेद में ही कह दिया है कि कहानी में से स्थानों और व्यक्तियों के नाम और कुछ ऐसे ही ऐहिक विवरण अनिवार्य न होने के कारण बदल या कम कर दिया गए हैं। जब भी कुछ कहने को होते हैं, यह कहकर आगे बढ़ जाते हैं, "खैर उस बात को छोड़ें।"

विचार और चिंतन उपन्यास के परिवेश का निर्माण करते हैं। मृणाल देशकाल में जीने वाली वास्तविक स्त्री के स्थान पर जैनेंद्र की वैचारिक निर्मिति अधिक है। वह उनके अमूर्त सिद्धांत की जीती जागती मूर्ति है। प्रेमचंद जहाँ परिस्थितियों और परिवेश से कथा बुनते हैं, जैनेंद्र कुमार विचारों और धारणाओं से। मृणाल जीवन से नहीं विचार से संचालित है, प्रमोद किंकर्तव्यविमूढ़ है। जिस समय यह उपन्यास लिखा जा रहा था, बाहर स्वतंत्रता संग्राम चल रहा था, लेकिन उस परिवेश के स्थान पर यहाँ कुछ और ही चल रहा है। समाज यहाँ राजनीति से प्रबल है। समाज के नैतिक पाखंड और जर्जर होती मान्यताएँ इस उपन्यास के परिवेश का निर्माण करते हैं।

बोध प्रश्न

- परिवेश की दृष्टि से 'त्यागपत्र' की दो सीमाएँ क्या हैं?
- कथा की क्रमबद्धता का क्या अर्थ है?
- जैनेंद्र बार-बार यह क्यों कहते हैं, खैर इस बात को यहीं छोड़ें।

4.3.2.2 'त्यागपत्र' की विभिन्न अर्थ छवियाँ

'त्यागपत्र' उपन्यास में 'त्याग' शब्द की कई अर्थ छवियाँ दृष्टिगोचर होती हैं। उपन्यास का शीर्षक बहुत सावधानी से चुना गया है। यह वह कहानी है जो एक जज के अपने पद से 'इस्तीफ़ा' देने का 'पत्र' तो है ही, यह उस उपन्यास की ओर भी संकेत है जिसमें यह कथा है। त्याग- (1) एक जज का अपने पद से त्याग, (2) एक पति द्वारा अपनी पत्नी का त्याग, (3) समाज द्वारा एक स्त्री का त्याग। मृणाल नामक स्त्री सूत्रधार सरीखे प्रमोद नामक पात्र की 'बुआ' है। वह उपन्यास की नायिका है। वह वस्तुतः एक 'त्यागिन' बन जाती है।

जैनेंद्र कुमार बहुत चतुराई से अपने उपन्यास के 'प्रारंभिक' में अपने इस बहुआयामी मंतव्य को संकेत में और बहुत संक्षेप में बता देते हैं। उन्नीसवीं शताब्दी के जर्मन 'नोवेला' की तर्ज पर 'प्रारंभिक' में एक साथ ही उपन्यास को प्रामाणिकता और आधिकारिकता प्रदान करते हुए जैनेंद्र कुमार उपन्यास की पांडुलिपि को जज एम दयाल द्वारा हस्ताक्षरित बताते हैं। प्रामाणिकता को पुख्ता करने के लिए उसे अंग्रेजी में लिखा करते हैं और साथ ही आत्म-कटाक्ष करते हुए इस उपन्यास को उस पांडुलिपि का उल्था घोषित करते हैं। वह इसे 'एक कहानी ही कहिए' कहकर प्रस्तुत करके पाठक को चेता भी देते हैं। वह उपन्यास के पाठकों से दो अपेक्षाएँ भी करते हैं - पाठक त्यागपत्र देने वाले जज की अंतर्दृष्टि और बुद्धिमत्ता का संज्ञान ले और बालक (प्रमोद) और उसके पश्चात उसके युवा चरित्र (एम दयाल) के दृष्टिकोण को समझता रहे। इस प्रकार अपने भाषा कौशल, वर्णन कौशल और सांकेतिक चतुराई से उपन्यासकार अपने पाठक को अपने बस में कर लेते हैं। वे समझने लगते हैं कि प्रमोद की हार्दिक अभिलाषा है कि मृणाल

जिस नारकीय वातावरण में रह रही है उससे 'त्यागपत्र' दे दे, उसे 'त्याग' दे। वह एक सभ्य, सुसंस्कृत और तथाकथित संस्कारी स्त्री के समान उसके प्रतिष्ठित समाज में सुखपूर्वक रहे। पर वह टस से मस नहीं होती। वह तो जिस स्थान पर भी रहती है उस स्थान को और वहाँ के लोगों को 'स्वर्ग' तुल्य मानती है। मृणाल कहती है – मुझे ऐसा लगता है कि इन लोगों में जिन्हें दुर्जन कहा जाता है उनमें कई तह पार करके वह भी तह रहती है कि उसको छू सको तो दूध सी श्वेत सद्भावना का सोता ही फूट निकलता है। स्पष्ट है कि वह हर स्थान पर सब कुछ देख लेती है। उसने अपनी मनःस्थिति ऐसी बना ली है।

बोध प्रश्न

- 'त्यागपत्र' के एक से अधिक कितने 'अर्थ' यहाँ आपको समझ आते हैं?
- 'एक कहानी ही कहिए' का क्या अर्थ है। लेखक यह क्यों कहता है?
- क्या 'त्यागपत्र' केवल एक कहानी मात्र है? क्यों? क्यों नहीं?

4.3.2.3 जैनेंद्र की भाषा-शैली

भाषा-शैली उपन्यास का एक प्रमुख तत्व है। भाषा के माध्यम से ही रचनाकार विचार संप्रेषण करता है। प्रत्येक साहित्यकार की भाषा-शैली में भिन्नता होती है। एक ही लेखक भी अपनी अलग-अलग रचनाओं में अपनी शैली परिवर्तित करता है। 'त्यागपत्र' में आत्मकथात्मक और मनोविश्लेषणात्मक शैली का प्रयोग है। डायरी शैली का भी संकेत है। भाषा के संबंध में जैनेंद्र कहते हैं, "शब्द जब मुझसे जाकर उतना अपने को नहीं जितना मेरे भाव को कहते हैं तब साफ हो जाता है कि शब्द और भाषा की चिंता अपनी खातिर अनावश्यक है। गलत या सही आदमी होता है, भाषा स्वयं गलत या सही नहीं हो सकती। उसका भाव तो सुधी और सहृदय पाठक के पास है।" (साहित्य और कला, पृ. 228)

हिन्दी उपन्यासों की भाषा-शैली में नवीन प्रयोगकर्ताओं में जैनेंद्र कुमार का नाम अग्रगण्य है। उपन्यास की विषय वस्तु, कथा शिल्प, भाषा-शैली सभी दृष्टियों से उन्होंने नवीन प्रयोग किए। वे मनोविश्लेषणात्मक शिल्प विधि के रचनाकार माने जाते हैं, क्योंकि उन्होंने नए सिरे से सामाजिक प्रश्नों, स्त्री पुरुषों के परस्पर संबंधों, नैतिक मूल्यों तथा व्यक्ति चरित्रों के अध्ययन का बीड़ा उठाया। उन्होंने व्यक्ति के अंतर्मन में उठने वाली विविध मनोवैज्ञानिक समस्याओं को छुआ ही नहीं बल्कि उन्हें आधिकारिक ढंग से अपने रचे पात्रों और चरित्रों के माध्यम से प्रस्तुत भी किया। इसलिए उनको विद्वानों ने व्यक्तिमुखी रचनाकार कहा है। आचार्य नंददुलारे वाजपेयी के शब्दों में, "जैनेंद्र की साहित्य सृष्टि व्यक्तिमुखी है। उनका संबंध सामाजिक जीवन के व्यापक स्वरूपों से कम ही है। वे वैयक्तिक मनोभावों और स्थितियों के चित्रकार हैं। जैनेंद्र सामाजिक जीवन से दूर जाकर जिस साहित्य की सृष्टि करते हैं, उसमें व्यक्ति के मानसिक संघर्ष और उसकी परिस्थितिजन्य समस्याएँ प्रमुख रूप से आती हैं।" दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि वे व्यक्ति के जीवन खंडों के सूक्ष्म विश्लेषण एवं चित्रण की ओर उन्मुख रहें है।

'त्यागपत्र' उपन्यास के आधार पर जैनेंद्र कुमार की भाषा-शैली और शिल्प के विषय में कहा जा सकता है कि कथानक की विश्वसनीयता में कहीं-कहीं शंका के बावजूद अपने शिल्प और कथन की आत्मीयता से लेखक प्रभाव पैदा करते हैं। उपन्यास का आरंभ भावमय, आत्मीय और

नाटकीय है। अंत भी 'पुनश्च' के साथ आता है और कथा को स्वाभाविकता के साथ ही विश्वसनीयता प्रदान करता है। कथा में संकेत शैली का बार-बार उपयोग करने से विलक्षण रहस्यमयता आ गई है। उपन्यास में कोई घटना और कथोपकथन निरर्थक नहीं। चिंतन युक्त वार्तालाप और वर्णन का समुचित सामंजस्य है।

बोध प्रश्न

- 'त्यागपत्र' आत्मकथा है तो किसकी और कैसे?
- जैनेंद्र कुमार शिल्प की आत्मीयता को कैसे प्रगट करते हैं?

4.3.2.4 शिल्प विधान

प्रख्यात विद्वान डॉ. नगेंद्र ने जैनेंद्र के रचना और शिल्प विधान पर विचार करते हुए लिखा है कि 'त्यागपत्र' का कौशल अपनी विदग्धता के बल पर अपने मेधावी शिल्प की दुहाई देता है और 'नारी' का कौशल अपने को छिपाकर अपने स्नेहार्द शिल्पी की सिफ़ारिश करता है। डॉ. नगेंद्र के इस कथन के आलोक में उपन्यास को देखने से ज्ञात होता है कि 'त्यागपत्र' आत्मकथात्मक शैली में लिखा गया विश्लेषणात्मक शिल्प विधि का एक ऐसा उपन्यास है जो एक बार तो आपको घटनाशून्य प्रतीत होगा किंतु जैसे ही आप उसकी आत्मा - मृणाल - के मानसिक स्तर को छू लेते हैं तो आपको जैनेंद्र के घटना संयोजन का पता चलता है। पता चल जाता है कि प्रत्येक घटना एक मार्मिक दृश्य है जो पाठकों पर एक ओर तो प्रहार करता है, दूसरी ओर उनकी संवेदनशीलता को उभारकर उन्हें द्रवीभूत कर देता है।

उपन्यास के शिल्प विधान में पूर्वदीप्ति विधि (फ्लैश बैक टेकनीक) के प्रयोग से अनूठापन आ गया है। इस विधि के द्वारा उपन्यासकार ने प्रधान पात्र मृणाल के जीवन की घटनाओं को अतीत में जाकर दिखाया है। इससे उपन्यास का परंभ करके अंत तक ले जाकर मूल कथा से अंत का संबंध जोड़कर दिखाया गया है। कथा का आरंभ भाव-मय और आत्मीय के साथ ही नाटकीय भी है।

प्रारंभिक

> सर एम. दयाल जो इस प्रांत के चीफ़ जज थे और जजी त्यागकर इधर कई वर्षों से हरिद्वार में विरक्त जीवन बिता रहे थे, उनके स्वर्गवास का समाचार दो महीने हुए पत्रों में छापा था। पीछे उनके कागजों में उनके हस्ताक्षर के साथ एक पांडुलिपि पाई गई जिसका संक्षिप्त सार इतस्ततः पत्रों में छप चुका है। उसे एक कहानी ही कहिए। मूल लेख अँग्रेजी में है। उसी का हिन्दी उल्था यहाँ दिया जाता है। कहानी में से स्थानों और व्यक्तियों के नाम और कुछ ऐसे ही ऐहिक विवरण अनिवार्य न होने के कारण बदल या कम कर दिए गए हैं।

कथा-समाप्ति के समय 'पुनश्च' के अंतर्गत एम. दयाल के अपने 'त्यागपत्र' पर हस्ताक्षर करने की सूचना है। कथा में संकेत शैली का बार-बार उपयोग होने के कारण विलक्षण रहस्यमयता आ गई है। संकेत शैली के कारण संवाद योजना में छोटे-छोटे वाक्यों और सरल शब्दों द्वारा प्रभावशाली अभिव्यक्ति हुई है। कथानक कभी विश्वसनीय लगता है तो कभी शंका

भी होती है पर मुख्य पात्रों की चारित्रिक उदात्ता और व्याप्त वेदना ने उपन्यास के परिवेश को अप्रभावित नहीं रहने दिया है।

बोध प्रश्न

- कथा के प्रारम्भ द्वारा जैनेंद्र कुमार कैसे और क्या स्थापित करते हैं?
- संकेत शैली के प्रयोग से क्या लाभ हुआ है?

4.3.2.5 संवाद योजना

जैनेंद्र कुमार संवादों के माध्यम से मन के भावों को व्यक्त करने में सिद्धहस्त हैं। भाषा का ऐसा जादूगर आपको न मिलेगा। भाषा की अमित संभावनाओं का सर्वाधिक रचनात्मक उपयोग करते हुए वे कुछ ऐसा कहलवा देते हैं कि पाठक अवाक रह जाता है। एक उदाहरण प्रस्तुत है -

"मैंने पूछा, तुम सच-सच बताओ, वहाँ जाना चाहती हो या नहीं?"

बुआ ने कहा, "सच बताऊँ?"

"हाँ, बिलकुल, सच-सच बताओ।"

बुआ ने हँसकर कहा, क्यों सच-सच बता दूँ?"

मैंने नाराज होकर कहा, नहीं बताओगी?

बोलीं, अच्छा, सच-सच बताती हूँ। मैं तेरे साथ रहना चाहती हूँ। रखेगा? फिर एकाएक मुझे अपने से चिपटाकर बोलीं, एक बात बता। तुझे बेंत खाना अच्छा लगता है?"

मैंने कहा - बेंत?"

बोली, "सच-सच कहती हूँ, प्रमोद। किसी और से नहीं कहा, तुझे कहती हूँ। बेंत खाना मुझे अच्छा नहीं लगता है। न यहाँ अच्छा लगता है न वहाँ अच्छा लगता है।"

इन संवादों में मृणाल ने अपने ऊपर किए जा रहे अत्याचार की परोक्ष प्रस्तुति की है। बुआ-भतीजे का प्रेम है, बेतकल्लुफ़ी है, बेबाकी है। ऊपर से आनंद पर अंदर से पीड़ा है। सब कुछ संकेत में है। कह सकते हैं कि जैनेंद्र ने हिन्दी उपन्यास को एक समर्थ और व्यंजनाधर्मी भाषा दी जो अपनी गद्यात्मकता के बावजूद कवित्वशक्ति संपन्न है।

व्याकरणिक भाषा प्रयोग

'भी' और 'तो' का बलार्थ प्रयोग जैनेंद्र की रचनात्मक भाषा का उदाहरण है। इस तराश को बाद में अज्ञेय, शमशेर बहादुर सिंह और रघुवीर सहाय ने परवान चढ़ाया। 'त्यागपत्र' उपन्यास से एक उदाहरण प्रस्तुत है - "हम लोगों का असली घर पछाँह की ओर था। पिता प्रतिष्ठावाले थे और माता कुशल गृहणी थीं। जैसी कुशल थीं वैसी कोमल भी होतीं तो -? पर नहीं, उस 'तो-?' के मुँह में नहीं बढ़ना होगा।"

दार्शनिक शब्दावली का अनूठा प्रयोग

इस उपन्यास में दार्शनिक शब्दावली का अनूठा प्रयोग है। ईश्वर, लीला, शरण, पतिव्रता, स्त्री-धर्म, समर्पण, पुरुष की सेवा, करुणा आदि शब्दों का प्रयोग प्रेमचंद का समकालीन और प्रगतिशील आंदोलन के संस्थापकों के सम्मेलन (1936) में भाग लेने वाला कर रहा है, यह हैरान

होने की ही नहीं मार्के की बात भी है। उदाहरण के लिए, मृणाल के भाई उसे समझते हुए कह रहें हैं, "थोड़ी बहुत रगड़ झगड़ होती ही है, पर पति के घर के अलावा स्त्री को ओर क्या आसरा है। यह झूठ नहीं है मृणाल कि पत्नी का धर्म पति है, घर पति-गृह है। उसका धर्म, कर्म और मोक्ष भी वही है। समझती तो हो, बेटा।" कोयले वाले की सहायता को कृतज्ञतापूर्वक स्वीकार करने के बाद मृणाल कहती है, "मुझे उस समय उस पर बड़ी करुणा आई।" वह समाज की 'मंगलाकांक्षा' में टूटने के लिए तैयार है।

घटनाओं की जगह लंबे-लंबे दार्शनिक आलाप

जैनेंद्र के उपन्यासों में लंबे-लंबे दार्शनिक वक्तव्य होते हैं। कुछ लोग इसे उनकी कमजोरी समझेंगे किंतु यही इनकी विशेषता है। इनके द्वारा लेखक जीवन में काम आने वाले विचार देता है। इनके बिना जैनेंद्र का कथा संसार फीका लगेगा।

जैनेंद्र और प्रेमचंद की वर्णन शैली में अंतर

जैनेंद्र की कथा भाषा-शैली प्रेमचंदीय शैली से भिन्न है। कथा के निर्वाह के लिए प्रेमचंद घटना के वर्णन पर बहुत ध्यान देते थे। जैनेंद्र ऐसा नहीं करते। इसलिए प्रेमचंद के उपन्यासों का आकार बड़ा है, जैनेंद्र के उपन्यास छोटे रह गए हैं। उदाहरण के लिए, 'त्यागपत्र' उपन्यास में मृणाल की बेंत से निर्मम पिटाई के बाद जैनेंद्र पूरी घटना को विस्तार नहीं देते। दो एक वाक्यों में कहकर आगे बढ़ जाते हैं। "वह दिन था कि फिर बुआ की हँसी मैंने नहीं देखी। इसके पाँच छह महीने बाद बुआ का विवाह हो गया।" जैनेंद्र चाहते तो इन महीनों की कथा-व्यथा कहते, पर वे घटना-प्रधानता को उपन्यास का दोष मानते रहे, "वह उपन्यास किसी काम का नहीं, जो इतिहास की तरह घटनाओं का बखान करता चला जाता है।"

बोध प्रश्न

- जैनेंद्र की भाषा-शैली से प्रेमचंद की भाषा-शैली किस प्रकार से भिन्न है?
- "जैंसी कुशल गृहणी थीं वैसी ही कोमल भी होतीं तो? यहाँ 'तो' का अर्थ क्या है? विस्तारपूर्वक स्पष्ट कीजिए।

विवेचनात्मक टिप्पणी

प्रेमचंद के बाद अथवा छायावादोत्तर काल के हिन्दी कथा साहित्य की दशा और दिशा के निर्धारण का श्रेय बड़ी हद तक जैनेंद्र कुमार को जाता है। वे कथा सम्राट प्रेमचंद के साथी भी थे और शिष्य भी। लेकिन उन्होंने प्रेमचंद का अंधानुकरण न करके अपनी अलग लीक बनाई। कथानक और भाषा दोनों के ही चयन के लिहाज से उनके उपन्यास 'त्यागपत्र' को मील का पत्थर माना जाता है। डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी मानते हैं कि जैनेंद्र वह पहले रचनाकार हैं जिन्होंने उपन्यास की भाषा को वर्णन के प्राथमिक स्तर से ऊपर उठाया। इसके प्रमाण के रूप में उन्होंने 'त्यागपत्र' के आरंभिक अंश को उद्धृत किया है, जो इस प्रकार है -

> "हम लोगों का असली घर पछाँह की ओर था। पिता प्रतिष्ठा वाले थे और माता अत्यंत कुशल गृहिणी थीं। जैसी कुशल थीं वैसी कोमल भी होतीं तो -? पर नहीं, उस 'तो -?' के, मुँह में नहीं बढ़ना होगा। बढ़े, कि गए। फिर तो सारी कहानी उस मुँह में निगल कर समा जाएगी और उसमें से निकलना भी नसीब न होगा।"

डॉ. चतुर्वेदी ने 'त्यागपत्र' में अपनाई गई कथा प्रस्तुत करने की शैली को अत्यंत सहज माना है। उन्हीं के शब्दों में -

> "कथा-में-कथा के चक्र वाले 'पंचतंत्र' और 'हितोपदेश' के देश में वर्णन करने और कहानी कहने पर ऐसा सहज और अनाटकीय संयम पहली बार देखने में आता है। इन दो-तीन वाक्यों में एक ओर उपन्यासकार का रचना-सूत्र छिपा हुआ है, पर वह गौण है। मुख्य है, वर्णन न करके वर्णन को व्यंजित कर देने की क्षमता। और तब इस रचना-विधान के लिए स्वाभाविक है कि यहाँ छोटे और निरीह-से दिखते अव्यय-प्रयोगों (तो, भी, और, कि) का महत्व बढ़ जाए। 'वैसी कोमल भी होतीं तो?' में 'भी' और 'तो' महज बलार्थक से अधिक रचनात्मक गुणवत्ता रखते हैं।" (हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास, पृ. 210)

प्रिय छात्रो! हिन्दी के उपन्यासकार आरंभ से ही भारतीय समाज में स्त्रियों की दशा को लेकर चिंतित और जागरूक रहे हैं। हिन्दी का पहला उपन्यास 'देवरानी जेठानी की कहानी' हो अथवा प्रेमचंद के 'सेवा सदन' और 'निर्मला' जैसे उपन्यास हों, बिना किसी प्रकार की नारेबाजी के इनमें पुरुषवादी भारतीय समाज की रूढ़ियों का खुलासा किया गया है। जैनेंद्र इनसे एक कदम आगे बढ़े हुए हैं। क्योंकि वे यथार्थ के ऊपर किसी आदर्श का आवरण नहीं चढ़ाते। बल्कि यहाँ तक इशारा करते हैं कि खोखले आदर्शवाद को ओढ़े रहने के कारण भी 'त्यागपत्र' की नायिका मृणाल जैसी स्त्रियाँ आजीवन उत्पीड़न, शोषण और दमन की शिकार बनती रहती हैं।

दरअसल जैनेंद्र ने इस उपन्यास में मृणाल की व्यथा-कथा के बहाने पिछली शताब्दी की भारतीय स्त्री की समस्याओं को व्यापक धरातल पर उकेरा है। आलोचकों ने इस ओर भी ध्यान दिलाया है कि 'त्यागपत्र' में तीन प्रकार की पारिवारिक संरचना और उसमें स्त्री की दशा दर्शाई गई है - संयुक्त परिवार, एकल परिवार तथा साहचर्य परिवार। मृणाल के माध्यम से लेखक ने संयुक्त परिवार में स्त्री को आदर्श गृहिणी बनाए जाने की समस्या, प्रेम तथा उसके दमन की समस्या, जीवन साथी न चुनने की समस्या उठाई है। एकल परिवार मृणाल का ससुराल है, जहाँ वह पतिव्रता पत्नी का धर्म निभाती है। वह सच बोलती है और सच बोलने पर समस्या उत्पन्न होती है - उसके शोषण की और उसके परित्याग की। साहचर्य परिवार वह परिवार है जहाँ परित्यक्ता होकर मृणाल कोयले वाले के साथ साहचर्य स्वीकार करती है, जहाँ उसे आर्थिक समस्या और सामाजिक दबाव का सामना करना पड़ता है। डॉ. रामदरश मिश्र के शब्दों में

> "त्यागपत्र का प्रमुख संदर्भ मनोवैज्ञानिक है, किंतु उसका एक सामाजिक संदर्भ भी है। लेखक कहीं सीधे ढंग से, कहीं व्यंग्यात्मक ढंग से सामाजिक जीवन की विसंगतियाँ भी उद्घाटित चलता है। यह बात और है कि वह उन विसंगतियों के प्रति विद्रोहात्मक रुख न अख्तियार करके, उनके प्रति समर्पण का भाव रखता है ताकि उसके यातनावादी दर्शन का निर्वाह हो सके। ... इसके अतिरिक्त लेखक प्रमोद के आत्मालोचन के माध्यम से सभ्य समाज की विसंगतियों को उकेरता है।" (हिन्दी उपन्यास : एक अंतर्यात्रा, पृ. 96)

बोध प्रश्न

- 'त्यागपत्र' में अपनाई गई शैली किस प्रकार की है?
- जैनेंद्र मृणाल के माध्यम से क्या निरूपित किया है?
- जैनेंद्र के संबंध में रामस्वरूप चतुर्वेदी ने क्या कहा?

4.4 पाठ सार

हिन्दी के प्रसिद्ध उपन्यासकार जैनेंद्र कुमार का उपन्यास त्यागपत्र मृणाल नामक स्त्री की जीवन की दुखभरी कहानी है। कहानी सामाजिक है किंतु आधार मनोवैज्ञानिक है। कहानी में पात्रों की संख्या सीमित है। मृणाल और उसका भतीजा प्रमोद (जज एम दयाल) ये दो प्रमुख पात्र हैं। अन्य गौण पात्र है - मृणाल की सहेली - शीला और उसका भाई, मृणाल का अधेड़ पति, मृणाल को अपने घर में रखने वाला कोयले वाला, मृणाल के भाई-भाभी आदि। कथा इस प्रकार है -

मृणाल खिलती कली सी सुंदर और स्वतंत्र विचारों वाली लड़की है। उसके माता पिता का देहांत हो चुका है और वह अपने भाई और भाभी और उनके पुत्र प्रमोद के साथ रहती है। प्रमोद की माँ मृणाल को कठोर अनुशासन में रखती है। मृणाल अपनी सहेली के घर आती जाती है और वहाँ उसके डाक्टरी पढ़ रहे भाई से प्रेम करने लगती है। भाभी को जब इसका पता चलता है तो यह मृणाल को बहुत मारती है। भाभी और भाई मिलकर कुछ महीनों में ही मृणाल का विवाह एक अधेड़ उम्र के विधुर के साथ जबरन कर देते हैं।

मृणाल बिना किसी विरोध के सामाजिक मान्यताओं का पालन करते हुए पति के साथ रहने लगती है। यह सोचकर कि उसे अपने पति से अपने विवाह-पूर्व के प्रेम को अपने पति से नहीं छुपाना चाहिए, वह अपने पति को अपना और अपने प्रेमी के पत्र दिखाकर सब कुछ सच सच बता देती है। यह जानकर वह मृणाल को क्षमा करने के स्थान पर उसे घर से निकालकर एक यातनाभरी कोठरी में डाल देता है। अपने भाई भाभी से उसे आश्रय की कोई उम्मीद नहीं है। वह हारकर एक कोयले वाले का प्रस्ताव स्वीकार कर लेती है। उसके साथ रहने लगती है। वह भी इस प्रकार सामाजिक बंधनों का परित्याग कर देती है। वह कोयले वाला भी कुछ दिन उसके साथ रहकर और उसके गर्भ में अपना बच्चा छोड़कर भाग खड़ा होता है। वह घर का सामान भी ले जाता है।

गर्भवती मृणाल मिशन अस्पताल में एक कन्या को जन्म देती है। यह कन्या भी कुछ महीनों बाद कुछ भूख और कुछ बीमारी से मर जाती है। मृणाल दुखी होकर आत्महत्या नहीं करती। वह एक स्कूल में जाकर बच्चों को पढ़ाने लगती है। घर-घर जाकर बच्चों को ट्यूशन भी पढ़ाने लगती है। प्रमोद एक बार तो अपनी बुआ से तब मिलता है जब वह कोयले वाले के साथ रहती है। पर मृणाल प्रमोद का प्रस्ताव मानकर उसके साथ घर वापिस नहीं जाती। प्रमोद के रिश्ते की बात चलती है। वह लड़की देखने जाता है उस लड़की के घर में मृणाल बच्चों को पढ़ाती है। प्रमोद उस परिवार को साफ-साफ बता देता है कि उनके यहाँ ट्यूशन पढ़ाने वाली महिला उसकी बुआ है। इस बात को सुनकर लड़की की माँ रिश्ता नहीं होने देती।

मृणाल का ट्यूशन और नौकरी दोनों छूट जाते हैं। उसे अब समाज के तथाकथित सभ्य लोगों की बस्तियों में रहने नहीं दिया जाता। वह एक गंदी बस्ती में रहने लगती है। वह बस्ती अपराधियों और चोर-उच्चकों की है। प्रमोद वहाँ भी जाता है। पर मृणाल को वापिस नहीं ला पाता। समय अपनी गति से बीतता जाता है। मृणाल जीवन में संघर्ष करती रहती है। कुछ वर्ष बाद प्रमोद को पता चलता है कि उसकी बुआ समाज के द्वारा दिये गए दुख सहते-सहते बीमारी और गरीबी के कारण चल बसी। प्रमोद जो उस समय एक प्रतिष्ठित जज है और उसका नाम एम दयाल है, वह इस समाचार को सुनकर बहुत निराश और दुखी होता है। उसे अपने सम्पूर्ण जीवन की कथा याद आ जाती है। उसे अपनी बुआ की जीवन भर की पीड़ा का स्मरण हो आता है। पश्चाताप और प्रायश्चित करने के लिए वह अपने पद से त्यागपत्र दे देता है। वह यह प्रण भी करता है कि वह अब सादा जीवन व्यतीत करेगा। समाज की रूढ़ियों में जकड़े रहने के कारण वह भी अपनी बुआ की कोई मदद न कर सका उसका दुख उसे सदा रहा।

4.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं -

1. जैनेंद्र कुमार भारतीय समाज की विकृतियों के यथार्थ को समझने वाले उपन्यासकार हैं।
2. 'त्यागपत्र' में उपन्यासकार ने रूढ़िग्रस्त भारतीय समाज में स्त्री की हीन दशा को उजागर किया है।
3. 'त्यागपत्र' में उपन्यासकार ने नारी जीवन की समस्याओं को पारिवारिक संरचना के आधार पर चित्रित किया है।
4. स्त्री जाति की हीन दशा का एक बड़ा कारण पुरुष प्रधान समाज द्वारा थोपी गई आचार संहिता है। उपन्यासकार ने इस विडंबना को भी दर्शाया है कि भारतीय स्त्री इस आचार संहिता को इस कदर ओढ़ लेती है कि उसका उल्लंघन करना उसे चरित्र हीनता प्रतीत होता है।
5. नियतिवाद अथवा भाग्यवाद भी भारतीय स्त्री की वह बड़ी कमजोरी है जिसके कारण वह निरंतर शोषण चक्र में फँसी रहती है। मृणाल के माध्यम से लेखक ने इस नियतिवाद को भी अच्छी तरह उभारा है।

4.6 शब्द संपदा

1. जूठन = खाने-पीने से बची हुई जूठी वस्तु, अवशिष्ट, समाज का वह वर्ग जिसे तथाकथित उच्च वर्ग 'नीच' या 'नीचा' समझकर अपमानित करता है।
2. दुहाजू = कोई विधुर (विधवा भी) यदि दूसरा विवाह करता है तो उसे दुहाजू कहते हैं।
3. नियति = भाग्य, जिसका होना निश्चित हो, प्रारब्ध
4. निर्मम = ममता रहित, निष्ठुर, कठोरता पूर्वक किया जाने वाला

5. पश्चाताप = पछतावा, दुख

6. पापिष्ठा = पाप करने वाली स्त्री, पर पुरुष के साथ संबंध बनाने वाली स्त्री

7. प्रायश्चित = पाप कर्म के फल, भोग से बचने हेतु किया जानेवाला शास्त्र विहित कर्म (जैसे-दान-व्रत करके प्रायश्चित करना)। ग्लानिवश किया गया कठोर आचरण।

8. बदजात = खोटा, नीच, कमीना, बहुत बुरा

9. बाड़ = चहार दिवारी, **बाड़** ऐसा निर्मित ढांचा होता है जो किसी क्षेत्र को घेरकर बंद कर, विशेषकर किसी घर या अन्य भवन से बाहर किसी इलाके में। इसे आमतौर पर खंबों से बनाया जाता है, जिनके बीच में तार, फट्टे, जाल, सलाखें या अन्य रुकावटें लगाई जाती हैं।

9. विधुर = जिस पुरुष की पत्नी मर गई हो

10. व्यभिचारिणी = (व्यभिचार: स्त्री पुरुष का अनुचित संबंध; बहुत ही निकृष्ट आचरण।) वह स्त्री जिसका आचरण अनुचित हो ।

11. स्वल्पता = मितव्ययता, थोड़ा खर्च, किफायत

4.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

4.7.1 सही विकल्प चुनिए -

1. मृणाल की सहेली का नाम है –

(अ) प्रियदर्शिनी **(आ) शीला** (इ) राजनंदिनी (ई) मीना

2. जस्टिस एम दयाल का बचपन का नाम है –

(अ) विनोद **(आ) प्रमोद** (इ) मनोहर दयाल (ई) इनमें से कोई नहीं

3. मृणाल को घर से निकाला –

(अ) उसकी भाभी ने (आ) कोयले वाले ने (इ) पति ने (ई) स्कूल के प्रधानाचार्य ने

4. "नहीं भाई। पाप –पुण्य की समीक्षा मुझसे न होगी।" किसने कहा

(अ) लेखक ने **(आ) जज साहब ने** (इ) शीला ने अपने भाई से (ई) कोयले वाले ने

5. "तू जानता है, पति का घर क्या होता है?" मृणाल ने पूछा।

(अ) स्वर्ग (आ) ससुराल **(इ) नरक** (ई) आनंद भवन

6. सुमेल कीजिए -

1. पति का शंकालु कठोर स्वभाव	(अ) मृणाल का शारीरिक पीड़न और शोषण
2. एक दुहाजू और प्रौढ़ व्यक्ति से	(आ) इच्छा के विरुद्ध विवाह

3. मायके के रूढ़िवादी परिवार द्वारा (इ) विवाह पूर्व प्रेम का अस्वीकार
4. पश्चाताप और प्रायश्चित करने के लिए (ई) प्रमोद का त्यागपत्र

A. 1-इ, 2-आ, 3- ई, 4- अ B. 1- आ, 2- इ, 3-अ, 4-ई

C. 1-इ, 2- अ, 3- आ, 4-ई **D. 1-इ, 2-आ, 3-अ, 4-ई**

7. उपन्यास 'त्यागपत्र' के लेखक का नाम क्या है?

A. शरतचंद्र B. अज्ञेय C. मुंशी प्रेमचंद **D. जैनेंद्र कुमार**

8. उपन्यास का मुख्य पात्र प्रमोद, वयस्क होने पर किस पद पर कार्य करता है?

A. जस्टिस (न्यायाधीश) B. कॉलेज के प्रोफेसर

C. समाज सुधारक D. कोयला व्यापारी

9. मृणाल का विवाह किससे हुआ था?

A. एक कोयला बेचने वाले से B. एक युवा डॉक्टर से

C. एक प्रतिष्ठित न्यायाधीश से **D. एक वृद्ध विधुर से**

10. मृणाल को उसके पति ने घर से क्यों निकाल दिया?

A.उसकी पिछली प्रेम कहानी की सच्चाई जानकर B.उसके भाई-भाभी के दबाव में

C.क्योंकि वह पढ़ना चाहती थी D.आर्थिक तंगी के कारण

खंड (ब)

4.7.2 लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. विवाह से पूर्व मृणाल अंतहीन आकाश की चिड़िया थी और विवाह के बाद? क्यों?
2. प्रमोद के साथ किस कारण मृणाल दोनों बार अपने मायके वापिस नहीं गई?
3. इस कथा के आधार पर भारतीय समाज की रूढ़िवादी सामाजिक और पारिवारिक मान्यताओं की समीक्षा कीजिए।
4. उपन्यास के कथा सार के आधार पर निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए –

i) त्यागपत्र – नारी जीवन की दुखपूर्ण कथा

ii) पुरुष -वर्चस्व वाले समाज में स्त्री

iii) पाप-पुण्य का प्रश्न और त्यागपत्र

iv) जीवन की सार्थकता का प्रश्न और त्यागपत्र

खंड (स)

4.7.3 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. 'त्यागपत्र' उपन्यास का कथासार अपने शब्दों में लिखिए।
2. 'त्यागपत्र' उपन्यास की कथा को अपने मित्र को एक पत्र के रूप में लिखिए।
3. "त्यागपत्र एक स्त्री के जीवन की दुखभरी कहानी है।" उपन्यास की कथा के आधार पर इस कथन की सार्थकता पर विचार कीजिए।
4. उपन्यास के कथानक के आधार पर इसके शीर्षक 'त्यागपत्र' की सार्थकता सिद्ध कीजिए।
5. "इतने वर्ष बीत जाने पर भी स्त्री विमर्श के धरातल पर यह उपन्यास सार्थक है।" इस कथन के पक्ष-विपक्ष की समीक्षा कीजिए।
6. कथानक के आधार पर मृणाल और प्रमोद के पारस्परिक संबंध की विवेचना कीजिए ।

4.8 पठनीय पुस्तकें

1. त्यागपत्र : जैनेंद्र कुमार
2. हिन्दी उपन्यास - एक अंतर्यात्रा : रामदरश मिश्र

इकाई 5 : प्रेमचंद : एक परिचय

रूपरेखा

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 मूल पाठ : प्रेमचंद : एक परिचय
5.3.1 प्रेमचंद का जीवन परिचय
5.3.2 प्रेमचंद की रचना यात्रा
5.3.3 प्रेमचंद की आरंभिक कहानियाँ
5.3.4 प्रेमचंद की कहानियों का विषयपरक वर्गीकरण और सामान्य परिचय
5.3.5 प्रेमचंद की कहानियों की विशेषताएँ
5.3.6 प्रेमचंद की कहानियों में आदर्श और यथार्थ
5.3.7 प्रेमचंद की कहानियों की भाषा
5.3.8 प्रेमचंद की कहानियों में शैली वैविध्य
5.3.9 प्रेमचंद की कहानी कला की विवेचना
5.4 पाठ सार
5.5 पाठ की उपलब्धियाँ
5.6 शब्द संपदा
5.7 परीक्षार्थ प्रश्न
5.8 पठनीय पुस्तकें

5.1 प्रस्तावना

मानव जीवन में कहानी का विशेष महत्व रहा है। जब हम प्रेमचंद और उनकी कहानी कला पर एक दृष्टि डालते हैं तो यह स्पष्ट हो जाता है कि इनकी कहानी कला अनेक विशेषताओं से भरपूर है। प्रेमचंद के अमूल्य योगदान से आज कहानी विधा विषय, कथ्य, आदर्श व शिल्प की दृष्टि से नए-नए आयामों को आत्मसात करते हुए संतोषजनक पडाओं को तय करके विकास की मंजिल तक पहुँचने में सक्षम हो चुकी है। इनकी कहानी कला सार्थक है। इनके भाव पक्ष की विविधता व गहनता इसकी कलात्मकता व साहित्यिक महत्ता की परिचायक है। इनकी कहानी कला के विविध आयामों से परिचित होकर कथा साहित्य के संप्रेषण और सौंदर्य को समझने में विद्यार्थियों को आसानी होती है।

5.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई में आप प्रेमचंद और उनकी कहानी कला के बारे में पढ़ेंगे। इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप -

- प्रेमचंद के जीवन और व्यक्तित्व से परिचित हो सकेंगे।
- प्रेमचंद की रचनाओं के बारे में जान सकेंगे।
- प्रेमचंद की लेखन प्रक्रिया को जान सकेंगे।
- प्रेमचंद की कहानी कला की विशेषताओं से अवगत हो सकेंगे।

5.3 मूल पाठ : प्रेमचंद : एक परिचय

5.3.1 प्रेमचंद का जीवन परिचय

प्रेमचंद ने सरल-सहज हिन्दी को ऐसा साहित्य प्रदान किया जिसे लोग कभी नहीं भूल सकते। बड़ी कठिन परिस्थियों का सामना करते हुए हिन्दी जैसे, खूबसूरत विषय में अपनी अमिट छाप छोड़ी। प्रेमचंद हिन्दी के लेखक ही नहीं बल्कि, एक महान साहित्यकार, नाटककार, उपन्यासकार होने के साथ-साथ बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। वे एक ऐसे लेखक थे जो समय के साथ बदलते गये और हिन्दी साहित्य को आधुनिक रूप प्रदान किया ।

31 जुलाई, 1880 को बनारस के एक छोटे से गाँव लमही में प्रेमचंद जी का जन्म हुआ था। प्रेमचंद जी एक छोटे और सामान्य परिवार से थे। उनके पिता का नाम अजायब राय था जो कि पोस्ट मास्टर थे। बहुत कम उम्र में उनकी माता का देहांत हो गया। ग़रीबी से लड़ते हुए प्रेमचंद ने अपनी पढ़ाई मैट्रिक तक पहुँचाई। उन्होंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से अंग्रेज़ी साहित्य, पर्शियन (फ़ारसी) और इतिहास विषयों से स्नातक की उपाधि द्वितीय श्रेणी में प्राप्त की थी। इंटरमीडिएट कक्षा में भी उन्होंने अंग्रेज़ी साहित्य एक विषय के रूप में पढा था।

प्रेमचंद जी अपने कार्यों को लेकर, बचपन से ही सक्रिय थे। प्रेमचंद ने अपना पहला उपन्यास '*देवस्थान रहस्य*' लिखा। प्रेमचंद की लेखन कला ही ऐसी थी कि उनके द्वारा लिखी गई सभी कहानियाँ प्रसिद्ध हुई। उनकी कहानियों में सरलता व स्पष्टता दिखाई पड़ती है जिसकी वजह से यह आमजन को आसानी से समझ में आ जाती है। उनकी कहानियाँ मनोरंजन, भाव इत्यादि से भरी रहती है और अंत में एक शिक्षाप्रद संदेश देती है। 8 अक्टूबर, 1936 को मुंशी प्रेमचंद की बनारस में मृत्यु हो गई। उनकी मृत्यु के बाद उनकी पत्नी ने भी उनके ऊपर एक पुस्तक लिखी जिसका नाम था - *प्रेमचंद घर में*

5.3.2 प्रेमचंद की रचना यात्रा

प्रेमचंद का बचपन का नाम धनपत राय था किंतु वे अपनी कहानियाँ उर्दू में नवाबराय के नाम से लिखते थे और हिन्दी में मुंशी प्रेमचंद के नाम से जाने गए। प्रेमचंद ने लगभग एक दर्जन उपन्यासों एवं 300 कहानियों की रचना की। इनकी कहानियाँ मानसरोवर भाग-1 और भाग 2 में संग्रहित हैं। उन्होंने 'माधुरी' एवं 'मर्यादा' नामक पत्रिकाओं का संपादन किया तथा 'हंस' एवं 'जागरण' नामक पत्र भी निकाले। इनके प्रसिद्ध नाटकों में कर्बला, संग्राम, प्रेम की वेदी हैं। इनके प्रसिद्ध उपन्यासों में 'सेवासदन', 'रंगभूमि', 'कायाकल्प', 'निर्मला', 'गबन', 'कर्मभूमि', 'गोदान' और अधूरा उपन्यास 'मंगलसूत्र' है।

सेवासदन उपन्यास पहले उर्दू में 'बाजार ए हुस्न' के नाम से लिखा गया जो बाद में हिन्दी में सेवासदन के नाम से प्रकाशित हुआ। इस उपन्यास में एक नारी के वेश्या बनने और उसकी पराधीनता की कहानी है। प्रेमाश्रम उपन्यास में किसान जीवन की कथा है। इस उपन्यास में कई नारी चरित्र हैं जैसे मनोहर की पत्नी अभिलाषी, विधवा गायत्री, गायत्री की बड़ी बहन विद्या आदि। 'रंगभूमि' उपन्यास में एक अंधे भिखारी सूरदास को कथा का नायक बनाकर प्रेमचंद ने अपनी बात रखी है। 'कायाकल्प' उपन्यास में अहिल्या जब यह देखती है कि ख्वाजा साहब का बेटा उसका बलात्कार करने की सोचता है तो वह उसकी हत्या कर देती है और साहब के बल पर अपनी रक्षा कर लेती है। 'निर्मला' उपन्यास में निर्मला को उपन्यास के केंद्र में रखकर अनमेल विवाह, दहेज प्रथा जैसी समस्याओं को रेखांकित किया गया है। 'प्रतिज्ञा' उपन्यास में विधवा जीवन और उसकी समस्याओं को दिखाया गया है। 'गबन' में कथा नायक रमानाथ और उनकी पत्नी जालपा के दांपत्य जीवन तथा कई समस्याओं को केंद्र में रखकर कथा का ताना-बाना बुना गया है। 'कर्मभूमि' वर्ग संघर्ष पर आधारित एक सामाजिक उपन्यास है। 'गोदान' लेखक का अंतिम पूर्ण प्रकाशित उपन्यास है जिसमें किसान जीवन की कथा को बड़े व्यापक स्तर पर अभिव्यक्ति मिली है। 'मंगलसूत्र' उपन्यास अधूरा है जो उनके पुत्र ने बाद में प्रकाशित करवाया। इस तरह यदि इनके कथा साहित्य को उठाकर देखा जाए तो एक बात स्पष्ट हो जाती है कि इनकी कहानियों, उपन्यासों, नाटकों आदि में नारी के अनेक रूप बिखरे पड़े हैं। उन्होंने प्रगतिशील विचारों वाली शिक्षित नारी की कल्पना की है क्योंकि उनके समय के समाज में नारी को उचित स्थान नहीं मिला था। बाल विवाह, विधवा विवाह, दहेज प्रथा उनके समय में खूब प्रचलित थे। तलाक की प्रथा नहीं थी परंतु पत्नी त्याग के अनेक उदाहरण मिलते थे। विधवा विवाह नहीं होते थे किंतु विधुर विवाह सामान्य थे। ग्रामीण और शहरी नारियों की जीवन शैली में अंतर था। सन 1923 में लिखा गया 'संग्राम' नाटक किसानों के मध्य व्याप्त कुरीतियों और किसानों की फिजूलखर्ची के कारण हुए कर्ज तथा कर्ज न चुका पाने के कारण अपनी फसल कम दामों में बेचने जैसी समस्याओं पर विचार करने वाला नाटक है। इन के सभी नाटक शिल्प और संवेदना के स्तर पर अच्छे हैं लेकिन कहानियाँ और उपन्यास अधिक प्रसिद्ध हैं। प्रेमचंद एक सफल अनुवादक भी रहे। उन्होंने टॉलस्टॉय की कहानियों का अनुवाद किया। बाल साहित्य के रूप में 'रामकथा', 'कुत्ते की कहानी' आदि देखे जा सकते हैं।

5.3.3 प्रेमचंद की आरंभिक कहानियाँ

प्रेमचंद ने जो भोगा है, जो देखा है उसे निष्कपटता के साथ शब्दों में साकार कर दिया है। प्रेमचंद ने जीवन के अनुभवों से शिक्षा प्राप्त की और सच्चे अर्थों में यही वास्तविक शिक्षा होती है जो व्यक्ति को परिपक्व बनाती है। उनका संपूर्ण साहित्य उनके जीवनगत अनुभवों का निचोड़ ही है।

डॉ. कमलकिशोर गोयनका के अनुसार प्रेमचंद ने अपने जीवन में लगभग 300 से अधिक कहानियाँ तथा 18 से अधिक उपन्यास लिखे हैं। प्रेमचंद की पहली कहानी उर्दू में थी, यह संग्रह 'सोज़े वतन' (राष्ट्र का विलाप) नाम से जून 1908 में प्रकाशित हुआ। इसी संग्रह की पहली

कहानी 'दुनिया का सबसे अनमोल रतन' को आम तौर पर उनकी पहली प्रकाशित कहानी माना जाता रहा है। डॉ. गोयनका के अनुसार कानपुर से निकलने वाली उर्दू मासिक पत्रिका ज़माना के अप्रैल अंक में प्रकाशित सांसारिक प्रेम और देश-प्रेम (इश्के दुनिया और हुब्बे वतन) वास्तव में उनकी पहली प्रकाशित कहानी है। 1915 ई. में उस समय की प्रसिद्ध हिन्दी मासिक पत्रिका 'सरस्वती' के दिसंबर अंक में पहली बार उनकी कहानी 'सौत' नाम से प्रकाशित हुई। 'प्रेमचंद' नाम से उनकी पहली कहानी 'बड़े घर की बेटी' ज़माना पत्रिका के दिसंबर के अंक में प्रकाशित हुई।

प्रेमचंद की आरंभिक कहानियाँ भावना प्रधान और आदर्शवादी हैं। वे प्रत्येक स्थिति में किसी ऊँचे आदर्श पर जाकर समाप्त होती है, उनका प्रभाव भावुकतापूर्ण और उपदेशात्मक सा प्रतीत होता है। जिन कहानियों में प्रेमचंद जी ने किसी आदर्श का चित्रण नहीं किया है, उदाहरण के लिए 'कफन', 'पूस की रात', 'नशा' आदि उन कहानियों में भी मुख्य प्रभाव परिस्थिति के विरुद्ध विद्रोह करने का ही रहा है। बीस वर्षों की इस अवधि में उनकी कहानियों के अनेक रंग देखने को मिलते हैं। उनसे पहले हिन्दी में काल्पनिक, एय्यारी और पौराणिक धार्मिक रचनाएँ ही की जाती थी। प्रेमचंद ने हिन्दी में यथार्थवाद की शुरूआत की। भारतीय साहित्य का बहुत सा विमर्श जो बाद में प्रमुखता से उभरा चाहे वह दलित साहित्य हो या नारी साहित्य उसकी जड़ें कहीं गहरे प्रेमचंद के साहित्य में दिखाई देती हैं।

5.3.4 प्रेमचंद की कहानियों का विषयपरक वर्गीकरण और सामान्य परिचय

प्रेमचंद ने हिन्दी कहानियों में युगांतर उपस्थित किया है। उनका साहित्य समाज सुधार और राष्ट्रीय भावनाओं से ओतप्रोत है। कहानियाँ अपने समय की सामाजिक तथा राजनीतिक परिस्थितियों का पूरा प्रतिनिधित्व करती हैं। इनकी कहानियों में किसानों की दशा, सामाजिक बंधनों में तड़पती नारियों की वेदना और वर्ण व्यवस्था की कठोरता के भीतर संत्रस्त हरिजनों की पीड़ा का मार्मिक चित्रण मिलता है। मुंशी प्रेमचंद की सहानुभूति भारत की दलित जनता, शोषित किसानों, मजदूरों और उपेक्षित नारियों के प्रति रही है। समय के साथ ही उनकी कहानियों में ऐसे तत्व भी विद्यमान हैं जो उसे शाश्वत और स्थाई बनाते हैं।

प्रेमचंद जी अपने युग के उन सिद्ध कलाकारों में से थे जिन्होंने हिन्दी को नवीन युग की आशा आकांक्षाओं की अभिव्यक्ति का सफल माध्यम बनाया। 'मंत्र' नामक कहानी एक मर्मस्पर्शी कहानी है जिसमें विरोधी घटनाओं, परिस्थितियों और भावना का चित्रण करके लेखक ने कर्तव्य बोध का अभीष्ट प्रभाव उत्पन्न किया है। यह एक सामाजिक कहानी है। पाठक पूरी कहानी को पढ़ जाता है। भगत की अंतर्द्वंदपूर्ण मनोदशा, वेदना, कर्तव्यनिष्ठा पाठकों को अपनी ओर आकर्षित करती है। 'साउथ' कहानी संवेदनशील कहानी है इसमें रजिया और दसिया दो नारी पात्र हैं। 'ठाकुर का कुआं' कहानी जातिप्रथा, भ्रष्टाचार जैसी विषमताओं को प्रतिध्वनित करती है। 'बड़े घर की बेटी' कहानी में प्रेमचंद ने भारतीय संयुक्त परिवार के मनोविज्ञान को बड़ी बारीकी से आनंदी के माध्यम से चित्रित किया है। उनका मानना है कि नारी में आत्मसम्मान

और स्वाभिमान की भावना होनी चाहिए और इसे वह आनंदी में दिखाते हैं। 'बूढ़ी काकी' कहानी में सामाजिक समस्या उठाई गई है और प्रेमचंद ने बड़ी ही करुणामय स्थितियाँ उत्पन्न की हैं जो पाठकों पर अपना सीधा प्रभाव डालती हैं। जीवन में कई बार ऐसा होता है कि इंसान को जिस वस्तु की अत्यंत आवश्यकता होती है, सुविधा होते हुए भी वह उसे नहीं ले पाता क्योंकि, उसे अपनों की आवश्यकताओं का अधिक ध्यान रहता है, प्रेमचंद ने अमीना के इस चरित्र को दर्शाया है। 'घासवाली' कहानी मुलिया के इर्द-गिर्द घूमती है। वह आत्मसम्मान से भरी हुई एक मेहनती और चरित्रवान स्त्री है। इस कहानी में दलित से जुड़ी समस्या की ओर संकेत किया गया है। 'सवासेर गेहूँ' एक सीधे-साधे किसान शंकर को केंद्र में रखकर लिखी गई है।

5.3.5 प्रेमचंद की कहानियों की विशेषताएँ

जीवन का यथार्थ अंकन प्रेमचंद की कहानियों का केंद्र बिंदु है। विषय की व्यापकता, चरित्र चित्रण की सूक्ष्मता, सशक्त संवाद, सजीव वातावरण, भाषा की गंभीरता, प्रवाहमयी शैली और लोक संग्रह की भावना जैसी कई विशेषताएँ प्रेमचंद की कहानियों में दृष्टिगोचर होती हैं। इनकी कहानियों में कृषि प्रधान समाज, जाति प्रथा, महाजनी व्यवस्था, रूढ़िवाद की जो गहरी समझ देखने को मिलती है अन्यत्र दिखाई नहीं देती। इनकी कहानियों में मानव जीवन की विविध समस्याओं का चित्रण व्यापक फलक पर दिखाई देता है और मालिक की समस्याएँ, मजदूरों की समस्याएँ, जमींदारों और किसानों का संघर्ष, प्राचीनता और नवीनता का संघर्ष इनकी रचनाओं के केंद्र में है। डॉ. नगेंद्र ने यह माना है कि "उन्होंने हिन्दी कथा साहित्य को मनोरंजन के स्तर से उठाकर जीवन के साथ सार्थक रूप से जोड़ने का काम किया है।"

प्रेमचंद ने जिन चरित्रों का चुनाव किया है, वे जीवन के प्रत्येक क्षेत्र से संबंधित दिखाई देते हैं लेकिन उनकी दृष्टि समाज में उपेक्षित वर्ग की ओर अधिक रही है। दोनों वर्गों के पात्रों का चित्रण करते समय उनका दृष्टिकोण अलग-अलग दिखाई देता है। उन्होंने आदर्श और यथार्थ को विशेष महत्व दिया और एक बात बहुत विशेष रूप से देखी जा सकती है कि उनके चरित्र वर्ग के प्रतिनिधि के रूप में आते हैं। जैसे-जैसे घटनाओं का विकास होता है, उसके साथ ही उनके चरित्रों का विकास भी देखा जा सकता है। चरित्रों के संवाद बड़े ही मनोवैज्ञानिक ढंग के होते हैं। उन्होंने दहेज को लेकर, बेमेल विवाह को लेकर, शोषण को लेकर, स्थान-स्थान पर विरोध दर्शाया है। वह ना तो अतीत की ओर गए हैं और ना ही भविष्य के प्रति मोह दिखाया है, इसके विपरीत वर्तमान में जीते हुए बड़ी ही ईमानदारी से देखे-भोगे समय का लेखा-जोखा अपनी कहानियों में प्रस्तुत किया है। इनका भाषा प्रयोग बड़ा ही सरल एवं सहज है। उन्होंने सामान्य मानवीय व्यापारों को मनोवैज्ञानिकता से जोड़कर प्रस्तुत किया है। हिन्दी और उर्दू दोनों प्रकार की शैलियाँ इनकी कहानियों में दिखाई देती हैं।

प्रेमचंद के चरित्र जो भाषा बोलते हैं वह उनके व्यक्तित्व के अनुकूल है। इनके महिला चरित्र मुहावरों और लोकोक्तियों का प्रयोग करते हैं। नारियों के प्रति उनका दृष्टिकोण अलग रहा है। उनके मन में नारियों के प्रति एक विशेष प्रकार की श्रद्धा थी, यही कारण है कि उनकी कहानियों में नारियों के प्रति बड़ी ही सहानुभूति और सम्मानपरक अभिव्यक्ति हुई है। आदर्श, त्याग, सेवा और पवित्रता को नारी का स्वभाव मानते थे। उन्होंने विधवा विवाह का समर्थन

किया है और बेमेल विवाह, तलाक के प्रति लोगों को सचेत किया है। उनका यह मानना रहा है कि नारी अपने अधिकारों के लिए सदैव संघर्षरत रही।

प्रेमचंद की कहानियाँ मानसरोवर भाग 1 और भाग 2 में संग्रहित हैं। ठाकुर का कुआं, पूस की रात, बड़े घर की बेटी, बूढ़ी काकी, ईदगाह, घासवाली, सवा सेर गेहूँ, गुल्ली डंडा, सद्गति आदि कहानियों में प्रेमचंद के विभिन्न दृष्टिकोण दिखाई देते हैं। इन कहानियों के प्रभावी नारी चरित्रों में सौत की रजिया और दसिया, ठाकुर का कुआं की गंगी, पूस की रात की मुन्नी, बड़े घर की बेटी की आनंदी, बूढ़ी काकी की रूपा और लाडली, ईदगाह की अमीना आदि महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं। इनकी कहानियों में संवेदनशीलता दिखाई देती है। प्रेमचंद साहित्य को जीवन की आलोचना मानते हैं और साहित्य का केंद्र बिंदु मानव जीवन है। इस तरह इनकी कहानियों के केंद्र में समाज और मानव जीवन है।

5.3.6 प्रेमचंद की कहानियों में आदर्श और यथार्थ

प्रेमचंद हिन्दी साहित्य के युग प्रवर्तक हैं। उन्होंने हिन्दी कहानी में आदर्शोन्मुख यथार्थवाद की एक नई परंपरा शुरू की। इनकी कहानियों में सामान्य जीवन की वास्तविकताओं का सम्यक चित्रण किया गया है। समाज सुधार एवं राष्ट्रीयता उनकी कहानियों के प्रमुख विषय रहे हैं।

प्रेमचंद जी ने कहा है कि 'साहित्य यथार्थ और आदर्शवाद का समन्वय है नग्न यथार्थ पुलिस की रिपोर्ट भर है तो यथार्थवाद आदर्श प्लेटफार्म का फतवा।' वे यथार्थ को साहित्य के लिए अनिवार्य मानते हैं, लेकिन यथार्थ के अतिवादी रूप को उन्होंने कभी स्वीकार नहीं किया। प्रेमचंद समाज में यथार्थ को ही देखना चाहते हैं और आदर्श को भी नहीं भूल पाते, दोनों के अतिरेक रूप के समर्थक नहीं हैं। उनके अनुसार यथार्थ को सजीव बनाने के लिए आदर्श का उपयोग होना ही चाहिए। इस दृष्टि से उनकी प्रतिनिधि कहानियों में 'बड़े घर की बेटी', 'नमक का दरोगा', 'दुर्गा का मंदिर', 'सज्जनता का दंड', 'पंच परमेश्वर' और 'मृत्यु के पीछे' आदि को लिया जा सकता है। प्रेमचंद जी की कहानियों के पात्र और उनके परिवेश तो यथार्थ दिखाई देता है। लेकिन इन पात्रों का आचरण और उसे प्रभावित करने वाली सोच अपने मूल रूप में आदर्शवादी ही माने जा सकते हैं।

प्रेमचंद जी के उपन्यास 'गोदान' में - गाँव में पंचायत होना, गौ हत्या, गोबर का झुनिया से विवाह, मातादीन सिलिया चमारी से अवैध संबंध - यह सभी प्रसंग लेखक ने एक सामाजिक विकृति और यथार्थ चित्रण के लिए किया है।

5.3.7 प्रेमचंद की कहानियों की भाषा

मुंशी प्रेमचंद उर्दू से हिन्दी में आए थे पहले वह नवाब राय के नाम से उर्दू में लिखा करते थे। उनकी भाषा में उर्दू की सुस्त लोकोक्तियाँ और मुहावरे के प्रयोग की प्रचुरता दिखाई देती है जैसे बूढ़ी काकी कहानी से एक उदाहरण देखा जा सकता है। बूढ़ी काकी का बड़ा ही

मनोवैज्ञानिक चित्रण प्रेमचंद जी ने किया है जब कड़ाही से गरम-गरम पूरियाँ छनकर निकलती हैं तो उनके विचार देखें-

"फूल हम घर में भी सूंघ सकते हैं परंतु वाटिका में कुछ और बात होती है।"

इसी प्रकार एक अन्य उदाहरण देखा जा सकता है। बूढ़ी काकी पर रूपा गुस्से से इस प्रकार झपटती है जैसे-

"मेंढक केंचुए पर झपटता है।"

इनकी भाषा सरल, सहज, व्यावहारिक, प्रवाहपूर्ण, मुहावरेदार एवं प्रभावशाली है तथा उसमें अद्‌भुत व्यंजना शक्ति भी विद्यमान है। इनकी भाषा पात्रों के अनुसार परिवर्तित हो जाती है। भाषा में सादगी और आलंकारिकता का समन्वय विद्यमान है। 'बड़े भाई साहब', 'नमक का दरोगा', 'पूस की रात', 'सौत', 'बूढ़ी काकी', 'ईदगाह', 'ठाकुर का कुआं', 'सद्‌गति', 'कफन' जैसी अनेक कहानियों में भाषा के नए-नए प्रयोग दिखाई देते हैं। लाक्षणिक भाषा का खूब प्रयोग हुआ है जैसे-

'डायन ना मरे ना माचा छोड़े।'

'ईदगाह' में अमीना सोचती है- 'इस निगोड़ी ईद को किसने बुलाया इस घर में उसका काम नहीं।'

एक स्थान पर प्रेमचंद कहते हैं- 'बच्चे हामिद ने बूढ़े हामिद का पाठ खेला था। बुढ़िया अमीना बालिका अमीना बन गई। वह रोने लगी। दामन फैलाकर हामिद को दुआएँ देती जाती थी।'

भाषा में मुहावरों का प्रयोग लेखक के उद्देश्य को पूरा करता है तथा भाषा को संप्रेषण युक्त बनाता है।

घासवाली कहानी से एक उदाहरण लिया जा सकता है-'मैं चमारिन होकर भी इतनी कमीनी नहीं हूँ कि जो अपने ऊपर भरोसा करे उसके साथ दगा करूँ। हाँ, महावीर अपने मन की करने लगे, मेरी छाती पर मूंग दले तो मैं भी उसकी छाती पर मूंग दलूंगी।'

5.3.8 प्रेमचंद की कहानियों में शैली वैविध्य

शैलियों का प्रयोग साहित्य को सौंदर्य प्रदान करता है। प्रेमचंद की कहानियों की शैलियाँ आकर्षक हैं। इनमें मार्मिकता है। इनकी रचनाओं में अनेक प्रकार के शैलियाँ दिखाई देती हैं जैसे :

- वर्णनात्मक शैली
- व्यंग्यात्मक शैली
- भावात्मक शैली
- विवेचनात्मक शैली

- प्रतीकात्मक शैली
- बिंबात्मक शैली
- लाक्षणिक शैली
- हास्य एवं व्यंग्य शैली
- संवाद शैली आदि

'घासवाली' कहानी से एक उदाहरण संवाद शैली के लिए लिया जा सकता है। मुलिया चैन सिंह से कहती है-

'मैं नीच जात हूँ और नीच जात की औरत जरा भी आरजू विनती या जरा से लालच या जरा सी धमकी से काबू में आ जाती है। कितना सस्ता सौदा है ठाकुर होना?'

वर्णनात्मक शैली का प्रयोग करते हुए लेखक स्थितियों का स्थान वर्णन करते चलते हैं।

लाक्षणिक शैली का उदाहरण बूढ़ी काकी कहानी में देखा जा सकता है- 'फूल हम घर में भी सूंघ सकते हैं परंतु वाटिका में कुछ और बात होती है।'

भावात्मक शैली का प्रयोग प्रेमचंद ने अपनी कई कहानियों में किया है जैसे पूस की रात में मुन्नी कहती है- 'कोई खैरात दे देगा कम्मल? न जाने कितने बाकी हैं जो किसी तरह चुकने ही नहीं आते, मैं कहती हूँ तुम क्यों नहीं खेती छोड़ देते? मर मर काम करो, उपज हो तो बाकी दे दो, चलो छुट्टी हुई। बाकी चुकाने के लिए ही तो हमारा जन्म हुआ है। पेट के लिए मजूरी करो। ऐसी खेती से बाज आए। रुपये ना दूँगी, ना दूँगी।'

5.3.9 प्रेमचंद की कहानी कला की विवेचना

भारतीय इतिहास के संधिकाल में कथा सम्राट प्रेमचंद का आविर्भाव हुआ। उस समय गुलाम भारत के राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक विसंगतमयी अस्त-व्यस्त परिदृश्य का मानचित्र अंग्रेजी साम्राज्यवादी शोषण नीतियों से और ज्यादा दयनीय होकर बिखर चुका था। यही कारण है कि 1905 ई. में रूसी क्रांति के पश्चात समस्त एशिया के साथ-साथ भारतीय जन आंदोलन भी जागरूकता व विद्रोह की नई लहरों से उद्वेलित हो उठा। उसी समय उत्तर प्रदेश के दक्षिणी हिस्से में 'सोज़े वतन' नामक छोटी-छोटी कहानियों का संग्रह प्रकाशित हुआ जिसमें पाँच छोटी कहानियाँ संग्रहित थीं। देशप्रेम की भावना इन पृष्ठों में सांस ले रही थी। इसके लेखक प्रेमचंद थे। इनके साहित्यिक जीवन का सूत्रपात इसी तरह हुआ।

विषयगत विविधता और शोषितों के प्रति मानवतावाद तथा उनके लिए आजादी के अधिकार को सर्वमान्य करने हेतु प्रेमचंद के अथक प्रयत्नों ने उन्हें समस्त बंधनों से ऊपर उठा कर अखिल भारतीय लेखक की मर्यादा में प्रतिष्ठित किया। प्रेमचंद के अमूल्य योगदान से आज कहानी विधा विषय, कथ्य, शिल्प की दृष्टि से नए-नए आयामों को आत्मसात करती हुई संतोषजनक पड़ाव को तय कर चुकी है। इनकी सार्थक कहानी कला के विषय में कहा जा सकता है कि प्रेमचंद के भावपक्ष की विविधता और गहनता इसकी कलात्मकता व साहित्यिक महत्ता की द्योतक है।

विषय की व्यापकता, चरित्र चित्रण की सूक्ष्मता, सशक्त संवाद, सजीव वातावरण, भाषा की गंभीरता, प्रवाहमयी शैली और लोक संग्रह की भावना की दृष्टि से प्रेमचंद की कहानियाँ अद्वितीय हैं। चाहे पंच परमेश्वर हो, आत्माराम या बड़े घर की बेटी अथवा शतरंज के खिलाड़ी हो, नशा या पूस की रात अथवा ठाकुर का कुआं यह सभी कहानियाँ विश्व की श्रेष्ठ कहानियों की पंक्ति में आगे खड़ी होती हैं। प्रेमचंद की कहानी कला को कई आयामों में देखा जा सकता है।

प्रेमचंद की कहानियों में जीवन का यथार्थ अंकन दिखाई देता है। प्रेमचंद साहित्य को जीवन की आलोचना मानते हैं और साहित्य का केंद्र बिंदु मानव जीवन है। साहित्य में प्रभाव उत्पन्न करने के लिए जीवन की सच्चाई यों का होना आवश्यक है। प्रेमचंद साहित्य को जीवन की आलोचना मानते हैं।

'हिन्दी कहानी का इतिहास' में डॉ. गोपाल राय ने प्रेमचंद की कहानियों में किसानों और तत्कालीन सरकार के रिश्ते के चित्रण के बारे में यह लिखा है कि -

> "प्रेमचंद अपनी कहानियों में प्रायः किसानों के प्रति औपनिवेशिक शासन के कर्तव्य की याद दिला कर जनता को सजग बनाने का भी प्रयास करते हैं। 'प्रतिज्ञा' में एक लोककथा के व्याज से प्रजा के प्रति राजा के कर्तव्य की याद दिखाई गई है, जो शायद तत्कालीन औपनिवेशिक शासन को संबोधित है। यह प्रजा पर अकाल जैसा संकट पड़ने पर शासक के कर्तव्य का चित्रण करने वाली कहानी है। औपनिवेशिक शासन अकाल पड़ने पर भी जनता के कष्ट की उपेक्षा करते हुए, उससे कठोरतापूर्वक लगान वसूलने की नीति में विश्वास करता था। 'सेवामार्ग' कहानी में भी एक मिथकीय कथा के माध्यम से प्रजा के प्रति राजा के कर्तव्य की याद दिलाई गई है।" (हिन्दी कहानी का इतिहास, पृ. 87)

प्रेमचंद ने अपनी कहानी कला में सौंदर्यवाद व उपयोगितावाद को विशेष महत्व दिया है। उनकी दृष्टि में साहित्यकार पैदा होता है बनाया नहीं जाता। उसका लक्ष्य केवल महफ़िल सजाना और मनोरंजन के साधन जुटाना नहीं, वह देशभक्ति, राजनीति के पीछे चलने वाली सच्चाई भी नहीं है अपितु उनके आगे मशाल दिखाती सच्चाई है। वह मानते हैं कि अन्याय, प्रभुत्व आदि के विरुद्ध मानव के मन में जो विद्रोह जल उठता है वही साहित्य है।

प्रेमचंद की कहानी कला में मानवीय धरातल पर आदर्श और यथार्थ की परिकल्पना दिखाई देती है। जीवन में जो कुछ सत्य शिव और सुंदर है उसी को दर्शाना लेखक का मुख्य उद्देश्य रहा परंतु यथार्थ चित्रण के लिए साहित्य की उपयोगिता को तिरस्कृत नहीं किया। सदैव सत्य व न्याय की विजय चाही यदि यथार्थवाद से यह विजय असंभव लगता वहाँ आदर्श से समझौता कर सुधारवाद व हृदय परिवर्तन द्वारा विजय घोषित करने से परहेज नहीं करते। आलोचकों ने इस समझौतावादी प्रवृत्ति को यथार्थवाद का नाम दिया।

प्रेमचंद की कहानी कला में विषय वस्तु या कथ्य का सौंदर्य अलग से दिखाई देता है। यह आधुनिक कहानी को पूर्ववर्ती कहानी से सर्वथा अलग मानते हैं। इनकी कहानियों में जनसाधारण की समस्याओं को देखा जा सकता है। संयुक्त परिवार का विघटन, अलगाव,

विधवा विवाह, दहेज प्रथा, बाल विवाह, राष्ट्रद्रोह, घूसखोरी, बहु-विवाह, अंधविश्वास, ग्रामीण शोषण, आर्थिक वैषम्य, अनमेल विवाह, वेश्यावृत्ति, राष्ट्रीय जागरण, धर्म की राजनीति, महाजनी सभ्यता आदि अनेक विषयों को समय के प्रेमचंद की कहानियाँ पाठकों से भावनात्मक नाता जोड़ लेती हैं। प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियों को आरंभ काल, विकास काल और उत्कर्ष काल में बाँट कर देखा जा सकता है। प्रारंभ काल की कहानियाँ आदर्शवादी, विकास काल की कहानियाँ आदर्शोंमुखी, उत्कर्ष काल की कहानियाँ कलात्मक दृष्टि से उत्कृष्ट दिखाई देती हैं।

पात्र चरित्र चित्रण की दृष्टि से प्रेमचंद को सफलता मिली है। उनका मानना है कि- 'मानवीय चरित्र इतना जटिल है कि बुरे से बुरा आदमी भी देवता हो जाता है और अच्छे से अच्छा आदमी पशु पर वास्तव में मानव स्थितियों के हाथ का खिलौना मात्र है।' प्रेमचंद की कहानियों को पढ़कर यह पता नहीं चलता कि उनकी कहानियाँ घटना प्रधान हैं या चरित्र प्रधान। यही कारण है कि इनके पात्रों को ना परिचय की जरूरत है ना व्याख्या की। चरित्र चित्रण की दृष्टि से कहानियाँ पात्रों के व्यक्तित्व की स्थूलता के स्थान पर आंतरिक सूक्ष्मता पर टिकी हैं। प्रेमचंद स्वयं यह मानते हैं कि जो लेखक मानव ह्रदय के रहस्यों को खोलने में सक्षम है उसी की रचना सफल है। वह उन्हीं पात्रों का सफल चित्रण कर सकता है, जिनसे वह निजी अनुभव से परिचित है।

संवाद, मनोविज्ञान, देशकाल वातावरण, भाषा-शैली, उद्देश्य, मानवतावाद आदि ऐसे अनेक आयाम हैं, जो प्रेमचंद की कहानियों में विशेष रूप से दिखाई देते हैं। भले ही प्रेमचंद उपन्यास सम्राट माने जाते हैं, किंतु कहानी के क्षेत्र में भी उनकी कहानियाँ समाज और मानव से जुड़ी हुई हैं।

बोध प्रश्न

- प्रेमचंद जी ने साहित्य को किस का समन्वय कहा है?
- प्रेमचंद जी की रचनाओं में कौन सी शैलियाँ मिलती हैं?
- प्रेमचंद की कहानियों की कुछ विशेषताएँ बताइए।
- संग्राम नाटक किस विषय पर आधारित है?
- प्रेमचंद की कहानी कला में किसको महत्व दिया गया है?

5.4 पाठ सार

प्रेमचंद की कहानी कला में अनेक गुण समाहित हैं। प्रेमचंद ने समकालीन घटनाओं को अपनी कहानियों का विषय बनाया है। लेखक के लिए जीवन नए-नए अनुभव की पाठशाला जान पड़ता है। इनकी कहानियों में जीवन का यथार्थ अंकन है। उन्होंने यथार्थवाद, मानवतावाद, मार्मिक संवेदना और मनोविज्ञान का दामन पकड़ कर जनता के मर्म को गहराई से स्पर्श किया है। कफन, पूस की रात, जुर्माना, नशा, सद्गति आदि इस दृष्टि से उल्लेखनीय कहानियाँ हैं। इसी प्रकार इनकी कहानियों में सौंदर्य और उपयोगिता के आयाम दिखाई देते हैं। मानवीय धरातल पर आदर्श और यथार्थ की परिकल्पना इनकी कहानियों की विशेषता है। इन्होंने अपनी कहानियों में समस्याएँ बताईं और समाधान आदर्शवाद में खोजा। प्रेमचंद ने आधुनिक कहानी

को पूर्ववर्ती कहानी से अलग माना है। भारतीय जन चेतना में आया असाधारण परिवर्तन उनकी रचनाओं में परिलक्षित होता है। ठाकुर का कुआं, नमक का दरोगा, सवा सेर गेहूँ जैसी कहानियाँ सामाजिक व्यवस्था व अंधविश्वासों पर प्रहार करती हैं। इन्होंने घटना प्रधान कहानियों के स्थान पर चरित्र प्रधान कहानियों को अधिक महत्व दिया है।

प्रेमचंद की कहानियाँ विशुद्ध भारतीय संस्कृति की व्यापकता को सहेजे हुए हैं। इनकी कहानियों में मनोवैज्ञानिक अनुभूतियाँ जीवंत हुई हैं। इनकी रचना दृष्टि समकालीन जीवन सत्यों से निर्मित होने के कारण बहुरंगी वर्गों के पात्र, मजदूर, किसान, पूँजीपति, जमींदार, दलित, महाजन, शहरी-ग्रामीण, मालिक-नौकर आदि के आपसी सामाजिक व आर्थिक संबंधों-संघर्षों आदि को बेहद आत्मीयता पूर्ण अभिव्यक्ति देते हैं। उन्होंने विराट मानवतावादी दृष्टि से व्यक्ति को सामाजिक इकाई के रूप में मान्यता दी है।

कहानी के रचना विधान को निरंतरता व विकासशील पक्ष की ओर उन्मुख करने में इनके संवाद विशेष भूमिका निभाते हैं। देशकाल, वातावरण, मानवतावाद जैसे आयाम इनकी कहानियों के प्राण हैं। इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि भाव, भाषा, कला, शैली आदि सभी दृश्यों से प्रेमचंद कथा साहित्य के प्रणेता हैं।

5.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से प्रेमचंद और उनकी कहानी कला के बारे में निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. कथा-सम्राट प्रेमचंद ने 300 से अधिक कहानियों तथा 18 से अधिक उपन्यासों की रचना की।
2. प्रेमचंद की पहली कहानी 'इश्के दुनिया और हुब्बे वतन' (सांसारिक प्रेम और देश-प्रेम) कानपुर से निकलने वाले उर्दू मासिक 'ज़माना' में अप्रैल 1908 में प्रकाशित हुई थी।
3. प्रेमचंद का पहला कहानी-संग्रह 'सोज़े वतन' (राष्ट्र का विलाप) नाम से जून 1908 में उर्दू में प्रकाशित हुआ था।
4. 'प्रेमचंद' नाम से उनकी पहली कहानी 'बड़े घर की बेटी' ज़माना पत्रिका में दिसंबर 1910 में प्रकाशित हुई।
5. दिसंबर 1915 ई. में हिन्दी मासिक पत्रिका 'सरस्वती' में प्रकाशित कहानी 'सौत' प्रेमचंद की पहली हिन्दी कहानी है।
6. विषयगत विविधता और शोषितों के प्रति मानवतावादी दृष्टिकोण तथा उनके लिए आजादी के अधिकार को सर्वमान्य करने हेतु प्रेमचंद के अथक प्रयत्नों ने उन्हें समस्त बंधनों से ऊपर उठा कर अखिल भारतीय लेखक की मर्यादा में प्रतिष्ठित किया।
7. प्रेमचंद के भावपक्ष की विविधता और गहनता उनकी कलात्मकता व साहित्यिक महत्ता की द्योतक है।

8. विषय की व्यापकता, चरित्र चित्रण की सूक्ष्मता, सशक्त संवाद, सजीव वातावरण, भाषा की गंभीरता, प्रवाहमयी शैली और लोक संग्रह की भावना की दृष्टि से प्रेमचंद की कहानियाँ अद्वितीय हैं।

5.6 शब्द संपदा

1. अति व्याप्ति = सीमा या नियम से अधिक
2. अथाह = थाहहीन
3. अनुभूत करना = महसूस करना
4. अल्प वेतन = कम वेतन
5. अस्त-व्यस्त = बिखरा हुआ
6. आकर्षक = आकर्षण युक्त
7. आतुर = व्याकुल
8. आविर्भाव = आगमन
9. उद्भव = जन्म
10. उपसंहार = समापन
11. गहनता = गंभीरता
12. घूसखोर = घूस खाने वाले
13. चिंतन मनन = सोच विचार
14. जागरूकता = चेतना जगाना
15. ताड़ना = प्रताड़ित करना
16. तुच्छ से तुच्छ = छोटी से छोटी
17. दरिद्रता = गरीबी
18. दिलचस्पी = रुचि
19. निष्ठुर = कठोर
20. पड़ाव = मंजिल
21. पारिभाषिक = विशेष परिभाषा में बंधी हुई
22. प्रचलित = प्रचारित या लोकप्रिय
23. प्रस्तावना = भूमिका या विषय प्रवेश

24. भावात्मक = भावना प्रधान
25. मूक = मौन
26. यथार्थ = वास्तविक
27. रूढ़ियाँ = पुरानी परंपराएँ
28. रोचक = रुचिकर
29. लेखन शैली = लिखने का तरीका
30. वर्णनात्मक = वर्णन से युक्त
31. विचारणीय = विचार करने योग्य
32. विचार-विनिमय = विचारों का परस्पर आदान-प्रदान
33. विचारात्मक = चिंतन से युक्त
34. विधा = तरीका या ढंग
35. विशिष्ट = विशेष
36. विस्तार = विकास
37. संगति = दूसरे व्यक्ति का साथ
38. समकालीन = अपने समय की
39. समुचित प्रयोग = उचित प्रयोग
40. सर्वाधिक = सबसे अधिक
41. सीमित आकार में = छोटे रूप में
42. सूत्रपात = प्रारंभ
43. स्वच्छन्दता = मनमाना या स्वइच्छानुकुल
44. स्वाध्याय = स्वयं अध्ययन करना

5.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

5.7.1 सही विकल्प चुनिए

1. प्रेमचंद का जन्म वाराणसी के किस गाँव में हुआ था?

A. लमही B. बेलनी C. मगुहर D. सिही

2. प्रेमचंद अपनी उर्दू कहानियाँ किस नाम से लिखते थे?

A. मुंशी प्रेमचंद B. गुलाब राय **C. नवाबराय** D. धनपत राय

3. प्रेमचंद का वह कौन सा उपन्यास है जो उनके निधन के कारण अधूरा रह गया था?

A. मंगलसूत्र B. गबन C. कायाकल्प D. गोदान

4. प्रेमचंद की पहली हिन्दी कहानी 'सौत' किस पत्रिका में प्रकाशित हुई थी?

A. ज़माना B. हंस **C. सरस्वती** D.माधुरी

5. प्रेमचंद के किस उपन्यास में एक अंधे भिखारी 'सूरदास' को कथा का नायक बनाया गया है?

A. निर्मला B. सेवासदन **C. रंगभूमि** D. कर्मभूमि

6. प्रेमचंद की कहानियों के उस संकलन का नाम क्या है जिसमें उनकी लगभग सभी कहानियाँ संग्रहित हैं?

A. सप्त सरोज **B. मानसरोवर** C. सोज़े वतन D. प्रेम पचीसी

7. प्रेमचंद की कहानी कला की उस मुख्य विशेषता को क्या कहा जाता है जहाँ यथार्थ का चित्रण आदर्श की ओर ले जाता है?

A. काल्पनिक रोमांस B. **आदर्शोन्मुख यथार्थवाद** C. नग्न यथार्थवाद D. अति-यथार्थवाद

8. प्रेमचंद द्वारा लिखित 'संग्राम' नाटक का मुख्य विषय क्या है?

A. किसानों की कुरीतियाँ और कर्ज की समस्या

B. धार्मिक अंधविश्वास

C. स्वतंत्रता आंदोलन

D. दहेज प्रथा

9. प्रेमचंद की किस कहानी में 'हामिद' और उसकी दादी 'अमीना' के माध्यम से बाल मनोविज्ञान का चित्रण किया गया है?

A. बड़े घर की बेटी B. पूस की रात C. बूढ़ी काकी **D. ईदगाह**

10. प्रेमचंद ने साहित्य के बारे में क्या विचार व्यक्त किया है?

A. साहित्य केवल मनोरंजन का साधन है B. साहित्य केवल कल्पना की उड़ान है

C. साहित्य जीवन की आलोचना है D. साहित्य राजनीति के पीछे चलने वाली सच्चाई है

खंड (ब)

5.7.2 लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. मानव और समाज पर कहानी का क्या प्रभाव पड़ता है?
2. कहानी की विशेषताएँ लिखिए।
3. कहानी के कितने तत्व माने जाते हैं?
4. कहानी लेखन की विधियों की चर्चा कीजिए।
5. प्रेमचंद युग के कहानीकारों का परिचय दीजिए।

खंड (स)

5.7.3 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. कहानी का उद्भव और विकास बताते हुए उसके प्रकारों की चर्चा कीजिए।
2. कहानी की विभिन्न परिभाषाएँ देते हुए उसके स्वरूप की चर्चा कीजिए।
3. कहानी परंपरा में प्रेमचंद का स्थान निर्धारित कीजिए।
4. कहानी का महत्व बताते हुए गद्य साहित्य में उसका स्थान निर्धारित कीजिए।
5. प्रेमचंद की कहानी कला का विस्तार से विवेचन कीजिए।

5.8 पठनीय पुस्तकें

1. गद्य यात्रा : श्रीराम शर्मा
2. हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास : रामकुमार वर्मा
3. साहित्यिक निबंध : गणपति चंद्र गुप्त
4. हिन्दी साहित्य का इतिहास : रामचंद्र शुक्ल
5. हिन्दी साहित्य की भूमिका : हजारी प्रसाद द्विवेदी
6. हिन्दी साहित्य - उद्भव और विकास : हजारी प्रसाद द्विवेदी
7. कहानी कला और प्रेमचंद : श्रीपति शर्मा

इकाई 6 : 'नमक का दरोगा' (प्रेमचंद) : तात्विक विश्लेषण

रूपरेखा

6.1 प्रस्तावना

6.2 उद्देश्य

6.3 मूल पाठ : 'नमक का दरोगा' (प्रेमचंद) : तात्विक विश्लेषण

6.3.1 कथावस्तु

6.3.2 पात्र परिकल्पना और चरित्र चित्रण

6.3.3 देशकाल (परिवेश) चित्रण

6.3.4 कथोपकथन या संवाद योजना

6.3.5 भाषा-शैली

6.3.6 उद्देश्य

6.3.7 शीर्षक का औचित्य

6.3.8 'नमक का दरोगा' की विशेषताएँ एवं महत्व

6.4 पाठ सार

6.5 पाठ की उपलब्धियाँ

6.6 शब्द संपदा

6.7 परीक्षार्थ प्रश्न

6.8 पठनीय पुस्तकें

6.1 प्रस्तावना

कहानी गद्य लेखन की एक प्रमुख विधा है। हिन्दी में प्रेमचंद को सर्वश्रेष्ठ कहानीकार माना जाता है। 'नमक का दरोगा' प्रेमचंद की एक प्रसिद्ध कहानी है जिसमें विभिन्न प्रकार के भ्रष्टाचारों का वास्तविक चित्रण दिखाई देता है। जब नमक का नया विभाग बना और ईश्वर प्रदत्त वस्तु के व्यवहार करने का निषेध हो गया तो लोग चोरी-छिपे इसका व्यापार करने लगे और अनेक प्रकार के प्रपंचों का सूत्रपात हुआ। घूसखोरी बढ़ गई। अधिकारियों के पौबारह हो गए, ऐसी स्थिति आ गई कि पटवारी जैसा सम्मानित पद छोड़कर लोग इस विभाग की ओर आकर्षित होने लगे। इसके दरोगा पद के लिए तो वकीलों का भी मन जाने लगा। यह कहानी समाज की यथार्थ स्थिति को उद्घाटित करती है। ईमानदारी और कर्तव्यनिष्ठ समाज का निर्माण करना ही लेखक का उद्देश्य है जो इस कहानी के माध्यम से व्यक्त होता है।

6.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप -

- 'नमक का दरोगा' कहानी के कथानक से परिचित हो सकेंगे।
- इस कहानी के पात्रों और उनके चरित्र को समझ सकेंगे।
- इस कहानी में वर्णित देशकाल से अवगत हो सकेंगे।
- इस कहानी में प्रयुक्त संवादों की विशेषता जान सकेंगे।
- इस कहानी की भाषा-शैली की विवेचना कर सकेंगे।
- इस कहानी के उद्देश्य और नामकरण के आधार को समझ सकेंगे।

6.3 मूल पाठ : 'नमक का दरोगा' (प्रेमचंद) : तात्विक विश्लेषण

6.3.1 कथावस्तु

नमक का दरोगा प्रेमचंद द्वारा रचित कहानी है। इसमें एक ईमानदार नमक निरीक्षक की कहानी को बताया गया है जिसने कालाबाजारी के विरुद्ध आवाज उठाई। यह कहानी धन के ऊपर धर्म के जीत की है। कहानी में मानव मूल्यों का आदर्श रूप दिखाया गया है और उसे सम्मानित भी किया गया है।

नमक का विभाग बनने के बाद लोग नमक का व्यापार चोरी छिपे करने लगे। इस काले व्यापार से भ्रष्टाचार बढ़ा। अधिकारियों के पौ-बारह थे। लोग दरोगा के पद के लिए लालायित थे। मुंशी वंशीधर भी रोजगार को प्रमुख मानकर इसे खोजने चले। इनके पिता अनुभवी थे। उन्होंने घर की दुर्दशा तथा अपनी वृद्धावस्था का हवाला देकर नौकरी में पद की ओर ध्यान न देकर ऊपरी आय वाली नौकरी को बेहतर बताया। वे कहते हैं कि मासिक वेतन तो पूर्णमासी का चाँद है जो एक दिन दिखाई देता है और घटते-घटते लुप्त हो जाता है। ऊपरी आय बहता हुआ स्रोत है जिससे सदैव प्यास बुझती है। आवश्यकता व अवसर देखकर विवेक से काम करो। वंशीधर ने पिता की बातें ध्यान से सुनी और चल दिए। धैर्य, बुद्ध, आत्मावलंबन व भाग्य के कारण नमक विभाग के दरोगा पद पर प्रतिष्ठित हो गए। घर में खुशी छा गई।

सर्दी के मौसम की रात में नमक के सिपाही नशे में मस्त थे। वंशीधर ने छह महीने में ही अपनी कार्यकुशलता व उत्तम आचार से अफसरों का विश्वास जीत लिया था। यमुना नदी पर बने नावों के पुल से गाड़ियों की आवाज सुनकर वे उठ गए। उन्हें गोलमाल की शंका थी। जाकर देखा तो गाड़ियों की कतार दिखाई दी। पूछताछ पर पता चला कि ये पंडित अलोपीदीन की है। वह इलाके का प्रसिद्ध जमींदार था जो ऋण देने का काम करता था। तलाशी ली तो पता चला कि उसमें नमक है। पंडित अलोपीदीन अपने सजीले रथ में ऊँघते हुए जा रहे थे तभी गाड़ी वालों ने गाड़ियाँ रोकने की खबर दी। पंडित सारे संसार में लक्ष्मी को प्रमुख मानते थे। न्याय, नीति सब लक्ष्मी के खिलौने हैं। उसी घमंड में निश्चित होकर दरोगा के पास पहुँचे। उन्होंने कहा कि मेरी सरकार तो आप ही हैं। आपने व्यर्थ ही कष्ट उठाया। मैं सेवा में स्वयं आ ही रहा था।

वंशीधर पर ईमानदारी का नशा था। उन्होंने कहा कि हम अपना ईमान नहीं बेचते। आपको गिरफ्तार किया जाता है।

यह आदेश सुनकर पडित अलोपीदीन हैरान रह गए। यह उनके जीवन की पहली घटना थी। बदलू सिंह उसका हाथ पकड़ने से घबरा गया, फिर अलोपीदीन ने सोचा कि नया लड़का है। दीनभाव में बोले - आप ऐसा न करें। हमारी इज्जत मिट्टी में मिल जाएगी। वंशीधर ने साफ मना कर दिया। अलोपीदीन ने चालीस हजार तक की रिश्वत देनी चाही, परंतु वंशीधर ने उनकी एक न सुनी। धर्म ने धन को पैरों तले कुचल डाला।

सुबह तक हर जबान पर यही किस्सा था। पंडित के व्यवहार की चारों तरफ निंदा हो रही थी। भ्रष्ट व्यक्ति भी उसकी निंदा कर रहे थे। अगले दिन अदालत में भीड़ थी। अदालत में सभी पडित अलोपीदीन के माल के गुलाम थे। वे उनके पकड़े जाने पर हैरान थे। इसलिए नहीं कि अलोपीदीन ने क्यों यह कर्म किया बल्कि इसलिए कि वह कानून के पंजे में कैसे आए? इस आक्रमण को रोकने के लिए वकीलों की फौज तैयार की गई। न्याय के मैदान में धर्म और धन में युद्ध ठन गया। वंशीधर के पास सत्य था, गवाह लोभ से डाँवाडोल थे।

मुंशी जी को न्याय में पक्षपात होता दिख रहा था। यहाँ के कर्मचारी पक्षपात करने पर तुले हुए थे। मुकदमा शीघ्र समाप्त हो गया। डिप्टी मजिस्ट्रेट ने लिखा कि पंडित अलोपीदीन के विरुद्ध प्रमाण आधारहीन है। वे ऐसा कार्य नहीं कर सकते। दरोगा का दोष अधिक नहीं है, परंतु एक भले आदमी को दिए कष्ट के कारण उन्हें भविष्य में ऐसा न करने की चेतावनी दी जाती है। इस फैसले से सबकी बाँछे खिल गई। खूब पैसा लुटाया गया जिसने अदालत की नींव तक हिला दी। वंशीधर बाहर निकले तो चारों तरफ से व्यंग्य की बातें सुनने को मिलीं। उन्हें न्याय, विद्वता, उपाधियाँ आदि सभी निरर्थक लगने लगे।

वंशीधर की बर्खास्तगी का पत्र एक सप्ताह में ही आ गया। उन्हें कर्तव्यपरायणता का दंड मिला। दुखी मन से वे घर चले। उनके पिता खूब बड़बड़ाए। यह अधिक ईमानदार बनता है। जी चाहता है कि तुम्हारा और अपना सिर फोड़ लें। उन्हें अनेक कठोर बातें कहीं। माँ की तीर्थयात्रा की आशा मिट्टी में मिल गई। पत्नी कई दिन तक मुँह फुलाए रही।

एक सप्ताह के बाद अलोपीदीन सजे रथ में बैठकर मुंशी के घर पहुँचे। वृद्ध मुंशी उनकी चापलूसी करने लगे तथा अपने पुत्र को कोसने लगे। अलोपीदीन ने उन्हें ऐसा कहने से रोका और कहा कि कुलतिलक और पुरुषों की कीर्ति उज्ज्वल करने वाले संसार में ऐसे कितने धर्मपरायण मनुष्य हैं जो धर्म पर अपना सब कुछ अर्पण कर सकें। उन्होंने वंशीधर से कहा कि इसे खुशामद न समझिए। आपने मुझे पराया कर दिया। वंशीधर ने सोचा कि वे उसे अपमानित करने आए हैं, परंतु पंडित की बातें सुनकर उनका संदेह दूर हो गया। उन्होंने कहा कि यह आपकी उदारता है। आज्ञा दीजिए।

अलोपीदीन ने कहा कि नदी तट पर आपने मेरी प्रार्थना नहीं सुनी, अब स्वीकार करनी पड़ेगी। उसने एक स्टांप पत्र निकाला और पद स्वीकारने के लिए प्रार्थना की। वंशीधर ने पढ़ा। पंडित ने अपनी सारी जायदाद का स्थायी मैनेजर छह हजार वार्षिक वेतन, रोजाना खर्च,

सवारी, बंगले आदि के साथ नियत किया था। वंशीधर ने काँपते स्वर में कहा कि मैं इस उच्च पद के योग्य नहीं हूँ। ऐसे महान कार्य के लिए बड़े अनुभवी मनुष्य की जरूरत है।

अलोपीदीन ने वंशीधर को कलम देते हुए कहा कि मुझे अनुभव, विद्वता, मर्मज्ञता, कार्यकुशलता की चाह नहीं। परमात्मा से यही प्रार्थना है कि वह आपको सदैव वही नदी के किनारे वाला बेमुरौवत, उद्दंड, कठोर, परंतु धर्मनिष्ठ दरोगा बनाए रखे। वंशीधर की आँखें डबडबा आई। उन्होंने काँपते हुए हाथ से मैनेजरी के कागज पर हस्ताक्षर कर दिए। अलोपीदीन ने उन्हें गले लगा लिया।

बोध प्रश्न

- नमक का विभाग बनने के बाद नमक का व्यापार कैसे होने लगा?
- नमक का दरोगा में किसकी कहानी है?
- कहानी में मानव मूल्यों का कौन सा रूप दिखाया गया है?

6.3.2 पात्र परिकल्पना और चरित्र चित्रण

कहानी का संचालन उसके पात्रों के द्वारा ही होता है तथा पात्रों के गुण-दोष को उनका 'चरित्र चित्रण' कहा जाता है। 'नमक का दरोगा' कहानी के पात्रों का चयन बहुत ही सटीक एवं उपयुक्त हैं। बंसीधर, अलोपीदीन तथा वंशीधर के पिता इन सभी पात्रों का चयन विषय वस्तु से युक्त और कहानी के अनुरूप किया गया है ।

चरित्र चित्रण से विभिन्न चरित्रों में स्वाभाविकता उत्पन्न की जाती है। संवाद कहानी का प्रमुख अंग होते हैं। इनके द्वारा पात्रों के मानसिक अंतर्द्वंद्व एवं अन्य मनोभावों को प्रकट किया जाता है। लेखक ने पात्रों की मन:स्थिति का यथा-योग्य विवरण प्रस्तुत किया है। पात्रों की वृत्तियाँ, सोच तथा कार्य शैली का मनोहारी और रोचक वर्णन किया गया है। लेखक ने उनके अनुभव तथा विचार शक्ति एवं परिस्थिति का आकर्षक एवं पाठक को बाँधकर रखने वाला चरित्र-चित्रण किया है। पंडित अलोपीदीन व्यवहार कुशल हैं जिसका एक उदाहरण देखा जा सकता है -

पंडित अलोपीदीन ने हंसकर कहा, 'हम सरकारी हुक़्म को नहीं जानते और न सरकार को हमारे सरकार तो आप ही हैं हमारा और आपका तो घर का मामला है, हम कभी आपसे बाहर हो सकते हैं? आपने व्यर्थ का कष्ट उठाया। यह हो नहीं सकता कि इधर से जाएँ और इस घाट के देवता को भेंट न चढ़ावें। मैं तो आपकी सेवा में स्वयं ही आ रहा था।'

वंशीधर के पिता अनुभवी व्यक्ति हैं। वंशीधर के मुअत्तल हो जाने पर वो कहते हैं –

"चलते-चलते इस लड़के को समझाया था, लेकिन इसने एक न सुनी। सब मनमानी करता है। हम तो कलवार और कसाई के तगादे सहें, बुढ़ापे में भगत बनकर बैठें और वहाँ बस वही सूखी तनख़्वाह! हमने भी तो नौकरी की है और कोई ओहदेदार नहीं थे। लेकिन काम किया, दिल खोलकर किया और आप ईमानदार बनने चले हैं। घर में चाहे अंधेरा हो, मस्जिद में अवश्य दिया जलाएँगे। खेद ऐसी समझ पर! पढ़ना-लिखना सब अकारथ गया।"

बोध प्रश्न

- चरित्र चित्रण से क्या उत्पन्न होता है?
- पंडित अलोपीदीन कैसे व्यक्ति है?
- वंशीधर के पिता को कहानीकार ने किस प्रकार चित्रित किया है?

6.3.3 देशकाल (परिवेश) चित्रण

कहानी में वास्तविकता का पुट देने के लिये देशकाल अथवा वातावरण का प्रयोग किया जाता है। कहानी आजादी से पहले की है। नमक का नया विभाग बना। विभाग में ऊपरी कमाई बहुत ज्यादा थी इसलिए सभी व्यक्ति इस विभाग में काम करने को उत्सुक थे। उस दौर में फारसी का बोलबाला था और उच्च ज्ञान के बजाय केवल फारसी की प्रेम की कथाएँ और शृंगार रस के काव्य पढ़कर ही लोग उच्च पदों पर पहुँच जाते थे। मुंशी वंशीधर ने भी फारसी पढ़ी और रोजगार की खोज में निकल पड़े। इस कहानी में वातावरण तथा समय का समायोजन यथोचित रूप से हुआ है। कहानी में प्रेमचंद कहते हैं -

"यह वह समय था जब अंगरेज़ी शिक्षा और ईसाई मत को लोग एक ही वस्तु समझते थे। फ़ारसी का प्राबल्य था। प्रेम की कथाएँ और शृंगार रस के काव्य पढ़कर फ़ारसीदां लोग सर्वोच्च पदों पर नियुक्त हो जाया करते थे। मुंशी वंशीधर भी जुलेखा की विरह-कथा समाप्त करके सीरी और फ़रहाद के प्रेम-वृत्तांत को नल और नील की लड़ाई और अमेरिका के आविष्कार से अधिक महत्व की बातें समझते हुए रोज़गार की खोज में निकले।"

परिवेश का एक उदाहरण इस प्रकार देखा जा सकता है -

"जाड़े के दिन थे और रात का समय। नमक के सिपाही, चौकीदार नशे में मस्त थे। मुंशी वंशीधर को यहाँ आए अभी छह महीनों से अधिक न हुए थे, लेकिन इस थोड़े समय में ही उन्होंने अपनी कार्यकुशलता और उत्तम आचार से अफ़सरों को मोहित कर लिया था। अफ़सर लोग उन पर बहुत विश्वास करने लगे।

नमक के दफ़्तर से एक मील पूर्व की ओर जमुना बहती थी, उस पर नावों का एक पुल बना हुआ था। दारोगाजी किवाड़ बंद किए मीठी नींद सो रहे थे। अचानक आँख खुली तो नदी के प्रवाह की जगह गाड़ियों की गड़गड़ाहट तथा मल्लाहों का कोलाहल सुनाई दिया।"

बोध प्रश्न

- 'नमक का दारोगा' में चित्रित परिवेश के बारे में लिखिए।

6.3.4 कथोपकथन या संवाद योजना

किसी भी कहानी में संवाद योजना जितनी चुस्त और सटीक होगी कहानी उतनी ही सुंदर बन पड़ेगी। संवाद कहानी का प्रमुख अंग होते हैं। इनके द्वारा पात्रों के मानसिक अंतर्द्वंद्व एवं अन्य मनोभावों को प्रकट किया जाता है। लेखक ने पात्रों की मन:स्थिति का यथा-योग्य विवरण प्रस्तुत किया है ।

वंशीधर और पंडित अलोपीदीन के संवाद इस प्रकार हैं -

अलोपीदीन : अपने मुख़्तार से बोले, 'लालाजी, एक हज़ार के नोट बाबू साहब की भेंट करो, आप इस समय भूखे सिंह हो रहे हैं।'

वंशीधर ने गरम होकर कहा, 'एक हज़ार नहीं, एक लाख भी मुझे सच्चे मार्ग से नहीं हटा सकते।'

वंशीधर को नौकरी मिलने पर उनके पिता उन्हें समझाते हैं –

"बेटा! घर की दुर्दशा देख रहे हो। ऋण के बोझ से दबे हुए हैं। लड़कियाँ हैं, वे घास-फूस की तरह बढ़ती चली जाती हैं। मैं कगारे पर का वृक्ष हो रहा हूँ, न मालूम कब गिर पड़ूँ! अब तुम्हीं घर के मालिक-मुख़्तार हो।

'नौकरी में ओहदे की ओर ध्यान मत देना, यह तो पीर का मजार है। निगाह चढ़ावे और चादर पर रखनी चाहिए। ऐसा काम ढूँढ़ना जहाँ कुछ ऊपरी आय हो। मासिक वेतन तो पूर्णमासी का चाँद है, जो एक दिन दिखाई देता है और घटते-घटते लुप्त हो जाता है। ऊपरी आय बहता हुआ स्रोत है जिससे सदैव प्यास बुझती है। वेतन मनुष्य देता है, इसी से उसमें वृद्धि नहीं होती। ऊपरी आमदनी ईश्वर देता है, इसी से उसकी बरकत होती हैं, तुम स्वयं विद्वान हो, तुम्हें क्या समझाऊँ।"

पात्रों की वृत्तियाँ, सोच तथा कार्य शैली का मनोहारी और रोचक वर्णन किया गया है। लेखक ने उनके अनुभव तथा विचार शक्ति एवं परिस्थिति का आकर्षक एवं पाठक को बाँधकर रखने वाले संवाद दिए हैं।

बोध प्रश्न

- कहानी का प्रमुख अंग क्या है?
- 'नमक का दारोगा' के संवाद कथा को आगे बढ़ाने में कैसे सहायक हैं?

6.3.5 भाषा-शैली

इस कहानी की भाषा शैली सरल सहज और चरित्र के अनुकूल है। प्रस्तुतीकरण के ढंग में कलात्मकता लाने के लिए उसको अलग-अलग भाषा व शैली से सजाया जाता है। भाषा की चित्रात्मकता, लोकोक्तियों और मुहावरों के उपयोग तथा हिन्दी-उर्दू के साझा रूप एवं बोलचाल की भाषा के लिहाज से यह कहानी अद्‌भुत है। कहानी में मुहावरों के प्रयोग से कहानी का प्रभाव बढ़ा है। भाषा की चित्रात्मकता, लोकोक्तियों और मुहावरों का जानदार उपयोग तथा हिन्दी-उर्दू के साझा रूप एवं बोलचाल की भाषा के लिहाज़ से यह कहानी अद्‌भुत है। यहाँ कुछ उदाहरण देखे जा सकते हैं -

1) दुनिया सोती थी, पर दुनिया की जीभ जागती थी।
2) वेतन तो पूर्णमासी का चाँद है
3) ऊपरी आय तो बहता स्रोत है।

प्रेमचंद उर्दू से हिन्दी में आये थे अतः उनकी भाषा में उर्दू शब्दों का प्रयोग है। भाषा में सादगी एवं आलंकारिकता का समन्वय है। इस कहानी में विषय- सामग्री के द्वारा लोगों की

मनोवृत्ति और रोचक एवम् गूढ़ संवादों के परिप्रेक्ष्यों में सम्यक विस्तार हुआ है। भाषा शैली सहज सरस एवं तारतम्यता से ओतप्रोत है।

बोध प्रश्न

- कहानी में भाषा-शैली की क्या उपयोगिता है?
- 'नमक का दरोगा' कहानी में प्रयुक्त भाषा कैसी है?

6.3.6 उद्देश्य

'नमक का दरोगा' शीर्षक कहानी में तात्कालिक समाज का व्यापक चित्रण किया गया है। आज भी यह कहानी उतनी ही प्रासंगिक है जितनी कि उस समय थी जब यह लिखी गई थी। समाज की अनेक समस्याएँ ज्यों की त्यों चली आ रही है। आज के समाज में कितना भ्रष्टाचार और रिश्वतखोरी है। सब लोग धन के गुलाम बने हुए हैं। धन के लालच में व्यक्ति निम्न से निम्न कार्य करने में जरा भी नहीं हिचकते। नौकरियों के संबंध में वंशीधर के पिता वृद्ध मुंशी का कथन शत प्रतिशत सत्य सिद्ध हो रहा है। इस बेईमानी की यात्रा में माता-पिता, पत्नी, यहाँ तक की संतान भी सम्मिलित हैं। सभी की दृष्टि में धन सब कुछ हो गया है। सत्यता, धर्म, कर्तव्य, देशभक्ति, इमानदारी आदि गुणों का कोई महत्व नहीं रह गया है। आज भी अदालतों में पैसे लेकर झूठी गवाही दी जाती है। वकील भी झूठ का ही साथ देते हैं। यहाँ तक कि न्यायधीश भी धन की शक्ति और राजनीतिक शक्ति के आगे घुटने टेक चुके हैं। न्याय-अन्याय का मानदंड धन व प्रभाव ही रह गया है। इस कहानी में सामाजिक संबंधों को भी यथार्थ रूप में उजागर किया गया है। दुनिया में कोई संबंध सच्चाई की नींव पर नहीं खड़ा है। सब पैसे के साथी बन चुके हैं। इस कटु सत्य से आज कोई भी अनभिज्ञ नहीं है। फिर भी इसे सही मानकर चल रहे हैं।

बोध प्रश्न

- 'नमक का दारोगा' कहानी का क्या उद्देश्य है?

6.3.7 शीर्षक का औचित्य

नमक निरीक्षक ने कालाबाजारी के विरुद्ध आवाज उठाई। इस कहानी में धन के ऊपर धर्म की विजय बताई गई है तथा मानव मूल्यों का आदर्श रूप दिखाया गया है। यह कहानी समाज की आर्थिक स्थिति को उद्घाटित करती है। मुंशी वंशीधर एक ईमानदार और कर्तव्य परायण व्यक्ति हैं जो समाज में ईमानदारी और कर्तव्यनिष्ठा की मिसाल कायम करते हैं। वह नमक के दरोगा रहते हैं। दूसरी ओर पंडित अलोपीदीन दातागंज के सबसे अधिक अमीर और इज्जतदार व्यक्ति रहते हैं। वंशीधर पाठकों को सबसे अधिक प्रभावित करने वाला चरित्र है क्योंकि, वह दृढ़ निश्चय, कर्मठ और कर्तव्यपरायण व्यक्ति हैं। उन्हें अपने कार्य से प्रेम है। यह चरित्र मनुष्य को ईमानदारी से आगे बढ़ने की प्रेरणा देता है। इस कहानी का संदेश ही इसके शीर्षक की सार्थकता को सिद्ध करता है। केवल एक लकीर मात्र खींच देने से वहाँ के रहने वाले लोगों के दिल नहीं बंट जाते। लोगों का सदैव अपने मूल स्थान से लगाव बना रहता है।

नमक का नया विभाग बनने पर वंशीधर ही नमक विभाग में दरोगा के पद पर नियुक्त होते हैं। वह नमक के दरोगा तो बन जाते हैं किंतु ऊपरी कमाई को अच्छा नहीं समझते बल्कि

ईमानदारी से अपना कार्य करते हैं। अपनी कार्यकुशलता और अच्छे व्यवहार से बड़े-बड़े अधिकारियों का दिल जीत लेते हैं। यह कहानी भारत पाक विभाजन के बाद सरहद के दोनों तरफ के विस्थापित पुनर्वासित जनों के दिलों को टटोलती एक मार्मिक कहानी है। इस कहानी के शीर्षक से यह संदेश मिलता है कि असत्य, अन्याय और भ्रष्टाचार कितना भी क्यों न हो किंतु सत्य की चमक में वह शक्ति होती है कि वह सभी दुराचरणों को भेद सकता है। सत्य का स्थान बड़ा ऊँचा होता है। कहानी का शीर्षक अपने संदेश को निहित किए हुए अत्यंत सार्थक है।

बोध प्रश्न

- 'नमक का दारोगा' शीर्षक उचित क्यों है?

6.3.8 'नमक का दरोगा' की विशेषताएँ एवं महत्व

कहानी सदैव मानव और समाज से जुड़ी होती है और दोनों के लिए इसका विशेष महत्व होता है। 'नमक का दरोगा' कहानी एक ईमानदार नमक निरीक्षक की कहानी है, जिसमें कालाबाजारी के विरुद्ध आवाज उठाई गई है और भ्रष्टाचार को दिखाया गया है। इस कहानी में मानव मूल्यों का आदर्श रूप दिखाते हुए लेखक ने उसे स्थापित किया है। सत्य, निष्ठा, धर्म, निष्ठा और कर्म परायणता को इस कहानी में विशेष महत्व दिया गया है। इस कहानी द्वारा यह संदेश दिया गया है कि एक बेईमान स्वामी भी एक ईमानदार कर्मचारी की तलाश में रहता है और मौका आने पर उसे सम्मानित भी करता है। कहानी आजादी के पहले की है, जब नमक का नया-नया विभाग बना था। विभिन्न पड़ावों से गुजरती हुई यह कहानी मानव मनोविज्ञान का सुंदर उदाहरण प्रस्तुत करती है और लेखक इस बात की ओर संकेत करते हैं कि मौका आने पर ईमानदार व्यक्ति का ही सम्मान होता है, जो इस कहानी में चरित्रों के माध्यम से व्यक्त किया गया है।

बोध प्रश्न

- कहानी के दो विशेष गुण क्या होते हैं?
- मानव जीवन में कहानी का क्या महत्व है?

6.4 पाठ सार

कहानी सदैव मनुष्य और समाज से जुड़ी होती है। 'नमक का दरोगा' प्रेमचंद द्वारा रचित आजादी से पहले की कहानी है जिसमें एक ईमानदार नमक निरीक्षक की कहानी को बताया गया है जिसने कालाबाजारी के विरुद्ध आवाज उठाई। यह कहानी धन के ऊपर धर्म के जीत की है। कहानी में मानव मूल्यों का आदर्श रूप दिखाया गया है और उसे सम्मानित भी किया गया है। सत्यनिष्ठा, धर्मनिष्ठा और कर्मपरायणता को विश्व के दुर्लभ गुणों में बताया गया है जो इस कहानी में दिखाई देता है।

इस कहानी में लेखक ने कालाबाजारी और भ्रष्टाचार के विरुद्ध आवाज़ उठाई है। अन्त में यह शिक्षा दी गयी है कि एक बेईमान स्वामी भी एक ईमानदार कर्मचारी की तलाश रहती है। कहानी को कहानी तत्वों के आधार पर विश्लेषित किया गया है। नमक का दरोगा कहानी का

कथानक देते हुए संवाद योजना के द्वारा विभिन चरित्रों के व्यक्तित्व पर प्रकाश डाला है। हम सभी जानते हैं कि कहानी के विकास में देश, काल और वातावरण का विशेष महत्व होता है। यह कहानी आज़ादी के पहले की है।

भाषा और शैली की दृष्टि से यह कहानी सफल है क्योंकि इसमें भाषा की सभी विशेषताएँ दिखाई देती हैं। खड़ी बोली का प्रयोग हुआ है और आवश्यकतानुसार मुहावरों का प्रयोग है। भाव एवं चरित्र मनोविज्ञान के अनुकूल भाषा प्रयोग करने में लेखक सफल दिखाई देते हैं। जब यह कहानी लिखी गई थी उस दौर में फ़ारसी का बोल बाला था। उद्देश्य की दृष्टि से यह कहानी सफल है। इस कहानी की मूल संवेदना समाज और शासन में फैले भ्रष्टाचार की प्रवृत्ती को उजागर करते हुए व्यंग्य के माध्यम से सबके सामने लाना।

6.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं -

1. नमक का दरोगा कहानी में मानव मूल्यों का आदर्श रूप दिखाया गया है।
2. यह कहानी आजादी के पहले की है, जब नमक का नया-नया विभाग बना था। लेकिन वर्तमान समय में भी पूरी तरह प्रासंगिक है।
3. विभिन्न पड़ावों से गुजरती हुई यह कहानी मानव मनोविज्ञान का सुंदर उदाहरण प्रस्तुत करती है।
4. कहानी में इस बात की ओर संकेत है कि अंततः ईमानदार व्यक्ति का सम्मान होता है। इस आदर्श को कहानी में चरित्रों के माध्यम से व्यक्त किया गया है।

6.6 शब्द संपदा

1. अति व्याप्ति = सीमा या नियम से अधिक
2. आकर्षक = आकर्षण युक्त
3. उत्पन्न करना = पैदा करना
4. ढंग = तरीका
5. तुच्छ से तुच्छ = छोटी से छोटी
6. दिलचस्पी = रुचि
7. निरीक्षक = निरीक्षण करने वाला
8. प्रक्रिया = विधि
9. प्रचलित = प्रचारित या लोकप्रिय
10. प्रधान = प्रमुख
11. प्रयास = कोशिश

12. प्रस्तावना = भूमिका या विषय प्रवेश

13. रूढ़ियाँ = पुरानी परंपराएँ

14. रोचक = रुचिकर

15. विधा = तरीका या ढंग

16. सर्वाधिक = सबसे अधिक

17. सर्वोत्तम = सबसे अच्छा

18. सीमित आकार में = छोटे रूप में

19. स्वाध्याय = स्वयं अध्ययन करना

6.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

6.7.1 सही विकल्प चुनिए

1. 'नमक का दरोगा' कहानी मुख्य रूप से किस मानवीय मूल्य की स्थापना करती है?

A. पारिवारिक मोह B. धन की सर्वोच्चता

C. चलाकी और बुद्धिमान **D. धर्म और ईमानदारी की धन पर जीत**

2. वंशीधर के पिता ने 'मासिक वेतन' की तुलना किससे की है?

A. पूर्णमासी का चाँद B. ईश्वर का उपहार C. बहता हुआ स्रोत D. पीर की मज़ार

3. कहानी के अनुसार, उस समय के समाज में उच्च पद प्राप्त करने के लिए किस भाषा का ज्ञान पर्याप्त माना जाता था?

A. हिंदी **B. फारसी** C. अंग्रेजी D. संस्कृत

4. पंडित अलोपीदीन को अदालत में पकड़े जाने पर लोग किस बात से सबसे अधिक हैरान थे?

A. कि अदालत में उनकी हार हुई **B. कि वे कानून के पंजे में कैसे आए**

C. कि वंशीधर ने उन्हें गिरफ्तार किया D. कि उन्होंने नमक की चोरी की

5. वंशीधर के बर्खास्त होने पर उनके पिता की प्रतिक्रिया क्या थी?

A. वे शांत और उदासीन रहे **B. वे क्रोधित हुए और कोसा**

C. उन्हें अपने पुत्र पर गर्व था D. उन्होंने अलोपीदीन से बदला लेने की ठानी

6. पंडित अलोपीदीन का 'लक्ष्मी' (धन) के बारे में क्या विचार था?

A. ईमानदारी धन से बड़ी है **B. न्याय और नीति सब लक्ष्मी के खिलौने हैं**

C. धन केवल विलासिता का साधन है D. धन केवल भाग्य से मिलता है

7. अलोपीदीन ने वंशीधर को अपनी जायदाद का मैनेजर नियुक्त करते समय उनसे क्या प्रार्थना की?

A. कि वे अपने पिता की बात मानें B. कि वे अदालत का फैसला स्वीकार करें

C. कि वे भविष्य में नरमी बरतें **D. कि वे वही कठोर और धर्मनिष्ठ दरोगा बने रहें**

8. नमक के दरोगा पद के लिए वकीलों और अन्य अधिकारियों के ललचाने का मुख्य कारण क्या था?

A. कठिन कार्यशैली B. सम्मानजनक पद

C. देश सेवा का अवसर **D. भ्रष्टाचार और ऊपरी कमाई के अवसर**

9. अदालत के फैसले के बाद वंशीधर को समाज से क्या मिला?

A. व्यंग्य और तिरस्कार B. पुरस्कार और सम्मान

C. जनता का समर्थन D. पदोन्नति

10. लेखक प्रेमचंद ने इस कहानी के माध्यम से समाज के किस कड़वे सच को उजागर किया है?

A. शिक्षण पद्धतियों की कमी B. प्राकृतिक संसाधनों का महत्व

C. न्याय व्यवस्था में व्याप्त भ्रष्टाचार D. पारिवारिक प्रेम की शक्ति

खंड (ब)

6.7.2 लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. 'नमक का दरोगा' कहानी की भाषा-शैली के संबंध में अपने विचार व्यक्त कीजिए।
2. 'नमक का दरोगा' कहानी का मुख्य पात्र का परिचय देते हुए चरित्र चित्रण कीजिए।
3. 'नमक का दरोगा' कहानी से क्या शिक्षा मिलती है?
4. पंडित अलोपीदीन के व्यक्तित्व की विशेषताएँ लिखिए।
5. 'नमक का दरोगा' कहानी की मूल संवेदना क्या है?

खंड (स)

6.7.3 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. 'नमक का दरोगा' कहानी का तात्विक विश्लेषण कीजिए।
2. 'नमक का दरोगा' कहानी में उठाई गई समस्याओं का चित्रण कीजिए।
3. 'नमक का दरोगा' कहानी के आधार पर वंशीधर का चरित्र चित्रण कीजिए।
4. 'नमक का दरोगा' कहानी का केंद्रीय भाव लिखते हुए सारांश दीजिए।

6.8 पठनीय पुस्तकें

1. गद्य यात्रा : श्रीराम शर्मा
2. हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास : रामकुमार वर्मा
3. कहानी साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन : सी एम योहान्नन
4. हिन्दी साहित्य का इतिहास : रामचंद्र शुक्ल
5. हिन्दी साहित्य की भूमिका : हजारी प्रसाद द्विवेदी

इकाई 7 : जयशंकर प्रसाद : एक परिचय

रूपरेखा

7.1 प्रस्तावना
7.2 उद्देश्य
7.3 मूल पाठ : जयशंकर प्रसाद : एक परिचय
7.3.1 जयशंकर प्रसाद का जीवन परिचय
7.3.2 जयशंकर प्रसाद की साहित्यिक यात्रा
7.3.3 प्रसाद जी का समकालीन परिवेश और उसका प्रसाद पर प्रभाव
7.3.4 जयशंकर प्रसाद की प्रमुख कहानियाँ
7.3.5 जयशंकर प्रसाद की कहानी कला की विशेषताएँ
7.4 पाठ सार
7.5 पाठ की उपलब्धियाँ
7.6 शब्द संपदा
7.7 परीक्षार्थ प्रश्न
7.8 पठनीय पुस्तकें

7.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो! जयशंकर प्रसाद को मुख्य रूप से काव्य और नाट्य साहित्य के रचनाकार के रूप में जाना जाता है। लेकिन उन्होंने कथा साहित्य को भी खूब समृद्ध किया। उनके उपन्यासों और कहानियों का भी उतना ही महत्व है। दरअसल उन्होंने साहित्य की सभी विधाओं में रचना कार्य किया था। उनकी कहानियाँ अपनी राष्ट्रीय और ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के कारण विशेष मानी जाती हैं। इस इकाई में आप जयशंकर प्रसाद और उनकी कहानी कला के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे।

7.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई के उपरांत आप-

- जयशंकर प्रसाद के जीवन से परिचित हो सकेंगे।
- उनके रचना संसार के बारे में जान सकेंगे।
- उनके व्यक्तित्व के उनके कहानी लेखन पर प्रभाव को समझ सकेंगे।
- उनकी कहानी कला की विशेषताओं को जान सकेंगे।

7.3 मूल पाठ : जयशंकर प्रसाद : एक परिचय

7.3.1 जयशंकर प्रसाद का जीवन परिचय

प्रसाद जी का जन्म सन् 1889 में काशी के सुप्रसिद्ध सुँघनी साहु के परिवार में हुआ था। इनके पिता का नाम देवी प्रसाद साहु था। डॉ. सूरजपाल शर्मा ने लिखा है, 'इनके पूर्वज मूलतः

गाजीपुर जिले के सैदपुर नामक गाँव में रहने वाले थे, जो कालान्तर में किसी कारणवश काशी में आकर बस गए थे। काशी में आने के उपरांत इस घराने ने व्यापार में पर्याप्त उन्नति की। इस परिवार के लोगों ने सबसे पहले संवत् 1875 (सन् 1818) में तम्बाकू की पत्ती से एक विशेष प्रकार का चूर्ण बनाने का आविष्कार किया था, जिसे 'सुँघनी' कहते थे। सुँघनी का उत्पादन एवं व्यापार करने के कारण इस परिवार को 'सुँघनी साहु' नाम मिला जो आजकल भी प्रचलित है।'

सुँघनी साहु के परिवार ने वैद्यनाथ धाम से लेकर उज्जयिनी तक समस्त ज्योतिर्लिंगों की यात्रा की भगवान शंकर की आराधना के बाद इस बालक का जन्म होने के कारण उसका नाम शंकर रखा गया। झारखंड के ज्योतिर्लिंग की विशेष कृपा मानकर बचपन में उन्हें 'झारखंडे' भी बुलाया जाता था। पढ़-लिखकर एवं कवि चेतना जाग्रत होने पर प्रसाद जी ने अपना नाम 'जयशंकर प्रसाद' रखा। प्रसाद जी अपने सभी भाई-बहनों में सबसे छोटे थें सन् 1901 में प्रसाद जी के पिताजी का स्वर्गवास हो गया। उस समय प्रसाद जी की अवस्था लगभग 12 वर्ष की थी। पिता के बाद घर का उत्तरदायित्व इनके बड़े भाई पर आया लेकिन बड़े भाई साहब व्यापार को ठीक से चला नहीं सके। व्यापार में घाटा होने लगा। प्रसाद जी जब 15 वर्ष के थे तब माता का और 17 वर्ष की आयु में बड़े भाई का भी देहांत हो गया। इस प्रकार से 17 साल की आयु में प्रसाद जी के ऊपर संपूर्ण परिवार का दायित्व आ गया। विवश होकर प्रसाद जी को दुकान संभालना पड़ा। प्रसाद जी का विवाह तीन बार हुआ था। प्रसाद जी का पहला विवाह सन् 1909 में हुआ था। उस समय प्रसाद जी 20 वर्ष के थे। पहली पत्नी की मृत्यु के बाद प्रसाद जी विवाह करना नहीं चाहते थे लेकिन उन्हें भाभी के आदेश पर दूसरा विवाह करना पड़ा। दूसरी पत्नी की मृत्यु प्रसवकाल में हुई। दूसरी पत्नी की मृत्यु के पाँच साल बाद प्रसाद जी ने तीसरा विवाह किया। तीसरी पत्नी ने एक पुत्र को जन्म दिया। जिसका नाम प्रसाद जी ने रत्नशंकर प्रसाद रखा। प्रसाद जी की मृत्यु सन् 1937 में हुई।

प्रसाद जी की शिक्षा घर पर ही आरंभ हुई। रईसी ठाट-बाट से उनकी शिक्षा आरंभ हुई। मोहिनी लाल गुप्त 'रससिद्ध' प्रसाद जी को घर पर पढ़ाया करते थे। वे ही प्रसाद जी के साहित्यिक गुरु थे। दस वर्ष की अवस्था में प्रसाद जी ने काशी के क्वीन्स कॉलेज में प्रवेश लिया। प्रसाद जी ने यहाँ सातवीं कक्षा तक की शिक्षा प्राप्त की। पिता की मृत्यु के पश्चात प्रसाद जी की स्कूली शिक्षा समाप्त हो गई। प्रसाद को घर पर ही संस्कृत और अंग्रेजी पढ़ाने का प्रबंध किया गया। इसके लिए अलग-अलग शिक्षक रखे गए। प्रसाद जी को संस्कृत पढ़ाने दीनबंधु ब्रह्मचारी आते थे जो वेदों और उपनिषदों के अच्छे ज्ञाता थे।

बोध प्रश्न

- प्रसाद जी का जन्म कब हुआ था?
- प्रसाद जी के पिता का नाम क्या था?
- प्रसाद जी के पूर्वज मूलतः कहाँ के निवासी थे?
- प्रसाद जी को संस्कृत कौन पढ़ाते थे?

प्रसाद जी के व्यक्तित्व एवं वेशभूषा के संबंध में डॉ. सूरजपाल शर्मा ने लिखा है, 'प्रसाद जी का व्यक्तित्व अत्यंत भव्य एवं सुदर्शन था। शरीर के अवयव अत्यंत पुष्ट और सुगठित थे। कद

अवश्य कुछ छोटा था। उज्ज्वल गौरवर्णीय काया वाले प्रसादजी के चेहरे से तेज टपकता था। बाल्यकाल में उन्हें कसरत करने का शौक था। उनकी वेशभूषा, साधारण किंतु सुरुचिपूर्ण होती थी। ढाका की मलकल का कुर्ता और शांतिपुरी धोती, सिर पर पगड़ी, गले में पुष्पमाल और मस्तक पर त्रिपुण्ड- यह था उनका वेश।' आत्मीयजनों की मृत्यु ने उन्हें शोकमग्न और विषादपूर्ण बना दिया था। व्यापार को फिर से पुनर्जीवित करने के लिए 14 वर्ष उन्हें बहुत परिश्रम करना पड़ा था। जीवन के जिस उम्र में प्रसाद जी को सुख भोग करना चाहिए था उस उम्र में प्रसाद जी चिंता, शोक में डूबे रहने के बाद भी परिश्रम करते रहे। प्रसाद जी अंतर्मुखी व्यक्ति थे। उनकी यह विशेषता उनके साहित्य में भी दिखाई पड़ती है। काशी से उन्हें बहुत प्रेम था। उनके काशी प्रेम के संबंध में प्रेमशंकर शर्मा ने लिखा है, 'काशी से वे इतना अधिक संतुष्ट रहते थे कि बाहर नहीं जाते थे। अंतिम समय में जब जलवायु- परिवर्तन के लिए उपचारकों ने बाहर जाने को कहा तो वे बोले- 'जीवनभर बाबा विश्वनाथ की छाया में रहा अब कहाँ जाऊँ।' साहित्य प्रेम तथा प्रकृति प्रेम तो प्रसाद जी के जीवन का महत्वपूर्ण अंग रहा।

बोध प्रश्न

- व्यापार को पुनर्जीवित करने में प्रसाद जी को कितना समय लगा?
- प्रसाद जी की वेशभूषा के बारे में बताएँ?
- प्रसाद जी का व्यक्तित्व कैसा था?
- प्रसाद जी को किस शहर से विशेष प्रेम था?

7.3.2 जयशंकर प्रसाद की साहित्यिक यात्रा

जैसा कि हमने पहले पढ़ा कि प्रसाद जी के पिता की मृत्यु के बाद प्रसाद जी का स्कूल जाना बंद हो गया था, लेकिन उन्होंने घर पर ही रहकर संस्कृत और अंग्रेजी भाषा का ज्ञान प्राप्त किया और यह ज्ञान प्राप्त करने के साथ-साथ उनके भीतर साहित्य प्रेम भी जन्म लेने लगा था। 9 वर्ष की अवस्था में ही उन्होंने कलाधर उपनाम से कविता रचना शुरू कर दिया था। प्रसाद जी सबसे पहले ब्रजभाषा में कविता रचना किया करते थे। इसके बाद वे खड़ी बोली हिन्दी में साहित्य रचना करने लगे। प्रसाद जी ने अपनी साहित्यिक यात्रा इन्दु नामक पत्रिका से शुरू की थी। प्रसाद जी की पहली रचना कालक्रमानुसार 'चित्रधारा' है इसका प्रकाशन वर्ष सन् 1912 है। इसके अलावा कानन कुसुम, करुणालय, महाराणा का महत्व, प्रेम पथिक, जनमेजय का नागयज्ञ, ध्रुवस्वामिनी, कामायनी, एक घूँट, आकाशदीप, इन्द्रजाल, कंकाल, तितली, इरावती (अपूर्ण), उर्वशी, स्कंदगुप्त आदि हैं।

प्रसाद जी अंतर्मुखी व्यक्ति थे। उनके व्यक्तित्व के इस विशेषता को उनके साहित्य में भी देखा जा सकता है। 'लहर' कविता में कवि के विभिन्न मानसिक रूपों के चित्र को देखा जा सकता है। आचार्य शुक्ल जी ने 'लहर' कृति के संबंध में आलोचना करते हुए लिखा है, 'लहर में प्रसाद जी ने अपनी प्रगल्भ कल्पना के रंग में इतिहास के खंडों को भी देखा है। जिस करुणा के शांत कछार में बुद्ध भगवान ने धर्म चक्र का प्रवर्तन किया था, उसकी पुरानी झाँकी अशोक की चिंता, शेरशिंह का आत्मसमर्पण, पैशोला की प्रतिध्वनि, प्रलय की छाया में प्राप्त होती जो

अतीत के भीतर कल्पना के प्रवेश का उदाहरण है। इस प्रकार 'लहर' में हम प्रसाद जी को वर्तमान और अतीत जीवन की ठोस प्राकृत-भूमि पर कल्पना प्रतितिष्ठत करने का प्रयत्न करते पाते हैं।'

प्रसाद जी को छायावादी काव्यधारा का जनक भी माना जाता है। छायावादी काव्य की दृष्टि से 'झरना' प्रसाद जी की रचनाओं का पहला संग्रह है। इस काव्य संग्रह में 48 कविताएँ हैं। इन रचनाओं में हमें कवि की परिवर्तित विचारधारा को देखने का अवसर मिलता है। लाक्षणिकता और प्रतीकात्मकता से युक्त प्रसाद जी की भाषा में अद्‌भुत नाद-सौंदर्य और ध्वन्यात्मकता है। प्रसाद जी ने अपनी भाषा के द्वारा प्रकृति के मानवीकरण को सजीव रूप में प्रस्तुत किया है। यथा-

धीरे-धीरे हिम आच्छादन, हटने लगा धरातल से।
जगी वनस्पतियाँ अलसाई, मुख धोती शीतल जल से।
नेत्र निमीलन करती मानो, प्रकृति प्रबुद्ध लगी होने।
जलधि लहरियों की अँगड़ाई, बार-बार जाती सोने।

रात से सबेरा होने का कैसा अद्‌भुत वर्णन है। यही है प्रसाद की भाषा की विशेषता।

प्रसाद जी पर कविगुरु रवीन्द्रनाथ की गीतांजलि का गहरा प्रभाव पड़ा था। वेद तथा शास्त्रों का भी इन्होंने गहन अध्ययन किया था इस कारण इन्हें भारतीय संस्कृति का विशेष ज्ञान था। इसी कारण से प्रसाद जी को दासत्व जीवन पसंद नहीं था। वे अपने देश को न केवल स्वाधीन देखना चाहते थे बल्कि साथ ही वे भारतीयों को अपनी संस्कृति और सभ्यता को लेकर गर्वित होते हुए भी देखना चाहते थे।

प्रसाद जी भारतीयता के अनुरागी थे। उन्होंने साहित्य की रचना मनोरंजन के लिए नहीं की। साहित्यकार के रूप में वे अपने उत्तरदायित्व से परिचित थे। उनके इसी उत्तरदायित्व बोध का उत्कृष्ट उदाहरण है- 1936 में प्रकाशित उनका महाकाव्य 'कामायनी'। प्राचीन भारतीय संस्कृति पर विश्वास रखने के बाद भी वे वैज्ञानिकता की आवश्यकता से भी परिचित थे। 'कामायनी' में प्रसाद जी ने सभ्यता, संस्कृति और विज्ञान का सुंदर समावेश करवाया है। अगर यह कहा जाए कि जयशंकर प्रसाद भारतीय संस्कृति, सभ्यता और विज्ञान के पोषक होने के साथ-साथ साहित्यकार भी थे तो अतिश्योक्ति नहीं होगी।

7.3.3 प्रसाद जी का समकालीन परिवेश और उसका प्रसाद पर प्रभाव

प्रसाद जी ने भारत के गौरवमय अतीत के साथ-साथ अपनी समसामयिक परिस्थितियों को लेकर साहित्य रचना की और भविष्य के भारत की कल्पना भी प्रस्तुत की। उनका रचनकाल 1906 से 1936 तक का रहा। इस अवधि में पराधीन भारत ने राजनैतिक दृष्टि में बहुत कुछ देखा। जैसे- असहयोग आंदोलन, मिण्टो-मार्ले की सुधार योजना की आड़ में 'फूट डालो राज्य करो' की नीति, विश्व युद्ध, नमक कानून तोड़ने के लिए किया गया आंदोलन आदि।

प्रसाद जी बड़े देशभक्त साहित्यकार थे। उन्होंने इन राजनैतिक परिस्थितियों को देखा समझा और अपने ऐतिहासिक नाटकों में राष्ट्रप्रेम तथा आजादी से भरे गीतों को लिखा। वे चाहते

थे कि भारतवासियों का देश प्रेम किसी भी दशा में कम न हो। इसलिए जहाँ-जहाँ उन्हें अवसर मिला उन्होंने भारत की वंदना की।

प्रसाद जी के समय की सामाजिक परिस्थितियाँ काफी विषम थीं। बहुविवाह, अनमेल विवाह, सती प्रथा आदि ने स्त्रियों का जीवन तो नारकीय बना ही दिया था। साथ ही अंग्रेज केवल भारत की जनता का शोषण ही नहीं कर रहे थे अपितु भारत के निम्नवर्गीय जनों का शोषण करनेवाले जमींदारों, साहूकारों एवं पूँजीपतियों को बढ़ावा भी रहे थे। अंग्रेजी शिक्षा ने भारतीय युवकों में जहाँ राष्ट्रीयता स्वतंत्रता-प्राप्ति की भावना एवं वैज्ञानिक चेतना उत्पन्न की, वहीं उसने भारतीय गौरव, प्राचीन संस्कृति एवं धार्मिक भावना का भी विनाश किया। ऐसे में प्रसाद जी ने अपने "ध्रुवस्वामिनी" जैसे नाटक के द्वारा न केवल भारतीय और पाश्चात्य नाट्यशास्त्र का समन्वय किया बल्कि नारी के पुनर्विवाह की घोषणा भी की।

डॉ. प्रेमशंकर शर्मा ने प्रसाद जी की साहित्य-सेवा के विषय में लिखा है, 'कविता, नाटक, उपन्यास और कहानी सभी क्षेत्रों में अपनी सर्वतोमुखी प्रतिभा से कार्य करनेवाले इस महान कलाकार ने अपने समाज की सांस्कृतिक चेतना का रसात्मक संस्करण साहित्य में प्रस्तुत किया है। उनके साहित्य में वे अनुभूतियाँ मिलती हैं, जिनका संबंध परंपरा और पूर्व पीठिका से है। द्विवेदी युग की अतिवृत्तात्मकता और जातीयता के विरोध में जो छायावाद उठ खड़ा हुआ था, उसका चरम विकास कवि प्रसाद में स्पष्ट है।'

बोध प्रश्न

- प्रसाद जी ने किस आयु में साहित्य रचना का काम शुरू किया था?
- प्रसाद जी ने किस उपनाम से ब्रजभाषा में साहित्य रचना किया करते थे?
- कामायनी का प्रकाशन वर्ष क्या है?
- नारी पुनर्विवाह की घोषणा प्रसाद जी ने अपनी किस रचना के द्वारा की थी?

7.3.4 जयशंकर प्रसाद की प्रमुख कहानियाँ

प्रसाद ने हिन्दी कहानी को नया रूप प्रदान किया था। उनकी पहली मौलिक कहानी 'ग्राम' सन् 1911 में इंदु में प्रकाशित हुई थी। प्रसाद जी ने अपने जीवन काल में 70 कहानियाँ लिखीं। उनके 5 कहानी संग्रहों के नाम है- छाया, प्रतिध्वनि, आकाशदीप, आँधी, इन्द्रजाल। रवीन्द्रनाथ ठाकुर और उनकी 'गीतांजलि' से प्रसाद काफी प्रभावित थे। कहानी कला के क्षेत्र में भी उन्होंने रवींद्र की तरह ही भावनात्मक लेखन को महत्व दिया। आइए, प्रसाद जी की कहानी कला को समझने के लिए उनकी कुछ कहानियों का परिचय प्राप्त करें-

स्वर्ग के खंडहर में

प्रसाद जी के द्वारा लिखित यह एक लंबी और जटिल कहानी है। इसकी कथावस्तु मुसलमानों के आक्रमण काल से ग्रहण की गई है- कुमारी लज्जा गांधार के अंतिम आर्य-नरपति भीमपाल के वंशधर देवपाल की ओर आकृष्ट हुई थी, किंतु कश्मीर सुंदरी तारा के कारण उसके प्रेम को आघात पहुँचा और वह भिक्षुणी हो गई। चंगेज खाँ के आक्रमण में देवपाल बंदी हुए और तारा ने आत्महत्या कर ली। उसी समय देवपाल के पुत्र देवकुमार और सेनापति विक्रम की कन्या लीला की रक्षा के लिए उन्हें लज्जा की शरण में भेजा गया। किंतु धर्मभिक्षु के आपत्ति करने पर

लज्जा उन्हें लेकर छद्म वेश में बाहर निकल पड़ी और भिक्षा द्वारा उनका पालन-पोषण करने लगी। एक रात सबके सो जाने के बाद देवकुमार और लीला को गायब कर दिया गया। वह उन्हें खोजती हुई केकय के पहाड़ी दुर्ग के निकट शेख के स्वर्ग में पहुँची। वहाँ से गुल और मीना के रूप में देवकुमार और लीला तथा प्रधान प्रहरी के रूप में देवपाल मिले। यह रहस्य अधिक समय तक रहस्य नहीं रहा। तातार खान के आक्रमण में सभी मारे गए, बची रही केवल मीना। सेनापति विक्रम उस प्रांत के शासक बने और उन्हीं स्वर्ग के खण्डहरों में मीना उनमुक्त भ्रमण करती रही। उसका मस्तिष्क विकृत हो गया था। जब सेनापति बहुत स्मरण दिलाता तो वह कह देती- 'मैं एक भटकी हुई बुलबुल हूँ। मुझे किसी टूटी डाल पर अंधकार बिता लेने दो। इस रजनी-विश्राम का मूल्य अंतिम तान सुनाकर जाऊँगी।'

इस कहानी का शीर्षक अत्यंत आकर्षक है तथा प्रसाद की मनोभावनाओं के अनुकूल है। इसमें गांधार के शाही वंश तथा चंगेज खाँ के आक्रमण काल की ऐतिहासिक घटनाएँ है।

भिखारिन

यह दीन-दुखी जीवन की कहानी है, जो सर्वप्रथम फरवरी सन् 1927 में माधुरी में प्रकाशित हुई थी। प्रस्तुत कहानी की कथावस्तु साधरण किंतु कारूणिक है। कहानी में दिखाया गया है कि मनुष्य धर्म के नाम पर बहुत कुछ करता है किंतु सच्चे धर्म, मनुष्य-सेवा के लिए कुछ भी करते नहीं बनता। दान जिसे मिलना चाहिए, उसे न मिलकर मिलता है धर्म के ठेकेदारों को, व्यभिचारी पण्डों को। किसी भिखारी को दान करना मानो पाप का उपार्जन करना है। वास्तव में सारी कहानी समाज पर एक कटाक्ष है। भिखारिन के निम्नलिखित शब्दों से उसके हृदय की भावनाएँ व्यंजित होती है, उसके इन शब्दों में समाज की सुंदर आलोचना है- 'दो दिन माँगने पर भी तुम लोगों से एक पैसा तो देते नहीं बना, फिर गाली क्यों देते हो बाबू? ब्याह करके निभाना तो बड़ी दूर की बात है।' कहानी कला की दृष्टि से यह कहानी अत्यंत सुंदर है। कहानी में प्रसिद्ध गीत 'सुने री निर्धन के धन राम, सुने री' का एक पद आया है जो समय और अवसर के सर्वथा अनुकूल है। इससे भिखारिन की उदासीनता मिश्रित व्यथा लक्षित होती है।

ग्राम

यह प्रसाद जी द्वारा लिखित मानव मन के अंर्तद्वन्द्व को दर्शानेवाली कहानी है। अंग्रेजों की सहायता पाकर भारतीय जमींदारों ने अपनी ही प्रजा पर बहुत अत्याचार किए देखा जाए तो अगर इन भारतीय जमींदारों की सहायता अंग्रेजों को और अंग्रेजों को इनकी सहायता न मिली होती तो भारत के गाँवों को इतनी दूर्दशा कभी न देखनी पड़ती लेकिन यह भी सच है कि जहाँ दूरात्मा का निवास होता है वहाँ पुण्यात्मा का भी जन्म होता है। ऐसे ही भलेमानुष मोहनलाल इस कहानी के प्रमुख पात्र है और ऐसे ही भलेमानुष थे कहानी के गौण पात्र मृत भूस्वामी जो अपने भलेमानुषता के कारण ही शोषण का शिकार हुए देखिए मृत भूस्वामी की पत्नी का कथन- 'स्त्री कहने लगी, "हमारे पति इस प्रांत के गण्य भूस्वामी थे और वंश भी हम लोगों का बहुत उच्च था। जिस गाँव का अभी आपने नाम लिया है, वही हमारे पति की प्रधान जमींदारी थी। कार्यवश कुंदनलाल नामक एक महाजन से कुछ ऋण लिया गया। कुछ भी विचार न करने से उनका बहुत रुपया बढ़ गया और जब ऐसी अवस्था पहुँची तो अनेक आय करके हमारे पति धन जुटाकर

उनके पास ले गए, तब धूर्त ने कहा- "क्या हर्ज है बाबू साहब! आप आठ रोज में आना, हम रुपया ले लेंगे और जो घाटा होगा, उसे छोड़ देंगे, आपका इलाका फिर जाएगा, इस समय रेहनामा भी नहीं मिल रहा है।" उसका विश्वास करके पति फिर बैठ रहे और उसने कुछ भी न पूछा। उनकी उदारता के कारण वह संचित धन भी थोड़ा हो गया और उसने दावा करके इलाका- जो कि वह ले लेना चाहता था, बहुत थोड़े रुपये में नीलाम करा लिया। फिर हमारे पति के हृदय में उस इलाके के इस भाँति निकल जाने के कारण बहुत चोट पहुँची और इसी से उनकी मृत्यु हो गई।" ये तो हुई स्त्री की बात अब देखिए भलेमानुष मोहनलाल का अंर्तद्वन्द्व-

"स्त्री की कथा को सुनकर मोहनलाल को बड़ा दुःख हुआ। रात विशेष बीत चुकी थी, अतः रात्रि-यापन करके, प्रभात में मलिन तथा पश्चिमगामी चंद्र का अनुसरण करके, बताए हुए पथ से वह चले गए। पर उनके मुख पर विषाद तथा लज्जा ने अधिकार कर लिया था। कारण यह था कि स्त्री की जमींदारी हरण करनेवाले तथा उसके प्राणप्रिय पति से उसे विच्छेद कराकर इस भाँति दुःख देनेवाले कुंदनलाल, मोहनलाल के ही पिता थे।"

छोटा जादूगर

"कार्निवल के मैदान में बिजली जगमगा रही थी। हँसी और विनोद का कलनाद गूँज रहा था। मैं खड़ा था, उस छोटे फुहारे के पास, जहाँ एक लड़का चुपचाप शरबत पीनेवालों को देख रहा था। उसके गले में फटे कुरते के ऊपर एक मोटी-सी सूत की रस्सी पड़ी थी और जब में कुछ ताश के पत्ते थे। उसके मुख पर गंभीर विषाद के साथ धैर्य की रेखा थी।"

'छोटा जादूगर' कहानी का प्रारंभ इस प्रकार से हुआ है और जैसे-जैसे कहानी आगे बढ़ी है बाल्य जीवन की एक ऐसी कहानी हम तक पहुँची है जिसके द्वारा आर्थिक विपन्नता से ग्रसित एक स्ट्रीट बॉय के चरित्र के आदर्शवादी स्वरूप को हम देख सके हैं। यह एक घटना प्रधान कहानी है। स्ट्रीट बॉय स्वाधीनता के लिए कारागृह में जीवन व्यतीत करनेवाले देशभक्तों के परिवार के प्रतिनिधि के रूप में अपने चरित्र की छाप छोड़ने में सफल हुआ है।

'मनुष्यों की भीड़ में जाड़े की संध्या भी वहाँ गर्म हो रही थी। हम दोनों शरबत पीकर निशाना लगाने लगे। राह में ही उससे पूछा- "तुम्हारे और कौन हैं?"

"माँ और बाबूजी।"

"उन्होंने तुमको यहाँ आने के लिए मना नहीं किया?"

"बाबूजी जेल में हैं"

"क्यों?"

"देश के लिए।" वह गर्व से बोला।"

"और तुम्हारी माँ?"

"वह बीमार है"

"और तुम तमाशा देख रहे हो?"

उसके मुँह पर तिरस्कार की हँसी फूट पड़ी। उसने कहा, "तमाशा देखने नहीं, दिखाने निकला हूँ। कुछ पैसे ले जाऊँगा, तो माँ को पथ्य दूँगा। मुझे शरबत न पिलाकर आपने मेरा खेल देखकर मुझे कुछ दे दिया होता, तो मुझे अधिक प्रसन्नता होती।"

मैं आश्चर्य से उस तेरह-चौदह वर्ष के लड़के को देखने लगा। स्वाधीनता सेनानियों के कारनामों के किस्से तो फिर भी सुनने को मिल जाती है पर उनके परिवारवालों ने भी कम कष्ट नहीं किया होगा। जिसकी कल्पना भी हम नहीं कर सकते। इस कहानी में प्रसाद जी ने देशभक्तों की पारिवारिक जीवन की त्रासदी का करुण अंकन किया है।

हिमालय का पथिक

यह एकांत-जीवन की सुंदर कहानी है। एक रात, जब गिरि पथ में हिम-वर्षा हो रही थी, पथिक ने हिमालय-प्रदेश के एक कुटीर में शरण ली। उस कुटीर में एक वृद्ध तथा एक युवती रहती थी। धीरे-धीरे किन्नरी और युवक निर्भीकता से मिलने और एक-दूसरे के सन्निकट आने लगे। किंतु उनका यह व्यवहार वृद्ध को अप्रिय लगा। युवक वहाँ से जाने लगा और किन्नरी भी पुकारती हुई उसके पीछे दौड़ पड़ी। वृद्ध हताश नेत्रों से खड़ा देखता और पुकारता रहा। दूसरे ही क्षण खूनी बर्फ, वृद्ध और उन दोनों के बीच में थी। इसमें कथानक का अभाव है लेकिन फिर भी कहानी सजीव और सरस है। कहानी का प्रारंभ और अंत कथोपकथन से ही हुआ है। इस दृष्टि से कहानी सुंदर है। कहानी में प्रसाद का एकांत-प्रकृति प्रेम झलकता है। यह समाज से दूर, प्रकृति के एकांत कोने में घटित होती है।

प्रतिध्वनि

यह एक सामाजिक कहानी है। इसमें सामाजिक कुरीतियों पर प्रकाश डाला गया है। जिस दिन तारा विधवा हुई उसी दिन रामा ने उस पर रोदन मिश्रित व्यंग्य किया जो तारा के हृदय में चुभ-सा गया। संपन्नता के कारण तारा को विशेष कष्ट का अनुभव न हुआ किंतु रामा अपनी दरिद्रता के दिन कन्या श्यामा के साथ काटने लगी। अर्थाभाव से वह श्यामा का विवाह भी न कर सकी और उसे असहाय छोड़कर कूच कर गई। धीरे-धीरे सारा सामान बिक गया। अंत में जब श्यामा की सबसे प्यारी चीज़ आम का बाग भी बिक गया तो वह विक्षिप्त हो गई। पर बात यहीं समाप्त नहीं हुई। एक दिन तारा के उत्तराधिकारी प्रकाश ने श्यामा के साथ गलत व्यावहार किया। श्यामा का पागलपन सर चढ़ गया और वह अपने बाग के आम तोड़-तोड़कर तब तक प्रकाश को मारती रही जब तक उसकी हिचकियाँ न बँध गई।

चूड़ीवाली

यह कहानी 'चाँद' नामक मासिक पत्रिका में 'कला का मूल्य' नाम से प्रकाशित हुई थी। यह पाँच भागों में विभक्त कहानी है। पाँचों भाग एक-दूसरे के साथ बाँधे हुए हैं। चूड़ीवाली का नाम विलासिनी था। वह नगर की एक प्रसिद्ध नर्तकी की कन्या थी। लेकिन वह कुलवधू बनना चाहती थीं अपनी इसी लालसा को पूरा करने के लिए वह चूड़ीवाली बन गई और सरकार विजय कृष्ण के यहाँ आने-जाने लगी। विजय कृष्ण इतना तो समझते थे कि चूड़ीवाली उन पर आकृष्ट है लेकिन विलासी पुरुष के रूप में उन्होंने उसके मन की भावनाओं को महत्व नहीं दिया। भाग्य का लेखन एक मुकदमें में हार जाने के बाद विनोद कृष्ण अपनी सारी संपत्ति से हाथ धो बैठे। उसकी पत्नी का भी स्वर्गवास हो गया। विलासिनी सरकार के इस दशा में नहीं देख पाती वह गाँव के बाहर तपस्विनी सा जीवन जीने लगती है। वह पास के गाँव के खेतों में काम करती है और अनाथों तथा भिखारियों की सेवा करने लगती है। इधर सरकार भी तपस्वी वेश में इधर-

उधर घूमते हुए अंत में विलासिनी की कुटिया तक पहुँच ही जाते हैं। दोनों का मिलन होता है। वासना पर त्याग, सेवा की विजय होती है।

प्रसाद जी ने प्रस्तुत कहानी के द्वारा इस सत्य पर प्रकाश डाला है कि यह समाज ने धारणा बना ली है कि वेश्याएँ और उनकी संतानें दुष्चरित्र ही होती है लेकिन ऐसा हमेशा नहीं होता, उन्हें कुत्सित बनाने का उत्तरदायित्व समाज पर भी है क्योंकि अगर वे वेश्यावृत्ति छोड़कर समाज के साथ जुड़कर एक स्वस्थ जीवन जीने का प्रयास करती भी हैं तो समाज उन्हें नहीं अपनाता। अगर विलासिनी की तरह सबको थोड़ा समाज की सहायता प्राप्त हो जाए तो किसी भी स्त्री को वेश्या जीवन बिताना ही न पड़े।

प्रणय चिह्न

यह एक प्रेम कहानी है। कथोपकथन की दृष्टि से यह एक सुंदर कहानी है। कहानी तीन भागों मे विभक्त है। प्रथम भाग में- युवक पथिक से अपनी प्रियतमा के पास संदेशा भेजता है, द्वितीय भाग में वह उससे मिलने का प्रस्ताव करती है और तृतीय भाग में उनका मिलन होता है। इस प्रकार से कहानी के तीनों भाग एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं। 'स्वच्छन्दतावाद' से प्रभावित यह एक रोमांस की कहानी है। यह काल्पनिक कहानी है लेकिन इसमें प्रेम की शक्ति और उसके अनन्यता पर प्रकाश डाला गया है।

रूप की छाया

इस कहानी के केंद्र में नारी मनोविज्ञान है। कहानीकार ने दर्शाया है कि सरला काशी के घाटों का संध्याकालीन दृश्य देख रही थी। सहसा उसकी दृष्टि फटेहाल युवक विद्यार्थी शैलनाथ पर पड़ी। उसकी एक प्रौढ़ा संगिनी सहायता देने के लिए प्रलोभन से उसे अपने साथ ले आई। अब शैलनाथ वहाँ सुख से रहने लगा। एक दिन सरला ने उससे स्पष्ट कह दिया, 'अब तुम मुझसे छिप नहीं सकते। तुम्हीं मेरे पति हो। एक दिन चाची के बिगड़ने पर सहसा घर से निकल पड़े और फिर लौटकर न आय।' यवुक 'हाँ' कहने ही वाला था कि उसके मुख से निकल पड़ा, 'यह तुम्हारा भ्रम है, तुम्हें रूप की छाया ने भ्रांत कर दिया है। सरला क्षोभ और ग्लानि से गड़ने लगी और क्रमशः घनीभूत रात में उसके रूप की छाया भी विलीन हो गई।

शरणागत

इस कहानी में चंदनपुर के जमींदार किशोर सिंह की पत्नी सुकुमारी और अंग्रेज महिला एलिस के वार्तालाप के द्वारा भारतीय स्त्रियों की पुरानपंथी मानसिकता को उभारा गया है। जैसे-

'एलिस सचमुच उठी, पर सुकुमारी एक बार किशोर सिंह की ओर वक्रदृष्टि से देखकर हँसती हुई पास की बाहर दरी में भागकर चली गई, किंतु एलिस ने पीछा न छोड़ा। वह भी वहाँ पहुँची और उसे पकड़ा। सुकुमारी एलिस को देख गिड़गिड़ाकर बोली- क्षमा कीजिए, हम लोग पति के सामने कुर्सी पर नहीं बैठतीं और न कुर्सी पर बौठने का अभ्यास ही है।'

एक और उदाहरण देखिए-

एलिस ने सुकुमारी से कहा- आप क्या यहाँ भी न बैठेंगी? क्या यहाँ भी कुर्सी है?

सुकुमारी- परसेगा कौन

एलिस- खानसामा
सुकुमारी- क्यों, क्या मैं नहीं हूँ?
किशोर सिंह- जिद न कीजिए, यह हमारे भोजन कर लेने पर भोजन करती है।'

प्रस्तुत कहानी के द्वारा जयशंकर प्रसाद ने स्त्रियों को भी यह शिक्षा दी है कि उन्हें भी अपने अधिकार के लिए उठ खड़ा होना होगा।

बोध प्रश्न

- जयशंकर प्रसाद की पहली मौलिक कहानी कौन-सी है?
- जयशंकर प्रसाद के कहानी संग्रहों के नाम बताइए?
- 'चाँद' मासिक पत्रिका में 'चूड़ीवाली' नामक कहानी पहले किस नाम से छपी थी?
- 'रूप की छाया' कहानी का संबंध किस शहर के साथ है?

7.3.5 जयशंकर प्रसाद की कहानी कला की विशेषताएँ

जयशंकर प्रसाद ने हिन्दी कहानी लेखन को एक नया ही स्वरूप प्रदान किया था। प्रसादजी की कहानी कला की विशेताओं को निम्न शीर्षकों के द्वारा आप लोग आसानी से समझ सकेंगे।

कथावस्तु

प्रसाद जी की कहानियों की सबसे बड़ी विशेषता यह रही कि उनकी कहानियों में प्रागैतिहासिक, वैदिक, उत्तर वैदिक, उनके तत्कालीन समय के भारत और उनके कल्पनानुसार भविष्य के भारत की जो झाँकी उन्होंने प्रस्तुत की है यह अपने आप में उत्कृष्ट है। उनकी यह विशेषता उन्हें दूसरे कहानीकारों से अलग करती है। प्रसाद जी ने अपनी कथावस्तुओं के द्वारा जहाँ एक तरफ अतीत की मर्यादाओं का समर्थन कर कहानियों में आदर्श स्थापित किया है, वहीं दूसरी तरफ प्रचलित कुरीतियों और पाखंडों का भी खुलकर विरोध किया।

वातावरण सृष्टि

जयशंकर प्रसाद की कहानियों में वातावरण सृष्टि का सफल प्रयोग हुआ है। इस संबंध में डॉ. लाल ने भी यही लिखा है कि, 'कला की दृष्टि से वातावरण-प्रधान कहानियों का महत्व सबसे अधिक है। इनमें लेखक को कला की काट-छाँट और तराश दिखाने के लिए उपयुक्त अवसर मिलता है। कवित्वपूर्ण वातावरण, कवित्वपूर्ण भावना और नाटकीय तथा आदर्शवादी परिस्थितियों की सृष्टि में जयशंकर प्रसाद अद्वितीय हैं, उनकी कला कवित्वपूर्ण और स्वच्छंदतावादी है।'

चरित्र का विकास

प्रसाद जी ने अपनी कहानियों के चरित्रों का विकास अधिकतर संकेत रूप में होते हुए दिखाया है। जैसे-जैसे उनकी कहानियाँ आगे बढ़ती गई है वैसे-वैसे पात्र अपने स्थान, काल, कर्तव्य आदि के अनुसार परिपक्व होते गए हैं। जैसे-छोटा जादूगर का 14 वर्षीय बालक, चूड़ीवाली कहानी की विलासिनी आदि। प्रसाद जी कुशल चित्रकार की भाँति थोड़ी सी रेखाओं के द्वारा अपने चरित्र की संपूर्ण झाँकी पाठक के सामने रख देने में भी सिद्धहस्त थे।

शैली तत्व

प्रसाद जी ने अपनी कहानियों में विविध प्रकार की शैलियाँ अपनाईं। जैसे-

'ममता' कहानी साधारण वर्णनात्मक शैली में लिखी गई है-

'रोहतास दुर्ग के प्रकोष्ठ में बैठी हुई युवती ममता शोण के तीक्ष्ण गंभीर प्रवाह को देख रही है। ममता विधवा थी। उसका यौवन शोण के समान ही उमड़ रहा था। मन में वेदना, मस्तक में आँधी, आँखों में पानी की बरसात लिए, वह सुख के कंटक शयन में विकल थी। वह रोहतास-दुर्गपति के मंत्री चूड़ामणि की अकेली दुहिता थी, फिर उसके लिए कुछ अभाव होना असंभव था, परंतु विधवा थी। हिन्दू-विधवा संसार में सबसे तुच्छ निराश्रय प्राणी है, तब उसकी विडम्बना का कहाँ अंत था।'

'छोटा जादूगर' नामक कहानी आत्म चरित्र चित्रण शैली में लिखित है। यथा- 'मैं न जाने क्यों उसकी ओर आकर्षित हुआ? उसके अभाव में भी पूर्णता थी। मैंने पूछा- क्यों जी तुमने इसमें क्या देखा?'

'आकाशदीप' कहानी की संलाप शैली अपने आप में उत्कृष्ट है-

"बंदी।"

"क्या है? सोने दो।"

"मुक्त होना चाहते हो? "

"अभी नहीं, निद्रा खुलने पर, चुप रहो।"

"फिर अवसर न मिलेगा।"

"बड़ा शीत है, कहीं से एक कंबल डालकर कोई शीत से मुक्त करता।"

'देवदासी' कहानी पत्रात्मक शैली में रचित है-

"प्रिय रमेश,

समय को उलाहना देने की प्राचीन प्रथा को मैं अच्छी नहीं समझती.....।"

स्पष्ट है कि प्रसाद ने कहानी लेखन के शैली तत्व को महत्व प्रदान किया।

शीर्षक चयन

प्रसादजी की कहानी कला की यह भी एक विशेषता रही कि वे अपनी कहानियों के शीर्षकों का चयन बहुत सोच-समझकर किया करते थे। प्रसाद की कहानियों के शीर्षक प्रायः कहानियों के मुख्य पात्रों के नाम पर आधारित है जैसे- साल्वती, देवरथ, देवदासी, विजया आदि। कहीं-कहीं कहानियों के मुख्य भाव के आधार पर भी उन्होंने कहानियों का शीर्षक रखा है जैसे- पुरस्कार, अपराधी, सहयोग, पाप आदि। इसी प्रकार से मुख्य दृश्य को ध्यान में रखकर उन्होंने कहानियों का नामकरण किया है जैसे- भिखारिन, गूदड़ साई, गुदड़ी में लाल आदि। इस प्रकार प्रसाद ने हिन्दी कहानी लेखन को भी नवीन दिशा प्रदान की।

बोध प्रश्न

- प्रसाद जी की कहानी कला की विशेषता बताइए।
- प्रसाद ने किन-किन शैलियों में कहानी रचना का कार्य किया?
- प्रसाद जी अपनी कहानियों के शीर्षकों का चयन किस प्रकार से करते थे?

7.4 पाठ सार

जयशंकर प्रसाद का जन्म सन् 1889 में काशी के एक धनी परिवार में हुआ था। उनका बचपन बहुत आरंभ से संपूर्ण परिवार के प्रेम छाया में गुजर रहा था, लेकिन आकस्मिक विपरीत परिस्थितियों ने उनकी किशोरावस्था और आगे के जीवन को संघर्षपूर्ण बना दिया। नौ वर्ष की आयु में ही उन्होंने 'कलाधर' उपनाम से कविता लेखन शुरू कर दिया था। जैसे-जैसे जीवन का अनुभव मिलता गया, वैसे-वैसे उनकी रचनाओं में लाक्षणिकता, प्रतीकात्मकता, ध्वन्यात्मकता का सौंदर्य बढ़ता चला गया। कहानियों में उन्होंने भावना को अधिक महत्व दिया और राष्ट्रीय, ऐतिहासिक तथा सांस्कृतिक परिवेश को उभारा।

7.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं -

1. जयशंकर प्रसाद ने हिन्दी कहानी को प्रेमचंद की कहानियों के समानांतर एक नया रूप प्रदान किया।
2. प्रसाद जी की पहली मौलिक कहानी 'ग्राम' सन् 1911 में 'इंदु' में प्रकाशित हुई थी। उन्होंने अपने जीवन काल में 70 कहानियाँ लिखीं।
3. प्रसाद जी रवींद्रनाथ ठाकुर और उनकी 'गीतांजलि' से काफी प्रभावित थे। कहानी कला के क्षेत्र में भी उन्होंने रवींद्र की तरह ही भावनात्मक लेखन को महत्व दिया।
4. प्रसाद जी की कहानियों में प्रागैतिहासिक, वैदिक, उत्तर वैदिक, उनके तत्कालीन समय के भारत और उनके कल्पनानुसार भविष्य के भारत की झाँकी प्रस्तुत की गई है। यह विशेषता उन्हें दूसरे कहानीकारों से अलग करती है।
5. प्रसाद जी ने अपनी कहानियों द्वारा जहाँ एक तरफ अतीत की मर्यादाओं का समर्थन कर कहानियों में आदर्श स्थापित किया, वहीं दूसरी तरफ प्रचलित कुरीतियों और पाखंडों का भी खुलकर विरोध किया।

7.6 शब्द संपदा

1. कालांतर = समय के बाद
2. प्रसव काल = बच्चे को जन्म देने का समय
3. उपचारक = डॉक्टर

4. अतिश्योक्ति = बात को बढ़ा-चढ़ाकर बोलना

5. पाश्चात्य शिक्षा = विदेशी शिक्षा

6. अवगत = जानना

7. परिकल्पना = कल्पना

8. विश्वनियंता = ईश्वर

9. धर्माचरण = धर्म का आचरण

10. छद्म वेश = वेश बदल लेना

11. किन्नर = अर्द्धनारीश्वर

12. कारागृह = जेल

13. विपन्नता = गरीबी

14. एकांतवास = अकेले निवास करना

15. चयन = चुनाव

7.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

7.7.1 सही विकल्प चुनिए –

1. जयशंकर प्रसाद का परिवार किस विशेष उत्पाद के व्यापार के कारण 'सुँघनी साहु' के नाम से प्रसिद्ध हुआ?

A. **तम्बाकू की पत्ती से बना एक विशेष चूर्ण** B. आयुर्वेदिक जड़ी-बूटियाँ

C. बनारसी साड़ियों का व्यापार D. सुगंधित इत्र और तेल

2. प्रसाद जी ने अपनी साहित्यिक यात्रा की शुरुआत किस पत्रिका के माध्यम से की थी?

A. माधुरी B. सरस्वती **C. इन्दु** D. चाँद

3. बचपन में जयशंकर प्रसाद को किस नाम से पुकारा जाता था?

A. कलाधर **B. झारखंडे** C. देवी प्रसाद D. रत्नशंकर

4. प्रसाद जी की पहली मौलिक कहानी कौन-सी है?

A. ममता B. छोटा जादूगर **C. ग्राम** D. आकाशदीप

5. प्रसाद जी को किस काव्यधारा का जनक माना जाता है?

A. रीतिकालीन B. प्रयोगवाद **C. छायावाद** D. प्रगतिवाद

6. प्रसाद जी के महाकाव्य 'कामायनी' में किन तत्वों का सुंदर समावेश मिलता है?

A. केवल युद्ध और वीरता **B. सभ्यता, संस्कृति और विज्ञान**

C. सिर्फ अंग्रेजी शासन का विरोध D. केवल दरबारी विलासिता

7. कहानी 'छोटा जादूगर' में 13-14 वर्ष का लड़का तमाशा क्यों दिखा रहा था?

A. पिता के व्यापार में मदद करने के लिए

B. बीमार माँ के इलाज और भोजन के लिए पैसे कमाने हेतु

C. स्कूल की फीस भरने के लिए

D. सिर्फ मनोरंजन और शौक के लिए

8. प्रसाद जी के व्यक्तित्व के बारे में कौन-सा तथ्य सही है?

A. वे केवल राजनैतिक आंदोलनों में सक्रिय रूप से भाग लेते थे

B. वे बहुत ही बहिर्मुखी थे और हमेशा विदेश घूमना चाहते थे

C. उन्हें साधारण वेशभूषा और शारीरिक कसरत पसंद नहीं थी

D.वे अंतर्मुखी व्यक्ति थे और काशी से उन्हें अगाध प्रेम था

9. कहानी 'ध्रुवस्वामिनी' के माध्यम से प्रसाद जी ने समाज में किस क्रांतिकारी विचार की घोषणा की?

A. बहुविवाह प्रथा को बढ़ावा देना B. सती प्रथा का समर्थन

C. शिक्षा का पूर्ण बहिष्कार **D. नारी के पुनर्विवाह की घोषणा**

10. प्रसाद जी को घर पर संस्कृत और अंग्रेजी पढ़ाने के लिए किन गुरुओं का उल्लेख मिलता है?

A. आचार्य शुक्ल और प्रेमचंद B. रवीन्द्रनाथ ठाकुर और भीमपाल

C. मोहिनी लाल गुप्त और दीनबंधु ब्रह्मचारी D. डॉ. सूरजपाल शर्मा और प्रेमशंकर

खंड (ब)

7.7.2 लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. जयशंकर प्रसाद के व्यक्तित्व एवं वेशभूषा पर प्रकाश डालिए।
2. प्रसाद जी के समकालीन परिवेश का उन पर क्या प्रभाव पड़ा?

3. प्रसाद जी की कहानियों के शैली तत्व पर प्रकाश डालिए।
4. प्रसाद जी की कहानियों के शीर्षकों की विशेषता पर प्रकाश डालिए।

खंड (स)

7.7.3 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. जयशंकर प्रसाद के जन्म, शिक्षा तथा साहित्यिक यात्रा पर प्रकाश डालिए।
2. जयशंकर प्रसाद के जीवन दर्शन पर प्रकाश डालिए।
3. जयशंकर प्रसाद की कहानी कला की विशेषाओं पर प्रकाश डालिए।
4. जयशंकर प्रसाद की कुछ कहानियों की संक्षिप्त जानकारी दीजिए।

7.8 पठनीय पुस्तकें

1. जयशंकर प्रसाद - एक विशेष अध्ययन : गंगासहाय प्रेमी एवं जगदीश
2. प्रतिनिधि कहानियाँ : जयशंकर प्रसाद

इकाई 8 : 'आकाश दीप' (जयशंकर प्रसाद) : तात्विक विवेचन

रूपरेखा

8.1 प्रस्तावना
8.2 उद्देश्य
8.3 मूल पाठ : 'आकाश दीप' (जयशंकर प्रसाद) : तात्विक विवेचन
8.3.1 'आकाश दीप' : तात्विक विवेचन
8.3.1.1 कथावस्तु
8.3.1.2 पात्र एवं चरित्र चित्रण
8.3.1.3 देशकाल व वातावरण
8.3.1.4 संवाद योजना
8.3.1.5 उद्देश्य
8.3.1.6 भाषा-शैली
8.3.1.7 कहानी के शीर्षक का औचित्य
8.4 पाठ सार
8.5 पाठ की उपलब्धियाँ
8.6 शब्द संपदा
8.7 परीक्षार्थ प्रश्न
8.8 पठनीय पुस्तकें

8.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो! आधुनिक हिन्दी गद्य साहित्य का आरंभ सन् 1800 के बाद से माना जाता है। इससे पहले हिन्दी गद्य का जो रूप मिलता है, वह साहित्य की दृष्टि से विशेष महत्व नहीं रखता। कालक्रम और कहानी कला की दृष्टि से रेवरेंड जे. न्यूटन के द्वारा लिखित 'जमींदार का दृष्टांत' नामक कहानी को हिन्दी की पहली कहानी मानना गलत न होगा। वैसे तो, हिन्दी कहानी का जन्म सन् 1871 में ही हो चुका था, परंतु उसका विधिवत विकास 20 वीं शताब्दी के प्रथम भाग में हुआ। हिन्दी कहानी अपने जन्म और विकास के लिए हमेशा पाश्चात्य अर्थात् विदेशी साहित्य तथा बांग्ला साहित्य का ऋणी रहेगा परंतु इसके साथ-साथ यह कहना भी गलत नहीं होगा कि हिन्दी कहानी साहित्य ने अपनी अलग पहचान बनाने में अधिक समय नहीं लिया। हिन्दी कहानी को समृद्ध करने में प्रसिद्ध छायावादी कवि और नाटककार जयशंकर प्रसाद का भी योगदान अविस्मरणीय है। प्रस्तुत इकाई में आप उनकी विख्यात कहानी 'आकाशदीप' का गहन अध्ययन करेंगे।

8.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के उपरांत आप-

- प्रसाद जी की कहानी 'आकाशदीप' की कथावस्तु से परिचित हो सकेंगे।

- कहानी के तत्वों के आधार पर 'आकाशदीप' की समीक्षा कर सकेंगे।
- प्रसाद जी की लेखन शैली की विशेषता समझ सकेंगे।
- 'आकाशदीप' के शीर्षक के औचित्य और इसकी प्रासंगिकता से अवगत हो सकेंगे।

8.3 मूल पाठ : 'आकाश दीप' (जयशंकर प्रसाद) : तात्विक विश्लेषण

8.3.1 'आकाश दीप' : तात्विक विवेचन

प्रिय छात्रो! जयशंकर प्रसाद की प्रसिद्ध कहानी 'आकाश दीप' का विश्लेषण कहानी के तत्वों के आधार पर करेंगे।

8.3.1.1 कथावस्तु

"आकाश दीप" जयशंकर प्रसाद का तृतीय कहानी संग्रह है। यह प्रसाद जी की अत्यंत प्रौढ़ रचना है। इस संग्रह में 19 कहानियाँ हैं - जैसे - स्वर्ग के खंडहर में, ज्योतिष्मती, हिमालय का पथिक, अपराधी, आकाशदीप आदि। आइए विद्यार्थियो! अब हम आकाशदीप कहानी की कथावस्तु का ज्ञान प्राप्त कर लें।

प्रसाद जी द्वारा लिखित आकाशदीप एक लंबी अंतर्द्वंद्व प्रधान प्रेम कहानी है। कहानी 7 भागों में विभक्त है। प्रत्येक भाग दूसरे भाग के साथ जुड़ा हुआ है साथ ही साथ कहानी जैसे - जैसे आगे बढ़ी है रहस्य का भी सुंदर समायोजन इसमें हुआ है। कहानी का प्रारंभ कथोपकथन से हुआ है। प्रस्तुत कहानी के दो प्रमुख पात्र है - बुधगुप्त और चम्पा।

रात के अंधेरे में जब सब सो रहे थे ठंडी हवाएँ शरीर कँपा रही थी। समुद्र में हिलोरें उठने लगी। तूफान की संभावना थी। तभी एक बंदी ने दूसरे बंदी से पूछा, "मुक्त होना चाहते हो?" दूसरा बंदी प्रश्न का महत्व न समझ सका था शायद वह नींद में था, लेकिन पहले बंदी ने आशा न छोड़ी। उसके बंधन ढीले थे। यही अवसर था मौके के फायदा उठाने का, उसने खुद को बंधनमुक्त किया और किसी के कुछ समझने से पहले ही उसने दूसरे बंदी को भी बंधनमुक्त कर दिया। "दोनों ही अंधकार में मुक्त हो गए। दूसरे बंदी ने हर्षातिरेक से उसको गले लगा लिया। सहसा उस बंदी ने कहा - यह क्या? तुम स्त्री हो?"

'क्या स्त्री होना कोई पाप है?' - अपने को अलग करते हुए स्त्री ने कहा।

'शस्त्र कहा है – तुम्हारा नाम?'

"चम्पा।"

तो यही है कहानी की नायिका चम्पा और कहानी का नायक जलदस्यु बुधगुप्त। जाह्नवी के तट पर जो चम्पा नगरी थी चम्पा वही की क्षत्रिय बालिका थी जो माता की मृत्यु के बाद पिता के साथ नाव में ही रहने लगी थी। जलदस्यु बुधगुप्त भी ताम्रलिप्ति का एक क्षत्रिय था लेकिन दुर्भाग्य से जलदस्यु का जीवन बीता रहा था उसने जब चम्पा के पिता के नाव पर आक्रमण किया था तब उसके पिता ने सात जलदस्युओं को मारकर जलसमाधि ली थी। अनाथ चम्पा को अकेले पा कर नाव के स्वामी मणीभद्र ने उसके सामने घृणित प्रस्ताव रखा उसके मना कर देने पर उसने चम्पा को बंदी बना लिया था। पर आज वह उसी जलदस्यु बुधगुप्त के साथ ही स्वतंत्र हो चुकी थी जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से उसके पिता की मृत्यु का कारण था और अब

वह नाव के नायक को हराकर स्वयं सेनापति बन चुका था। पर अब उसे क्या करना चाहिए? इसे लेकर वह अनिश्चित ही रहना चाहती थी। इधर नाव एक सुनसान द्वीप से जा टकराई जहाँ कोई नहीं था वह नया द्वीप था बुधगुप्त ने कहा - "जब इसका कोई नाम नहीं है, तो हम लोग इसे चम्पा द्वीप कहेंगे।"

इस घटना को घटे पाँच साल बीत गए। अब बुधगुप्त महानाविक है। बाली, जावा, सुमात्रा तक का वाणिज्य उसके अधिकार में है। वह चम्पा को अपनी रानी बनाकर संसार के सभी सुख देना चाहता है लेकिन चम्पा विलासिता से दूर, प्रेमभाव से दूर अपनी माँ को याद करके "आकाशदीप" जलाना ही अपने जीवन का लक्ष्य बना चुकी है। वह भटके हुए नाविकों को सही मार्ग दिखाना चाहती ही ताकि कोई अपनी परिवार से दूर न हो। बुधगुप्त न जाने कितनी बार उसे कह चुका है, मैं तुम्हारे पिता का घातक नहीं हूँ चम्पा! वह एक दूसरे दस्यु के शस्त्र से मरे"। चम्पा भी इस बात को सच मानना चाहती थी वह कहती भी है, "यदि मैं इसका विश्वास कर सकती। बुधगुप्त, वह दिन कितना सुंदर होता, वह क्षण कितना स्पृहणीय! आह! तुम इस निष्ठुरता में भी कितने महान होते।" लेकिन चम्पा के मन का अंतर्द्वंद्व कभी समाप्त नहीं होता और एक दिन वह स्पष्ट रूप में बुधगुप्त को अपना निर्णय सुनाकर कह देती है, "बुधगुप्त! मेरे लिए सब भूमि मिट्टी है; सब जल तरल है; सब पवन शीतल है। कोई विशेष आकांक्षा हृदय में अग्नि के समान प्रज्वलित नहीं। सब मिलाकर मेरे लिए एक शून्य है। प्रिय नाविक! तुम स्वदेश लौट जाओ, विभावों का सुख भोगने के लिए और मुझे छोड़ दो इन निरीह भोले-भाले प्राणियों के दुख की सहानुभूति और सेवा के लिए"। बुधगुप्त चम्पा को वही छोड़ कर स्वदेश के लिए निकल पड़ा "यह कितनी ही शताब्दियों पहले की कथा है। चम्पा आजीवन उस दीप - स्तम्भ में आलोक जलती रही। किन्तु, उसके बाद भी बहुत दिन, दीपनिवासी, उस माया - ममता और स्नेह सेवा की देवी की समाधि-सदृश पूजा करते थे।

एक दिन काल के कठोर हाथों ने उसे भी अपनी चंचलता से गिर दिया।"

कहानी का प्रारंभ जितनी रोमांचकारी तरीखे से हुई है कहानी का अंत भी उतनी ही सुंदरता के साथ हुई है। प्रेम,अंतर्द्वंद्व और कर्तव्यपालन के बीच पूरी कहानी में संघर्ष स्पष्ट रूप में दिखाई पड़ता है और अंत में जीत कर्तव्य पालन की हुई है।

8.3.1.2 पात्र एवं चरित्र चित्रण

किसी भी कहानी को आगे बढ़ाने के लिए, उसमे रहस्य को बनाए रखने के लिए और उसे अंत तक ले जाने के लिए कहानी के पात्रों का होना बहुत आवश्यक है। जयशंकर प्रसाद द्वारा लिखित "आकाशदीप" कहानी के दो प्रमुख पात्रों चम्पा और बुधगुप्त ने भी प्रस्तुत कहानी को उत्कृष्ट शिखर तक पहुँचा दिया है। इसलिए इन दोनों पात्रों के चारित्रिक विशेषता को समझना आप विद्यार्थियों के लिए आवश्यक हो जाता है।

चम्पा का चरित्र चित्रण

चम्पा का चरित्र अनोखा है। उसके मन के, अंतरद्वन्द्व ने कहानी को प्रारंभ से लेकर अंत तक प्रभावित किया है। वह अपने माता-पिता की इकलौती संतान थी। यह सही बात है कि बहुत कम आयु में उसने अपने माता-पिता को खो दिया था लेकिन जितना समय उसने अपने

परिवार के साथ बिताया था वे स्मृतियाँ उसके हृदय में जीवंत थी। माँ से ही उसने सीखा था "आकाशदीप" जालना और अपने पिता की मृत्यु को अर्थात हत्या को वह भूल नहीं सकी थी। तभी तो वह कहानी के अंत तक बुधगुप्त के प्यार को स्वीकार नहीं कर सकी। यह उसकी मातृ-पितृ भक्ति को ही दर्शाता है। चम्पा बंधक का जीवन बिता रही थी लेकिन वह क्षत्रिय बालिका थी। इसी कारण से क्षत्रियों की वीरता और उत्साह उसमें स्वाभाविक रूप में था। रात के अँधेरें में जिस प्रकार से उसने जलदस्यु बुधगुप्त और स्वयं को जिस चपलता से मुक्त किया उसकी जितनी प्रशंसा की जाए कम है। चम्पा में लालच की भावना नहीं हैं। उसे वैभव से घृणा थी क्योंकि उसने देखा था वैभव मनुष्य को हृदयहीन बना देता है। उसे साधारण जीवन पसंद था तभी तो वह बुधगुप्त से भी कहती है, "मुझे इस बंदीगृह से मुक्त करो। अब तो बाली, जावा, सुमात्रा का वाणिज्य केवल तुम्हारे ही अधिकार में है महानाविक! परंतु, मुझे उन दिनों की स्मृति सुहावनी लगती है, जब तुम्हारे पास एक ही नाव थी और चम्पा के उपकूल में पुण्य लड़ कर हम लोग सुखी जीवन बिताते थे-इस जल में अगणित बार हमलोगों की तरी आलोकमय प्रभात में तारिकाओं की मधुर ज्योति में-थिरकती थी।"

चम्पा ईमानदार प्रेमिका थी। प्रेम तो उसे भी बुधगुप्त से था। पर उसके हृदय का अंतर्द्वंद्व हमेशा उसे बुधगुप्त से दूर करता रहा। उसने अपने हृदय को बुधगुप्त के सामने खोलकर रख दिया, "विश्वास? कदापि नहीं, जब में अपने हृदय पर विश्वास नहीं कर सकी, उसी ने मुझे धोखा दिया, तब में कैसे कहूँ? मैं तुम्हें घृणा करती हूँ, फिर भी तुम्हारे लिए मर सकती हूँ। अंधेर है जलदस्यु। तुम्हें प्यार करती हूँ।" चम्पा रो पड़ी।

चम्पा के चरित्र को उत्कृष्टता के चरम शिखर पर पहुँचाती है उसकी सहानुभूति और त्याग भावना। वह बुधगुप्त के मार्ग की बाधा नहीं बनती है। वह उसे स्वदेश लौट जाने की प्रेरणा देती है। वह आजीवन भूले-भटके नाविकों को सही मार्ग दिखाने के लिए 'आकाशदीप' भी जलाती रही।

बोध प्रश्न

- चम्पा के चरित्र को कहानी में इतना महत्व क्यों मिला है?
- वे कौन से दो गुण है जिनके कारण से चम्पा का चरित्र कहानी में उत्कृष्ट शिखर तक पहुँच गया है?
- चम्पा में क्षत्रियों के गुण थे यह आपको कैसे समझ आया?

बुधगुप्त का चरित्र चित्रण

बुधगुप्त जयशंकर प्रसाद के द्वारा लिखित 'आकाशदीप' कहानी का एक अकेला प्रमुख पुरुष पात्र है। वैसे तो कहानी को छाप ने बहुत अधिक प्रभावित किया है लेकिन बुधगुप्त की चारित्रिक विशेषताओं को भी अनदेखा नहीं किया जा सकता।

वैसे तो, बुधगुप्त कहानी के प्रारंभ में जलदस्यु का जीवन बिता रहा था लेकिन वह था तो ताम्रलिप्ति का क्षत्रिय। जिस कारण से उसमे वीरता की कोई कमी नहीं थी। चम्पा के द्वारा बंधनमुक्त किए जाने के बाद ही वह अपने रणकौशल की पूरी तैयारी कर लेता है और नाव के नायक से युद्ध करके उसे पराजित कर कुछ ही क्षण में वह नाव का पोताध्ययक्ष बन गया।

क्षत्रियों की पहचान जैसे उनकी रणकौशल से बनती है ठीक वैसे ही उनकी पहचान उनकी क्षमा भाव से भी बनती है। बुधगुप्त में क्षमा भाव पाई गई है। नाव के नायक के साथ भले ही वह युद्ध करता है, लेकिन नायक पराजित होकर जब प्राणभिक्षा माँगता है, तब उसे बंधक न बनाकर उसे अपने साथ रख लेता है।

बुधगुप्त ने बंधक के रूप में, जलदस्यु के रूप में अपने जीवन को बिता रहा था लेकिन उसमें महत्वाकांक्षा की कोई कमी नहीं थी उसे बस एक अवसर की तलाश थी और जैसे ही उसे वह अवसर मिलता है वह उसका सदुपयोग करते हुए न् केवल "चम्पा द्वीप" नामक एक नए द्वीप को बसाता है, बल्कि पाँच साल के भीतर ही वह अपने व्यापार को बाली, जावा, सुमात्रा तक विकसित कर लेता है वह ऐसा कर पाता है क्योंकि अपनी महत्वाकांक्षाओं को पूरा करने के लिए वह परिश्रम करने को भी तैयार था। बुधगुप्त धर्म और आस्था में विश्वास रखनेवाला व्यक्ति नहीं था। वह शस्त्र बल को ही पूर्ण बल माननेवाला व्यक्ति था। वह चम्पा के द्वारा जलाए जानेवाले "आकाशदीप" का भी मज़ाक उड़ाते हुए कहता है,"हँसी आती है। तुम किसको दीप जलाकर पाठ दिखलाना चाहते हो उसको जिसको तुमने भगवान मान लिया है।"

बुधगुप्त भले ही ईश्वर और आस्था में विश्वास नहीं रखता था, लेकिन ऊस के हृदय में देशप्रेम की भावना की कोई कमी नहीं थी। वह चम्पा से भी कहता है, "स्मरण होता है वह दार्शनिकों का देश!वह महिमा की प्रतिमा!मुझे वह स्मृति नित्य आकर्षित करती है।" वह भारत जाकर जीवन को नए सिरे से तैयार करना चाहता था। इसके लिए वह चम्पा का भी साथ चाहता था तभी तो वह चम्पा से कहता भी है कि, "चलोगी चम्पा? पोतवाहिनी पर असंख्य धनराशि लड़कर राजरानी-सी जन्मभूमि के अंक में? आज हमारा परिणय हो, कल ही हमलोग भारत के लिए प्रस्थान करें।"

बुधगुप्त के हृदय में अपनी मातृभूमि के लिए जितना प्रेम था उतना ही प्रेम वह चम्पा से भी करता था। यह प्रेमभाव उसके हृदय में तब से था, जब से उसने चम्पा को देखा था। चाहता तो वह चम्पा को बलपूर्वक भी अपना बना सकता था लेकिन उसका प्रेम चम्पा के लिए पवित्र था तभी तो वह चम्पा से कहता है, "यह चम्पा, तुम कितनी निर्दयी हो! बुधगुप्त को आज्ञा देकर देखो तो, वह क्या नहीं कर सकता। जो तुमहारे लिए नए द्वीप की सृष्टि कर सकता है, नई प्रजा खोज सकता है, नए राज्य बना सकता है, उसकी परीक्षा लेकर देखो तो। कहो, चम्पा! वह कृपाण से अपना हृदय-पिण्ड निकाल अपने हाथों अतल जल में विसर्जन कर दे।" महनवीक-जिसके नाम से बाली, जावा और चम्पा का आकाश गूँजता था, पवन थर्राता था-घुटनों के बल चम्पा के सामने छलछलाई आँखों से बैठ था।" पर चम्पा का प्रेम उसके सामने भाग्य में नहीं था। उसने इस सच्चाई को स्वीकार लिया। चम्पा द्वीप चम्पा को ही सौंपकर वह अपनी यात्रा पर निकाल गया, लेकिन चम्पा की अस्मिता, उसकी इच्छा का सम्मान वह अंत तक करता रहा।

मुझे पूर्ण विश्वास है, आप लोगों को बुधगुप्त का चरित्र भलीभाँति समझ आ गया है।

बोध प्रश्न

- बुधगुप्त कहाँ का क्षत्रिय था?
- बुधगुप्त ने अपना व्यापार किस-किस द्वीप तक फैलाया था?

- बुधगुप्त की आस्था किनमें नहीं थी?
- चम्पा के अलावा बुधगुप्त के हृदय में किसके लिए प्रेम था?

8.3.1.3 देशकाल व वातावरण

कहानी की सफलता एवं सार्थकता के लिए यह आवश्यक है कि उसकी कथावस्तु में देशकाल एवं वातावरण को सजीव रूप में प्रस्तुत किया जाए। वैसे तो "आकाशदीप" कहानी का संबंध किसी ऐतिहासिक घटना के साथ नहीं है लेकिन इसका संबंध समय के उस कालचक्र के साथ है जब अथाह समुंदरों में जलदस्यु पाए जाते थे, वे नाविकों, व्यापारियों, को लूट लेते थे। एक समय ऐसा था जब भारत के व्यापारी जावा, सुमात्रा, बाली आदि द्वीपों के साथ व्यापार किया करते थे।

"बेला से नाव टकराई। चम्पा निर्भीकता से कूद पड़ी। माँझी भी उतरे। बुधगुप्त ने कहा- "जब इसका कोई नाम नहीं है, तो हमलोग इसे चम्पा-द्वीप कहेंगे।"

बस ऐसे ही न जाने कहाँ-कहाँ भारतीयों ने नए द्वीपों की खोज की जिनका उल्लेख भले ही इतिहास की पुस्तकों में न मिलता हो परंतु, देश-विदेश में फैले भारतीय निवासी इसी सत्य का प्रतीक है और 'आकाशदीप' उसी देशकाल एवं वातावरण को हम पाठकों तक पहुँचानेवाली कथा है।

नाविकों के जीवनशैली को प्रस्तुत कहानी में सजीव रूप में दर्शाया गया है,'चम्पा के एक उच्चसौध पर बैठी हुई तरुणी चम्पा दीपक जल रही थी। बड़े यत्न से अभ्रक की मंजूषा में दीप धर कर उसने अपनी सुकुमार उंगलियों से डोरी खींची। वह दीपाधार चड़ने लगा। भोली-भाली आँखें उसे ऊपर चड़ते बड़े हर्ष से देख रही थीं, डोरी धीरे-धीरे खींचीं गई। चम्पा की कामना थी कि उसका 'आकाशदीप' नक्षत्रों से हिलमिल जाए।"

इसी प्रकार से जयशंकर प्रसाद ने 'आकाशदीप' कहानी में नाविकों के तत्कालीन नृत्य-गीत, उनके आचार-विचार को भी सुंदर ढंग से उभारा है। देखिए- 'शैल के एक ऊँचे शिखर पर चंपा के नाविकों को सावधान करने के लिए सुदृद दीप-स्तंभ बनवाया गया था। आज उसी का महोत्सव है। बुधगुप्त स्तम्भ के द्वार पर खड़ा था। शिविका से सहायता देकर चम्पा को उसने उतार। दोनों ने भीतत पदार्पण किया था कि बाँसुरी और ढोल बजने लगे।'

इस प्रकार से हम यह कह सकते हैं कि प्रसाद जी ने प्रस्तुत कहानी के द्वारा बड़ी सफलता से उसे युग को हम तक पहुँचाया है जिसकी आज हम केवल कल्पना ही कर सकते हैं।

बोध प्रश्न

- कहानी की सफलता के लिए क्या आवश्यक है?
- एक समय भारत का व्यापारिक संबंध किस-किस द्वीप के साथ था?

8.3.1.4 संवाद योजना

कहानी को सफल बनाने के लिए उसमें सशक्त संवाद योजना का रहना भी बहुत आवश्यक है। जैसा कि पहले ही यह स्पष्ट हो गया है कि 'आकाशदीप' एक अंतर्द्वंद्व प्रधान प्रेम कहानी है। प्रसाद जी ने अपनी संवाद योजना में कहीं भी इस अंतर्द्वंद्व को टूटने नहीं दिया है।

अंतर्द्वंद्व जहाँ होगा वहाँ प्रश्नोंत्तर का क्रम भी लगातार चलता रहेगा। यह स्वाभाविक है। प्रसाद जी ने इस स्वाभाविक क्रम को कहीं भी टूटने नहीं दिया है देखिए-

"बंदी!"

"क्या है?सोने दो।"

"मुक्त होना चाहते हो"?

"अभी नहीं, निडर खुलने पर, चुप रहो।"

"फिर अवसर न् मिलेगा।"

"बड़ा शीत है, कहीं से कोई कंबल डालकर कोई शीत से मुक्त करता।"

"आंधी की संभावना है। यही अवसर है। आज मेरे बंधन शेतहील है।"

"तो क्या तुम भी बंदी हो?"

"हाँ धीरे बोलो, इस नाव पर केवल दस नाविक और प्रहरी हैं।"

"शस्त्र मिलेगा?"

"मिल जाएगा। पोत से सम्बद्ध रज्जु कट सकोगे?"

"हाँ।"

दो बंदियों के बीच में जिस तरह की वार्तालाप होनी चाहिए ठीक उसी प्रकार की संवाद योजना की व्यवस्था प्रसाद जी ने की है।

चम्पा ने किस प्रकार से अपने जीवन को समय के हाथों छोड़ दिया था इसे प्रसाद जी ने केवल एक पंक्ति की संवाद के द्वारा पाठकों तक पहुँचाया है -"मैं अपने अद्रष्ट को अनिर्दिष्ट ही रहने दूँगी। वह जहाँ ले जाए।"

यह एक प्रेम कहानी है इसलिए जयशंकर प्रसाद जी ने प्रेमाभिव्यक्ति से संबंधित संवादों की सरस प्रस्तुति बड़ी ही सजीवता के साथ की है देखिए-

"वह स्वप्नों की रंगीन संध्या, तम से अपनी आँखें बंद करने लगी थी। दीर्घ निश्वास लेकर महानाविक ने कहा-"इस जीवन की पुण्यतम घड़ी की स्मृति में एक प्रकाश-गृह बनाऊँगा, चम्पा! यहीं उस पहाड़ी पर। संभव है कि मेरे जीवन की धुंधली संध्या उससे आलोकपूर्ण हो जाए!"

'आकाशदीप' कहानी में वर्तमान, अतीत और भविष्य तीनों के मिलन को देखा जा सकता है। इन तीनों कालों कों एक साथ प्रस्तुत करने के लिए जिस प्रकार की संवाद योजना की आवश्यकता पड़ती है उस संवाद योजना का समायोजन प्रसाद जी ने सुंदरता के साथ किया है। डेकिए चम्पा ने अपने अतीत को कैसे याद किया है, "मेरी माता, मिट्टी का दीपक बाँस की पिटारी में भागीरथी के तट पर बांस के साथ ऊँचे टाँग देती थी। उस समय वह प्रार्थना करती- 'भगवान मेरे पाठ-भ्रष्ट नाविक को अंधकार में ठीक पाठ पर ले चलना' और जब मेरे पिता बरसों पर लौटते तो कहते- 'साध्वी! तेरी प्रार्थना से भगवान ने संकटों में रक्षा की है। वह गदगद हो जाती।"

इसी प्रकार से चम्पा का अपने भविष्य को लेकर सोचना और उसे अभिव्यक्त करना- "पहले विचार था कि कभी-कभी इस दीप-स्तंभ पर से आलोक जलाकर अपने पिता की समाधि

की इस जल में अन्वेषण करूँगी। किन्तु देखती हूँ, मुझे भी इसी आग में जलना होगा, जैसे 'आकाशदीप'।

प्रसाद जी के संवाद योजना की एक बहुत बड़ी विशेषता यह भी है कि वे अपनी संवाद योजना के द्वारा अपनी रचनाओं के पात्रों की मनोदशा को भी चित्रित करने में सिद्धहस्त थे। देखिए प्रस्तुत उदाहरण को, 'हत्या-व्यवसायी दस्यु भी उसे देखकर काँप गया। उसके मन में एक संभ्रमपूर्ण श्रद्धा यौवन की पहली लहरों को जगाने लगी। समुद्र-वृक्ष पर विलंबमयी राग-रंजीत संध्या थिरकने लगी। चम्पा के असंयत कुंतल उसकी पीठ पर बिखरे थे। दुरदंत दस्यु ने देखा, अपनी महिमा में अलौकिक एक तरुणी बालिका! वह विस्मय से अपने हृदय को टटोलने लगा। उसे एक नई वस्तु का पता चल। वह थी-कोमलता!'

इस प्रकार से हम यह कह सकते हैं कि संवाद योजना की दृष्टि से 'आकाशदीप' एक सफल कहानी है।

8.3.1.5 उद्देश्य

कोई भी साहित्यकार केवल अपने आनंद के लिए साहित्य रचना नहीं करता। साहित्य समाज का आईना है इसलिए साहित्यकार का समाज के प्रति जवाबदेही बनी रहती है। इसी नैतिक चेतना बोध के कारण से ही साहित्यकार एक उद्देश्य को लेकर ही साहित्य रचना का काम करता है। 'आकाशदीप' कहानी को भी प्रसाद जी ने उद्देश्य को लेकर ही लिखा है। भले ही प्रस्तुत कहानी में भारत की विस्तृत झांकी प्रस्तुत न् की गई हो लेकिन बुधगुप्त के देशप्रेम की भावना के द्वारा प्रसाद जी ने भारत की महिमा का गुणगान कर दिया है।

चम्पा के जीवन के द्वारा जहाँ एक तरफ स्त्री की लाचारी को उन्होनें दर्शाया है वहीं चम्पा की वीरता के द्वारा क्षत्राणी स्त्री का गुणगान किया है। स्त्री के आत्मोत्सर्ग तथा सेवाभाव को भी चम्पा के माध्यम से प्रस्तुत किया है।

चम्पा, बुधगुप्त और चम्पा द्वीप की कहानी केवल उनकी कहानी नहीं है, यह उस युग को भी दर्शाता है जिसकी जानकारी साधारणतया इतिहास की पुस्तकों में नहीं मिलती। एक दिन स्वर्ण-रहस्य के प्रभात में चम्पा ने अपने दीप-स्तम्भ पर से देखा-सामुद्रिक नावों की एक श्रेणी का उपकूल छोड़कर पश्चिम-उत्तर की ओर महाजल-व्याल के समान संतरण कर रही है। उसकी आँखों से आँसू बहने लगे।

यह कितनी ही शताब्दियों पहले की कथा है। इस कहानी का उद्देश्य यह समझाना भी रहा कि मनुष्य को कभी विश्वास, साहस आदि का साथ नहीं छोड़ना चाहिए। दूसरों को उपदेश देने से बेहतर अपने आचरण पर ध्यान रखना चाहिए, क्योंकि दूसरे हमारे आचरण से भी प्रभावित होते ही हैं जैसे- चम्पा के साथ रहते-रहते, उसके आचरण से प्रभावित होते-होते बुधगुप्त न केवल दस्युवृत्ति छोड़ देता है बल्कि अब वह दूसरों की भावनाओं को स्वयं की भावना से अधिक महत्व देना भी सिख गया है तभी तो वह चम्पा से कहता है,"तब मैं अवश्य चल जाऊँगा, चम्पा! यहाँ रहकर मैं अपने हृदय पर अधिकार रख सकूँ-इसमें संदेह है। आह! उन लहरों में मेरा विनाश हो जाए। "महाववक के उच्छवास में विकलता थी। फिर उसने पूछा- "तुम अकेली यहाँ क्या करोगी?"

ये बातें केवल बुधगुप्त के प्रेम को नहीं दर्शाते हैं बल्कि उसके हृदय परिवर्तन का प्रतीक है एन बातें। चम्पा के कर्तव्यबोध के सामने वह अपने प्रेम को तुच्छ पता है और अपने प्रेम की भी बली दे देता है।

8.3.1.6 भाषा-शैली

प्रसाद जी को भाषा की बड़ी अच्छी समझ थी। किस स्थान पर किस भाषा का प्रयोग करना चाहिए इस विषय का ध्यान प्रसाद जी ने अपनी सभी रचनाओं में रखा। तो फिर, 'आकाशदीप' इसका अपवाद कैसे हो सकती थी। 'आकाशदीप' की भाषा शैली भी चमत्कृत कर देनेवाली है।

'आकाशदीप' कहानी की भाषा पर प्रसाद के कवि हृदय का पर्याप्त प्रभाव देखने को मिलता है। देखिए प्रसाद जी ने कैसे प्रकृति का चित्रण किया है, "अनंत जलनिधि में उषा का मधुर आलोक फूट उठा। सुनहली किरणों और लहरों की कोमल सृष्टि मुस्कुराने लगी। सागर शांत था।"

प्रसाद ने हमेशा ही स्त्री सौन्दर्य को मर्यादित ढंग से प्रस्तुत किया है। स्त्री सौन्दर्य को प्रकृति सौंदर्य के साथ जोड़कर देखना तो प्रसाद की अपनी विशेषता रही है। 'आकाशदीप' में भी उन्होनें अपनी इसी विशेषता को चम्पा के माध्यम से प्रदर्शित किया है। "चम्पा की आँखें निस्सीम प्रदेश में निरुदेश्य थीं। किसी आकांक्षा के लाल डोरे न थे। धवल अपंगों में बालकों के सदृश विश्वास था। हत्या-व्यवसायी दस्यु भी उसे देखकर काँप गया। उसके माँ में एक संभ्रमपूर्ण श्रद्धा यौवन की पहली लहरों को जगनी लगी। समुद्र-वृक्ष पर विलंबमयी राग-रंजीत संध्या थिरकने लगी। चम्पा के असंयत कुंतल उसकी पीठ पर बिखरे थे।"

प्रसाद जी की भाषा में त्वरितता का गुण स्वाभाविक रूप में पाई जाती है। तभी तो वे अपनी रचनाओं में वीर रस को भी सहजता के साथ अभिव्यक्त कर पाते थे। 'आकाशदीप' में भी उनकी भाषा शैली की इस विशेषता को हम देख सकते हैं, 'भक्षण घात-प्रतिघात आरंभ हुआ। दोनों कुशल,दोनों दोनों त्वरित गतिवाले थे। बड़ी निपुणता से बुधगुप्त ने अपना कृपाण दाँतों से पकड़कर अपने दोनों हाथ स्वतंत्र कर लिए। चम्पा भय और विस्मय से देखने लगी। नाविक प्रसन्न हो गए। परंतु बुधगुप्त ने लाघव से नायक का कृपाणवाला हाथ पकड़ लिया और विराट हुंकार से दूसरा हाथ कटि में डाल, उसे गिरा दिया। दूसरे ही क्षण प्रभात की किरणों में बुधगुप्त का विजयी कृपाण उसके हाथों में चमक उठा।'

तो देखा, आप लोगों ने कैसे पलक झपकते प्रसाद जी ने एक भयंकर युद्ध का वर्णन कर दिया। इन विशेषताओं के कारण से ही 'आकाशदीप' कहानी को हम संवाद योजना की दृष्टि से एक सफल कहानी कह सकते हैं।

8.3.1.7 कहानी के शीर्षक का औचित्य

जयशंकर प्रसाद जी के द्वारा लिखित 'आकाशदीप' अत्यंत संक्षिप्त और सार्थक कहानी है। 'आकाशदीप' केवल एक दीपक नहीं यह एक भावना है, इसके साथ मानव मन की आस्थाएं जुड़ी हुई है। 'प्राचीन काल' में जब नाविक घर छोड़कर वाणिज्य के लिए अगाध समुद्र में निकाल पड़ते थे तब उनके घर की स्त्रियाँ उनकी मंगलकामना हेतु 'आकाशदीप' जलाकर प्रार्थना किया

करती थी। उनके मन में यह विश्वास भी था कि अगर अंधेरे में, तूफान में, अथाह समुद्र में उनका नाविक रास्ता भूल जाएगा तो उस समय उनके द्वारा जलाए गए दीप के प्रकाश के सहारे वे फिर से ठीक रास्ते वापस आ जाएँगे। इस आस्था के सहारे स्त्रियाँ अपने नाविक की प्रतीक्षा करते हुए सदियों गुज़ार दिया करती थी। इस आस्था को वह अपने भावी पीढ़ी में भी संप्रेषित किया करती थी। जैसा कि, चम्पा ने अपनी माँ से ही तो सीखा था 'आकाशदीप' जलाना। कहानी भले ही प्रेम कहानी हो लेकिन यहाँ प्रेम के व्यक्तिगत स्वरूप पर सामूहिक लोकमंगल की भावना कहानी के प्रारंभ से लेकर अंत तक हावी रही है। चम्पा और बुधगुप्त दोनों एक दूसरे से प्रेम करते थे। बुधगुप्त ने अपने प्रेम की बली चढ़ा दी चम्पा के कर्तव्य भावना को सम्मान देने के लिए तो चम्पा चाहकर भी पुत्री धर्म से पीछे न हट सकी वह पिता के हत्या के प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष दोषी को अपना जीवन साथी न बना सकी। दोनों का हृदय ठीक वैसे जलता रहा जैसे 'आकाश' की ओर देखकर नाविक की प्रतीक्षा में 'आकाशदीप' का हृदय जलता है।

कहानी के अंत में जब चम्पा भूले भटके नाविकों को रास्ता दिखाने के लिए 'आकाशदीप' जलाते रहने को ही अपना कर्म मन लेती है तब तो यह शीर्षक और भी अधिक सार्थक बन जाता है। नृशंसता पर कोमलता, घृणा पर प्रेम, व्यक्तिगत स्वार्थ पर कर्तव्य की विजय का प्रतीक है प्रसाद जी के द्वारा लिखित कहानी 'आकाशदीप'।

हम यह कह सकते हैं कि कहानी का शीर्षक उपयुक्त और सफल है।

बोध प्रश्न

- स्त्रियाँ किसलिए 'आकाशदीप' जलाती थी?
- चम्पा ने किसे देखकर 'आकाशदीप' जलाना सीखा?

8.4 पाठ सार

विद्यार्थियो! प्रस्तुत इकाई का अध्ययन करते हुए आपलोगों के साथ-साथ मैं भी पाठ सार में पहुँच गई हूँ।

प्रस्तुत इकाई के प्रारंभ में ही आपने हिन्दी कहानी की विकासयात्रा की जानकारी को प्राप्त किया। आपने पढ़ा कि कहानी पहले मौखिक रूप में ही बोली और सुनी जाती थी। धीरे-धीरे कहानी लिखी जाने लगी। वैसे तो कहानी को प्रेमचंद ने यथार्थवादी आदर्शवाद के साथ जोड़कर नई दिशा प्रदान की थी लेकिन प्रसाद जी ने हिन्दी कहानी को प्राचीन भारतीय सभ्यता और संस्कृति के साथ जोड़कर उसको संपूर्ण विश्व के साथ जोड़ दिया। इसी ज्ञान को प्राप्त करने के साथ ही साथ आपने जयशंकर प्रसाद की साहित्यिक यात्रा की जानकारी प्राप्त की।

मूल पाठ में आपलोगों ने 'आकाशदीप' कहानी का अध्ययन किया। यह अंतर्द्वंद्व प्रधान एक लंबी प्रेम कहानी है। इस कहानी के दो प्रमुख पत्र हैं-चम्पा और बुधगुप्त। कहानी का प्रारंभ वार्तालाप से हुआ है। जब चम्पा और बुधगुप्त दोनों बंदी थे। चम्पा की वीरता,चपलता और उत्साह के कारण से न केवल चम्पा बल्कि बुधगुप्त भी स्वतंत्र हो सका। उनलोगों की नाव एक नई, निर्जन द्वीप से टकराई जिसका नाम बुधगुप्त ने 'चम्पा द्वीप' रख दिया। यहाँ से उनकी एक नई जीवन यात्रा शुरू हुई। पाँच साल में बुधगुप्त ने अपने व्यापार को जावा, सुमात्रा, बाली तक

विस्तृत कर लिया। वह चम्पा के साथ विवाह करके अपने व्यापार एवं जीवन को और आगे बढ़ाना चाहता था लेकिन चम्पा एक क्षण भी इस बात को नहीं भूल पाती थी कि उसकी पिता की हत्या में कहीं न कहीं बुधगुप्त का भी दोष था। ऐसा नहीं कि उसे बुधगुप्त से प्रेम नहीं था लेकिन उसके प्रेम से अधिक बलवान था उसके हृदय का अंतर्द्वंद्व। जीवन तो अंतर्द्वंद्व क सहारे नहीं चल सकता निर्णय तो लेना ही पढ़ता है और एक दिन चम्पा ने निर्णय ले ही लिया। उसने साफ शब्दों में बुधगुप्त को कह दिया कि वह चम्पा द्वीप में रहकर ही वहाँ के निवासियों की सेवा करेगी और भटके हुए निवासियों को मार्ग दिखने के लिए जीवनपर्यंत 'आकाशदीप' जलाती रहेगी। अब बुधगुप्त करता भी तो क्या? उसने बल प्रयोग करके कभी चम्पा को प्राप्त करने के बारे में सोचा नहीं था इसलिए वह चम्पा की बात को सम्मान प्रदान करते हुए वहाँ से अपनी यात्रा के लिए निकल पड़ा।

यहीं पर आकर कहानी समाप्त हो जाती है। 7 खंडों में विभाजित प्रस्तुत कहानी में जयशंकर प्रसाद ने अपनी संवाद योजना, भाषा शैली का उत्कृष्ट रूप प्रस्तुत किया है। प्रसाद जी ने अपनी संवाद योजना के द्वारा अपने पात्रों के मनोभावनाओं को व्यक्त किया है, वार्तालाप और प्रश्नोत्तरों के माध्यम से उन्होनें कहीं भी कहानी के मूलतत्व 'अंतर्द्वंद्व' को टूटने नहीं दिया। 'आकाशदीप' कहानी की भाषा में गद्यात्मकता की अपेक्षा पद्यात्मकता का प्रभाव अधिक दिखाई पड़ता है। प्रसाद जी ने प्रस्तुत कहानी में प्रकृति का अनुपम सौंदर्य उकेरा ही है लेकिन यहाँ विशेष बात यह रही कि उन्होंने प्रस्तुत कहानी में समुद्र की सुंदरता के विभिन्न रूपों को दर्शाया है। स्त्री सौन्दर्य के मर्यादित रूप वर्णन को भी 'आकाशदीप' कहानी में हम देख सकते हैं। कहानी अपने उद्देश्य कथन की दृष्टि से भी सफल है। चम्पा के जीवन के द्वारा जहाँ एक तरफ स्त्री जीवन की लाचारी को दिखाया गया वहीं चम्पा के माध्यम से यह बात भी सामने आई है कि स्त्री क्षत्राणी रूप में खड़ी हो जाए तो उससे अधिक शक्तिशाली और कोई नहीं हो सकता। प्रस्तुत कहानी के द्वारा यह बात भी सामने आई है कि मनुष्य को कभी विश्वास, साहस आदि का साथ नहीं छोड़ना चाहिए। मनुष्य को अपने आचरण को परिष्कृत रखने का भी प्रयास सदैव करना चाहिए क्योंकि प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में हमारे चरित्र से समाज के दूसरे लोग प्रभावित होते हैं। जैसे कि बुधगुप्त के साथ हुआ चम्पा के साथ रहते-रहते वह उसके सद्गुणों से इतना अधिक प्रभावित हुआ कि उसने न केवल दस्युवृत्ति छोड़ दी बल्कि एक सफल व्यापारी बना कहानी के अंत तक वह व्यक्तिगत सुख को त्याग देनेवाला एक सफल प्रेमी भी बना। प्रस्तुत कहानी में भारत के सौन्दर्य की विस्तृत झाँकी को भले ही न दर्शाया गया हो लेकिन बुधगुप्त के द्वारा कही गई यह बात, "स्मरण होता है वह दार्शनिकों का देश! वह महिमा की प्रतिमा! मुझे वह स्मृति नित्य आकर्षित करती है।" भारत की महिमा को वर्णित करने में सक्षम है।

कुल मिलाकर हम ख सकते हैं कि प्रसाद जी द्वारा लिखित 'आकाशदीप' एक उत्कृष्ट कहानी है।

8.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं -

1. 'आकाशदीप' कहानी का संबंध किसी ऐतिहासिक घटना के साथ नहीं है, लेकिन इसकी पृष्ठभूमि ऐतिहासिक है।
2. इस कहानी का संबंध उस समय से है जब अथाह समुद्रों में जलदस्यु पाए जाते थे जो नाविकों और व्यापारियों को लूटते थे। उन दिनों भारत के व्यापारी जावा, सुमात्रा, बाली आदि द्वीपों के साथ व्यापार किया करते थे।
3. प्रसाद जी ने 'आकाशदीप' में स्त्री मन के अंतर्द्वंद्व को उभारते हुए प्रतिशोध पर प्रेम की विजय दिखाई है। इस लिहाज से यह एक अद्‌भुत प्रेम-कथा है।
4. 'आकाशदीप' में भारत के सौन्दर्य की विस्तृत झाँकी भले ही न मिलती हो लेकिन उसकी महिमा की ओर संकेत अवश्य किया गया है।

8.6 शब्द संपदा

1. अंतर्द्वंद्व = स्वयं की विचार के साथ ही स्वयं का युद्ध
2. आकांक्षा = इच्छा
3. कुंतल = बाल
4. जलदस्यु = जल के रास्ते लुटनेवाले लूटेरे
5. ज्योति = प्रकाश
6. दार्शनिक = महान विचारक
7. धवल = सफेद
8. निद्रा = नींद
9. निस्सीम = सीमाहीन
10. पवन = हवा
11. पुलकित = आनंद
12. प्रभात = सबेरा
13. मर्मस्पर्शी = हृदय को छू लेनेवाली
14. वाणिज्य = व्यापार
15. विभवों = संपत्ति
16. शिथिल = ढीला
17. संध्या = शाम
18. सहसा = अचानक
19. स्मरण = याद
20. हर्षातिरेक = अत्यधिक प्रसन्नता

8.7 परीक्षा हेतु प्रश्न

खंड (अ)

8.7.1 सही विकल्प चुनिए –

1. हिन्दी गद्य साहित्य के इतिहास में 'जमींदार का दृष्टांत' नामक कहानी के लेखक कौन हैं?

A. जयशंकर प्रसाद **B. रेवरेंड जे. न्यूटन** C. प्रेमचंद D. मणिभद्र

2. जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित 'आकाशदीप' उनके कौन-से कहानी संग्रह का हिस्सा है?

A. सातवाँ B. प्रथम C. पाँचवाँ **D. तृतीय**

3. चम्पा किस नगर की रहने वाली एक क्षत्रिय बालिका थी?

A. बाली B. सुमात्रा C. ताम्रलिप्ति **D. चम्पा नगरी**

4. कहानी के नायक बुधगुप्त का मुख्य व्यवसाय कहानी के प्रारंभ में क्या था?

A. जलदस्यु B. व्यापारी C. नाविक D. सैनिक

5. चम्पा ने मणिभद्र के प्रस्ताव को क्यों अस्वीकार कर दिया था, जिसके कारण उसे बंदी बनाया गया?

A. वह स्वदेश लौटना चाहती थी

B. वह बुधगुप्त से प्रेम करती थी

C. मणिभद्र का प्रस्ताव घृणित था

D. वह अपने पिता की मृत्यु का बदला लेना चाहती थी

6. बुधगुप्त और चम्पा जिस नए निर्जन द्वीप पर पहुँचे, उसका नाम 'चम्पा द्वीप' किसने रखा?

A. नाव के नायक ने **B. बुधगुप्त ने** C. चम्पा ने D. मणिभद्र ने

7. कहानी के अनुसार, चम्पा के मन में किस बात को लेकर मुख्य 'अंतर्द्वंद्व' बना रहा?

A. धन-वैभव और सादगी के बीच B. स्वदेश लौटने और द्वीप पर रुकने के बीच

C. बुधगुप्त से घृणा और प्रेम के बीच D. ईश्वर और शस्त्र-बल के बीच

8. बुधगुप्त के चरित्र की वह कौन सी विशेषता है जो उसके 'क्षमा भाव' को दर्शाती है?

A. दस्युवृत्ति छोड़ देना **B. पराजित नायक को प्राणदान देना**

C. चम्पा को स्वतंत्र करना D. नया राज्य बसाना

9. चम्पा की माता द्वारा 'आकाशदीप' जलाने के पीछे मुख्य धार्मिक या भावनात्मक विश्वास क्या था?

A. समुद्र के देवताओं को खुश करना

B. भटके हुए नाविक को अंधकार में सही रास्ता दिखाना

C. दुश्मनों को डराना

D. अपनी सुंदरता का प्रदर्शन करना

10. कहानी के अंत में बुधगुप्त के चले जाने के बाद चम्पा का जीवन किस सेवा के लिए समर्पित रहा?

A. नया व्यापार शुरू करने के लिए B. बुधगुप्त की प्रतीक्षा में रोने के लिए

C. आजीवन दीप-स्तम्भ में आलोक जलाने के लिए D. ताम्रलिप्ति वापस जाने के लिए

खंड (ब)

8.7.2 लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. 'आकाशदीप' कहानी के संवाद योजना पर प्रकाश डालियें।
2. 'आकाशदीप' कहानी के उद्देश्य कथन पर प्रकाश डालिए।
3. 'आकाशदीप' कहानी की भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।

खंड (स)

8.7.3 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. 'आकाशदीप' कहानी का सारांश संक्षेप में लिखिए।
2. बुधगुप्त और चम्पा के चरित्र पर प्रकाश डालिए।
3. कहानी 'आकाशदीप' में वर्णित देशकाल पर प्रकाश डालिए।

8.8 पठनीय पुस्तकें

1. प्रतिनधि कहानियाँ : जयशंकर प्रसाद
2. जयशंकर प्रसाद - एक विशेष अध्ययन : गंगासहाय 'प्रेमी' एवं जगदीश शर्मा

इकाई 9 : यशपाल : एक परिचय

रूपरेखा

9.1 प्रस्तावना
9.2 उद्देश्य
9.3 मूलपाठ : यशपाल : एक परिचय
9.3.1 यशपाल का संक्षिप्त जीवन परिचय
9.3.2 यशपाल की रचना यात्रा
9.3.3 यशपाल की विचारधारा
9.3.4 यशपाल की कहानियों का कथ्य
9.3.5 यशपाल की कहानियों की भाषा-शैली
9.3.6 हिन्दी कथा साहित्य में यशपाल का महत्व और स्थान
9.4 पाठ सार
9.5 पाठ की उपलब्धियाँ
9.6 शब्द संपदा
9.7 परीक्षार्थ प्रश्न
9.8 पठनीय पुस्तकें

9.1 प्रस्तावना

मार्क्सवादी जीवन-दर्शन से प्रभावित प्रगतिशील रचनाकारों में यशपाल सर्वाधिक सशक्त है। उनके विचार बहुत ही उच्च कोटी के और सुलझे हुए हैं तथा वे उन्हें बहुत ही प्रभावशाली ढंग से व्यक्त भी करते हैं। उनके अनुसार आज मानवता का रूप बदल गया है। आदमी, आदमी से घृणा करता है। शक्तिशाली कमज़ोर को चुसता है। सभी साधन जैसे न्याय, सरकार, पुलिस तथा रक्षा सभी अमीरों के लिए ही बनाए गए हैं। यशपाल प्रगतिवाद के समर्थक माने जाते हैं। उन्होंने प्रगतिवाद के संबंध में बताया कि साहित्य में समाज के उन लोगों की अनुभूतियाँ मुख्य रूप से व्यक्त होती है जो शक्तिशाली है। आज निम्न वर्ग की अनुभूतियाँ भी साहित्य में व्यक्त होने लगी है क्योंकि आज यह वर्ग भी मुख्य धारा में दिखाई देने लगा है।

यशपाल जी के अध्ययन और अनुभव ने उन्हें बहुत महत्वपूर्ण बना दिया है। उन्होंने अपने विचारों को बहुत ही इमानदारी के साथ अपनी कृतियों में दि खाने का प्रयास किया है। यशपाल जी की कहानी कला पर प्रकाश डालें तो पाते हैं कि इनकी कहानियों में तीन बाते मुख्य हैं - घटना, रोचकता और उद्देश्य। लेखक एक निश्चित उद्देश्य के ध्यान में रखकर घटनाओं का ताना-बाना बुनता है। इनकी कहानियों में मनोविश्लेषण, रमणीयता, आधुनिकशैली एवं शिल्प की प्रौढ़ता पाई जाती है।

9.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई के अध्ययन के बाद आप-

- साहित्यकार यशपाल के व्यक्तित्व के परिचित हो सकेंगे।
- उनकी रचनाओं से परिचित होंगे।
- यशपाल की साहित्यिक विचारधाराओं से परिचित होंगे।
- इनकी कहानियों के कथ्य को जान सकेंगे।
- कहानियों की भाषा-शैली से परिचित होंगे।
- हिन्दी साहित्य में यशपाल के महत्व को जान सकेंगे।

9.3 मूल पाठ : यशपाल : एक परिचय

9.3.1 यशपाल का संक्षिप्त जीवन परिचय

मार्क्सवादी जीवन-दर्शन से प्रभावित प्रगतिशील रचनाकारों में यशपाल सर्वाधिक सशक्त है। उनके विचार बहुत ही उच्च कोटी के तथा सुलझे हुए हैं। यशपाल का जन्म 3 दिसंबर, 1903 को पंजाब में किरोज़पुर छावनी में एक साधारण परिवार में हुआ था। उनकी माता श्रीमती प्रेमदेवी अनाथालय के एक स्कूल में अध्यापिका थी। उनके पिता का अपने परिवार के प्रति उतना लगाव नहीं था। इसलिए यशपाल की माता अपने दोनों बेटों की शिक्षा-दीक्षा के बारे में बहुत अधिक सजग रहती थी।

यशपाल के विकास में गरीबी के प्रति तीखी घृणा तथा आर्य समाज और स्वाधीनता आंदोलन के प्रति उनका आकर्षण उन्हें व्यक्तित्व के विकास में बहुत सहायक सिद्ध हुए। यशपाल के रचनात्मक विकास में उनके बचपन में भोगी गई गरीबी की अहम भूमिका थी। उनका गद्य साहित्य बहुत ही विशाल है। उपन्यास, कहानी, निबंध, यात्रावृत्त, संस्मरण, जीवनी आदि अनेक गद्य विधाओं को उन्होंने समृद्ध किया है।

यशपाल के लेखन की प्रमुख विधा उपन्यास है, लेकिन अपने लेखन की शुरूआत उन्होंने कहानियों से की है। यशपाल के हर लेखन में मनुष्य समुदाय के हितों की बात की गई है। उनकी रचनाओं में समाज के शोषित, उत्पीड़ित तथा सामाजिक बदलाव के लिए संघर्ष करते हुए व्यक्तियों का वर्णन किया गया है। उन्होंने अपनी कृति के माध्यम से समाज में व्याप्त धार्मिक ढोंग और समाज की झूठी नैतिकताओं पर भी प्रहार किया है। यशपाल जी को अपनी कृतियों पर बहुत सारे पुरस्कारों से नवाज़ा गया है। 'मेरी तेरी उसकी बात' नामक उपन्यास पर उन्हें साहित्य अकादमी पुरस्कार प्रदान किया गया था। उन्होंने बहुत सारी रचनाओं का देसी-विदेसी भाषाओं में अनुवाद भी किया है। यशपाल के अब तक 16 कहानी-संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। इनके मुख्य कहानी संग्रह हैं - पिंजड़े की उड़ान, फूलो का कुर्ता, भस्माहत चिंगारी, धर्मयुद्ध, सच बोलने की भूल, धर्मयुद्ध, तर्क का तूफान, उत्तमी की माँ आदि।

यशपाल को सर्वाधिक ख्याति उपन्यासों के क्षेत्र में मिली है। दादा कामरेड, देशद्रोही, दिव्या, पार्टी कामरेड, मनुष्य के रूप, अमिता, झुठा सच) दो भाग (आदि उपन्यास आपकी रचना शक्ति के प्रतीक बनकर प्रसिद्ध हो चुके हैं। आपके अनूदित उपन्यासों की संख्या भी बहुत

अधिक है, अनूदित उपन्यासों में पक्काकदम, जुलैखा, फासला चलनी में अमृत आदि मुख्य है। यशपाल एक निर्भीक स्पष्टवादी और राष्ट्रवादी लेखक थे। वे अंग्रेज़ों के विरुद्ध आंदोलन करते हुए बहुत बार जेल भी गए।

यशपाल ने धर्म की रूढ़िवादिता, अंधविश्वास सामाजिक कुरीतियों का विरोध किया है, अतः उनका समग्र लेखन आम इंसान से जुड़ा हुआ है।

बोध प्रश्न

- यशपाल का समग्र लेखन किस्से जुड़ा हुआ है?
- यशपाल किस प्रकार के साहित्यकार माने जाते हैं?

9.3.2 यशपाल की रचना यात्रा

प्रेमचंदोत्तर साहित्यकारों में अपनी विशिष्ट विचारधारा और सर्जनात्मक शक्ति के कारण यशपाल ने हिन्दी साहित्य में अपना एक स्वतंत्र व्यक्तित्व बना लिया था। प्रारंभ में उनका जीवन क्रांतिकारी दल से संबंध था, अतः इसी कारण मार्क्सवादी विचाधारा का उन पर गहरा प्रभाव था। यशपाल एक समर्थ लेखक माने जाते हैं।

यशपाल ने गद्य की सभी विधाओं पर अपनी लेखनी चलाई है, किंतु उपन्यास के क्षेत्र में इनका विशिष्ट स्थान है। इनके लेखन की प्रमुख विधा उपन्यास है, किंतु अपने लेखन की शुरूआत उन्होंने कहानियों से की है। यशपाल ने नई कहानी के दौर में स्त्री के देह और मन के कृत्रिम विभाजन के विरुद्ध एक संपूर्ण स्त्री की छवि पर ज़ोर दिया है।

यशपाल की कहानीयाँ आज के दौर की कहानियों की आधारशिला मानी जाती है। यशपाल एक समर्थ लेखक थे उन्होंने 1940 से 1976 तक की अवधी में 16 कहानी संग्रह प्रकाशित हुए हैं। 17 वाँ संग्रह मरणोपरांत प्रकाश में आया। यशपाल ने 8 बड़े तथा 3 लघु उपन्यास, तीन एकांकी, 10 निबंध संग्रह तीन संस्मरण पुस्तकें लिखी हैं। सिंहावलोकन नाम से आपने अपनी आत्मकथा लिखी है। आपने 'विप्लव' नामक पत्रिका का संपादन भी किया है। इन्होंने अनुवाद के क्षेत्र में भी अपनी लेखनी चलाई है।

कहानीकार के रूप में यशपाल

हिन्दी जगत में यशपाल को पहले पहल एक कहानीकार के रूप में जाना जाता था। इनके लगभग सोलह कहानी संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। उन्होंने मुख्यतः अपनी कहानियों में मध्यवर्ग की विसंगतियों, कमज़ोरियों, विरोधाभासों, रूढ़ियों आदि को प्रदर्शित किया है। इनके मुख्य कहानी संग्रह हैं - तर्क का तुफान, भस्माहत, धर्मयुद्ध ज्ञानदास, फूलो का कुर्ता, पिंजरे की उड़ान, तुमने क्यों कहा मै सुंदर हूँ, चिंगारी और उत्तमी की माँ आदि।

बोध प्रश्न

- यशपाल के कहानियों में क्या पाया जाता है?
- यशपाल के कहानी संग्रहों का नाम बताइए।

उपन्यासकार के रूप में यशपाल

यशपाल एक मार्क्सवादी साहित्यकार माने जाते हैं। और उनकी यह विचारधारा उनके साहित्य में प्रदर्शित भी होती है। उपन्यासों के माध्यम से यशपाल अपने दृष्टिकोण को और भी

अच्छी तरह से दिखाने का प्रयास किया है। उनका पहला उपन्यास दादा कामरेड क्रांतिकारी जीवन का चित्रण करते हुए मज़दूरों के संगठन को राष्ट्र के उद्धार के लिए अधिक उपर्युक्त माना है। इनके अन्य उपन्यास हैं - देशद्रोही, पार्टी कामरेड, अमिता, मनुष्य के रूप, झूठा-सच, बारह घंटे, दिव्या, मेरी तेरी उसकी बात आदि।

यहाँ यशपाल के दो प्रमुख उपन्यासों 'दादा कामरेड' तथा 'झूठा सच' के बारे में जानना जरूरी है। 1941 में प्रकाशित 'दादा कामरेड' में लेखक ने स्थापित मान्यताओं और नई उभरती मूल्य चेतना के द्वंद्व को चित्रित किया है। इसमें पात्रों के माध्यम से जनवादी चेतना को विशेष रूप से उभारा गया है। डॉ. रामदरश मिश्र के शब्दों में -

> "लेखक ने जनवादी चेतना को मार्क्सवादी दृष्टिकोण से प्रस्तुत करना चाहा है। देश पराधीन था, पराधीनता न केवल विदेशी शासनजन्य थी बल्कि स्वदेशी-विदेशी जीवन पद्धति से भी पैदा हुई थी। उपन्यासकार की दृष्टि इसे बारीकी से पहचानती है। तभी वह एक ओर विदेशी शासन से लड़ने वाली शक्तियों का समर्थन करता है, दूसरी ओर वह उन शक्तियों के अंतर्विरोधों को समझकर शक्ति को सही हाथों में सौंपना चाहता है। (हिन्दी उपन्यास : एक अंतर्यात्रा, पृ.136)

1958 में प्रकाशित 'झूठा सच' (दो खंड) यशपाल का अत्यंत चर्चित महाकाय उपन्यास है। इसमें भारत विभाजन की पूर्व पीठिका, विभाजन की विभीषिका और उसके उत्तर प्रभाव का बहुत विषाद और प्रभावशाली चित्र प्रस्तुत किया गया है। इसे 'युद्ध और शांति', 'रंगभूमि' तथा 'गोदान' की परंपरा का महाकाव्यात्मक उपन्यास कहा गया है। 'झूठा सच' में -

> "लेखक ने बंटवारे के समय और उसके पूर्व-पश्चात की सांप्रदायिक विभीषिका में जलते हुए भारत और पाकिस्तान की जन-यातना का बड़ा मार्मिक चित्रण किया है। देखने में लगता है कि दनों देशों की जनता स्वभावतः अपने सांप्रदायिक विद्वेष की आग में धधक उठी थी। किंतु यह होकर भी झूठ था। सच थी जनता को बर्गालाकर अपने को तृप्त करने वाली राजनीतिक नेताओं की अदम्य अमानवीय प्यास। (वही, पृ.143)

बोध प्रश्न

- यशपाल की रचनाएँ 'दादा कामरेड' और 'झूठा सच' किस-किस वर्ष में प्रकाशित हुईं?
- 'दादा कामरेड' में यशपाल ने क्या स्थापित किया था?
- 'झूठा सच' का कथा सूत्र किस पर आधारित है?
- यशपाल के पहला उपन्यास का नाम बताइए।

निबंधकार के रूप में यशपाल

यशपाल एक सफल कहानीकार, उपन्यासकार होने के साथ-साथ कुशल निबंधकार भी माने जाते हैं। इनके निबंधों की मूल-विशेषता यह है कि तर्क, न्याय समाजवाद के प्रति आस्था भौतिकवाद का समर्थन उसमें दिखाई देता है। यह एक उच्च कोटि के निबंधकार माने जाते हैं। इनके निबंधों में ऐतिहासिकता के साथ-साथ समकालीनता भी पाई जाती है। इनके मुख्य निबंध

निम्नलिखित चक्कर क्लब, बात बात में बात, न्याय का संघर्ष, जग का गुजरा और मैं क्यों लिखता हूँ आदि।

बोध प्रश्न

- यशपाल के निबंधों की मूल विशेषता क्या है?

आत्मकथा साहित्य

यशपाल जी ने अपनी आत्मकथा बहुत ही विस्तार से सिंहावलोकन नाम से लिखी है। यह तीन भाग में है। इसमें यशपाल जी ने अपनी बाल्यावस्था, दाम्पत्य जीवन, पारिवारिक जीवन, जेल का जीवन तथा किस प्रकार वे क्रान्तिकारी बने इन सब का वर्णन बहुत ही विस्तार से किया है।

यात्रा साहित्य

यशपाल जी का यात्रा साहित्य बहुत ही उद्देश्यपूर्ण माना जाता है। इन्होंने कई जगहों की यात्रा की। इन यात्राओं का विवरण यशपाल ने अपने यात्रा साहित्य लोहे की दीवार के दोनों ओर, शहबीति, बीबीजी कहती हैं, मेरा चेहरा रोबीला है आदि में बहुत ही सुंदर ढ़ंग से किया है। लोहे की दीवार के दोनों ओर में इन्होंने यूरोपीय पूँजीवादी देशों तथा सोवियत रूस की जीवन-पद्धति का अध्ययन बहुत ही गंभीरता से किया है।

अतः यशपाल के साहित्य का अध्ययन करने के बाद हम कह सकते हैं कि यह एक यथार्थनिष्ठ साहित्यकार है। इसलिए उन्होंने अन्याय, अत्याचार शोषण और गरीबी का खुलकर अपने साहित्य में विरोध किया है। इनका कथा साहित्य बहुत ही विशाल है।

9.3.3 यशपाल की विचारधारा

यशपाल हिन्दी के प्रथम मार्क्सवादी साहित्यकार माने जाते हैं। उनकी रचनाओं का मूल स्वर मार्क्सवाद पर आधारित है। इन्होंने मार्क्सवाद का गहन अध्ययन किया और उससे बहुत अधिक प्रभावित भी हुए तथा अपने संपूर्ण साहित्य में उसे उतारने का प्रयत्न भी किया। उनकी रचनाओं का मूल स्वर मार्क्सवादी है। वे कहते हैं कि 'मैं सर्वसाधारण जनता को शोषित और अन्याय पीड़ित मानता हूँ। इस अन्याय से जनता की मुक्ति का उपाय कम्यूनिज्म की द्वन्द्वात्मक भौतिकवादी विचारधारा को मानता हूँ।'

यशपाल ने अपने जीवन में ही देश की परतंत्रता और इससे मुक्त होने के संघर्षों को निकट से देखा, परखा तथा उसमें सक्रिय रूप से भागीदार भी बने तथा जेल की यात्रा भी की। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद रियासतों जमींदारों और सामन्ती-व्यवस्था के अस्त-व्यस्त होने की स्थिति उत्पन्न हो गयी थी। तथा इसका प्रभाव शैक्षणिक, आर्थिक, सामाजिक और पारिवारिक सभी व्यवस्थाओं पर पड़ा था। अतः इस समय परिवर्तन का दौर समाज के प्रत्येक क्षेत्र में बहुत तेजी से हो रहा था।

यशपाल के साहित्य में पूँजीवादी-सामन्तवादी समाज व्यवस्था की परंपरागत नैतिक मान्यताओं के प्रति विद्रोह का भाव है। उनके सभी उपन्यासों में प्रतिक्रियावादी और प्रगतिशील पात्रों के संघर्ष दिखाई देता है। यह भी देखा जाता है कि समाज में हमेशा दो वर्ग रहता है। शोषक और शोषित। शोषक वर्ग के अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध शोषित वर्ग सदा संघर्ष

करता है और शोषक वर्ग उतनी ही कठोरता से उसका दमन करता है। मार्क्सवाद यथार्थ पर आधारित है और यही यथार्थ यशपाल को बहुत ज्यादा आकर्षित भी करता था। इसी कारण बुर्जुआ संस्कृति और पिछड़ी सभ्यता उन्हें आकृष्ट नहीं कर सकी। वे निर्धन के अधिकार के लिए हमेशा अग्रसर रहे और यही कारण है कि उन्होंने अपने लक्ष्यों के वैज्ञानिक रूप को मार्क्सवाद में देखकर अंगीकार किया है। उन्होंने अपनी पुस्तक 'देखा-सोचा समझा' में लिखा है -"मैं कम्युनिज्म को सर्वसाधारण जनता की मुक्ति का साधन वैज्ञानिक विचारधारा समझता हूँ। अपनी संपूर्ण शक्ति को उस वाद के प्रति 'देय' स्वीकार करने में मुझे कोई संकोच नहीं है।"

इस प्रकार देखा जाता है कि यशपाल की विचारधारा प्रमुखतः मार्क्सवाद से बहुत अधिक प्रभावित है। हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि यशपाल भौतिकवादी है। स्त्री के प्रति उनके विचार को हम देखें तो पाते हैं कि वे स्त्री को प्रत्येक क्षेत्र में पूर्ण रूप से पुरुषों की तरह ही स्वतंत्र देखना चाहते हैं। तथा मानव-जीवन के विकास के लिए यशपाल मार्क्सवादी विचार पद्धति पर आधारित शासन व्यवस्था के समर्थक हैं। धर्म, इश्वर, नीति और अध्यात्म में उनका विश्वास नहीं है तथा कला के प्रति उनका दृष्टिकोण समाजवादी है।

अंततः यशपाल की विचारधारा के बारे में विश्वनाथ त्रिपाठी का यह कथन द्रष्टव्य है कि-

> "यशपाल कट्टर कम्युनिस्ट लेखक थे। वे साहित्य को सामाजिक परिवर्तन के लिए रचते थे। उनके लखन का निश्चित प्रयोजन है। वे वैज्ञानिकता, तर्कशीलता, समता के प्रचारक हैं, सामंतवाद, साम्राज्यवाद, धार्मिक कर्मकांडों और अंधविश्वासी होशन के कट्टर दुश्मन। वे संसार के उन विरल लेखकों में से हैं जिन्होंने शोषण के अंत के लिए साम्राज्यवादियों के विरुद्ध पिस्तौल और कलम दोनों का इस्तेमाल लक्षणा में नहीं, अभिधा में क्या। वे जनता के विश्वसनीय लेखक ही नहीं, क्रांतिकारी भी हैं।" (भारतीय लेखक : यशपाल विशेषांक)

बोध प्रश्न

- यशपाल के साहित्य का मूल स्वर क्या है?
- विश्वनाथ त्रिपाठी ने यशपाल के बारे क्या कहा है?
- यशपाल के अनुसार अन्याय से जनता की मुक्ति का उपाय क्या है?

9.3.4 यशपाल की कहानियों का कथ्य

यशपाल के द्वारा लिखे गए कथा साहित्य में कहानियों का बहुत अधिक महत्व है। इनकी दृष्टि में "कहानी द्वारा मनुष्य मानव-समाज के सदस्य रूप में अपनी समस्याओं में रूचि लेकर उनका चिंतन करना है। कथाकार के प्रयत्न उस प्रकार के चिंतन और विचार की प्रक्रिया को रुचिकर बना सकने का यंत्र होता है। यह प्रक्रिया कहानी के रुचिकर रूप में मानव-समाज के सम्मुख आती है।" यशपाल की कहानियों के 16 संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। हर संग्रह में 10-12 कहानियाँ हैं। इस प्रकार इन्होंने 1939 से लेकर अब तक करीब दो सौ पच्चीस कहानियों की रचना की है। इन कहानियों के माध्यम से उन्होंने अपने विचारों और अनुभवों को कलात्मक एवं रोचक ढंग से प्रस्तुत किया है। हम पाते हैं कि यशपाल जी की कहानियों में तीन बातें प्रधान है -

घटना, रोचकता और उद्देश्य। लेखक एक निश्चित उद्देश्य को रखकर घटनाओं का ताना-बाना बुनता है। कुछ कहानियों के आधार पर इस तथ्य को हम जान सकते हैं।

यशपाल ने अपनी कहानी 'धर्मयुद्ध' में श्री कन्हैयालाल के रूढ़िवादी माता-पिता और आजकल के आचार-विचार को पूरी निष्ठा से ग्रहण करने वाले श्रीलाल के बीच होने वाले खींचा-तानी को एक नाटकीय अंदाज से पेश किया है। श्री लाल की व्यवहार-बुद्धि के कारण माता-पिता की पुरातन-पंथी धार्मिक मान्यताएँ व्यर्थ हो जाती है और श्रीलाल की काकटेल पार्टी सफल होती है।

इसी प्रकार 'उतराधिकारी' कहानी में पहाड़ी सिपाही हरसिंह जिस अपराध के कारण अपनी पत्नी 'मानी' को मार डालने को उद्यत होता है किन्तु उसी प्रकार का अपराध करने पर भी अपनी दूसरी पत्नी 'कुशली' को सकुशल घर ले आता है। यह जानते हुए भी कि कुशली से उत्पन्न बालक उसका नहीं है वह उसे अपना उत्तराधिकारी मानता है। युद्ध में चोट लगने के कारण वह स्वयं पुत्र उत्पन्न करने में असमर्थ है, ऐसी स्थिति में वह परिस्थितियों से समझौता करता है। 'उत्तमी की माँ' कहानी में भी यशपाल ने यह दिखाने का प्रयत्न किया है कि जीवन की सहज वृत्तियों के दमन का दुष्परिणाम कितना भयंकर हो सकता है।

यशपाल की कहानी 'तुमने क्यों कहा था मैं सुंदर हूँ' को मनोवैज्ञानिक कहा जा सकता है। इस कहानी में लेखक एक मनोवैज्ञानिक सत्य स्पष्ट करना चाहता है कि जीवन में सहज शारीरिक तृप्ति अनेक कुण्ठाजनित रोगों की दवा है। 'खच्चर और आदमी' संग्रह की कहानियों में भी लेखक का उद्देश्य स्पष्ट रूप से लक्षित होता है। 'मक्खी या मकड़ी' कहानी में यह लेखक ने दिखाने का प्रयत्न किया है कि वर्तमान जीवन व्यवस्था में धाँधली के मकड़ों का जाल फैला हुआ है और अच्छे लोग मक्खियों की तरह फँस कर छटपटा रहे हैं। यशपाल की 'अश्लील' कहानी में एक नैतिक और भावात्मक प्रश्न उठाया गया है। इसके माध्यम से नारी-जीवन की सार्थकता का कलापूर्ण व्याख्या प्रस्तुत की गई है।

यशपाल का अंतिम कहानी-संग्रह 'भूख के तीन दिन' है। इस संग्रह की कहानियों में बेरोजगारी, आर्थिक विषमता, वर्ग-विषमता आदि समस्याओं को दिखाया गया है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि अपने लंबे जीवन अनुभव के बल पर वे विविध प्रकार के कथात्मक संदर्भों की सृष्टि करने में समर्थ है। उनकी सृष्टि कथा-रस की माँग को पूरा करती है तथा उनकी प्रगतिशील जीवन-दृष्टि का समर्थन करती है।

यशपाल की कहानियों में सामंती सभ्यता के कठोर रूप और उसके धीरे-धीर पतन का मार्मिक चित्रण मिलता है। इस संबंध में डॉ. गोपाल राय ने यह मत प्रकट किया है कि -

> "भारत का सामंती अतीत और उसका चिंतन चाहे जितना भी गौरवशाली रहा हो, उसका वर्तमान तो शोषण, दमन, देशद्रोह और मूल्यहीनता का पर्याय बन चुका है; और मार्क्सवादी यशपाल इसका उद्घाटन करना अपनी कला का उद्देश्य मानते हैं। ... सामंती प्रकृति अपनी बदहाली में कितनी दयनीय और त्रासद हो जाती है, इसका अंकन 'तर्क का तूफान' में संकलित कहानी 'पर्दा' में देखा जा सकता है। .... इस कहानी की शक्ति 'कम्युनिस्ट विचारधारा' में

उतनी नहीं है, जितनी मानवीय स्थितियों की विषमता और विडंबना पर आधारित उस करुणागर्भित व्यंग्य में जो पाठक के चित्त को झकझोर देता है।" (हिन्दी कहानी का इतिहास, पृ. 352)

बोध प्रश्न

- यशपाल की कहानियों के संबंध में गोपाल राय का क्या मत है?
- 'मक्खी या मकड़ी' कहानी के उद्देश्य को स्पष्ट कीजिए?

9.3.5 यशपाल की कहानियों की भाषा-शैली

भाषा के संबंध में यशपाल के विचार बहुत ही प्रगतिशील थे। वे हिन्दी और उर्दू को एक ही भाषा मानते थे। उनका मानना था कि हिन्दी और उर्दू का भेद अंग्रेजों का उत्पन्न किया हुआ था। हिंदुओं और मुसलमानों में भेद-भाव बढ़ाने के लिए ही हिन्दी और उर्दू को दो अलग भाषाएँ बताया गया। अंग्रेज अपनी घृणित शासन-व्यवस्था के प्रति हिंदुओं और मुसलमानों के विरोध से डरे हुए थे। "उन्होंने अपनी नौकरशाही का काम चलाने के लिए एक जटिल भाषा गढ़ डाली और इसके लिए फारसी लिपि नियत कर इसका नाम उर्दू रख दिया।" इन सभी मान्यताओं के अनुसार उन्होंने भाषा के संबंध में बहुत ही उदार दृष्टिकोण अपनाया है। यशपाल ने उर्दू, अंग्रेजी तथा तत्सम, तद्भव, देशज सभी प्रकार के शब्दों का प्रयोग अपनी कहानियों में किया है।

यशपाल की भाषा शैली की बात करें तो हम यह कह सकते हैं कि वह कथ्य के अनुसार अपना स्वरूप निर्माण करती है। उन्होंने संदर्भ को सजीव बनाने के लिए परिवेश के अनुसार शब्दों का चयन किया है। जन-बोली में प्रचलित देशज शब्दों से लेकर उर्दू पश्तो, अंग्रेजी और रूसी भाषा तक के शब्द आपके साहित्य में प्रयोग किए गए हैं।

यशपाल ने हिन्दी गद्य-शैली को भी नई दिशा दी है। इन्होंने काव्यात्मक शैली के अतिरिक्त वर्णनात्मक तथा प्रसन्न विचारात्मक शैली का भी प्रयोग अपनी कृतियों में किया है। आप में व्यंग्य की भी अच्छी क्षमता है और संदर्भ के अनुसार आप व्यंग्यात्मक शैली का भी प्रयोग करते हैं।

बोध प्रश्न

- यशपाल के साहित्य में किस प्रकार की भाषा शैली को देखा जा सकता है?

9.3.6 हिन्दी कथा साहित्य में यशपाल का महत्व और स्थान

यशपाल बहुमुखी प्रतिभा के साहित्यकार माने जाते हैं। वे समाज की कुरीतियों से बहुत ही असंतुष्ट रहते थे। प्रारंभ में उनका कार्य क्षेत्र क्रांतिकारी रहा, किंतु बाद का जीवन परिश्रम, आत्मविश्वास और दृढ़ता जैसे तत्वों से परिपूर्ण रहा। यशपाल प्रेमचंद के बाद सामाजिक और राजनीतिक परिस्थितियों का चित्रण करने वाले प्रमुख साहित्यकार माने जाते हैं। वे मार्क्सवादी लेखक है इसलिए वे सामाजिक, क्रांति का समर्थक करते हुए भी अनैतिकता, बल प्रयोग एवं हिंसा के मार्ग का कड़ा विरोध करते हैं।

यशपाल के साहित्य लिखने का मुख्य उद्देश्य है कि इनके साहित्य के माध्यम से समाज में फैली हुई कुरीतियों को दूर करना। उन्होंने अतीत और वर्तमान दोनों को अपनी रचनाधर्मिता का हिस्सा बनाते हुए लगभग एक दर्जन उपन्यास और दो सौ से भी अधिक कहानियाँ लिखी।

भारतीय समाज के निम्न मध्यवर्ग, दलितों-शोषितों और मजदूरों की समस्या के अतिरिक्त यशपाल ने नारी शोषण पर भी प्रकाश डाला है। आम लोगों को आसानी से समझने की रचना शैली यशपाल जी के साहित्य में पाई जाती है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि यशपाल जी का स्थान हिन्दी साहित्य में बहुत महत्वपूर्ण है।

बोध प्रश्न

- यशपाल ने अपने साहित्य में किन-किन विषयों पर बल दिया है?

9.4 पाठ-सार

मार्क्सवादी जीवन दर्शन से प्रभावित प्रगतिशील रचनाकारों में यशपाल सर्वाधिक सशक्त है। उनके विचार बहुत ही उच्च कोटि के तथा सुलझे हुए थे। तथा वे उन्हें बहुत ही सुन्दर ढंग से व्यक्त भी करते थे। इनका जन्म फीरोज़पूर छावनी में 3 दिसंबर, 1903 ई को पंजाब में एक साधारण परिवार में हुआ था।

यशपाल का आर्य समाज और स्वाधीनता आंदोलन के प्रति बहुत लगाव था। वे एक सफल कहानीकार, उपन्यासकार, निबंधकार तथा नाटककार रहे हैं। वे मार्क्सवादी विचारधारा से प्रेरित रहे अतः उनकी रचनाओं पर मार्क्सवाद का प्रभाव पाया जाता है। वे एक यथार्थवादी रचनाकार माने जाते हैं। यशपाल सामाजिक रूढ़ियों, पुरातनपंथी विचारों के घोर विरोधी थे तथा वे एक प्रगतिशील विचारक माने जाते हैं।

यशपाल जी का रचना संसार बहुत विशाल है, उनकी अब तक 17 कहानी संग्रह, आठ बड़े तथा तीन लघु उपन्यास, तीन एकांकी दस निबंध संग्रह, तीन संस्मरण पुस्तकें आदि प्रकाशित हो चुकी हैं।

यशपाल के साहित्य की विशेषता है कि वह मानव मन की गहराइयों तक पहुँच जाता है। इनका साहित्य सही अर्थों में हिन्दी साहित्य के लिए एक वरदान है। 26 दिसंबर, 1976 को यशपाल जी का निधन हो गया।

9.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं -

1. मार्क्सवादी जीवन दर्शन से प्रभावित प्रगतिशील रचनाकारों में यशपाल का स्थान प्रमुख माना जाता है।
2. यशपाल प्रेमचंद के बाद सामाजिक और राजनीतिक परिस्थितियों का चित्रण करने वाले प्रमुख साहित्यकार माने जाते हैं।
3. यशपाल का कथा साहित्य बहुत ही विशाल है। उन्होंने गद्य की सभी विधाओं पर अपनी लेखनी चलाई है।
5. एक प्रगतिशील लेखक के रूप में यशपाल ने अपनी कहानियों में सामाजिक रूढ़ियों और पुरातनपंथी विचारों के प्रति घोर विरोध दर्ज किया।

6. यशपाल ने अपनी कहानियों में विभिन्न स्रोतों से भाषा ग्रहण की। उन्होंने तत्सम, तद्भव और देशज शब्दों के साथ बेझिझक उर्दू, अंग्रेजी और पश्तो शब्दों का प्रयोग किया।
7. यशपाल ने अपने साहित्य के माध्यम से समाज की सभी समस्याओं पर प्रकाश डालने का प्रयास किया।

9.6 शब्द संपदा

1. उतराधिकारी	=	वारिस उतराधिकार, पाने वाला व्यक्ति
2. उत्पीड़न	=	दबाना अत्याचार
3. उद्देश्य	=	लक्ष्य, प्रयोजन
4. पुरातनपंथी	=	पुराने विचारों वाला रूढ़िवादी
5. प्रगतिशील	=	बराबर आगे बढ़ने वाला
6. रूढ़ियों	=	परंपरा प्रथा
7. रोचक	=	मनोरंजक दिल्चस्प
8. वरदान	=	कृपा
9. वर्ग भेद	=	वर्ण संबंधी भेद-भाव
10.विचारक	=	विचार करने वाला व्यक्ति दार्शनिक
11.सशक्त	=	मज़बूत
12.स्वास्थ्य लाभ	=	रोगमुक्ति विरोध होने की प्रक्रिया

9.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

9.7.1 सही विकल्प चुनिए –

1. यशपाल के साहित्य पर किस राजनीतिक और सामाजिक दर्शन का सबसे गहरा प्रभाव पड़ा है?

A. अस्तित्ववाद B. गांधीवाद C. छायावाद **D. मार्क्सवाद**

2. यशपाल ने अपने लेखन की शुरुआत साहित्य की किस विधा से की थी?

A. आत्मकथा B. निबंध C. उपन्यास **D. कहानी**

3. यशपाल का वह कौन सा उपन्यास है जिसे 'युद्ध और शांति' और 'गोदान' की परंपरा का महाकाव्यात्मक उपन्यास कहा गया है?

A. झूठा सच B. अमिता C. दादा कामरेड D. दिव्या

4. यशपाल द्वारा संपादित उस पत्रिका का नाम क्या है जिसने उनके क्रांतिकारी विचारों को स्वर दिया?

A. विप्लव B. सरस्वती C. हंस D. प्रताप

5. यशपाल की आत्मकथा का शीर्षक क्या है, जो तीन भागों में विभाजित है?

A. सिंहावलोकन B. नीड़ का निर्माण फिर C. मेरी जीवन यात्रा D. मेरी कहानी

6. यशपाल ने अपनी कहानियों में भाषा के किस रूप का समर्थन किया है?

A. केवल संस्कृतनिष्ठ हिन्दी B. केवल अंग्रेजी और रूसी शब्द

C. शुद्ध ब्रजभाषा **D. हिन्दी और उर्दू का मिश्रित रूप**

7. यशपाल की कहानी 'पर्दा' किस सामाजिक वर्ग की विसंगतियों और विडंबनाओं को उजागर करती है?

A. मजदूर वर्ग B. ग्रामीण किसान वर्ग

C. मध्यवर्ग (विशेषकर गिरता हुआ सामंती वर्ग) D. धनी पूँजीपति वर्ग

8. यशपाल के उस यात्रा साहित्य का नाम क्या है जिसमें उन्होंने सोवियत रूस की जीवन-पद्धति का अध्ययन किया है?

A. लोहे की दीवार के दोनों ओर B. बीबीजी कहती हैं

C. शहबीति D. मेरा चेहरा रोबीला है

9. यशपाल की विचारधारा के अनुसार, आम जनता की 'अन्याय से मुक्ति' का एकमात्र उपाय क्या है?

A. कम्युनिज्म की द्वन्द्वात्मक भौतिकवादी विचारधारा B. विदेशी सहायता

C. गांधीवादी अहिंसा D. धार्मिक कर्मकांड

10. यशपाल की कहानियों के शिल्प के बारे में निम्नलिखित में से कौन सी बात सही है?

A. उनकी कहानियों में रोचकता और उद्देश्य का अभाव है

B. लेखक एक निश्चित उद्देश्य को ध्यान में रखकर घटनाओं का ताना-बाना बुनता है

C. वे केवल कल्पनालोक की कहानियाँ लिखते थे

D.उनकी भाषा बहुत ही कठिन और केवल पंडितों के लिए है

खंड (ब)

9.7.2 लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. यशपाल के कहानियों की भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।
2. हिन्दी कथा साहित्य में यशपाल के महत्व पर प्रकाश डालिए।
3. यशपाल की कहानियों के कथ्य का संक्षिप्त में वर्णन कीजिए।

खंड (स)

9.7.3 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. यशपाल के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर प्रकाश डालिए।
2. यशपाल की रचना यात्रा का वर्णन कीजिए।
3. यशपाल के साहित्य की मुख्य विचारधाराओं का वर्णन कीजिए।

9.8 पठनीय पुस्तकें

1. यशपाल रचनावली : लोक भारतीय प्रकाशन
2. हिन्दी साहित्य का इतिहास : सं. नगेंद्र
3. हिन्दी गद्य साहित्य : रामचंद्र तिवारी

इकाई 10 : 'परदा' कहानी : तात्विक विवेचन

रूपरेखा

10.1 प्रस्तावना
10.2 उद्देश्य
10.3 मूल पाठ : 'परदा' कहानी : तात्विक विवेचन
10.3.1 कथावस्तु
10.3.2 पात्रों का चरित्र चित्रण
10.3.3 देश काल अथवा वातावरण
10.3.4 संवाद योजना
10.3.5 भाषा-शैली
10.3.6 उद्देश्य
10.3.7 शीर्षकौचित्य
10.4 पाठ सार
10.5 पाठ की उपलब्धियाँ
10.6 शब्द संपदा
10.7 परीक्षार्थ प्रश्न
10.8 पठनीय पुस्तकें

10.1 प्रस्तावना

यशपाल की कहानी 'परदा' सही अर्थों में एक मध्यवर्गीय समाज की विडंबनाओं की कहानी है। यह कहानी झुठे अहंकार को दिखाने का प्रयत्न करती है। कहानी में 'परदा' का फटना और गिरना सामन्ती प्रथा के अहंकार का टूटना दिखाता है। दरवाजे पर लटका 'परदा' उस परिवार के लिए दिखावटी सुरक्षा का माध्यम है। जिन लोगों की सारी कोशिश हमेशा अमीर बनने की होती है, जो अमीर लोगों की नकल करते हैं, तथा उनके जैसा बनना चाहते हैं और अपनी गरीबी को छिपाते रहते हैं। वे न तो अमीर की श्रेणी में आ पाते हैं और न ही अपनी गरीबी को स्वीकार कर पाते हैं। इस कहानी के मुख्य पात्र के बारे में बात की जाए तो 'परदा' ही इसका मुख्य पात्र है। इसको ही केंद्र में रखकर सारी कहानी चलती रहती है। यह 'परदा' ही अपने घर की लाज बचाने के लिए अंतिम रेशे तक संघर्ष करता है।

10 2. उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप -

- 'परदा' कहानी की कथा वस्तु तथा वातावरण से परिचित हो सकेंगे।
- वर्तमान मध्यवर्ग के यथार्थ को जान सकेंगे।
- समाज में व्याप्त झूठी प्रतिष्ठा के ढोंग पर विचार कर सकेंगे।
- मुस्लिम समाज में व्याप्त गरीबी को देख सकते हैं।

10.3 मूल पाठ : 'परदा' कहानी : तात्विक विवेचन

10.3.1 कथा वस्तु

'परदा' कहानी की कथा वस्तु की जब हम बात करते हैं, तो यह कहानी चौधरी पीरबख्श के परिवार की है जिनके दादा अपने समय में चुंगी महकमे के दारोग़ा थे। उन्होंने अपना मकान भी बनवाया था जो हवेली के नाम से जाना जाता था। किंतु दो ही पीढ़ियों में उनके वंशज पीरबख्श की आर्थिक स्थिति बहुत खराब हो गई थी। उसके पश्चात जीवन की विषम परिस्थितियों से जूझते हुए पीरबख्श के चरित्र के रूप में कथानक का विकास होता है।

चौधरी पीरबख्श प्राईमरी से आगे पढ़ न सके थे तथा इसी बीच उनका ब्याह भी हो गया। इस कहानी का आरम्भ पीर बख्श के परिवार से होता है। परिवार चलाने के लिए बीस रुपये मासिक में उन्हें एक तेल मिल में मुंशी की नौकरी करनी पड़ी। मज़दूरी या दस्तकारी वह कर नहीं सकते थे, क्योंकि उन्हें अपने खानदान की इज्जत का बहुत ख्याल था। कुछ दिनों के बाद उन्होंने पास में मज़दूरों की कच्ची बस्ती में दो रुपये महीने पर मकान ले लिया था। क्योंकि उस पुराने घर में परिवार का आकार बड़ा होने पर सभी का एक साथ गुज़ारा नहीं हो पा रहा था। पंद्रह वर्ष में चौधरी की तनख्वाह 30 से 35 रुपये हो गई थी। चौधरी पीर बख्श एक अच्छे घराने के आदमी हैं पर धीरे-धीरे बहुत तंगी के अवस्था में आ जाते हैं। घर की इज़्ज़त ढकने के लिए किवाड़ों पर पर्दा लगाए रखते हैं।

एक बार मुसीबत में आकर वे एक खान से थोड़े से रुपये कर्ज़ के तौर पर लेते हैं। लेकिन वे समय पर कर्ज़ चुका नहीं पाते क्योंकि परिवार के बढ़ने से धीरे-धीरे पीरबख्श की आर्थिक हालत बहुत खराब हो जाती है। घर में खाने के भी लाले पड़ जाते हैं। घर की जरूरी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए धीरे-धीरे घर के गहने और दूसरी बहुमूल्य वस्तुओं को बेचा जाने लगा। घर की महिलाओं को घर से बाहर निकलने की इजाज़त नहीं थी। इसलिए बाहर के लोगों की पीरबख्श की आर्थिक स्थिति की कोई खबर नहीं थी।

पीरबख्श की खानदानी इज़्ज़त को घर की ड्योढी पर पड़ा 'परदा' बचाए रखता है। लेकिन जब खान क्रोध से किवाड़ों पर टंगे परदे को खिंचता है तो पर्दा टूट जाने से लोगों के सामने उनकी वास्तविक स्थिति सामने आ जाती है। खान से लिया गया उधार न चुका सकने के कारण स्थिति और भी गंभीर हो जाती है जो भयानक रूप धारण करती है। इसे कहानी की संघर्ष अवस्था कहा जा सकता है। 'परदा' कहानी में चरम सीमा की अवस्था तब आती है जब पीरबख्श के द्वारा कर्ज का पैसा न लौटाने पर खान क्रोध से पीरबख्श के घर की ड्योढ़ी पर लटका हुआ टाट का फटा पुराना गला हुआ पर्दा तोड़कर आंगन में फेंक देता है। उस समय का मार्मिक दृश्य पाठक पर गहरे अवसाद की अमिट छाप छोड़ जाता है। लोगों के सामने उनकी वास्तविक स्थिति सामने आ जाती है और यह वास्तविक स्थिति इतनी ज्यादा भयावह होगी इसकी पाठक ने भी कल्पना नहीं की होगी।

'परदा' हटते ही चौधरी लुढ़क पड़े और घर की औरतें तथा लड़कियाँ घटना से आतंकित होकर आँगन में इकट्ठा हो गई। वे इस तरह सिकुड़ गई थी जैसे उनके शरीर का एकमात्र वस्त्र

गिर गया हो। वह 'परदा' एक प्रकार से घर भर की औरतों के शरीर का वस्त्र था, क्योंकि उनके शरीर पर बचे चिथड़े उनके अंग को ढकने में असमर्थ था। वहां इकट्ठा भीड़ ने शर्म से आँखें फेर ली। उनकी अंदर की हालत देखकर 'खान' की कठोरता पिघल गई ग्लानि से खान 'परदा' फेंक देता है। धीरे-धीरे भीड़ कम हो जाती है। चौधरी साहब को जब होश आता है तो 'परदा' आंगन में पड़ा दिखाई देता है अतः उसे टाँगने की उनमें हिम्मत न थी बल्कि यह कहा जा सकता है कि उसकी अब आवश्यकता भी नहीं थी क्योंकि 'परदा' जिस भावना का प्रतीक था वह अब मर चुका था।

बोध प्रश्न

- 'परदा' कहानी में 'परदा' किसका प्रतीक है?

10.3.2 पात्रों का चरित्र चित्रण

'परदा' कहानी में पात्रों की संख्या बहुत अधिक नहीं है। इसमें मुख्यतः दो पात्र हैं पहला चौधरी पीरबख्श और दूसरा पंजाबी बबर अली 'खान' संपूर्ण कहानी का केंद्रीय चरित्र पीरबख्श को ही माना जा सकता है।

चौधरी पीरबख्श

चौधरी पीरबख्श अपने खानदान की इज़्ज़त को तथा मुहल्ले में उनका जो गौरव था उसे बचाने के लिये हमेशा तत्पर रहने वाले इंसान थे। इनका चरित्र चित्रण इस कहानी में बहुत ही सजीव रूप से हुआ है। ये अपनी गरीबी को दूसरों से छुपाने की हमेशा चेष्टा करते हैं। यह एक कर्तव्यनिष्ठ प्राणी थे, अपने परिवार के लिए सब कुछ करने को तैयार रहते हैं। उच्च कुल के कारण वह मेहनत मज़दूरी तो नहीं कर पाते हैं । इसी कारणवश अपना खर्च चलाने के लिए उन्हें कर्ज़ लेना पड़ता है। उनका चरित्र यह बताता है कि वह किस प्रकार अपने घर परिवार के संस्कार से प्रभावित होता है और अपनी झूठी इज़्ज़त को बचाए रखने के लिए परेशान रहता है। उसने अपनी गरीबी को छिपाने तथा झूठी शान को बनाए रखने के लिए अपने घर की ड्योढ़ी पर अपनी खानदानी दरी लटका देता है। अतः हम देखते हैं कि पीरबख्श का चरित्र भारतीय समाज के करोड़ों निम्न मध्यवर्गीय लोगों की दीन-हीन दिशा की ओर संकेत करता है।

बोध प्रश्न

- चौधरी पीरबख्श के चरित्र की क्या विशेषताएँ?
- चौधरी पीरबख्श झूठी शान को बचाए रखने के लिए क्या करते हैं?

पंजाबी बबर अलीखाँ

पंजाबी खान बबर अली कठोरता और हृदय हीनता का परिचय देता है। उसकी कठोरता, निर्भयता सुदखोरी की आदत तथा वाणी की कटुता एक प्रकार से समाज के संपूर्ण शोषक, पूँजीपति वर्ग का प्रतिनिधित्व करती है। खान इस कहानी में इस तरह से आता है जो हँसते हुए उधार देकर पैसे लेते समय दयाहीन बन जाता है। अपने कर्ज़ और सूद की किश्त न मिलने पर वह अपने हाथ के डंडे से कर्जदार का दरवाज़ा पीटता रहता है। उसे लोग शैतान समझते हैं। उस समय खान एक शैतान का रूप लगता है। जब पीरबख्श लाचार होकर उसके पास पैसे लेकर ठीक समय पर न दे सका तब वह हृदयहीन व्यक्ति के रूप में उसके घर जाकर गुस्से से ड्योढ़ी

पर लटके हुए परदे को खींच लेता है। लेकिन जब अंदर की औरतों की दयनीय स्थिति देखता है तो उसका पत्थर सा कठोर मन मोम में बदल जाता है। वह परदे को फेंककर चला जाता है।

बोध प्रश्न

- बबर अलीखाँ किस वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है?
- बबर अलीखाँ के चरित्र की क्या विशेषताएँ?

10.3.3 देशकाल अथवा वातावरण

कहानीकार यशपाल समाज का यथार्थ चित्रण करने वाले एक महत्वपूर्ण साहित्यकार माने जाते हैं। 'परदा' कहानी सही अर्थों में मध्यवर्गीय समाज की विडंबनाओं की कहानी है। जिन लोगों को हमेशा अमीर बनने की है या अमीरी का झूठा दिखावा करते हैं अर्थात् अपनी गरीबी को छिपाना चाहते हैं। अतः इस कारण वे न तो अमीर की श्रेणी में आते हैं और न ही अपनी गरीबी को स्वीकार कर पाते हैं। चौधरी पीरबख्श आज उन तमाम मध्यवर्गीय नौकरीपेशा लोगों को समान नज़र आते हैं जो मल्टीनेशनल सपने देखते हैं। पाँव जमीन से उखड़ चुके होते हैं, तनख्वाह तो घर, कार, ए.सी की ई.एम.आई देने में ही निकल जाती है। फिर भी कपड़े ब्रांडेड ही इस्तमाल करते हैं अतः दिखावे का जमाना है। चौधरी पीरबख्श का 'परदा' भी उनके ब्रांड को दर्शाता है।

प्रस्तुत कहानी में लेखक ने आधुनिक युग के समाज की वास्तविक स्थिति का चित्र प्रस्तुत किया है। कहानी उन दिनों की है जब भारत स्वाधीन नहीं हुआ था परंतु उन दिनों हमारे निम्न मध्यवर्ग तथा निम्नवर्गीय समाज की जो स्थिति थी आज भी लगभग वैसी ही है, आज भी सफेदपोश वर्ग जो कहने के लिए उच्च वर्ग की श्रेणी में आते जो अपनी झूठी शान के नाम पर असलियत को स्वीकार नहीं कर पाता है और चौधरी पीरबख्श की भाँति आर्थिक संकट में पिसता रहता है। आज के मध्यवर्गीय परिवारों की झूठी आडंबरता का ढोंग भी इस कहानी में दिखाई देता है। यशपाल एक सामाजिक कहानीकार है उन्होंने मध्यवर्गीय परिवार को अपनी कहानी के लिए चुना है। तथा साथ में गरीबों की कच्ची और गंदी बस्ती के वातावरण का सजीव चित्र खींचा है। प्रस्तुत कहानी मानव जीवन के सार्वदेशिक एवं सार्वकालिक यथार्थ को पाठक के सम्मुख रखती है।

बोध प्रश्न

- 'परदा' कहानी में किस प्रकार के वातावरण का वर्णन किया गया है?
- इस कहानी के माध्यम से मध्यवर्गीय परिवारों की क्या स्थिति दिखाई गई है?
- यशपाल ने मध्यवर्गीय परिवार को ही क्यों चुना?

10 3.4. संवाद योजना

'परदा' कहानी की संवाद योजना संक्षिप्त है तथा इसमें कल्पना का बहुत कम प्रयोग हुआ है। इसके संवाद भावाभिव्यक्ति से परिपूर्ण अत्यंत प्रभावशाली तथा रोचक है। इस कहानी में कहानीकार ने संवाद के माध्यम से कथा का विकास करता है, जिस कारण कहानी में नाटकीयता एवं सजीवता आ गई है। इस कहानी का अधिकांश भाग वर्णनात्मक है अतः इस

कारण 'परदा' कहानी के संवादों का भी विकास कम हुआ है। फिर भी जो संवाद प्रयुक्त हुए हैं वे बहुत ही स्वाभाविक हैं। तथा चरित्र की विशेषताओं को उद्घाटित करने में सक्षम हैं। जैसे खान क्रोध में डण्डा फटकार कर कह रहा था,

"पैसा नहीं देना था तो लिया क्यों? तनख्वाह किधर में जाता? अरामी हमारा पैसा मारेगा अम तुम्हारा खाल खींच लेगा ..... पैसा नहीं है तो गर पर 'परदा' लटका के शरीफजादा कैसे बनता? तुम अम को बीबी का गैना दो, बर्तन दो, कुछ तो भी दो। अम ऐसे नई जायेगा।"

चौधरी पीरबख्श ने बिलकुल बेबस और लाचारी में दोनों हाथ उठाकर खुदा से खान के लिए माँग कर कसम खायी-पैसा भी घर में नहीं, बर्तन भी नहीं, कपड़ा भी नहीं। खान चाहे तो बेशक उनकी खान उतार कर बेच ले। खान और भी भड़क उठा -"अम तुम्हारा दुआ का क्या करेगा अम तुम्हारा खाल क्या करेगा उसका तो जुती बी नई बनेगा तुम्हारा खाल से तो ये टाट अच्छा।" यहा अलीखाँ का कथन उसकी अमानवीय चरित्र की ओर संकेत करता है।

बोध प्रश्न

- 'परदा' कहानी में संवाद योजना किस प्रकार की है?
- कथा को विकसित करने में संवाद योजना कैसे सहायक होता है?

10.3.5 भाषा-शैली

भाषा के संबंध में यशपाल के विचार बहुत ही प्रगतिशील थे। वे हिन्दी और उर्दू को एक ही भाषा मानते हैं। उनका मानना था कि हिन्दी और उर्दू का भेद अंग्रेज़ों का उत्पन्न किया हुआ था। अगर हम 'परदा' कहानी की बात करें तो इस कहानी की सफलता का रहस्य यह है उसकी सहज स्वाभाविक भाषा। भाषा इतनी स्वाभाविक है कि कहानी यथार्थ के बहुत निकट लगती है।

यह कहानी एक मुसलमान परिवार की है अतः इसमें पात्रों और वातावरण के अनुरूप उर्दू शब्दों का बहुत अधिक प्रयोग किया गया है। जैसे -महकमा, ओहदा, माहवार, कुनबा, इज़्ज़त आदि। इस कहानी में पात्रों के अनुकूल भाषा का प्रयोग किया गया है। इस कहानी में मध्यवर्गीय परिवारों के वातावरण को स्पष्ट रूप से अवगत कराया गया है। अतः कहानी की भाषा सरल, सुबोध, मार्मिक तथा स्वाभाविक है। कहीं-कहीं पर कठोरता तथा उद्दंडता वाले शब्द भी दिखाई पड़ते हैं। 'परदा' कहानी में अनेक प्रकार की शैलियों का भी प्रयोग किया गया है।

बोध प्रश्न

- पात्रों के अनुरूप कथाकार ने भाषा का प्रयोग किस प्रकार किया है?
- भाषा के अनुसार इस कहानी की सफलता का रहस्य क्या है?

10.3.6 'परदा' कहानी का उद्देश्य

यशपाल 'परदा' कहानी के माध्यम से वर्तमान मध्यवर्ग के यथार्थ जीवन और मनोवृत्तियों का चित्रण किया है। यह एक प्रतीकात्मक कहानी है और इसके माध्यम से लेखक आज समाज में जो खोखलापन है उसको दिखाना चाहते हैं। यह 'परदा' जो सच्चाई को ढकने का

प्रतीक है, अर्थात खोखलेपन पर पड़े हुए आवरण अर्थात पर्दे को हटाकर उसकी असली तस्वीर हमारे सामने प्रस्तुत करना है।

हमारे समाज का निम्न मध्यवर्ग अशिक्षित निर्धन शोषित लाचार होते हुए भी ऊपरी तौर पर एक झूठी शान का दिखावा करने से पीछे नहीं हटता समाज में बहुत से मनुष्य अपनी झूठी इज़्ज़त के लिए परेशान रहते हैं। निम्न मध्यवर्ग की आय उनके खर्चों की तुलना में बहुत कम होती है, किंतु वह अपनी झूठी शान और अपने गौरव की रक्षा करने के लिए लोग झूठी शान और बाहरी आडंबरों का सहारा लेते हैं। इस कहानी के माध्यम से यशपाल ने इस कहानी द्वारा भारतीय समाज में व्याप्त झूठी प्रतिष्ठा की बुराई पर से 'परदा' उठाया है। 'परदा' कहानी में लेखक 'परदा' को प्रतीक के रूप में चित्रित कर एक कटु सत्य को समाज के सामने उद्घाटित किया है।

बोध प्रश्न

- 'परदा' कहानी का उद्देश्य स्पष्ट कीजिए।
- 'परदा' कहानी में परदा किसका प्रतीक है?

10.3.7 शीर्षकौचित्य

प्रस्तुत कहानी का शीर्षक 'परदा' बहुत ही औचित्य पूर्ण कहा जा सकता है। किसी भी लेखक का यह उद्देश्य होता है, वह कहानी का शीर्षक ऐसा रखता है कि पाठक जब उसे देखे तो कहानी का उद्देश्य उसे बहुत हद तक समझ में आ जाए। 'परदा' कहानी में यशपाल जी ने एक मध्यवर्गीय परिवार की विडंबना को दर्शाने का प्रयत्न किया है।

'परदा' का शाब्दिक अर्थ होता है, किसी चीज़ को ढकना और यहाँ पर इस कहानी का शीर्षक बहुत ही उचित दिखाई पड़ता है। क्योंकि इसमें एक परिवार जो अपनी झूठी शानो-शौकत को बनाए रखना चाहता है और उस पर हमेशा 'परदा' डालना चाहता है।

समाज की झूठी धारणा तथा अपनी प्रतिष्ठा के झूठे प्रलोभन में फँसे व्यक्ति का सजीव चित्रण करके लेखक ने समाज के समक्ष एक आदर्श रखा है। समाज में कुछ लोग ऐसे होते हैं कि उन्हें हमेशा अमीर बनने की कोशिश रहती है। उनके पास जितनी धन-संपत्ति होती है, उससे वे संतुष्ट नहीं रहते हैं। हमेशा अमीरों की नक़ल करने में रहते हैं। उनके जैसा बनना चाहते हैं। तथा अपनी गरीबी को छिपाने की कोशिश उम्र भर करते रहते हैं। ऐसा करने से वे न तो अमीर की श्रेणी में रहते हैं और न ही अपनी गरीबी को स्वीकार कर पाते हैं। सच कहा जाए तो लेखक ने इस कहानी के माध्यम से यह बताने का प्रयत्न किया है कि लोग किस प्रकार अपनी सच्चाई पर 'परदा' डालते हैं और कल्पना की दुनिया में जीते रहते हैं।

इस कहानी के शीर्षक की बात करें तो हम देखते हैं कि 'परदा' इस कहानी का प्राण है तथा 'परदा' से ही कहानी का प्रारंभ होता है और 'परदा' पर ही कहानी का अंत होता है। शीर्षक की सार्थकता इस बात से भी सिद्ध होती है कि कहानी के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए ही इसका शीर्षक 'परदा' रखा गया जो सही लगता है। निम्नलिखित पंक्तियाँ कहानी के शीर्षक को और अधिक सार्थकता देते हैं -

"किवाड़ न रहने पर 'परदा' ही आबरू का रखवाला था। यह 'परदा' भी तार-तार होते-होते एक रात आंधी में किसी भी हालत में लटकने लायक नहीं रह गया।"

अतः हम कह सकते हैं कि 'परदा' शीर्षक सोद्देश्य और सार्थक है।

बोध प्रश्न

- 'परदा' कहानी के माध्यम से लेखक क्या बताना चाहते हैं?
- इस कहानी के लिए 'परदा' शीर्षक कहाँ तक उचित है?

'हिन्दी कहानी का इतिहास' में 'परदा' का विवेचन

यशपाल की कहानी 'परदा' के महत्व को इस बात से अच्छी तरह समझा जा सकता है कि डॉ. गोपाल राय ने 'हिन्दी कहानी का इतिहास' में विस्तार से इस कहानी की विवेचना की। वे मानते हैं कि 'परदा' यशपाल की उन कहानियों में प्रमुख है जो विचारधारा पर आधारित होते हुए भी अनुभव से पैदा हुई संवेदना से ओत-प्रोत है। वे इसे शुद्ध अनुभव और विचारों द्वारा आधारित कहानी मानते हैं। निष्कर्ष के रूप में यहाँ उनकी यह विस्तृत टिप्पणी द्रष्टव्य है -

> "1941 के दशक में लखनऊ में रहते हुए यशपाल को आर्थिक दृष्टि से खस्तेहाल नवाबों के वंशजों को देखने का अनुभव हुआ होगा। सामंती प्रकृति अपनी बदहाली में कितनी दयनीय और त्रासद हो जाती है, इसका अंकन तर्क का तूफान में संकलित कहानी 'परदा' में देखा जा सकता है। गुरबत के दुश्चक्र में वंशानुगत आबरू को बचाने का प्रयास कितना करुण होता है और उसकी रक्षा के क्रम में वह कितनी और उघड़ती जाती है, यही इस कहानी का कथ्य है। इस कहानी के रेशे-रेश में कम्युनिस्ट विचारधारा स्पंदित है। वह पात्रों की स्थितियों और उनकी प्रतिक्रियाओं के संघात-समुच्चय से निचुड़ती है। वह कथानक पर आरोपित नहीं, कथानक में रची-बसी है। पर इस कहानी की शक्ति 'कम्युनिस्ट विचारधारा' में उतनी नहीं है, जितनी मानवीय स्थितियों की विषमता और विडंबना पर आधारित उस करुणागर्भित व्यंग्य में जो पाठक के चित्त को झकझोर देता है।" (हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ.354)

डॉ. गोपाल राय ने ध्यान दिलाया है कि इस कहानी में चित्रित चौधरी खानदान अपने उच्च वर्गीय नैतिक और मर्यादापरक मूल्यों में जकड़ा होने के साथ-साथ आर्थिक दृष्टि से बेहद दरिद्र होने के कारण एक करुण त्रासदी का शिकार होता है। इस दरिद्रता के कारण वह पारंपरिक मूल्यों को निभाने लायक भी नहीं रह गया है। इतना ही नहीं -

> "उसका 'हवेली' नाम से पुकारा जाने वाला मकान परिवार में बढ़ते सदस्यों की वजह से इतना तंग हो चुका है कि जो दरोगा साहब के जमाने में बैठक कही जाती थी, वह अब 'जनाने' में शामिल हो गई है और 'घर की इज्जत' को देखते ड्योढ़ी पर परदा लटकाना पड़ा है। इससे चौधरी पीरबख्श की आर्थिक स्थिति की वास्तविकता छिप जाती है और खानदानी इज्जत भी ढकी रह जाती है। ... पर यह परदा चौधरी पीरबख्श को कर्ज देने वाले खान के निर्मम व्यवहार के सामने टिक

नहीं पाता। खान वह परदा ही झटक लेता है और उसके साथ ही चौधरी का पूरा वजूद ही हिल जाता है।" (हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ.354)

यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी ने परदे को पाखंड माना है और चौधरी को नए जमाने का विरोधी, तर्कहीन और जमाने से पिछड़ा हुआ दकियानूस साबित किया है। लेकिन डॉ. गोपाल राय मानते हैं कि वास्तव में चौधरी पीरबख्श नए जमाने के विरोधी नहीं हैं, बल्कि वे पुराने जमाने का ऐसा अप्रासंगिक अवशेष हैं, जिसे मिटना ही है। दरअसल, अभाव ग्रस्त व्यक्ति का सबसे बड़ा दुश्मन उसकी पारंपरिक एवं पिछले जमाने की मर्यादा ही होती है। लेखक ने उन्हीं जड़ और अप्रासंगिक हो चुकी मान्यताओं को टूटते हुए दिखाया है।

बोध प्रश्न

- 'परदा' कहानी में किस प्रवृत्ति को देखा जा सकता है?
- विश्वनाथ त्रिपाठी ने परदे को क्या माना है?
- चौधरी पीरबख्श के संबंध में गोपाल राय का क्या विचार है?

10.4 पाठ-सार

यशपाल द्वारा लिखित 'परदा' एक प्रतीकात्मक कहानी हैं। इस कहानी के माध्यम से लेखक यह बताना चाहता है कि लोग आज समाज में अपनी झूठी प्रतिष्ठा के लिए परेशान रहते हैं। तथा समाज में व्याप्त जो खोखलापन है उसको भी दिखाने का प्रयास किया है। यह कहानी एक मुस्लिम परिवार की है जिसका मुख्य पात्र चौधरी पीरबख्श और बबर अली खान हैं।

चौधरी पीरबख्श के दादा अपने समय में चुंगी महकमे में दरोगा थे। आय अच्छी थी उस समय एक घर भी बनवाया था जिसे वे लोग हवेली के नाम से पुकारते थे। किंतु दो ही पीढ़ियों में उनके वंशज पीरबख्श की आर्थिक स्थिति बहुत खराब हो गई। उन्हें बीस रुपये मासिक में एक तेल मिल में मुंशी की नौकरी करनी पड़ी। और छोटा काम वह कर नहीं सकते थे क्योंकि उन्हें अपने खानदान की इज़्ज़त का ख्याल था। अपने घर की ड्योढ़ी पर वह 'परदा' डाल कर रखते थे जो उनके घर की इज़्ज़त का रखवाला था। उनकी आर्थिक हालत धिरे-धिरे और भी खराब हो गई अब उन्हें बबर खान से कुछ पैसे उधार लेने पड़े। उनके घर की महिलाओं को घर से बाहर निकलने की इजाजत नहीं थी इस कारण बाहर के लोगों को पीरबख्श की आर्थिक स्थिति का कुछ पता नहीं था।

खान से लिया गया उधार न चुका सकने के कारण स्थिति और भी गंभीर हो जाती है, जो बहुत ही भयानक रूप धारण कर लेती है। खान क्रोध में ड्योढ़ी पर लटका पर्दा तोड़कर आँगन में फेंक देता है। उसके बाद का दृश्य देखकर सभी अचरज में पड़ जाते हैं। चौधरी लुढ़क पड़े और घर की औरतें तथा लड़कियाँ घटना से आतंकित होकर आँगन में इकट्ठा हो गई। वे इस तरह से सिकुड़ गई थी जैसे उनके शरीर का एकमात्र वस्त्र गिर गया हो। वह 'परदा' एक प्रकार से घर मर की औरतों के शरीर का वस्त्र था। क्योंकि उनके शरीर पर बचे चिथड़े उनके अंग को ढकने में असमर्थ थे। अंदर की हालत देखकर खान की कठोरता भी पिघल गई शर्म से खान 'परदा' फेंक देता है। अतः यह 'परदा' उनकी इज़्ज़त का रखवाला था।

10.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं -

1. साहित्यकार यशपाल द्वारा लिखित 'परदा' कहानी एक प्रतीकात्मक कहानी है।
2. 'परदा' कहानी सही अर्थों में मध्यवर्गीय समाज की विडंबनाओं की कहानी है।
3. इस कहानी के माध्यम से निम्न मध्यवर्ग के यथार्थ को जान सकते हैं।
4. इस कहानी के माध्यम से मुस्लिम समाज में व्याप्त गरीबी को देख सकते हैं।
5. झूठी प्रतिष्ठा के ढोंग का क्या दुष्परिणाम होता है, उसको इस कहानी में समझ सकते हैं।
6. कर्ज़ लेने के क्या दुष्परिणाम होते हैं, उसको भी इस कहानी के माध्यम से समझ सकते हैं।
7. कहानी में सामंती मूल्यों के पतन का दारुण यथार्थ उभरकर सामने आया है।

10.6 शब्द संपदा

1. उद्दण्डता	=	दुष्टता
2. ओहदा	=	पद
3. औचित्यपूर्ण	=	उचित
4. कर्तव्यनिष्ठ	=	ज़िम्मेदारी
5. कुनबा	=	परिवार
6. गुज़ारा	=	व्यतीत करना
7. टाट	=	पटसन का बना मोटा कपड़ा
8. ड्योढ़ी	=	दहलीज, पौरी
9. प्रतिनिधित्व	=	प्रतिमान
10. प्रतिष्ठा	=	सम्मान, इज़्ज़त
11. प्रलोभन	=	लालच
12. बहुमूल्य	=	बेशक़ीमती, मूल्यवान
13. माहवार	=	प्रतिमाह
14. विडंबना	=	अजीब तरह की स्थिति

10.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

10.7.1 सही विकल्प चुनिए -

1. यशपाल की कहानी 'परदा' मुख्य रूप से किस सामाजिक वर्ग की विडंबनाओं पर आधारित है?

A. कृषक वर्ग B. उच्च सामंती वर्ग **C. मध्यम वर्ग** D. पूर्णतः सर्वहारा वर्ग

2. चौधरी पीरबख्श के दादा किस सरकारी विभाग में दारोग़ा के पद पर थे?

A. चुंगी महकमा B. आयकर विभाग

C. पुलिस विभाग D. रेलवे विभाग

3. चौधरी पीरबख्श ने अपनी आर्थिक तंगी के बावजूद मज़दूरी या दस्तकारी करना क्यों स्वीकार नहीं किया?

A. काम की अनुपलब्धता के कारण **B. खानदानी इज़्ज़त के ख्याल से**

C. सीखने की इच्छा न होने के कारण D. शारीरिक अक्षमता के कारण

4. कहानी के अंत में 'परदा' गिरने पर घर की औरतों की स्थिति का वर्णन किस रूप में किया गया है?

A. वे हँसने लगीं क्योंकि उनकी सच्चाई सामने आ गई थी

B. वे क्रोधित होकर खान से लड़ने लगीं

C. वे ऐसे सिकुड़ गईं जैसे उनके शरीर का एकमात्र वस्त्र गिर गया हो

D. वे तुरंत नए परदे की तलाश करने लगीं

5. बबर अली खाँ का चरित्र समाज के किस वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है?

A. पढ़े-लिखे सुधारवादी वर्ग B. असहाय मज़दूर वर्ग

C. शोषक और पूँजीपति वर्ग D. परोपकारी धार्मिक वर्ग

6. कहानी में घर की ड्योढ़ी पर लटका हुआ 'परदा' किसका प्रतीक माना गया है?

A. धार्मिक पवित्रता का B. झूठी शान और वास्तविकता को ढकने का

C. शत्रुओं से सुरक्षा का D. अमीरी और विलासिता का

7. डॉ. गोपाल राय के अनुसार, 'परदा' कहानी में कौन सी विचारधारा अंतर्निहित है?

A. कम्युनिस्ट विचारधारा B. अस्तित्ववादी विचारधारा

C. राष्ट्रवादी विचारधारा D. गांधीवादी विचारधारा

8. यशपाल ने कहानी में किस प्रकार के वातावरण का सजीव चित्रण किया है?

A. राजमहलों की विलासिता का **B. मज़दूरों की कच्ची बस्ती और दरिद्रता का**

C. ग्रामीण भारत की प्राकृतिक सुंदरता का D. आधुनिक महानगरों की चकाचौंध का

9. डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी ने 'परदा' को क्या संज्ञा दी है?

A. अंतिम सहारा B. कलात्मक आवरण C. पवित्र कवच **D. पाखंड**

10. कहानी के अंत में चौधरी पीरबख्श द्वारा परदा पुनः न टाँगने का क्या कारण था?

A. उस भावना की मृत्यु हो चुकी थी जिसका वह परदा प्रतीक था

B. उनके पास नया परदा खरीदने के पैसे नहीं थे

C. मोहल्ले वालों ने परदा टाँगने का विरोध किया

D. खान ने उन्हें परदा टाँगने से मना कर दिया था

खंड (ब)

10.7.2 लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. 'परदा' कहानी के उद्देश्य पर विचार कीजिए।
2. 'परदा' कहानी की संवाद योजना पर अपने विचार लिखिए।
3. 'परदा' कहानी की कथावस्तु को संक्षेप में लिखिए।

खंड (स)

10.7.3 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. 'परदा' कहानी की भाषा शैली या उसकी देशकाल अथवा वातावरण पर विचार कीजिए।
2. 'परदा' कहानी के आधार पर चौधरी पीरबख्श या बबर अली खाँ का चरित्र-चित्रण प्रस्तुत कीजिए।
3. 'परदा' कहानी के शीर्षकौचित्य पर प्रकाश डालिए।

10.8 पठनीय पुस्तकें

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास : सं. नगेंद्र
2. यशपाल रचनावली
3. यशपाल पुनर्मूल्यांकन : कुँवरपाल सिंह
4. हिन्दी कहानी विवेचना : सं. विमल खांडेकर

इकाई 11 : उषा प्रियंवदा : एक परिचय

रूपरेखा

11.1 उद्देश्य

11.2 प्रस्तावना

11.3 मूल पाठ : उषा प्रियंवदा : एक परिचय

11.3.1 जीवन परिचय

11.3.2 रचना परिचय

11.4 पाठ सार

11.5 पाठ की उपलब्धियाँ

11.6 शब्द संपदा

11.7 परीक्षार्थ प्रश्न

11.8 पठनीय पुस्तकें

11.1 उद्देश्य

इस पाठ के अध्ययन से आप -

- सुविख्यात कथाकार उषा प्रियंवदा की कहानी कला के बारे में जानेंगे।
- कहानी से जुड़े विभिन्न पक्षों का विश्लेषण भी कर सकेंगे।
- उषा प्रियंवदा की कहानी कला के साथ उनका जीवन परिचय भी जानेंगे।
- कहानी कला के माध्यम से उनकी रचनाओं की विशेषता से परिचित होंगे।

11.2 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में हम उषा प्रियंवदा और उनकी कहानी कला के बारे में जानेंगे। इस इकाई में हम उनकी जीवन के विभिन्न पहलुओं के साथ उनकी कहानी कला के संदर्भ में विवेचन, विश्लेषण करेंगे। उषा प्रियंवदा नई कहानी आंदोलन से जुड़ी हुई एक प्रमुख कहानीकार हैं। नई कहानी आंदोलन में कई महिला कथाकारों का योगदान रहा जिसमें मन्नू भण्डारी, कृष्णा सोबती के साथ-साथ उषा प्रियंवदा का नाम प्रमुख तौर पर सामने आता है। उषा प्रियंवदा की कई कहानियाँ नई कहानी आंदोलन के भावबोध और यथार्थ के अभिव्यक्ति की प्रतिनिधि कहानी के बतौर कथा आलोचना में देखी समझी जाती है। उषा प्रियंवदा का अधिकांश लेखन मध्य वर्गीय जीवन बोध को लेकर लिखा गया है। खासकर मध्यवर्गीय पारिवारिक जीवन में संबंधों के भीतर निर्मित होने वाले तनाव और द्वंद्व को अपनी कहानी में उन्होंने सूक्ष्म ढंग से प्रस्तुत किया है।

11.3 मूल पाठ : उषा प्रियंवदा : एक परिचय

इस इकाई में उषा प्रियंवदा के कहानी कला को जानने की कोशिश होगी। नयी कहानी के शुरुआती दिनों में उषा प्रियंवदा की एक कहानी वापसी (कहानी, 1960) आयी थी, जिसे आलोचक नामवर सिंह ने खास तौर पर रेखांकित किया था। उषा प्रियंवदा एक सशक्त रचनाकार हैं। इनके कथा साहित्य में छठे और सातवे दशक के शहरी परिवारों का सवेदनापूर्ण चित्रण मिलता है। इन्होंने शहरी जीवन की बढ़ती उदासी, अकेलेपन आदि का अंकन सम्वेदनापूर्वक किया है। इनकी कुछ रचनाएँ इस प्रकार हैं : वनवास, कितना बड़ा झूठ, शून्य, ज़िन्दगी और गुलाब के फूल, एक कोई दूसरा, मेरी प्रिय कहानियाँ, सम्पूर्ण कहानियाँ।

11.3.1 जीवन परिचय

उषा प्रियंवदा का जन्म 24 दिसंबर, 1930 को कानपुर में हुआ। उषा प्रियंवदा ने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से अंग्रेज़ी साहित्य में एम.ए. तथा पीएच. डी. की पढ़ाई पूरी करने के बाद दिल्ली के लेडी श्रीराम कालेज और इलाहाबाद विश्वविद्यालय में अध्यापन किया। इसी समय उन्हें फुलब्राइट स्कालरशिप मिली और वे अमरीका चली गईं। अमरीका के ब्लूमिंगटन, इंडियाना में दो वर्ष पोस्ट डॉक्टरल अध्ययन किया और 1964 में विस्कांसिन विश्वविद्यालय, मैडिसन में दक्षिण एशियाई विभाग में सहायक प्रोफेसर के पद पर कार्य प्रारंभ किया। आजकल वे सेवानिवृत्त होकर लेखन और भ्रमण कर रही हैं। उषा प्रियंवदा के कथा साहित्य में छठे और सातवें दशक के शहरी परिवारों का संवेदनापूर्ण चित्रण मिलता है। उस समय शहरी जीवन में बढ़ती उदासी, अकेलेपन, ऊब आदि का अंकन करने में उन्होंने अत्यंत गहरे यथार्थबोध का परिचय दिया है। लंबे समय तक अमेरिका में रहकर प्रवासी हिन्दी लेखक के रूप में प्रतिष्ठा अर्जित की। उषा प्रियंवदा ने अंग्रेजी में शिक्षा प्राप्त करने के बाद श्रीराम कॉलेज दिल्ली, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, विस्कांसिन विश्वविद्यालय, मैडिसन में दक्षिण एशियाई विभाग में भी अध्यापन के कार्य से जुड़ी रही।

11.3.2 रचना परिचय

उषा प्रियंवदा नई कथाकार में अग्रणी हैं। उन्होंने दर्जनों कहानियाँ लिखी हैं। इनके तीन कहानी संग्रहों में जिन्दगी और गुलाब के फूल एक कोई दूसरा तथा कितना बड़ा झूठ उपलब्ध हैं। ये संग्रह वस्तु और शिल्प दोनों दृष्टियों से श्रेष्ठ हैं। उनकी कहानियों में वापसी, मछलियाँ और प्रतिध्वनि उल्लेखनीय हैं।

कहानी संग्रह

- ज़िंदगी और गुलाब के फूल
- एक कोई दूसरा
- मेरी प्रिय कहानियाँ
- वनवास
- कितना बड़ा झूठ

- शून्य
- संपूर्ण कहानियाँ

उपन्यास

- पचपन खंभे
- लाल दीवारें
- रुकोगी नहीं राधिका
- शेष यात्रा
- अंतर्वंशी

उषा प्रियंवदा की कहानियों का मूल कथ्य और विशेषताएँ

उषा जी की समस्त कहानियाँ मध्यमवर्गीय जीवन के सुख दुःख, आशा, निराशा एवं जीवन संघर्ष पर आधारित हैं। स्त्रियों की दशा को लेकर नई पुरानी पीढ़ी के टकराव का चित्रण किया है। होस्टल में पढ़ने वाली छात्रा, नौकरी पेशा अकेली रहने वाली औरत, विदेश जाने वाली स्त्री के संत्रास का चित्रण इन्होंने बखूबी किया है।

राजेन्द्र यादव के अनुसार वापसी कहानी हमारे समाज के टूटन की कहानी है। जिसमें युवा वर्ग अपने ही बुजुर्गों को अवमानना की जिंदगी बिताने के लिए मजबूर करता है। आपकी कहानियों में मुख्यतः मध्यमवर्गीय व्यक्तिवादी चेतना व्यंजित हुई हैं। उषा जी की कहानियाँ भारतीय नारी की असहायता एवं मजबूरियों को उजागर करती हैं। नारी होने के नाते वे नारी की पीड़ा को समझती भी है और उसे सशक्त कथानक व भाषा शैली में व्यक्त करने में भी सक्षम हैं। इनकी कहानियाँ की तीन प्रमुख विशेषताएँ हैं। भारतीय नारी के आदर्शस्वरूप की स्थापना, उसकी स्त्रियोचित इर्ष्या का वर्णन एवं नारी की दयनीय स्थिति का चित्रण। नारी के स्वभावगत गुण विनम्रता, दया एवं समर्पण की भावना को बड़ी तीव्रता के साथ अभिव्यंजित किया हैं। वह किसी का हो जाने में गर्वित अनुभव करती हैं। पश्चिमी नारी की भाँति पुरुष बनाना और बदलना उसकी फिदरत में नहीं हैं। मछलियाँ एवं प्रतिध्वनि ऐसी ही कहानियाँ हैं।

बोध प्रश्न

- उषा प्रियंवदा किस आंदोलन की कहानीकार हैं?
- उषा प्रियंवदा की कहानियों में कौन सी चेतना अभिव्यक्त हुई हैं, बताएँ?
- उषा प्रियंवदा की किस कहानी को आलोचक नामवर सिंह ने रेखांकित किया था?

उषा प्रियंवदा की कहानी कला

उषा प्रियंवदा नए कथाकारों की पंक्ति में अग्रगण्य हैं। स्त्री लेखन को समृद्ध और नई ऊँचाइयाँ प्रदान करने में इनका विशेष योगदान है। इनका संबंध इलाहबाद से रहा है। उच्च मध्यमवर्गीय परिवार में जन्मी उषा जी ने इलाहबाद विश्वविद्यालय से अंग्रेजी साहित्य में एम.ए किया और वहीं अध्यापन कार्य भी किया। अमेरिका जाकर अनुसंधान कार्य किया एवं विस्कांसिन विश्वविद्यालय में हिन्दी शिक्षण का कार्य भी किया। वहाँ से लौटकर शेष समय दिल्ली में व्यतीत किया। उषा प्रियंवदा का अधिकांश लेखन नारी विमर्श पर आधारित है।

उन्होंने भारतीय नारी की असहाय स्थिति एवं मूक सहनशीलता का चित्रण बखूबी किया है। साथ ही मध्यमवर्गीय परिवार की समस्याओं, विघटनकारी स्थिति एवं बुजुर्गों की उपेक्षा का चित्रण भी सटीक भाषा में किया है।

भारतीय परिवारों में नारी आदर्शरूपा रही है। वह अपने त्याग, प्रेम एवं समर्पण द्वारा परिवार के सदस्यों के लिए अपना सुख भूल जाती हैं। उसका पति के प्रति एकनिष्ठ प्रेम व समर्पण अतुलनीय है। मछलियाँ कहानी की विजी कहती है 'नटराजन मुनिष् कहा करता था कि प्यार चुक जाता है, भावनाएँ मर जाती हैं। अक्सर मैं सोचती हूँ कि मुझमें ऐसा क्यों नहीं होता है। मैं क्यों निर्मम कठोर क्यों नहीं हो पाती।' इस कथन में नारी की समर्पण भावना व्यक्त हुई हैं। पुरुष प्रधान समाज में नारी सामाजिक उपेक्षा और तिरस्कार का कष्ट भोगती रही है। इसी कारण पुरुष वर्ग के शोषण का शिकार हुई हैं। वह पुरुष ही नहीं नारी के हाथों भी शोषित हो रही है। 'मछलियाँ' कहानी में ही विजी कहती है कि बड़ी मछली छोटी मछली को निगल जाती हैं। उसकी सहेली मुकी उसके प्रेम को छीन लेती है। इसी कारण उसमें स्त्रियोचित इर्ष्या का भाव उदित हुआ हैं। वह भारत लौट आती है।

उषा प्रियंवदा की कहानियों में पुरुष के लम्पट स्वभाव का चित्रण भी हो गया है। पुरुष नारी के निश्छल स्वभाव को समझ नहीं पाता। मुकी नटराजन से अंत में इसलिए विवाह नहीं करती, क्योंकि उसका आकर्षण विजी की तरफ भी था। उषाजी की कहानियाँ भावमूलक हैं। कहानी का प्रत्येक पात्र भावुक हैं। यद्यपि इनकी कहानियों में आर्थिक विषमता का भी चित्रण हुआ है, किन्तु पात्र भावात्मक धरातल पर ही जीते हैं।

उषा प्रियंवदा हिन्दी कथा जगत में विशिष्ट कथाकार के रूप में जानी जाती है। 1961 में इनका पहला कहानी-संग्रह 'फिर बसंत आया' पाठक जगत के सामने आया और उसके बाद उनकी कई कहानी एवं उपन्यास पाठक जगत को मिलते गए। उषा प्रियंवदा की इन सभी कथाओं में यथार्थ युगबोध निहित है। बदलते आधुनिक भारतीय समाज में पारिवारिक रिश्तों में बदलाव, बेकारी, अकेलापन, उदासी, नारी अस्मिता जैसी कई महत्त्वपूर्ण विषय उनकी कथाओं में अभिव्यक्त हुई है। वैसे तो उनकी कहानियाँ विभिन्न प्रकार के मुद्दों को लेकर होते हैं लेकिन सभी कहानियों में कुछेक तत्व समान रूप से दिखायी पड़ते है। वे है अकेलापन, उदासी, निराशा इत्यादि जो कि आज के आधुनिक भौतिकवादि जगत की देन है। लोग आज अपने जीवन में भौतिक सुखों की तलाश में सबसे ज्यादा भटकते हैं, साथ में यह भी कह सकते हैं कि वे अन्य सुखों की तलाश में भी भटकते रहते हैं जिसके कारण वे अपने आस-पास की ज़िन्दगी में जो कुछ भी है या जो कोई भी है उनसे दूर हो जाते हैं या कट जाते है जिससे साथ वाला अकेला हो जाता है। अतः उषा जी ने अपनी कहानियों में जो कुछ भी व्यक्त किया है वह हमारे सामने कई सवाल विचार के लिए छोड़ जाती है। इसलिए उनकी कहानी इस दौर में ज्यादा महत्त्वपूर्ण हो जाती है। उनके कहानी लिखने की एक विशेष कला है कि वे अपने मुद्दों को सीधे-सीधे बयान नहीं करतीं बल्कि एक विशेष वातावरण तैयार करती हैं जिसमें पात्र चढ़ता-उतरता रहता है। उनके मानसिक उतार-चढ़ाव, उनके व्यवहार, उनकी बात-चीत आदि से ही सारी स्थिति स्पष्ट हो जाती है। उनकी कहानियों की विशेषता की चर्चा करते विजयमोहन सिंह का कहना है कि

उनकी कहानी एक विशेष प्रकार का मानसिक तथा परिवेशगत वातावरण रचती है, जिसमें उदासी, अकेलापन और बाहर या दूसरे से न जुड़ पाने की एक अभिशप्त स्थिति अंकित की जाती है। वह प्रायः उच्च शिक्षा प्राप्त कामकाजी आधुनिक स्त्री की नियति बन जाती है। खासतौर पर एक ऐसी स्त्री जो स्वतन्त्र, निजी और लीक से तनिक हटकर जीना चाहती है। इनकी कहानियां दो प्रकार की हैं - प्रारंभिक कहानियां मध्य वर्गीय नारी जीवन के विविध आयामों को रेखांकित करती हैं।

परिवार में द्वन्दात्मक स्थिति, मानसिक तनाव, संघर्ष, पीड़ा, निराशा और हताशा के क्षणों को जीती नारी प्रतिकूल परिस्थितियों में भी तालमेल बिठाने का अथक प्रयास करती है। इन सब का प्रभाव उसके रागात्मक संबंधों पर भी पड़ता है जिससे उसकी पीड़ा अधिक गहराती है। लेखिका ने यथासंभव तटस्थ रहते हुए नारी जीवन के विविध और सजीव चित्र उकेरे हैं। इन कहानियों का उत्स उषा जी के निजी अनुभव है इसलिए इनके चित्र अत्यंत सजीव व मार्मिक हैं। शैशव में ही पिता के वात्सल्य पूर्ण संरक्षण से वंचित उषा जी ने अपनी वैधव्य अभिशप्त माँ की उपेक्षा, अवहेलना, अपमान, तिरस्कार एवं पीड़ा को देखा था और किसी हद तक वे इसकी भुक्तभोगी भी थी। इसकी प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष छाया उनकी प्रारंभिक कहानियों में देखी जा सकती है। 'जिंदगी और गुलाब के फूल' की कहानियों के विषय में श्री देवी शंकर अवस्थी का अभिमत है- "जिंदगी और गुलाब के फूल की कहानियां कहीं भी नए तरीक के पाठक की मांग नहीं करती, सामान्य अनुभवों को इस तरह नया संदर्भ देती हैं कि पाठक को कहीं भी संस्कारगत धक्का नहीं लगता।"

उषा प्रियंवदा ने अपने कथा साहित्य में मध्यवर्गीय परिवारों में हो रहे आधुनिक परिवर्तन और नारी की बदलती भूमिका के सूक्ष्मता से विश्लेषित किया है। उषा प्रियंवदा की कहानियों में व्यष्टि से समष्टि तक का चित्रण मिलता है। उनकी कहानियों में जीवन का अकेलापन, ऊब और उदासीनता का यथार्थबोध पहली बार हिन्दी में गहरी संवेदनशीलता के साथ उभर कर आया। डॉ. गोरधनसिंह शेखावत ने उषा प्रियंवदा की कहानियों के बारे में लिखा है- 'उषा जी की कहानियों में जीवन और परिवार को अनुभूतिप्रवण चित्र दिखाई पडते हैं। आधुनिक नगर बोध की उदासी, अकेलेपन, ऊब आदि का अंकन उन्होंने यथार्थ के साथ किया है। उनकी कहानियों में चमत्कार नहीं, पर इनकी कहानियाँ गहरा प्रभाव छोडती हैं। उषा जी की कहानियों में हमें आधुनिक नगरीय जीवन के अत्यन्त अनुभूतिप्रवण चित्र मिलते हैं। इससे कहानियों का कलात्मक संतुलन इस धारणा का खण्डन करता है कि नारी कथाकारों में भावुकता की प्रधानता होती है। परंतु उषा जी ने बौद्धिक ईमानदारी के साथ चेतना के गहरे स्तरों को वाणी देने का सफल प्रयास किया है जिसके कारण आप कथा साहित्य के क्षेत्र में विशिष्ट बन गई हैं। इन्द्रनाथ मदान के शब्दों में -

'उषा प्रियंवदा की कहानी-कला से रूढ़ियों, मृत परम्पराओं, जड मान्यताओं, मीठी-मीठी चोटों की ध्वनि निकलती है। घिरे हुए जीवन की उदासी एवं उबासी उभरती है, आत्मीयता व करुणा के स्वर फूटते हैं। सूक्ष्म व्यंग्य कहानीकार के बौद्धिक विकास और कलात्मक संयम का परिचय देता है जो तटस्थ दृष्टि और गहन चिंतन का परिणाम है। पिछले कई दशकों से ये

निरंतर सृजनरत हैं और इस अवधि में इन्होंने जो कुछ लिखा है, वह परिमाण में कम होते हुए भी विशिष्ट है।'

उषा प्रियंवदा की पारिवारिक जीवन से संबंधित कहानियों में अमरीकी जीवन के भी विभिन्न चित्र प्रस्तुत हुए हैं। इसमें बार-बार अकेलेपन और अजनबीपन के भाव उभरकर आते हैं। बिन्दु एक ही है- वैयक्तिक सुख-दुःख; किंतु उसके कारण भिन्न हैं। कभी आर्थिक, कभी पारिवारिक, कभी असफल प्रणय व उन्मुक्त प्रेम। इस अकेलेपन में व्यक्ति अपने भरे-पूरे परिवार में, भीड़-भाड़ में अपने को निपट अकेला पाता है। समृद्धि के बीच भी उसे अथाह विरक्तता का अहसास होता है, प्रिय से प्रिय व्यक्ति के संग रहकर भी उसे अजीब विसंगति का बोध होता है।

संभवतः परिस्थितियों से पलायन कर जाना आज के मनुष्य की नियति है। समाज ने जो भी संबल प्रदान किए हैं वह उसे स्वीकार्य नहीं हैं और नवीन संबल वह बना नहीं पाया है। पुराने मूल्य पूर्णतया टूटे नहीं हैं, नए मूल्य पूर्णतया स्थापित नहीं हो पाए। परिणामस्वरूप मनुष्य दोनों के मध्य अटककर रह गया है। ऐसे मनुष्य से सहानुभूति ही प्रकट की जा सकती है। उषा जी की कई कहानियों में ऐसी ही शून्यता, एकाकीपन, निराशा तथा अजनबीपन आदि अनुभूतियाँ परिलक्षित होती हैं।

उषा प्रियंवदा का सृजन उनके परिवेश, निजी व्यक्तित्व और गहन संवेदना का प्रतिफल है। उषा जी व्यक्ति स्वातंत्र्य की पक्षधर है। यह स्वातंत्र्य स्त्री व पुरुष दोनों के संदर्भ में है। इसका उदाहरण वे स्वयं और उनकी कृतियाँ हैं। वे कभी बंधकर चलना पसंद नहीं करतीं। न ही जीवन में और न ही सृजन में।

सही अर्थों में देखा जाए तो उषा प्रियंवदा ने दिखने में छोटी लगने वाली सामाजिक समस्याओं की गहराई में जा कर कहानी-लेखन का कार्य किया और देश-काल एवं वातावरण के अनुसार उसका फलक विस्तृत होता चला गया। कच्चे धागे कहानी में कुंतल के अपने पडोसी जीजी से संबंध और उनके भाई से विवाह के सपने कच्चे धागे से कोमल और नाजुक होते हैं जो क्षणभर में बिखरकर चकनाचूर हो जाते हैं। यहाँ पर कहानीकार ने दहेज समस्या को भी उभारा है। जिंदगी और गुलाब के फूल कहानी में सेवारत सुबोध स्वाभिमान की रक्षा हेतु त्यागपत्र देकर बेरोजगार हो जाता है। इस कहानी में बेरोजगार सुबोध की पारिवारिक उपेक्षा एवं मानसिक अंतर्द्वंद्व का मार्मिक चित्रण हुआ है।

उषा प्रियंवदा की उत्कृष्ट कहानी वापसी में परिजनों की आधुनिक भौतिकवादी, स्वच्छंद जीवन दृष्टि तथा घोर व्यक्तिवादी जीवन दर्शन के कारण पैंतीस वर्ष की नौकरी के बाद अर्थात् अपनी सेवानिवृत्ति के बाद शेष जीवन स्वजनों के साथ सुकून से बिताने का सपना संजोये घर लौटे गजाधर बाबू का यह सपना दिवास्वप्न ही प्रतीत होता है। भरे-पूरे परिवार में स्वकेंद्रित परिजनों के बीच गजाधर बाबू स्वयं को उपेक्षित महसूस करते हैं। विपरीत मानसिक संवेदनाओं से सामना करने के बाद अंततः परिजनों की उपेक्षा और कटु उक्तियों से आहत गजाधर बाबू पुनः सेठ रामजीमल की चीनी मिल में नौकरी करने के लिए विवश हो नए लक्ष्य की ओर चले जाते हैं। परिजनों में भी मुख्य रूप से उनकी पत्नी की उपेक्षा वे सह नहीं पाते और गजाधर बाबू एक बार फिर घर से वापसी कर जाते हैं। वापसी कहानी में मानवीय संवेदनाओं का सूक्ष्म चित्रण

हमारे समक्ष उपस्थित होता है। विशेष रूप से उस समय जब उनकी धर्मपत्नी रसोई से उनकी चारपाई यह कहकर निकालती है कि यहाँ अब चलने-फिरने की जगह नहीं रही। वृद्धावस्था में परिवार और पत्नी का साथ चाहने वाले व्यक्ति पर जब ऐसा होता है तो निस्संदेह उसका मोहभंग होकर मानवीय संवेदनाएँ बिखरकर चूर-चूर हो जाती हैं। जैसे किसी मेहमान के लिए कोई अस्थायी प्रबंध कर दिया जाता है उसी प्रकार बैठक में कुर्सियों को दीवार से सटाकर बीच में गजाधर बाबू के लिए एक पतली सी चारपाई डाल दी गई-गजाधर बाबू उस कमरे में पडे-पडे कभी-कभी अनायास ही उस अस्थायित्व का अनुभव करने लगते। इससे लगता है कि बदलते वर्तमान परिवेश में वृद्ध पिता अकेलेपन व टूटन का शिकार हो रहे हैं। बुजुर्ग पीढ़ी की यह नियति अत्यंत शोचनीय है।

उषा प्रियंवदा ने अपनी कहानियों में समाज की समसामयिक समस्याओं की गहराई में उतरकर अपनी सूक्ष्म दृष्टि से उनकी नब्ज टटोलते हुए व्यक्ति के जीवन से जुड़ी समस्याओं को उजागर किया है। उन्होंने नारी जीवन में आने वाले परिवर्तनों को बखूबी परखा है। उषा प्रियंवदा ने आजादी से पहले और आजादी के बाद महिलाओं के दृष्टिकोण में आये परिवर्तनों को बारीकी के साथ पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया है। उनके इस व्यापक दृष्टिकोण को पाठकों ने स्वीकारा है। परिणामस्वरूप उनकी मानवीय संवेदनाएँ जन-जन की मानवीय संवेदना के रूप में बहुत ही सशक्त अभिव्यक्ति के साथ व्यक्त हुई हैं। उषा प्रियंवदा ने स्त्री की इच्छा, कामना और त्वरित निर्णय लेने से जुड़े प्रश्नों को विभिन्न दृष्टिकोणों से अपनी कहानियों में चित्रित किया है। उन्होंने इसे स्त्री और पुरुष पात्रों के माध्यम से उठाया है। इनकी कहानियों में स्त्री स्वतंत्रता के मानदंड विभिन्न रूपों में परिलक्षित होते हैं। छुट्टी का दिन और पूर्ति कहानियों में चित्रित नायिका को देखकर लगता है कि क्या अपने पैरों पर खड़े हो जाने और परिवार वालों से रिश्ता तोडकर स्वतंत्र जीवन मात्र से ही स्त्री सशक्त हो पाएगी? वस्तुतः इन दोनों कहानियों में स्त्री आर्थिक रूप से स्वतंत्र होने पर भी जीवन के अकेलेपन से पीड़ित है। धन कमा लेने मात्र से अकेलेपन को दूर नहीं किया जा सकता है। छुट्टी का दिन की माया को अकेलेपन से भागने पर मुक्ति नहीं मिलती और इस स्थिति के लिए वह स्वयं को ही दोषी ठहराती है। प्रस्तुत कहानी में उषा प्रियंवदा का यह दृष्टिकोण बेहद प्रभावित करता है कि जीवन में अर्थोपार्जन भी वर्तमान परिवेश में जीवनयापन के लिए जरूरी है। लेकिन अकेलेपन से मुक्ति मिले बिना सुकून की आशा नहीं की जा सकती।

'संबंध' कहानी की श्यामला मानसिक अव्यवस्था की शिकार है। घर से दूर विदेश में बसी श्यामला न तो अपने परिवार वालों या दाम्पत्य बंधन में बँधना चाहती है और न ही इनसे दूर रहकर सुखी ही रह पाती है। माँ-बाप और बहन उससे इसी कारण असंतुष्ट हैं। श्यामला लौटकर भारत भी नहीं आना चाहती है। उसने अपनी नौकरी के लिए बहुत कुछ किया था। वह कहती है, एक निरुपाय, बेसहारा, आक्रोश कर दिया तो सबके लिए जितना हो सका, जैसे जिया अब भी क्यों बोझ ढोया जाए। एक भावुक कर्त्तव्य के वश पर अब क्यों वे सब उसे अपनी जिंदगी नहीं जीने देते जैसे भी वह चाहे।

विदेशी परिवेश में मानसिक द्वंद्व का कारण भारतीय परिवेश के संस्कारों और परंपराओं को उस समाज में खोजना है। इसी के परिणामस्वरूप निर्मित धारणा ही व्यक्ति के संस्कारों की टकराहट का हेतु बनती है। अप्रवासी भारतीयों की इस जैसी समस्याओं का मार्मिक चित्रण हमें उषा प्रियंवदा की कहानियों में दिखाई देता है।

'चाँदनी में बर्फ पर' कहानी में एक ऐसे युवक का चित्रण किया गया है जो अपने उज्ज्वल भविष्य के लिए अपने माता-पिता और प्रेमिका कल्याणी को छोड़कर विदेश जाकर मीरा नाम की विदेशी लड़की से विवाह कर लेता हैं। मीरा स्वच्छंद विचारों वाली आधुनिक स्त्री है। हेम से विवाह के पहले उसके कई पुरुष मित्रों से संबंध रहे हैं। मित्रों के साथ स्केटिंग करना, घर पर शोर मचाना हेम को पसंद नहीं है। वह चाहता है कि मीरा भारतीय नारी की तरह झगड़े, चिल्लाए और उस पर अधिकार जताए, पर मीरा ऐसा कुछ भी नहीं करती है। वह अपनी मरजी से स्वच्छंद जीवन जीती है।

विदेश में कल्याणी को अविनाश की पत्नी के रूप में देखकर हेम उसे पाने के लिए पुनः लालायित हो उठता है। वह चाहता है कि कल्याणी उससे यूँ ही मिलती रहे, परंतु कल्याणी अपने भारतीय संस्कारों के कारण हेम के निवेदन को अस्वीकार कर देती है।

उषा प्रियंवदा ने प्रस्तुत कहानी में कल्याणी और मीरा दो स्त्रियों के माध्यम से पूर्वी व पश्चिमी संस्कारों के अंतर को बड़ी बारीकी से प्रभावी रूप में दिखाया है। उषा जी की यह कहानी उन भारतीय युवाओं की गाथा है जो स्वयं की उन्नति के लिए विदेशी संस्कारों वाली लड़की से विवाह तो कर लेते हैं पर उनकी स्वच्छंदता को वे बर्दाश्त नहीं कर पाते हैं। उनकी अपेक्षा रहती है वह आदर्श भारतीय नारी के गुणों का निर्वाह करे, परंतु ऐसा न होने पर संबंधों की डोर ढीली पड़ जाती है और संस्कारों की टकराहट उत्पन्न होती है।

'कितना बड़ा झूठ' कहानी की नायिका किरण विवाहिता और दो बच्चों की माँ होते हुए भी विदेशी समाज की देखा-देखी मैक्स नामक पुरुष से संबंध रखती है। वह चाहती है कि मैक्स केवल उसका होकर रहे, पर पश्चिमी संस्कारों में पला मैक्स किरण को छोड़कर वारिया से शादी कर लेता है। विदेश में एक ही से बंधकर रहने की परंपरा बहुत ही कम है। यह हमें स्वदेश में ही देखने को मिलता है। भारतीय परंपरा के अनुसार विवाहित का परस्त्री-पुरुष से संबंध अनैतिक माना गया है। पाश्चात्य संस्कृति के अनुकरण के कारण ही विदेशों में रहने वाले भारतीयों का व्यवहार विकृत होता जा रहा है।

'एक और विदाई' कहानी की नमिता को लगता है कि उसका पति उससे प्रेम नहीं करता है। इस कारण पति-पत्नी में दूरियाँ हैं। इसी दूरी से छुटकारा पाने के लिए पति और परिवार को छोड़कर वह विदेश पढ़ने के लिए चली जाती है। विदेशी समाज में रहते हुए वह स्त्री-पुरुष के उन्मुक्त संबंधों को नजदीक से देखती है। वह देखती है कि किस तरह स्त्री-पुरुष एक से ज्यादा आपसी संबंध बनाते हैं, ऐसे संबंध, जिनमें ठहराव नहीं है। वह विदेशी जीवनशैली से ऊब जाती है और अपने संस्कारों व मर्यादा को भूल नहीं पाती है। उसे एहसास होता है कि उसका प्यार, जीने का सहारा अपना देश ही है और उसकी जिंदगी उसका पति ही है। इसलिए वह अपने देश

लौटने का निर्णय कर लेती है। कहानी की नायिका नमिता काँपते कंठ से बार-बार कहती है- लो मैं आ गई, लो मैं आ गई हूँ।

'सुरंग' कहानी के तीनों पात्र खोखली जिंदगी जी रहे हैं। माँ, अरुणा और बेबी। हरिद्वार से देहरादून आने वाली गाड़ियाँ जब सुरंग के पास खड़ी रहती हैं तो लंबी सीटी मारती है। यह सीटी पात्रों के घर में सुनाई देती है। माँ घर के अंदर सुबकने लगती है। सुरंग में ही अरुणा के भाई की मौत हो गई थी। रेल की पटरी के निकट तक जाने की मनाही पिता ने सबको कर दी थी। अरुणा को बचपन से ही ट्रेनें अच्छी लगती थीं। सिग्नलों की लंबी कतारें, देहरादून से आने-जाने वाली गाड़ियों का स्लेटी धुआँ, पटरियाँ, अरुणा उनमें खो जाती थी। अरुणा के भाई की उपस्थिति कहानी में नहीं है, परंतु उसका प्रभाव घर के सभी सदस्यों पर है। माँ, जब से बेटा मरा है, प्रायः सारा दिन घर से बाहर ही रहने लगी है। तीन घंटे भजन-कीर्तन के बाद भी उसके चेहरे से खीज की रेखाएँ नहीं जातीं। अरुणा के अपने दुःख अलग हैं जिनसे निष्कृति पाने की चेष्टा में उसकी कलाइयों पर परमानेंट दाग रह गये हैं। जगह-जगह भटकने पर अरुणा अपने शहर लौट आती है। अब तक उसकी नियुक्ति बाहर के शहरों में ही रही थी।

आधुनिकता के नाम पर आर्थिक लोभ के कारण एक पत्नी का शोषण स्त्री-पुरुषों के संबंधों में दूरियाँ पैदा कर देता है। 'स्वीकृति' कहानी के पति-पत्नी रुचि में अंतर के कारण एक-दूसरे से दूर हो जाते हैं। जिसका परिणाम पति-पत्नी, सत्य और जपा दोनों को भुगतना पड़ता है। पति अपनी नवविवाहिता पत्नी को सिर्फ पैसे कमाने के साधन के रूप में देखता है। लेकिन पत्नी-पति के साथ रहकर उसके साहचर्य का सुख उठाना चाहती है। परिणामस्वरूप दोनों के संबंधों में तनाव उत्पन्न हो जाता है।

उषा प्रियंवदा में कहानी लेखन की एक विशेष कला है। वे अपने मुद्दों, विचारों को सीधे-सीधे बयान नहीं करती, बल्कि एक विशेष वातावरण तैयार करती हैं, जिसमें मुख्य पात्र उतरता-चढ़ता रहता है। कहानी के पात्रों के उतार-चढ़ाव, उनके व्यवहार, उनकी बातचीत आदि से ही सारी स्थिति स्पष्ट हो जाती है। उषा प्रियंवदा की कहानियों में निहित बोध में सबसे अधिक स्वर जो उभरकर आता है वह है अकेलेपन और उदासीनता का। आज इस भाग-दौड की जिन्दगी में व्यक्ति चाहे कितना भी अपने मित्र, परिचित, प्रेम या परिवार के साथ रह ले, लेकिन कहीं-न-कहीं से कभी-न-कभी वह अपने आप को अकेला महसूस करता है और अकेलेपन की ओर अग्रसर होता है, जो उसके जीवन को नीरस बना देता है। उषा प्रियंवदा के ये सब पात्र एक अधूरा और यातनाप्रद जीवन जी रहे हैं। अपने देश से बाहर किसी सम्पन्न और पराये मुल्क में अकेला और अलग रहना इस यंत्रणा का एक विशिष्ट पहलू है जिसको उनकी ये कहानियाँ निरंतर रेखांकित करती हैं। आधुनिकता और पाश्चात्य सभ्यता के प्रभाव के बीच आधुनिक नारी इतना बिखर गई है कि उसका कोई निजी स्तर नहीं रह गया है। वह न तो पूर्णरूप से पाश्चात्य संस्कारों से प्रभावित हो पाती है और न ही भारतीय आदर्शों को निभा पाती है। अर्थ और स्वार्थ पर टिके वैवाहिक जीवन की जटिलता का सशक्त चित्रण उनकी कहानियों में प्रमुखता से मिलता है। जीवन के छोटे-बड़े अनुभवों एवं संवेदना को कुशलता के साथ व्यक्त करके आप्रवासी

भारतीय नारियों की विविध पक्षों का यथा वृद्ध समस्या आदि का भी पूर्ण संवेदनात्मक चित्रण उषा जी के कथा साहित्य में मिलता है।

बोध प्रश्न

- उषा प्रियंवदा का पहले कहानी संग्रह का शीर्षक क्या है अतः कब प्रकाशित हुआ?
- उषा प्रियंवदा की कहानियों का कौन-सा पक्ष है जो पहली बार हिन्दी कहानी में गहरी संवेदनशीलता के साथ उभर कर आया।
- किस कहानी के माध्यम से पूर्वी व पश्चिमी संस्कारों के अंतर को बड़ी बारीकी से दिखाया है।
- पारिवारिक संबंधों के बिखरते पक्ष को उषा प्रियंवदा ने किस कहानी में अभिव्यक्त किया हैं?
- महिला कहानीकारों में उषा प्रियंवदा को बतौर कहानीकार कैसे देखते हैं?
- आधुनिकता के आईने में उषा प्रियंवदा की कहानी कला की विशेषता क्या है?

11.4 पाठ सार

हिन्दी साहित्य के सातवें दशक से लेखिकाओं ने सूक्ष्मता से अपने विचारों को अभिव्यक्त किया है। लेखिकाओं ने साहित्य की विविध विधाओं में लेखनी चलाई और नारी जीवन से जुडी हर समस्या को साहित्य के माध्यम से जनमानस तक लाने का प्रयास किया है। महिला कथाकारों ने कथा साहित्य के माध्यम से अपनी मौलिक सृजन प्रतिभा से हिन्दी साहित्य संसार को नया मोड दिया है, इसलिए इनका कथा साहित्य हिन्दी जगत् के लिए बहुत ही मौलिक एवं महत्त्वपूर्ण रहा है।

सभी लेखिकाओं ने नारी के व्यक्तित्व को एक ठोस धरातल प्रदान किया है और नारी जीवन की विडंबना को सूक्ष्मता तथा गंभीरता से अंकित किया है। इसके साथ ही मानवीय जीवन से संबंधित विविध पहलुओं को भी संवेदनात्मक दृष्टि से देखा और परखा है। स्त्री कथाकारों में उषा प्रियंवदा का लेखकीय दृष्टि से विशेष महत्त्व रहा है। इन्होंने वापसी कहानी से हिन्दी कहानी के क्षेत्र में एक विशिष्ट पहचान स्थापित की है। उषा प्रियंवदा ने आधुनिकता की चुनौती को स्वीकार कर जीवन को उसके वास्तविक रूप में पहचाना है। समकालीन महिला कथाकारों में उषा प्रियंवदा एक उल्लेखनीय लेखिका है जो अपनी विशिष्ट लेखन शैली के कारण साहित्य जगत् में सफलता हासिल कर पाई है। इनका कथा-साहित्य मानवीय संवेदनाओं के साथ गहराई से जुड़ा हुआ है।

11.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं -

1. उषा प्रियंवदा के कथा साहित्य का केंद्र नारी, उसकी सुख दुखात्मक स्थितियां, अंतर्द्वंद, आकांक्षा तथा पुरुष के साथ उसका संबंध है।
2. उनकी रचनाओं में भारत और अमेरिका की विरोधी संस्कृतियों की टकराहट भी सुनाई देती है। विषय की एकरूपता होते हुए भी सजीव, यथार्थ, परिवेश चित्रण तथा सुगम, सुबोध, भाव व पात्रानुकूल भाषा-शैली की रवानगी के कारण उनकी कृतियां सरस और रोचक हैं।

3. अनेक समकालीन साहित्यकारों ने नारी के संत्रस्त जीवन के प्रति संवेदना रखते हुए भी उसके द्वारा भोगी जाने वाली शारीरिक, मानसिक यातनाओं का अंकन नहीं किया। लेकिन उषा जी ने अपने लेखन में साहस का परिचय दिया है।
4. उषा प्रियंवदा सदियों से उपेक्षित, सड़े-गले रीति-रिवाजों और मर्यादाओं के थोथे आवरण में जकड़ी, छटपटाती नारी की मुक्ति और उसे स्वतंत्र अस्मिता की पहचान कराने के लिए प्रयत्नशील लेखिकाओं में अग्रणी हैं।
5. उषा प्रियंवदा का लेखन केवल स्त्री प्रश्नों तक सीमित नहीं है। उन्होंने इससे आगे बढ़कर मानवीय जीवन से संबंधित विविध पहलुओं को भी संवेदनात्मक दृष्टि से देखा और परखा है।

11.6 शब्द संपदा

1. अंतर्द्वंद्व = ऊहापोह, कशमकश, मानसिक संघर्ष, अंदर ही अंदर चलने वाला द्वंद्व, दुविधा
2. अध्यापन = पढ़ाने का कार्य, विद्यार्थियों को पढ़ाने की वृत्ति या पेशा
3. अनुसंधान = किसी विषय का अच्छी तरह अनुशीलन करके उसके संबंध में नई बातों या तथ्यों का पता लगाने की क्रिया
4. अस्मिता = अपनी सत्ता का भाव
5. आयाम = किसी भी मत, धारणा या पदार्थ के विविध पहलू
6. उदासीनता = खिन्नता, उदासीन होने की अवस्था या भाव, तटस्थता; विरक्ति, मायूसी।
7. कुंठित = जड़, मूर्ख
8. खोखली = निरर्थक, सारहीन, भावशून्य, शक्तिहीन, दुर्बल
9. धरातल = ऊपरी सतह, पृथ्वी, भूमि, ज़मीन।
10. नीरस = फीका
11. भुक्तभोगी = जिसने सुख-दुख झेला हो, जिसे किसी अपराध का फल भोगना पड़ा हो।
12. मध्यमवर्गीय = आर्थिक व सामाजिक रूप से मानव समाज का बीच का वर्ग
13. यातना = कष्ट
14. लम्पट = कामी, व्यभिचारी
15. लीक = लकीर, रेखा, मर्यादा
16. विडंबना = नकल उतारना, चिढ़ाना
17. विमर्श = विचार, विवेचन, परीक्षण
18. विसंगति = समकालीन जीवन की वह स्थिति जहाँ प्रत्येक मूल्य या धारणा का ठीक विपरीत या उल्टा रूप दिखाई पड़ता है

19. संत्रस्त = संतापित

20. समकालीन = एक ही समय का

21. सम्बल = सहारा, ताकत

22. सेवानिवृत्त = रिटायर्ड

11.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

11.7.1 सही विकल्प चुनिए -

1. उषा प्रियंवदा का संबंध मुख्य रूप से किस साहित्यिक आंदोलन से माना जाता है?

A. छायावाद B. प्रगतिशील आंदोलन **C. नई कहानी आंदोलन** D. प्रयोगवाद

2. प्रसिद्ध कहानी 'वापसी' में सेवानिवृत्त होने के बाद कौन सा पात्र अपने घर लौटता है?

A. सुबोध B. हेम **C. गजाधर बाबू** D. नटराजन

3. उषा प्रियंवदा ने अपनी उच्च शिक्षा (MA और PhD) किस विषय में पूर्ण की थी?

A. संस्कृत साहित्य B. हिन्दी साहित्य **C. अंग्रेज़ी साहित्य** D. समाजशास्त्र

4. लेखिका की रचनाओं में 'मछलियाँ' और 'प्रतिध्वनि' किन विशेषताओं को उजागर करती हैं?

A. वीरता और देशभक्ति की भावना **B. नारी की समर्पण भावना और स्त्रियोचित ईर्ष्या**

C. धार्मिक कट्टरता और परंपरा D. ग्रामीण जीवन और कृषि समस्याएँ

5. उषा प्रियंवदा की कहानियों में 'अकेलापन' और 'उदासी' का प्रमुख कारण क्या है?

A. राजनीतिक अस्थिरता B. प्राकृतिक आपदाओं का प्रभाव

C. आधुनिक भौतिकवादी जगत और रिश्तों की दूरियाँ D. शिक्षा का अभाव

6. कहानी 'चाँदनी में बर्फ पर' के माध्यम से लेखिका ने क्या दर्शाने का प्रयास किया है?

A. पर्वतारोहण की कठिनाइयाँ B. वैज्ञानिक अनुसंधान की प्रगति

C. पूर्वी और पश्चिमी संस्कारों का द्वंद्व D. स्वतंत्रता संग्राम का इतिहास

7. 'पचपन खंभे लाल दीवारें' और 'रुकोगी नहीं राधिका' उषा प्रियंवदा की किस साहित्यिक विधा की रचनाएँ हैं?

A. कहानी संग्रह B. आत्मकथा C. कविता **D. उपन्यास**

8. उषा प्रियंवदा की कहानी कला की वह कौन सी विशेषता है जिसे विजयमोहन सिंह ने रेखांकित किया है?

A. कल्पनालोक और जादुई यथार्थवाद

B. छंदबद्ध भाषा शैली

C. विशिष्ट मानसिक और परिवेशगत वातावरण रचना

D. हास्य और व्यंग्य का अत्यधिक प्रयोग

9. उषा प्रियंवदा के किस कहानी संग्रह को देवी शंकर अवस्थी ने 'सामान्य अनुभवों को नया संदर्भ देने वाला' बताया है?

A. वनवास B. शून्य C. कितना बड़ा झूठ **D. जिंदगी और गुलाब के फूल**

10. कहानी 'सुरंग' में कौन सी घटना पात्रों के घर में गूँजती सीटी और दुखद यादों का कारण है?

A. अरुणा के भाई की सुरंग में हुई मौत B. युद्ध का आरंभ होना

C. आर्थिक तंगी के कारण घर बिकना D. पिता का घर छोड़कर चले जाना

खंड (ब)

11.7.2 लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. उषा प्रियंवदा के विदेश प्रवास के संबंध में लिखिए।
2. उषा प्रियंवदा की शैक्षणिक पृष्ठभूमि के बारे में बताइए।
3. हिन्दी कहानी में उषा प्रियंवदा के स्थान के संबंध में चर्चा कीजिए।

खंड (स)

11.7.3 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. उषा प्रियंवदा के लेखन यात्रा पर प्रकाश डालें।
2. समकालीन महिला कथाकार में उषा प्रियंवदा दूसरे कहानीकारों से कैसे अलग है?

11.8 पठनीय पुस्तकें

1. नई कहानी - उपलब्धि और सीमाएँ : शेखावत गोरधनसिंह
2. संपूर्ण कहानियाँ : उषा प्रियंवदा
3. हिन्दी कहानी का इतिहास : गोपाल राय

इकाई 12 : 'वापसी' (उषा प्रियंवदा) : तात्विक विवेचन

रूपरेखा

12.1 प्रस्तावना

12.2 उद्देश्य

12.3 मूल पाठ : 'वापसी' (उषा प्रियंवदा) : तात्विक विवेचन

12.3.1 विषयवस्तु

12.3.2 कहानी के तत्वों की दृष्टि से 'वापसी' का विवेचन

12.4 पाठ सार

12.5 पाठ की उपलब्धियाँ

12.6 शब्द संपदा

12.7 परीक्षार्थ प्रश्न

12.8 पठनीय पुस्तकें

12.1 प्रस्तावना

वापसी कहानी आज के आधुनिक जीवन में पारिवारिक विसंगति को रेखांकित करने वाली मार्मिक कहानी है। गजाधर बाबू रेलवे की नौकरी के कारण अपने परिवार से वर्षों तक अलग रहते हैं अतः जब वे सेवानिवृत्त होकर जब घर लौट आते हैं, तब उन्हें अहसास होता है कि उनकी उपस्थिति अपने ही घर में असंगत है। इस कहानी में गजाधर बाबू के अकेलेपन की पीड़ा को, समाज के साथ आधुनिक पीढ़ी की बदली हुई मानसिकता को तथा सामजिक परिवर्तनों के साथ लोगों के बीच बदलते संबंधों को यथार्थ रूप में प्रकट किया गया है। आजीवन परिवार का बोझ ढोने के बावजूद परिवार का मुखिया अर्थात गजाधर बाबू अकेले रहने के लिए विवश हो जाते हैं। उनका अकेलापन आधुनिक जीवन के मध्य उभरती हुई विवशता का अकेलापन है। आज सभी परिवारों की पुराणी पीढ़ी इस समस्या का शिकार है अथवा इस समस्या से जूझ रही है। लेखिका ने इस कहानी के माध्यम से इसी समस्या पर प्रकाश डाला है।

12.2 उद्देश्य

इस कहानी के माध्यम से आप

- कहानी 'वापसी' के प्रतिपाद्य का विवेचन कर सकेंगे।
- 'वापसी' में निहित पारिवारिक जीवन की विसंगतियों को समझ सकेंगे।
- आधुनिक जीवन में बदलते मानवीय मूल्यों एवं संबंधों की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- परिवार में स्नेह एवं आत्मीयता के अभाव में एक सेवानिवृत्त व्यक्ति के एकाकीपन तथा अजनबीपन की पीड़ा को समझ सकेंगे।

- पुरानी पीढ़ी तथा नए पीढ़ी के संबंधों में आ रहे बदलाव को जान सकेंगे।
- कहानी के तत्वों की कसौटी पर 'वापसी' की समीक्षा कर सकेंगे।

12.3 मूल पाठ : वापसी (उषा प्रियंवदा) : तात्विक विवेचन

प्रिय छात्रो! कहानी कला के तत्वों के आधार पर उषा प्रियंवदा की कहानी 'वापसी' की परख करने से पूर्व इस कहानी के प्रतिपाद्य को समझना जरूरी है। इसलिए आइए, पहले विवेच्य कहानी की विषयवस्तु से परिचित हो लें।

12.3.1 विषयवस्तु

गजाधर बाबू ने कमरे में जमा सामान पर एक नजर दौड़ाई - दो बक्स, डोलची, बालटी- 'यह डिब्बा कैसा है, गनेशी?' उन्होंने पूछा। गनेशी बिस्तर बाँधता हुआ, कुछ गर्व, कुछ दुख, कुछ लज्जा से बोला, 'घरवाली ने साथ को कुछ बेसन के लड्डू रख दिए हैं। कहा, बाबूजी को पसंद थे। अब कहाँ हम गरीब लोग, आपकी कुछ खातिर कर पाएँगे।' घर जाने की खुशी में भी गजाधर बाबू ने एक विषाद का अनुभव किया, जैसे एक परिचित, स्नेह, आदरमय, सहज संसार से उनका नाता टूट रहा हो।

"कभी-कभी हम लोगों की भी खबर लेते रहिएगा।" गनेशी बिस्तर में रस्सी बाँधता हुआ बोला।

"कभी कुछ जरूरत हो तो लिखना गनेशी। इस अगहन तक बिटिया की शादी कर दो।"

गनेशी ने अँगोछे के छोर से आँखें पोंछीं, "अब आप लोग सहारा न देंगे, तो कौन देगा? आप यहाँ रहते तो शादी में कुछ हौसला रहता।"

गजाधर बाबू चलने को तैयार बैठे थे। रेलवे क्वार्टर का यह कमरा, जिसमें उन्होंने कितने वर्ष बिताए थे, उनका सामान हट जाने से कुरूप और नग्न लग रहा था। आँगन में रोपे पौधे भी जान-पहचान के लोग ले गए थे और जगह-जगह मिट्टी बिखरी हुई थी। पर पत्नी, बाल-बच्चों के साथ रहने की कल्पना में यह बिछोह एक दुर्बल लहर की तरह उठ कर विलीन हो गया।

गजाधर बाबू खुश थे, बहुत खुश। पैंतीस साल की नौकरी के बाद वह रिटायर हो कर जा रहे थे। इन वर्षों में अधिकांश समय उन्होंने अकेले रह कर काटा था। उन अकेले क्षणों में उन्होंने इसी समय की कल्पना की थी, जब वह अपने परिवार के साथ रह सकेंगे। इसी आशा के सहारे वह अपने अभाव का बोझ ढो रहे थे। संसार की दृष्टि में उनका जीवन सफल कहा जा सकता था। उन्होंने शहर में एक मकान बनवा लिया था, बड़े लड़के अमर और लड़की कांति की शादियाँ कर दी थीं, दो बच्चे ऊँची कक्षाओं में पढ़ रहे थे। गजाधर बाबू नौकरी के कारण प्रायः छोटे स्टेशनों पर रहे और उनके बच्चे और पत्नी शहर में, जिससे पढ़ाई में बाधा न हो। गजाधर बाबू स्वभाव से बहुत स्नेही व्यक्ति थे और स्नेह के आकांक्षी भी। जब परिवार साथ था, ड्यूटी से लौट कर बच्चों से हँसते-बोलते, पत्नी से कुछ मनोविनोद करते, उन सबके चले जाने से उनके जीवन में गहन सूनापन भर उठा। खाली क्षणों में उनसे घर में टिका न जाता। कवि प्रकृति के न होने पर भी उन्हें पत्नी की स्नेहपूर्ण बातें याद आती रहतीं। दोपहर में गर्मी होने पर भी, दो बजे तक आग जलाए रहती और उनके स्टेशन से वापस आने पर गरम-गरम रोटियाँ सेंकती... उनके खा चुकने

और मना करने पर भी थोड़ा-सा कुछ और थाली में परोस देती और बड़े प्यार से आग्रह करती। जब वह थके-हारे बाहर से आते, तो उनकी आहट पा वह रसोई के द्वार पर निकल आती और उसकी सलज्ज आँखें मुस्करा उठतीं। गजाधर बाबू को तब हर छोटी बात भी याद आती और वह उदास हो उठते... अब कितने वर्षों बाद वह अवसर आया था, जब वह फिर उसी स्नेह और आदर के मध्य रहने जा रहे थे।

बोध प्रश्न

- घर जाने की खुशी में भी गजाधर बाबू ने एक विषाद का अनुभव क्यों किया?
- किस आशा के सहारे गजाधर बाबू अपने अभाव का बोझ ढो रहे थे?
- गजाधर बाबू स्वभाव से कैसे व्यक्ति थे?

टोपी उतार कर गजाधर बाबू ने चारपाई पर रख दी, जूते खोल कर नीचे खिसका दिए, अंदर से रह-रह कर कहकहों की आवाज आ रही थी। इतवार का दिन था और उनके सब बच्चे इकठ्ठे हो कर नाश्ता कर रहे थे। गजाधर बाबू के सूखे चेहरे पर स्निग्ध मुस्कान आ गई, उसी तरह मुस्कराते हुए वह बिना खाँसे अंदर चले आए। उन्होंने देखा कि नरेंद्र कमर पर हाथ रखे शायद गत रात्रि की फिल्म में देखे गए किसी नृत्य की नकल कर रहा था और बसंती हँस-हँस कर दुहरी हो रही थी। अमर की बहू को अपने तन-बदन, आँचल या घूँघट का कोई होश न था और वह उन्मुक्त रूप से हँस रही थी। गजाधर बाबू को देखते ही नरेंद्र धप से बैठ गया और चाय का प्याला उठा कर मुँह से लगा लिया। बहू को होश आया और उसने झट से माथा ढक लिया, केवल बसंती का शरीर रह-रह कर हँसी दबाने के प्रयत्न में हिलता रहा।

गजाधर बाबू ने मुस्कराते हुए उन लोगों को देखा। फिर कहा, 'क्यों नरेंद्र, क्या नकल हो रही है?' 'कुछ नहीं बाबूजी।' नरेंद्र ने सिटपिटा कर कहा। गजाधर बाबू ने चाहा था कि वह भी इस मनोविनोद में भाग लेते, पर उनके आते ही जैसे सब कुंठित हो चुप हो गए। उससे उनके मन में थोड़ी-सी खिन्नता उपज आई। बैठते हुए बोले, 'बसंती, चाय मुझे भी देना। तुम्हारी अम्मा की पूजा अभी चल रही है क्या?'

बसंती ने माँ की कोठरी की ओर देखा, 'अभी आती ही होंगी', और प्याले में उनके लिए चाय छानने लगी। बहू चुपचाप पहले ही चली गई थी, अब नरेंद्र भी चाय का आखिरी घूँट पी कर उठ खड़ा हुआ, केवल बसंती, पिता के लिहाज में, चौके में बैठी माँ की राह देखने लगी। गजाधर बाबू ने एक घूँट चाय पी, फिर कहा, 'बिट्टी - चाय तो फीकी है।'

'लाइए चीनी और डाल दूँ।' बसंती बोली।

'रहने दो, तुम्हारी अम्मा जब आएगी, तभी पी लूँगा।'

थोड़ी देर में उनकी पत्नी हाथ में अर्ध्य का लोटा लिए निकली और अशुद्ध स्तुति कहते हुए तुलसी में डाल दिया। उन्हें देखते ही बसंती भी उठ गई। पत्नी ने आ कर गजाधर बाबू को देखा और कहा, 'अरे, आप अकेले बैठे हैं - ये सब कहाँ गए?' गजाधर बाबू के मन में फाँस-सी करक उठी, 'अपने-अपने काम में लग गए है -आखिर बच्चे ही है।'

पत्नी आकर चौके में बैठ गईं, उन्होंने नाक-भौं चढ़ा कर चारों ओर जूठे बर्तनों को देखा। फिर कहा, 'सारे में जूठे बर्तन पड़े हैं। इस घर में धरम-धरम कुछ नहीं। पूजा करके सीधे चौके में

घुसो।' फिर उन्होंने नौकर को पुकारा, जब उत्तर न मिला तो एक बार और उच्च स्वर में, फिर पति की ओर देख कर बोलीं, 'बहू ने भेजा होगा बाजार।' और एक लंबी साँस ले कर चुप हो रहीं।

गजाधर बाबू बैठकर चाय और नाश्ते का इंतजार करते रहे। उन्हें अचानक ही गनेशी की याद आ गई। रोज सुबह, पैसेंजर आने से पहले वह गरम-गरम पूरियाँ और जलेबी बनाता था। गजाधर बाबू जब तक उठ कर तैयार होते, उनके लिए जलेबियाँ और चाय ला कर रख देता था। चाय भी कितनी बढ़िया, काँच के गिलास में ऊपर तक भरी लबालब, पूरे ढाई चम्मच चीनी और गाढ़ी मलाई। पैसेंजर भले ही रानीपुर लेट पहुँचे, गनेशी ने चाय पहुँचाने मे कभी देर नहीं की। क्या मजाल कि कभी उससे कुछ कहना पड़े।

पत्नी का शिकायत-भरा स्वर सुन उनके विचारों में व्याघात पहुँचा। वह कह रही थीं, 'सारा दिन इसी खिच-खिच में निकल जाता है। इस गृहस्थी का धंधा पीटते-पीटते उमर बीत गई। कोई जरा हाथ भी नहीं बँटाता।'

'बहू क्या किया करती है?' गजाधर बाबू ने पूछा।

'पड़ी रहती है। बसंती को तो, फिर कहो कॉलेज जाना होता है।'

गजाधर बाबू ने प्यार से समझाया, 'तुम सुबह पढ़ लिया करो। तुम्हारी माँ बूढ़ी हुई, उनके शरीर में अब वह शक्ति नहीं बची हैं। तुम हो, तुम्हारी भाभी है, दोनों मिल कर काम में हाथ बँटाना चाहिए।'

बसंती चुप रह गई। उसके जाने के बाद उसकी माँ ने धीरे से कहा, 'पढ़ने का तो बहाना है। कभी जी ही नहीं लगता। लगे कैसे? शीला से ही फुरसत नहीं, बड़े-बड़े लड़के हैं उनके घर में, हर वक्त वहाँ घुसा रहना, मुझे नहीं सुहाता। मना करूँ तो सुनती नहीं।'

नाश्ता कर गजाधर बाबू बैठक में चले गए। घर छोटा था और ऐसी व्यवस्था हो चुकी थी कि उसमें गजाधर बाबू के रहने के लिए कोई स्थान न बचा था। जैसे किसी मेहमान के लिए कुछ अस्थायी प्रबंध कर दिया जाता है, उसी प्रकार बैठक में कुरसियों को दीवार से सटा कर बीच में गजाधर बाबू के लिए पतली-सी चारपाई डाल दी गई थी। गजाधर बाबू उस कमरे में पड़े-पड़े, कभी-कभी अनायास ही, इस अस्थायित्व का अनुभव करने लगते। उन्हें याद हो आती उन रेलगाड़ियों की, जो आतीं और थोड़ी देर रुक कर किसी और लक्ष्य की ओर चली जातीं।

घर छोटा होने के कारण बैठक में ही अब अपना प्रबंध किया था। उनकी पत्नी के पास अंदर एक छोटा कमरा अवश्य था, पर वह एक ओर के मर्तबान, दाल-चावल के कनस्तर और घी के डिब्बों से घिरा था; दूसरी ओर पुरानी रजाइयाँ दरियों में लिपटी और रस्सी से बँधी रखी थीं; उसके पास एक बड़े-से टीन के बक्स में घर भर के गरम कपड़े थे। बीच में एक अलगनी बँधी हुई थी, जिस पर प्रायः बसंती के कपड़े लापरवाही से पड़े रहते थे। वह भरसक उस कमरे में नहीं जाते थे। घर का दूसरा कमरा अमर और उसकी बहू के पास था, तीसरा कमरा, जो सामने की ओर था, बैठक था। गजाधर बाबू के आने से पहले उसमें अमर की ससुराल से आया बेंत की तीन कुरसियों का सेट पड़ा था, कुरसियों पर नीली गद्दियाँ और बहू के हाथों के कढ़े कुशन थे।

बोध प्रश्न

- गजाधर बाबू को अचानक ही गनेशी की याद क्यों आई?
- गजाधर बाबू के रहने का प्रबंध बैठक में क्यों किया गया था?

जब कभी उनकी पत्नी को कोई लंबी शिकायत करनी होती, तो अपनी चटाई बैठक में डाल पड़ जाती थीं। वह एक दिन चटाई ले कर आ गईं। गजाधर बाबू ने घर-गृहस्थी की बातें छेड़ीं, वह घर का रवैया देख रहे थे। बहुत हल्के से उन्होंने कहा कि अब हाथ में पैसा कम रहेगा, कुछ खर्च कम होना चाहिए।

'सभी खर्च तो वाजिब-वाजिब हैं, किसका पेट काटूँ? यही जोड़-गाँठ करते-करते बूढ़ी हो गई, न मन का पहना, न ओढ़ा।'

गजाधर बाबू ने आहत, विस्मित दृष्टि से पत्नी को देखा। उनसे अपनी हैसियत छिपी न थी। उनकी पत्नी तंगी का अनुभव कर उसका उल्लेख करतीं। यह स्वाभाविक था, लेकिन उनमें सहानुभूति का पूर्ण अभाव गजाधर बाबू को बहुत खटका। उनसे यदि राय-बात की जाय कि प्रबंध कैसे हो, तो उन्हें चिंता कम, संतोष अधिक होता। लेकिन उनसे तो केवल शिकायत की जाती थी, जैसे परिवार की सब परेशानियों के लिए वही जिम्मेदार थे।

'तुम्हें किस बात की कमी है अमर की माँ - घर में बहू है, लड़के-बच्चे हैं, सिर्फ रुपये से ही आदमी अमीर नहीं होता।' गजाधर बाबू ने कहा और कहने के साथ ही अनुभव किया। यह उनकी आंतरिक अभिव्यक्ति थी - ऐसी कि उनकी पत्नी नहीं समझ सकती। 'हाँ, बड़ा सुख है न बहू से। आज रसोई करने गई है, देखो क्या होता है?' कहकर पत्नी ने आँखें मूँदीं और सो गईं। गजाधर बाबू बैठे हुए पत्नी को देखते रह गए। यही थी क्या उनकी पत्नी, जिसके हाथों के कोमल स्पर्श, जिसकी मुस्कान की याद में उन्होंने संपूर्ण जीवन काट दिया था? उन्हें लगा कि लावण्यमयी युवती जीवन की राह में कहीं खो गई है और उसकी जगह आज जो स्त्री है, वह उनके मन और प्राणों के लिए नितांत अपरिचित है। गाढ़ी नींद में डूबी उनकी पत्नी का भारी-सा शरीर बहुत बेडौल और कुरूप लग रहा था, चेहरा श्रीहीन और रूखा था। गजाधर बाबू देर तक निस्संग दृष्टि से पत्नी को देखते रहे और फिर लेट कर छत की और ताकने लगे।

अंदर कुछ गिरा और उनकी पत्नी हड़बड़ा कर उठ बैठीं, 'लो बिल्ली ने कुछ गिरा दिया शायद', और वह अंदर भागीं। थोड़ी देर में लौट कर आईं तो उनका मुँह फूला हुआ था, 'देखा बहू को, चौका खुला छोड़ आई, बिल्ली ने दाल की पतीली गिरा दी। सभी तो खाने को हैं, अब क्या खिलाऊँगी?' वह साँस लेने को रुकीं और बोलीं, 'एक तरकारी और चार पराँठे बनाने में सारा डिब्बा घी उँड़ेल कर रख दिया। जरा-सा दर्द नहीं है, कमाने वाला हाड़ तोड़े और यहाँ चीजें लुटें। मुझे तो मालूम था कि यह सब काम किसी के बस का नहीं है।'

गजाधर बाबू को लगा कि पत्नी कुछ और बोलेगी तो उनके कान झनझना उठेंगे। ओंठ भींच, करवट ले कर उन्होंने पत्नी की ओर पीठ कर ली।

रात का भोजन बसंती ने जान-बूझ कर ऐसा बनाया था कि कौर तक निगला न जा सके। गजाधर बाबू चुपचाप खा कर उठ गए, पर नरेंद्र थाली सरका कर उठ खड़ा हुआ और बोला, 'मैं ऐसा खाना नहीं खा सकता।'

बसंती तुनक कर बोली, 'तो न खाओ, कौन तुम्हारी खुशामद करता है।'

'तुमसे खाना बनाने को कहा किसने था?' नरेंद्र चिल्लाया।

'बाबूजी ने।'

'बाबूजी को बैठे-बैठे यही सूझता है।'

बसंती को उठा कर माँ ने नरेंद्र को मनाया और अपने हाथ से कुछ बना कर खिलाया। गजाधर बाबू ने बाद में पत्नी से कहा, 'इतनी बड़ी लड़की हो गई और उसे खाना बनाने तक का नहीं आया।'

'अरे, आता तो सब कुछ है, करना नहीं चाहती।' पत्नी ने उत्तर दिया। अगली शाम माँ को रसोई में देख, कपड़े बदल कर बसंती बाहर आई, तो बैठक से गजाधर बाबू ने टोक दिया, 'कहाँ जा रही हो?'

'पड़ोस में शीला के घर।' बसंती ने कहा।

'कोई जरूरत नहीं है, अंदर जा कर पढ़ो।' गजाधर बाबू ने कड़े स्वर में कहा। कुछ देर अनिश्चित खड़े रह कर बसंती अंदर चली गई। गजाधर बाबू शाम को रोज टहलने चले जाते थे, लौट कर आए तो पत्नी ने कहा, 'क्या कह दिया बसंती से? शाम से मुँह लपेटे पड़ी है। खाना भी नहीं खाया।'

गजाधर बाबू खिन्न हो आए। पत्नी की बात का उन्होंने कुछ उत्तर नहीं दिया। उन्होंने मन में निश्चय कर लिया कि बसंती की शादी जल्दी ही कर देनी है। उस दिन के बाद बसंती पिता से बची-बची रहने लगी। जाना होता तो पिछवाड़े से जाती। गजाधर बाबू ने दो-एक बार पत्नी से पूछा तो उत्तर मिला, 'रूठी हुई है।' गजाधर बाबू को रोष हुआ। लड़की के इतने मिजाज, जाने को रोक दिया तो पिता से बोलेगी नहीं। फिर उनकी पत्नी ने ही सूचना दी कि अमर अलग रहने की सोच रहा है।

'क्यों?' गजाधर बाबू ने चकित हो कर पूछा।

पत्नी ने साफ-साफ उत्तर नहीं दिया। अमर और उसकी बहू की शिकायतें बहुत थीं। उनका कहना था कि गजाधर बाबू हमेशा बैठक में ही पड़े रहते हैं, कोई आने-जानेवाला हो तो कहीं बिठाने को जगह नहीं। अमर को अब भी वह छोटा-सा समझते थे और मौके-बेमौके टोक देते थे। बहू को काम करना पड़ता था और सास जब-तब फूहड़पन पर ताने देती रहती थीं। 'हमारे आने से पहले भी कभी ऐसी बात हुई थी?' गजाधर बाबू ने पूछा। पत्नी ने सिर हिला कर बताया कि नहीं। पहले अमर घर का मालिक बन कर रहता था, बहू को कोई रोक-टोक न थी, अमर के दोस्तों का प्रायः यहीं अड्डा जमा रहता था और अंदर से नाश्ता चाय तैयार हो कर जाता रहता था। बसंती को भी वही अच्छा लगता था।

गजाधर बाबू ने बहुत धीरे से कहा, 'अमर से कहो, जल्दबाजी की कोई जरूरत नहीं है।'

अगले दिन वह सुबह घूम कर लौट तो उन्होंने पाया कि बैठक में उनकी चारपाई नहीं है। अंदर जा कर पूछने ही वाले थे कि उनकी दृष्टि रसोई के अंदर बैठी पत्नी पर पड़ी। उन्होंने यह कहने को मुँह खोला कि बहू कहाँ है, पर कुछ याद कर चुप हो गए। पत्नी की कोठरी में झाँका तो अचार, रजाइयों और कनस्तरों के मध्य अपनी चारपाई लगी पाई। गजाधर बाबू ने कोट उतारा और कहीं टाँगने को दीवार पर नजर दौड़ाई। फिर उसे मोड़ कर अलगनी के कुछ कपड़े खिसका कर एक किनारे टाँग दिया। कुछ खाए बिना ही अपनी चारपाई पर लेट गए। कुछ भी हो, तन आखिरकार बूढ़ा ही था। सुबह-शाम कुछ दूर टहलने अवश्य चले जाते, पर आते-जाते थक उठते थे। गजाधर बाबू को अपना बड़ा-सा क्वार्टर याद आ गया। निश्चित जीवन, सुबह पैसेंजर ट्रेन आने पर स्टेशन की चहल-पहल, चिर-परिचित चेहरे और पटरी पर रेल के पहियों की खट-खट, जो उनके लिए मधुर संगीत की तरह थी। तूफान और डाक गाड़ी के इंजनों की चिंघाड़ उनकी अकेली रातों की साथी थी। सेठ रामजी मल की मिल के कुछ लोग कभी-कभी पास आ बैठते, वही उनका दायरा था, वही उनके साथी। वह जीवन अब उन्हें एक खोई निधि-सा प्रतीत हुआ। उन्हें लगा कि वह जिंदगी द्वारा ठगे गए हैं। उन्होंने जो कुछ चाहा, उसमें से उन्हें एक बूँद भी न मिली।

बोध प्रश्न

- गजाधर बाबू ने बसंती को क्यों डाँटा?
- गजाधर बाबू को ज़िंदगी द्वारा ठगे जाने का अहसास क्यों हुआ?

लेटे हुए वह घर के अंदर से आते विविध स्वरों को सुनते रहे। बहू और सास की छोटी-सी झड़प, बाल्टी पर खुले नल की आवाज, रसोई के बर्तनों की खटपट और उसी में दो गौरैयों का वार्तालाप और अचानक ही उन्होंने निश्चय कर लिया कि अब घर की किसी बात में दखल न देंगे। यदि गृहस्वामी के लिए पूरे घर में एक चारपाई की जगह नहीं है, तो यहीं पड़े रहेंगे। अगर कहीं और डाल दी गई तो वहाँ चले जाएँगे। यदि बच्चों के जीवन में उनके लिए कहीं स्थान नहीं, तो अपने ही घर में परदेसी की तरह पड़े रहेंगे... और उस दिन के बाद सचमुच गजाधर बाबू कुछ नहीं बोले। नरेंद्र रुपये माँगने आया तो बिना कारण पूछे उसे रुपये दे दिए। बसंती काफी अँधेरा हो जाने के बाद भी पड़ोस में रही तो भी उन्होंने कुछ नहीं कहा - पर उन्हें सबसे बड़ा गम यह था कि उनकी पत्नी ने भी उनमें कुछ परिवर्तन लक्ष्य नहीं किया। वह मन-ही-मन कितना भार ढो रहे हैं, इससे वह अनजान ही बनी रहीं। बल्कि उन्हें पति के घर के मामले में हस्तक्षेप न करने के कारण शांति ही थी। कभी-कभी कह भी उठतीं, 'ठीक ही है' आप बीच में न पड़ा कीजिए, बच्चे बड़े हो गए हैं, हमारा जो कर्तव्य था, कर रहे हैं। पढ़ा रहे हैं, शादी कर देंगे।'

गजाधर बाबू ने आहत दृष्टि से पत्नी को देखा। उन्होंने अनुभव किया कि वह पत्नी और बच्चों के लिए केवल धनोपार्जन के निमित्त मात्र हैं। जिस व्यक्ति के अस्तित्व से पत्नी माँग में सिंदूर डालने की अधिकारिणी है, समाज में उसकी प्रतिष्ठा है, उसके सामने वह दो वक्त भोजन की थाली रख देने से सारे कर्तव्यों से छुट्टी पा जाती है। वह घी और चीनी के डिब्बों में इतनी रमी हुई है कि अब वही उसकी संपूर्ण दुनिया बन गई है। गजाधर बाबू उनके जीवन के केंद्र नहीं हो सकते, उन्हें तो अब बेटी की शादी के लिए भी उत्साह बुझ गया। किसी बात में हस्तक्षेप न

करने के निश्चय के बाद भी उनका अस्तित्व उस वातावरण का एक भाग न बन सका। उनकी उपस्थिति उस घर में ऐसी असंगत लगने लगी थी, जैसे सजी हुई बैठक में उनकी चारपाई थी। उनकी सारी खुशी एक गहरी उदासीनता में डूब गई।

बोध प्रश्न

- गजाधर बाबू को सबसे बड़ा गम किस बात का था?

इतने सब निश्चयों के बावजूद एक दिन बीच में दखल दे बैठे। पत्नी स्वभावानुसार नौकर की शिकायत कर रही थीं, 'कितना कामचोर है, बाजार की भी चीज में पैसा बनाता है, खाने बैठता है, तो खाता ही चला जाता है।' गजाधर बाबू को बराबर यह महसूस होता रहता था कि उनके घर का रहन-सहन और खर्च उनकी हैसियत से कहीं ज्यादा है। पत्नी की बात सुन कर कहते कि नौकर का खर्च बिलकुल बेकार है। छोटा-मोटा काम है, घर में तीन मर्द हैं, कोई न कोई कर ही देगा। उन्होंने उसी दिन नौकर का हिसाब कर दिया। अमर दफ्तर से आया तो नौकर को पुकारने लगा। अमर की बहू बोली, 'बाबूजी ने नौकर छुड़ा दिया है।'

'क्यों?'

'कहते हैं खर्च बहुत है।'

यह वार्तालाप बहुत सीधा सा था, पर जिस टोन में बहू बोली गजाधर बाबू को खटक गया। उस दिन जी भारी होने के कारण गजाधर बाबू टहलने नहीं गए थे। आलस्य में उठ कर बत्ती भी नहीं जलाई थी - इस बात से बेखबर नरेंद्र माँ से कहने लगा, 'अम्माँ, तुम बाबूजी से कहती क्यों नहीं? बैठे-बिठाए कुछ नहीं तो नौकर ही छुड़ा दिया। अगर बाबूजी यह समझें कि मैं साइकिल पर गेहूँ रख आटा पिसाने जाऊँगा, तो मुझ से यह नहीं होगा।' 'हाँ अम्माँ,' बसंती का स्वर था, 'मैं कॉलेज भी जाऊँ और लौट कर घर में झाड़ू भी लगाऊँ, यह मेरे बस की बात नहीं है।'

'बूढ़े आदमी हैं,' अमर भुनभुनाया, 'चुपचाप पड़े रहें। हर चीज में दखल क्यों देते हैं?' पत्नी ने बड़े व्यंग्य से कहा, और कुछ नहीं सूझा, तो तुम्हारी बहू को ही चौके में भेज दिया। वह गई तो पंद्रह दिन का राशन पाँच दिन में बना कर रख दिया।' बहू कुछ कहे, इससे पहले वह चौके में घुस गईं। कुछ देर में अपनी कोठरी में आईं और बिजली जलाई तो गजाधर बाबू को लेटे देख बड़ी सिटपिटाईं। गजाधर बाबू की मुख-मुद्रा से वह उनमें भावों का अनुमान न लगा सकीं। वह चुप आँखें बंद किए लेटे रहे।

गजाधर बाबू चिट्ठी हाथ में लिए अंदर आए और पत्नी को पुकारा। वह भीगे हाथ निकलीं और आँचल से पोंछती हुई पास आ खड़ी हुईं। गजाधर ने बिना किसी भूमिका के कहा, 'मुझे सेठ रामजी मल की चीनी मिल में नौकरी मिल गई है। खाली बैठे रहने से तो चार पैसे घर में आएँ, वही अच्छा है। उन्होंने तो पहले ही कहा था, मैंने ही मना कर दिया था।' फिर कुछ रुक कर, जैसे बुझी हुई आग में चिनगारी चमक उठे, उन्होंने धीमे स्वर में कहा, 'मैंने सोचा था कि बरसों तुम सबसे अलग रहने के बाद, अवकाश पा कर परिवार के साथ रहूँगा। खैर, परसों जाना है। तुम भी चलोगी?' 'मैं?' पत्नी ने सकपका कर कहा, 'मैं चलूँगी तो यहाँ का क्या होगा? इतनी बड़ी गृहस्थी, फिर सियानी लड़की...'

बात बीच में काट गजाधर बाबू ने हताश स्वर में कहा, 'ठीक है, तुम यहीं रहो। मैंने तो ऐसे ही कहा था। और गहरे मौन में डूब गए।

नरेंद्र ने बड़ी तत्परता से बिस्तर बाँधा और रिक्शा बुला लाया। गजाधर बाबू का टीन का बक्स और पतला-सा बिस्तर उस पर रख दिया गया। नाश्ते के लिए लड्डू और मठरी की डलिया हाथ में लिए गजाधर बाबू रिक्शे पर बैठ गए। दृष्टि उन्होंने अपने परिवार पर डाली। फिर दूसरी ओर देखने लगे और रिक्शा चल पड़ा। उनके जाने के बाद सब अंदर लौट आए। बहू ने अमर से पूछा, 'सिनेमा ले चलिएगा न?' बसंती ने उछल कर कहा, 'भइया, हमें भी।'

गजाधर बाबू की पत्नी सीधे चौके में चली गईं। बची हुई मठरियों को कटोरदान में रख कर अपने कमरे में लाईं और कनस्तरों के पास रख दिया, फिर बाहर आ कर कहा, 'अरे नरेंद्र, बाबू की चारपाई कमरे से निकाल दे। उसमें चलने तक की जगह नहीं है।'

बोध प्रश्न

- गजाधर बाबू ने धीमे स्वर में क्या कहा?

12.3.2 कहानी के तत्वों की दृष्टि से 'वापसी' का विवेचन

प्रस्तुत कहानी (वापसी)की सबसे बड़ी विशष्टता यह है कि कथ्य को अत्यंत सहज ढंग से सरल तथा बोलचाल की भाषा के माध्यम से गहरे और मार्मिक प्रभाव के साथ व्यक्त किया गया है। एक परिवार के चित्रण के माध्यम से दो पीढ़ियों के मध्य मानसिक तनाव, वैचारिक संघर्ष, संबंधों की शिथिलता, पति-पत्नी के मध्य सहानुभूति तथा आत्मीयता का अभाव, सेवानिवृत्त व्यक्ति के प्रति अनादर, सहनुभूतिहीनता आदि की ओर संकेत किया गया है।

बोध प्रश्न

- इस कहानी में किसकी ओर संकेत किया गया है?

1. कथावस्तु–

कहानी के तत्वों के आधार पर विवेचन करें तो हम पाते हैं कि किसी भी कहनी के **कथावस्तु** को समझने के लिए यह समझना जरूरी है कि कहानी की रचना किस लिए की गई है? इस कहानी के माध्यम से रचनाकार क्या कहना चाहता है और जो कहना चाहता है उसके लिए उसने कथानक को किस तरह विकसित किया है? इसे समझने के लिए वापसी कहानी के केंद्रीय भाव को समझना होगा। सेवानिवृत्ति के बाद गजाधर बाबू को वह दुनिया नहीं मिली जिसकी उन्होंने उम्मीद की थी। उन्हें यह अहसास हो जाता है कि अपने ही घर में वे बिन बुलाए मेहमान की तरह है। कहानी गजाधर बाबू की नौकरी से पहली वापसी से शुरू होकर घर से दूसरी वापसी में ख़त्म हो जाती है।

बोध प्रश्न

- 'वापसी' कहानी का केंद्रीय भाव क्या है?

2. चरित्र चित्रण–

चरित्र चित्रण की बात की जाए तो 'वापसी' कहानी गजाधर बाबू को केंद्र में रखकर लिखी गई है। कहानी में मुख्य चरित्र भी वही है और उन्हीं का चरित्र सबसे अधिक मुखर होकर

सामने आया है। इसके अतिरिक्त उनके पत्नी का चरित्र दूसरे पात्रों की तुलना में अधिक उभरकर आता है। शेष सभी पात्र कहानी की जरूरत के अनुसार आते-जाते रहते हैं और उनका चरित्र बहुत ज्यादा उभरकर नहीं आता।

बोध प्रश्न

- 'वापसी' कहानी के केंद्रीय पात्र का नाम बताइए।

3. परिवेश-

कहानी का **परिवेश** मध्यवर्ग का है। कहानी में भौतिक परिवेश के अलावा कई ऐसी बातें आती हैं जो यह बताती है कि गजाधर बाबू और उनका परिवार औसत दर्जे का परंपरागत मध्यवर्गीय परिवार है। अचारों के मर्तबान, चावल के कनस्तर, घी का डिब्बा, टीन के बक्स में रखे गरम कपडे, बेंत की कुर्सियाँ और इसी तरह के घरेलु सामान का उल्लेख इस तथ्य की ओर ही संकेत करता है। परिवार के लोगों का आपसी व्यवहार का रूप भी मध्यवर्गीय भारतीय परिवार के अनुरूप है।

बोध प्रश्न

- 'वापसी' कहानी का परिवेश क्या है?

4. संवाद-

'वापसी' में लेखिका ने छोटे और पात्रानुकूल संवादों की सहायता से कहानी की अभिव्यक्ति को प्रभावशाली बनाया है। इनसे पात्रों का चरित्र भी खुलता है और अंतर्द्वंद्व भी प्रकट होता है। कहानी के सूत्र को तो आगे बढ़ने में मदद मिलती ही है। उदाहरण के लिए एक संवाद देखें-

'बूढ़े आदमी हैं,' अमर भुनभुनाया, 'चुपचाप पड़े रहें। हर चीज में दखल क्यों देते हैं?'

पत्नी ने बड़े व्यंग्य से कहा, 'और कुछ नहीं सूझा, तो तुम्हारी बहू को ही चौके में भेज दिया। वह गई तो पंद्रह दिन का राशन पाँच दिन में बना कर रख दिया।'

5. भाषा-शैली-

भाषा की बात करें तो मूल कथ्य की तरह कहानी की भाषा भी यथार्थपरक है। पूरी कहानी बहुत ही सधी हुई भाषा में लिखी गई है। शब्द और वाक्यों का प्रयोग बड़ी सावधानी से किया गया है। प्रत्येक बात को इस तरह कहा गया है कि उसके पीछे की भावना का भी पाठक को बोध हो। कहानी में स्थितियों और भावों को बहुत ही संयमित भाषा में रखा गया है।

इस कहानी में प्रमुखतः वर्णनात्मक शैली का प्रयोग हुआ है। कहानी में कोई अति नाटकीय प्रसंग नहीं है। एक मध्यवर्गीय परिवार के घरेलू और यथार्थ प्रसंग ही एक-एक कर पाठकों के समक्ष आते हैं। सभी प्रसंग कहानी के मुख्य कथ्य को पुष्ट करने के लिए ही रखे गए हैं। कहानी को यथार्थवादी पद्धति से लिखा गया है। कहानी धीरे-धीरे विकसित होती है। कहानी का पूरा ताना-बाना सामान्य प्रसंगों से ही बुना गया है, लेकिन पूरे कहानी की परिणति मध्यवर्गीय परिवार में हो रहे बदलाव को बहुत ही तीखे और संवेदनशील ढंग से उभारती है। इस कहानी के शिल्प की यही विशेषता है।

कुल मिलाकर कहानी अपने कथ्य के अनुरूप शैली और भाषा में रची गयी है इसी कारण पाठक पर गहरा प्रभाव डालती है।

6. उद्देश्य -

'वापसी' एक उद्देश्यपूर्ण कहानी है। इस कहानी की संरचना के केंद्र में एक मध्यवर्गीय शहरी परिवार में बुजुर्ग लोगों की बदलती स्थिति को उभरने का उद्देश्य सक्रिय है। इस लिहाज से यह कहानी वृद्धावस्था विमर्श को पुष्ट करने वाली मार्मिक कहानी सिद्ध होती है।

12.4 पाठ सार

आधुनिकता ने जहाँ सभ्यता और संस्कृति के नए आयामों का उद्घाटन किया है वहाँ जीवन मूल्यों का विघटन, संबंधों में शिथिलता, बिखराव, अजनबीपन तथा एकाकीपन की पीड़ा भी उसकी महत्वपूर्ण देन है। 'वापसी' कहानी में इसी पीड़ा को भावबोध के स्तर पर बड़े संयमित रूप में कौशल के साथ व्यक्त किया गया है। 'वापसी' एक वातावरण प्रधान, यथार्थवादी कहानी है। इस कहानी के माध्यम से उषा प्रियंवदा ने पारिवारिक विघटन तथा संबंधों की शिथिलता का मार्मिक अंकन किया है। इस कहानी में परंपरा और आधुनिकता का द्वंद्व है। आधुनिकता के इस दौर में दो पीढ़ियों के बीच हो रहे बदलाव व टकराव का लेखा जोखा प्रस्तुत है। कहानी में सेवानिवृत्त हो कर घर लौटे गजाधर बाबू को अपने ही घर में पराया कर दिए जाने के कटु अनुभवों को चित्रित किया गया है। स्टेशन मास्टर की नौकरी से सेवानिवृत्त होने के बाद गजाधर बाबू बड़े उत्साह से अपने परिवार के साथ रहने की इच्छा लिए घर लौटते हैं। रेलवे क्वार्टर में रह कर नौकरी करते हुए गजाधर बाबू को पैंतीस सालों तक परिवार से दूर रहना पड़ा था ताकि उनका परिवार शहर में सुख- सुविधाओं के बीच रह सके। शहर में रहने से उन्हें किसी प्रकार की कमी का बोध न होने पाए। नौकरी से सेवानिवृत्त होने के बाद उन्होंने सोचा कि अब जिंदगी के बचे दिन अपने परिजनों के साथ प्यार और आराम से बिताएंगे। एक सुंदर और सुखद घर का सपना संजोए वे घर लौटे तो उन्होंने पाया कि परिवार के लोग अपने - अपने ढंग से जी रहे हैं। बेटा घर का मालिक बना हुआ है। बेटी और बहू घर का कोई काम नहीं करतीं और यदि उन्हें रसोई बनाने को कहा जाए तो वे जानबूझ कर आवश्यकता से अधिक राशन खर्च कर देती हैं इसलिए उनकी पत्नी ने घर और रसोई की सारी जिम्मेदारी अपने ऊपर ले ली है। घर के अन्य कामों के लिए नौकर रखा गया है, जिसकी कोई आवश्यकता ही नहीं है। जिस परिवार के लिए कई वर्षों तक छोटे - मोटे स्टेशन के क्वाटर में अकेले रहकर उन्होंने अपना जीवन गुजार दिया उसी परिवार के किसी सदस्य के मन में उनके प्रति कोई लगाव नहीं है। बच्चों के लिए वे केवल पैसा कमाने का साधन मात्र हैं। गजाधर बाबू की उपस्थिति व किसी कार्य में उनका हस्तक्षेप बेटे बहू को स्वीकार नहीं हो पाती। उनके होने से उन्हें अपने मन से जीने की स्वतंत्रता नहीं मिल पाती। उनकी अपनी बेटी भी एक छोटी सी डांट पर मुँह फुला देती है तथा उसने कटकर रहने लगती है। उनकी पत्नी उन्हें समझने की बजाय उलटे उन्हीं को बच्चों के फैसलों के बीच में न पड़ने की सलाह देती है।

सेवानिवृत्ति के बाद अपने ही घर में वे स्वयं को अनावश्यक, अजनबी तथा नगण्य मानने लगे। उनका उत्साह, आशाएँ तथा सुख की कल्पनाएँ टूट जाती हैं। अंत में परिवार के सदयों की बदलती मानसिकता से ऊबकर तथा विवश होकर निस्संग भाव से सेठ रामजीमल की चीनी मिल में नौकरी के लिए जाने का निश्चय कर लेते हैं। कोई उन्हें रोकने का प्रयास नहीं करता वरन सभी लोग उनके जाने का बड़ी तत्परता से प्रबंध करते हैं। उनके जाने के बाद परिवार के सभी सदस्य अपने मन के अनुसार जीवन बिताने के लिए मुक्त हो जाते हैं। इतना ही नहीं उनके अस्तित्व की प्रतीक चारपाई को कमरे से निकाल दिया जाता है। जीवनभर दायित्वों का बोझ ढोनेवाले गजाधर बाबू परिवार के लिए स्वयं बोझ बन जाते हैं।

12.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं -

आधुनिक हिन्दी साहित्य में उषा प्रियंवदा जी का विशिष्ट स्थान है। नई कहानी में अपनी उत्कृष्ट रचनाओं के कारण उषा जी बहुचर्चित और बहुप्रशंसित रहीं। अपनी रचनाशीलता के कारण ही वे आज भी हिन्दी कहानी की महत्वपूर्ण हस्ताक्षर बनी हुई हैं। उषा प्रियंवदा की कहानियों में आज के व्यक्ति की दशा और दिशा का जीवन्त चित्रण देखने को मिलता है जो पाठकों को सहज रूप में अपनी ओर आकर्षित कर लेता है। विद्यार्थी इस पाठ के माध्यम से परंपरा और आधुनिकता के द्वंद्व को समझ सके हैं। आधुनिकता के इस दौर में दो पीढ़ियों के बीच हो रहे बदलाव व टकराव को समझने में यह पाठ या इकाई अत्यंत महत्वपूर्ण है। सेवानिवृत्त हो कर घर लौटे गजाधर बाबू को अपने ही घर में पराया कर दिए जाने के कटु अनुभवों को समझने में और आज के सामजिक परिवेश में उसकी प्रासंगिकता पर अवलोकन करने की क्षमता को विकसित करने में यह कहानी सहायक सिद्ध होगी।

12.6 शब्द संपदा

1. अंगोछा = तौलिया
2. अगहन = अग्रहायण, मार्गशीर्ष मास, हिन्दी कैलेण्डर का नवाँ महीना।
3. अर्घ्य = पूजा में देने योग्य वस्तु
4. अलगनी = कपड़े टाँगने के लिए बाँधी रस्सी
5. अस्थाय = क्षणिक
6. आहत = घायल, चोट खाया हुआ, ज़ख्मी
7. कनस्तर = टीन का पीपा
8. कुंठित = निराश, खिन्न, हताश
9. खिन्नता = उदास होना, चिंता, विकलता
10. खिसकाना = हटाना

11. खुशामद = चापलूसी

12. डोलची = छोटी टोकरी

13. तुनककर = छोटी सी बात पर नाराज होना

14. दायरा = कार्य का क्षेत्र, अधिकार का क्षेत्र

15. फाँस सी करकना = फाँस सी चुभना

16. फूहड़पन = बेढ़ंगापन, भद्दे ढंग से काम करना

17. बक्सा = कपडे रखने का संदूक

18. बिछोह = वियोग, विरह, दुःख

19. मठरी = मैदे के बनी नमकीन टिकिया

20. मर्तबान = चीनी-मिट्टी का बर्तन जिसमे अचार रखते हैं

21. रवैया = व्यवहार, चलन, प्रथा

22. लिहाज = ध्यान, किसी को उपेक्षित न करने का भाव

23. विषाद = दुःख

24. व्याघात = बाधा, रुकावट

25. शऊर = काम का ढंग जानने वाला

26. श्रीहीन = कांतिहीन, शोभाहीन

27. सिटपिटाना - घबराहट से सहम जाना

12.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

12.7.1 सही विकल्प चुनिए -

1. गजाधर बाबू रेलवे की नौकरी से कितने वर्षों के बाद सेवानिवृत्त होकर घर लौटे थे?

A. पैंतीस साल B. तीस साल C. चालीस साल D. पच्चीस साल

2. गजाधर बाबू ने नौकरी के दौरान अपने परिवार को शहर में क्यों रखा था?

A. शहर की सुख-सुविधाओं के लिए **B. बच्चों की पढ़ाई में बाधा न हो**

C. मकान की देख-रेख के लिए D. पत्नी की इच्छा के कारण

3. जब गजाधर बाबू पहली बार घर के अंदर आए, तो नरेंद्र क्या कर रहा था?

A. किसी फिल्म के नृत्य की नकल B. चाय बना रहा था

C. पढ़ाई कर रहा था D. अमर से झगड़ा कर रहा था

4. गजाधर बाबू के घर लौटने पर उनके रहने का प्रबंध कहाँ किया गया था?

A. अमर के कमरे में B. बसंती के कमरे में

C. बैठक (ड्राइंग रूम) में D. पत्नी की कोठरी में

5. गनेशी कौन था और गजाधर बाबू को उसकी याद क्यों आई?

A. उनका शहर वाला नौकर B. उनका बड़ा बेटा

C. रेलवे स्टेशन का कर्मचारी D. उनका पड़ोसी

6. गजाधर बाबू ने घर के नौकर को हटाने का निर्णय क्यों लिया?

A. खर्च कम करने के लिए B. नौकर चोरी करता था

C. बच्चों को आत्मनिर्भर बनाने के लिए D. नौकर कामचोर था

7. गजाधर बाबू ने बसंती को शीला के घर जाने से क्यों रोका?

A. अनुशासन और पढ़ाई के लिए B. क्योंकि अंधेरा हो गया था

C. शीला के घर के लड़कों के कारण D. उसे खाना बनाना सिखाने के लिए

8. गजाधर बाबू को अपनी पत्नी में किस बात का अभाव सबसे ज्यादा खटका?

A. धार्मिकता का B. सुंदरता का

C. खाना बनाने की कला का **D. सहानुभूति और आत्मीयता का**

9. गजाधर बाबू ने अंत में घर छोड़कर कहाँ जाने का निश्चय किया?

A. वापस अपने पुराने रेलवे स्टेशन B. किसी तीर्थ यात्रा पर

C. अपने किसी मित्र के घर **D. सेठ रामजीमल की चीनी मिल में**

10. गजाधर बाबू के जाने के बाद उनकी पत्नी ने सबसे पहले क्या निर्देश दिया?

A. गजाधर बाबू को वापस बुलाने का **B. कमरे से उनकी चारपाई हटाने का**

C. नौकर को वापस बुलाने का D. घर में शांति बनाए रखने का

खंड (ब)

12.7.2 लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. गजाधार बाबू की वापसी के लिए आप किसे दोषी मानते हैं और क्यों?

2. "वापसी कहानी में आधुनिक परिवार की विसंगति की स्पष्ट झलक मिलती है" स्पष्ट कीजिए।

3. कहानी का सार संक्षेप में लिखिए।

खंड (स)

12.7.3 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. वापसी कहानी के कथ्य को ध्यान में रखकर उसका मूल्यांकन कीजिए।
2. वापसी कहानी में किन-किन समस्याओं पर प्रकाश डाला गया है? स्पष्ट कीजिए।
3. गजाधर बाबू का चरित्र-चित्रण कीजिए।
4. वापसी कहानी के शीर्षक की सार्थकता पर प्रकाश डालिए।

12.8 पठनीय पुस्तकें

1. मेरी प्रिय कहानियाँ : उषा प्रियंवदा
2. कहानी-नयी कहानी : नामवर सिंह

इकाई 13: रामचंद्र शुक्ल : एक परिचय

रूपरेखा

13.1 प्रस्तावना

13.2 उद्देश्य

13.3 मूल पाठ : रामचंद्र शुक्ल : एक परिचय

13.3.1 रामचंद्र शुक्ल का सामान्य परिचय

13.3.2 रामचंद्र शुक्ल की निबंध दृष्टि

13.3.3 विचारात्मक निबंध

13.3.4 समीक्षात्मक निबंध

13.3.5 भाषा शैली

13.4 पाठ सार

13.5 पाठ की उपलब्धियाँ

13.6 शब्द संपदा

13.7 परीक्षार्थ प्रश्न

13.8 पठनीय पुस्तकें

13.1 प्रस्तावना

हिन्दी निबंध के इतिहास का विभाजन क्रमशः भारतेंदु युग, द्विवेदी युग, शुक्ल युग और शुक्लोत्तर युग के रूप में किया गया है। रामचंद्र शुक्ल हिन्दी साहित्य के एक युग प्रवर्तक रचनाकार हैं। इनके वैचारिक, सैद्धांतिक और साहित्यिक विचारों को 'निबंध' के रूप में विद्वानों ने स्थायी महत्व का स्वीकार करते हुए इनके प्रौढ़ लेखन समय को 'शुक्ल युग' (1920-1940) के नाम से संबोधित किया। इनका लेखन काल लगभग 40 वर्ष का रहा। इनके निबंध साहित्यप्रेमियों की आत्मा को पोषित करने के साथ ही शिक्षा जगत के लिए आज भी उतने ही महत्वपूर्ण हैं, जितने तब थे जब विश्वविद्यालय शिक्षा का प्रावधान हुआ था पर उस स्तर की पुस्तकों का घोर अभाव था। शिक्षा जगत में इनका योगदान अमूल्य है। "छायावाद-युग के समानांतर निबंध-क्षेत्र में विशिष्ट लेखन रामचंद्र शुक्ल का है। उनके विषय वैदुषिक ढंग के हैं, पर शैली में लालित्य है।...आचार्य शुक्ल के निबंध दो तरह के हैं या तो भावों-मनोविकारों संबंधी जैसे 'उत्साह', 'श्रद्धा-भक्ति', 'करुणा', 'ईर्ष्या', 'क्रोध' या फिर आलोचना के सैद्धांतिक और व्यावहारिक रूप को लेकर जैसे 'कविता क्या है?', 'काव्य में लोकमंगल की साधनावस्था', 'भारतेंदु हरिश्चंद्र', 'मानस की धर्मभूमि'। स्पष्ट ही इन दोनों वर्गों में विषय अपनी प्रकृति से पूरी

तरह वैदुषिक हैं, या मनोविज्ञान के क्षेत्र से या साहित्य-चिंतन के क्षेत्र से। ऐसे विषयों पर ललित शैली में निबंध-लेखन निश्चय ही कठिन है। (रामस्वरूप चतुर्वेदी)।"

13.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई में आप हिन्दी गद्य साहित्य के अंतर्गत 'रामचंद्र शुक्ल और उनके निबंध' का अध्ययन करेंगे। इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप-

- रामचंद्र शुक्ल के व्यक्तित्व और कृतित्व को जान सकेंगे।
- विभिन्न विद्वानों के निबंध संबंधी दृष्टिकोण का संक्षिप्त परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
- रामचंद्र शुक्ल की निबंध संबंधी मान्यताओं से परिचित हो सकेंगे।
- रामचंद्र शुक्ल के निबंधों का महत्व समझ सकेंगे।

13.3 मूल पाठ : रामचंद्र शुक्ल : एक परिचय

13.3.1 रामचंद्र शुक्ल का सामान्य परिचय

हिन्दी साहित्य के प्रतिष्ठित इतिहासकार रामचंद्र शुक्ल (1884-1941) निबंध सम्राट होने के साथ कवि, कहानीकार, संपादक, जीवनचरित लेखक, अनुवादक, शब्द कोश निर्माता और प्रखर आलोचक भी हैं। इनके द्वारा रचित कहानी है 'ग्यारह वर्ष का समय' (1903)। 'मधुस्रोत' इनका काव्य संग्रह है। अपने जीवनकाल में लेखन के साथ अध्यापन का कार्य भी इन्होंने किया। संपादन का कार्य इन्होंने बदरीनारायण चौधरी प्रेमघन की 'आनंद कादंबिनी' से विद्यार्थी जीवन में ही आरंभ किया। नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा 11 खंडों में प्रकाशित 'हिन्दी शब्दसागर' के निर्माण में सहायक संपादक के रूप में इन्होंने अपनी सेवा दी। इनके लेखन में सभी शास्त्रों की प्रतिच्छाया नजर आती है। विविध भाषाओँ के साहित्य के साथ लेखन में कला, मनोविज्ञान, दर्शन, अध्यात्म, धर्म, न्याय इत्यादि विषयों का समावेश इनके व्यापक और जन सरोकारी दृष्टिकोण का परिचय देता है। साहित्य, समाज और भाषा को एक साथ रखकर उसका विवेचन-विश्लेषण करने में सिद्धहस्त रामचंद्र शुक्ल की विद्वता का सारस्वत सम्मान उनके समकालीन, पूर्ववर्ती और परवर्ती सभी ने किया है। उनका साहित्य और समीक्षा हिन्दी साहित्य के पठन-पाठन का अनिवार्य अंग है। "भारतीय काव्यालोचन का इतना गंभीर और स्वतंत्र विचारक हिन्दी में तो दूसरा हुआ ही नहीं, अन्य भारतीय भाषाओँ में भी हुआ है या नहीं, ठीक से नहीं कह सकते। (आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी)।" अंग्रेजी से हिन्दी में अनुवाद-कार्य का आरंभ भी इन्होंने विद्यार्थी जीवन से ही किया। यही उनके निबंध लेखन की पृष्ठभूमि भी बनी। लेकिन केवल अनुवाद कर लेने से कोई निबंध लेखक नहीं हो सकता। अपने क्षेत्र का धुरंधर तो कतई नहीं हो सकता। लेखन की जो गंभीरता इनके निबंधों में देखने को मिलती है उसका संबंध उनकी अन्तःचेतना से जोड़कर देखा जाना चाहिए। वह अंतःचेतना जो तटस्थ भी है और रागपूर्ण भी। वह अंतःचेतना जो मनुष्य के अस्तित्व की समर्थक है, जो उसके भावों को उसके तल में जाकर छूती है, जो सामाजिक हर्ष-विषाद की साक्षी है- इस अंतःचेतना के प्रभाव में जब शब्द लिखे

जाते हैं तो उन शब्दों की सत्ता देशकाल की सीमा से परे विराट हो जाती है। ऐसे ही शब्द रामचंद्र शुक्ल ने लिखे जिन्हें हम आज भी आत्मसात करते हैं।

'साहित्य' इनका प्रथम निबंध है जो 1904 में सरस्वती में छपा था। 1909 में इसी पत्रिका में 'कविता क्या है' निबंध प्रकाशित हुआ। इनकी पहली आलोचनात्मक पुस्तक 'काव्य में रहस्यवाद' (1929) है। उसके बाद 'विचार वीथी' (1930) निबंध संग्रह प्रकाशित हुआ। इसमें प्रकाशित निबंध ही बाद में चिंतामणि के प्रथम दो खंडों के रूप में क्रमशः 1939 और 1945 में प्रकाशित हुए। इन दोनों खंडों में संकलित निबंध 1912 से 1919 की कालावधि में लिखे गए थे। इन दोनों खंडों से शेष आचार्य शुक्ल के असंकलित निबंधों को संगृहीत कर नामवर सिंह ने चिंतामणि भाग-3 के रूप में उन्हें पुस्तकाकार कर, उनका संपादन किया। यह निबंध संग्रह पहले 1983 में प्रकाशित हुआ। चिंतामणि के इस तीसरे खंड में 21 निबंध हैं। क्षात्र धर्म का सौंदर्य, प्रेम आनंद स्वरूप है, प्रेमघन की छाया स्मृति, कविता क्या है, साहित्य, उपन्यास, कल्पना का आनंद, विश्व प्रपंच की भूमिका, शेष स्मृतियाँ की प्रवेशिका, बुद्धचरित की भूमिका इत्यादि इस संकलन के कुछ विशिष्ट निबंध हैं। चिंतामणि भाग-4 का संपादन कुसुम चतुर्वेदी और ओम प्रकाश सिंह ने किया है। इसमें विभिन्न पुस्तकों की भूमिकाएँ और विभिन्न साहित्यिक समारोहों एवं गोष्ठियों में रामचंद्र शुक्ल द्वारा दिए गए वक्तव्यों को संकलित किया गया हैं।

रामचंद्र शुक्ल के अनुवाद कार्य भी उल्लेखनीय हैं। सर टी. माधवराव की पुस्तक माइनर हिंट्स का अनुवाद 'राज्य प्रबंध शिक्षा' के नाम से किया। 'प्लेन लीविंग हाई थिंकिंग', हेनरी न्यूमैन के 'लिटरेचर', एडिसन के 'एसेज ऑन इमेजिनेशन' का अनुवाद क्रमशः 'आदर्श जीवन' (1914), साहित्य (1904), कल्पना का आनंद (1905) इत्यादि शीर्षकों से किया। उन्होंने एडविन अर्नाल्ड के 'लाइट ऑफ एशिया' का 'बुद्धचरित' शीर्षक से ब्रजभाषा में पद्यानुवाद किया। रिडल ऑफ़ द यूनिवर्स का अनुवाद 'विश्व प्रपंच दर्शन' (1920) के नाम से किया। उनकी कई आलोचनात्मक ग्रंथों का लेखन और संपादन किया, देखें- तुलसी ग्रंथावली (1923), जायसी ग्रंथावली (1925), भ्रमरगीत सार (1926), गोस्वामी तुलसीदास इत्यादि। आचार्य शुक्ल के स्वर्गप्रयाण के पश्चात उनके सैद्धांतिक निबंधों के संग्रह के रूप में 'रस मीमांसा' पुस्तक 1949 ई.में प्रकाशित हुई।

बोध प्रश्न

- रामचंद्र शुक्ल का साहित्यिक परिचय दें।
- रामचंद्र शुक्ल के अनुवाद कार्यों का उल्लेख करें।

13.3.2 रामचंद्र शुक्ल की निबंध दृष्टि

एक ही विषय पर विभिन्न व्यक्तियों द्वारा लिखे गए निबंधों में समानता देखने को नहीं मिलती है। इसका कारण है विभिन्न व्यक्तियों की रुचियां, भावाभिव्यक्ति का तरीका और भावानुभूति की क्षमता एक-दूसरे से भिन्न होती हैं। उनकी इस व्यक्तिगत भिन्नता से निबंध की विषयवस्तु प्रभावित होती है। इसी से निबंध एक व्यक्तिनिष्ठ विधा का रूप ग्रहण करता है। रामचंद्र शुक्ल के अनुसार, "व्यक्तिनिष्ठता का अर्थ है व्यक्ति का विषयगत दृष्टिभेद"।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल की निबंध यात्रा का आरंभिक बिंदु भी कितना प्रौढ़ है, इसका पता उनके 'कविता क्या है?' जैसे पहले दौर के निबंध से चलता है, जो 'चिंतामणि- भाग 1' में संकलित है। अपने लेखन के प्रथम चरण में इतने गंभीर विषय का चयन और उसका गहन विश्लेषण करना निबंधकार की अप्रतिम प्रतिभा और उनकी साहित्य निष्ठा का परिचायक है। इस निबंध में उन्होंने कविता संबंधी अपनी मौलिक मान्यताओं का प्रतिपादन किया है। अपनी साहित्य यात्रा की गति और साहित्यिक रूचि के सामानांतर उन्होंने इस निबंध के विषय को विस्तृत किया है। चलते रहने की यह मानसिक वृत्ति वाला साहित्य ही जीवंत साहित्य होता है। मनुष्य के जीवन में स्थिरता केवल प्राणांत के एक क्षण के लिए ही ग्राह्य है क्योंकि अगले ही क्षण वहाँ भी गति है। साहित्य का संस्कार व्यक्ति को गतिवान करता है। उसकी समझ को निरंतर परिष्कृत करता है। इसका प्रमाण है आचार्य शुक्ल और उनके निबंध। इनमें भी विशेष रूप से निबंध 'कविता क्या है'। इस संदर्भ में 'हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास' पुस्तक में रामस्वरूप चतुर्वेदी लिखते हैं, "काव्य-शास्त्र की बड़ी समृद्ध परंपरा भारत और पश्चिम दोनों जगह रही है, जिसका अच्छा और सुलझा हुआ परिचय आचार्य शुक्ल को था। पर दोनों परंपराओं से जरा भी आक्रांत हुए बिना लेखक यहाँ कविता के सामान्य और व्यापक रूप की अपने ढंग से व्याख्या करता है। यह निबंध साहित्य के क्षेत्र में लेखक के वैचारिक आत्मविश्वास का पहला सबल प्रमाण है, जैसे कि भाव और मनोविकार संबंधी निबंध मनोविज्ञान के क्षेत्र में। कुल मिलाकर आचार्य शुक्ल का यह गद्य लेखन सही अर्थों में ललित निबंध का रूप है, उसकी शैली में लालित्य है, जबकि अपने व्यवस्थित प्रस्तुतिकरण में वे निबंध हैं। द्विवेदी युग के बाद, छायावादी काव्य में जीवनानुभव का जैसा संश्लिष्ट चित्रण है, उसका समानांतर रूप प्रेमचंद में विशेषतः उत्तरकालीन कथा-साहित्य में मिलता है। मानव स्वभाव का वैसा ही संश्लिष्ट चित्रण रामचंद्र शुक्ल के मनोविकार संबंधी निबंधों में हुआ है।"

बोध प्रश्न

- रामचंद्र शुक्ल की दृष्टि में व्यक्तिनिष्ठता से क्या अभिप्राय है?
- क्या रामचंद्र शुक्ल के अनुसार निबंध लेखन किस प्रकार की प्रक्रिया है?

13.3.3 विचारात्मक निबंध

चिंतामणि के प्रथम खंड का संपादन रामचंद्र शुक्ल ने स्वयं किया। यह पुस्तक उनके विचारात्मक, साहित्य सिद्धांत विषयक और साहित्यिक समीक्षा संबंधी निबंधों का संग्रह है। साहित्य सिद्धांत विषयक मत और साहित्यिक समीक्षा निबंध की श्रेणी में नहीं आते हैं, ऐसा डॉ. नगेन्द्र का मानना है। उन्होंने केवल विचारात्मक निबंध को निबन्ध की श्रेणी में रखा है, शेष दोनों कोटियों को आलोचना के अंतर्गत रखा है और इन्हें आलोचनात्मक लेख की संज्ञा दी है।

भाव या मनोविकार इस संग्रह का पहला निबंध है। भाव क्या है? "नाना विषयों के बोध का विधान होने पर ही उनसे संबंध रखनेवाली इच्छा की अनेकरूपता के अनुसार अनुभूति के भिन्न-भिन्न योग संघटित होते हैं जो भाव या मनोविकार कहलाते हैं। अतः हम कह सकते हैं कि सुख और दुःख की मूल अनुभूति ही विषय-भेद के अनुसार प्रेम, हास, उत्साह, आश्चर्य, क्रोध, भय, करुणा, घृणा इत्यादि मनोविकारों का जटिल रूप धारण करता है।" जब हम किसी तरह

की हानि सहते हैं तब हमें अपनी स्थिति पर दुःख होता है। जब हमें ज्ञात होता है कि वह हानि किसी ने हमें जान-बूझ कर पहुंचाई है तब हमारी चेतना उस दुःख की अनुभूति के साथ मिलकर 'क्रोध' भाव को धारण करती है। मनुष्य दुःख से बचना चाहता है। वह दुःख के अनुमान मात्र से अपनी रक्षा की व्यवस्था खोजने लगता है। इसी प्रकार मनुष्य के सुख की अनुभूति भी सुख के मूल कारक को पाने या उसकी रक्षा करने या उसके साथ रहने के लिए प्रेरणा देनेवाले भाव लोभ और प्रेम के वश में रहती है। भावों को दिखाने के लिए शारीरिक चेष्टा मनुष्य की सामान्य श्रेणी करती है। विशिष्ट और सभ्य श्रेणी के लोग बात बोलकर काम चला लेते हैं। इसी संदर्भ में लेखक ने कहा है कि वाणी के प्रसार की कोई सीमा नहीं है। मनुष्य में उत्पन्न होनेवाले इन भावों का उपयोग लोकहितकारी और लोकनाशक, दोनों ही स्वरूपों में किया जाता रहा है। अपनी इच्छा को सद्वृत्ति की ओर मोड़ना विश्व के हित में है। धर्म, राज और संप्रदाय सभी अपना उल्लू सीधा करते हैं। वे सामान्य मनुष्य को दंड और नरक का भय दिखाते हैं या अपनी कृपा और स्वर्ग के सुख का लोभ दिखाते हैं। मनुष्यत्व की गरिमा को ताक पर रखकर मनुष्य अपनी इच्छा से दुम हिलाता है। सत्ताधीशों में भी भय का भाव रहता है। राजा प्रजा को डराकर उसके भीतर अन्याय का विरोध करने की शक्ति पर अंकुश लगाता है। धर्मक्षेत्र के प्रतिष्ठित आचार्यों को अपने प्रभाव की चिंता सताती है जिसकी रक्षा के लिए वे सामान्य मनुष्य का उपयोग करते हैं। विभिन्न मत और संप्रदाय के प्रवर्तक एक दूसरे पर दोष मढ़कर नीचा दिखाते हैं। ये कार्य अपराध हैं। "भावक्षेत्र अत्यंत पवित्र क्षेत्र है। उसे इस प्रकार गंदा करना लोक के प्रति भारी अपराध समझना चाहिए।" भाव की लोक में प्रतिष्ठा का अभिप्राय स्वयं के साथ विश्वमंगल की ओर बढ़ना है। पूरी सृष्टि में हृदय का प्रसार करना है अर्थात सब में प्रेमभाव से स्थित रहना है। यह मनुष्यता की उच्चभूमि है, जिसकी प्राप्ति काव्ययोग की साधना से संभव है। कविता ही मनुष्य की सच्ची प्रवृत्ति-निवृत्ति की भावना को जागृत रखती है।

संग्रह का दूसरा निबंध उत्साह है जो साहस और धीरता से अलग अर्थ रखता है। युद्ध करने वाले वीर न अपनी मृत्यु की परवाह करते हैं और न किसी प्रहार की। उनका यह गुण उनका साहस है। युद्धरत मनुष्य का साहस प्रायः आनंदरहित होता है। कष्ट सहन करना साहस है। अत्यधिक कष्ट या पीड़ा शांति से सहन करते जाना 'धीरता' है। मनुष्य के इस साहस और धीरता के साथ किए जानेवाले काम में जब पूरी तत्परता बरतता है और आनंदित होता है तब वहां उत्साह है, ऐसा कहा जाएगा। किसी सार्थक उद्देश्य के साथ आनंदित होकर कष्ट सहन करना उत्साह है, जैसे- शोध कार्य के लिए हिमाच्छादित पर्वतों की चढ़ाई। इस भाव से मनुष्य के संबंध में यह ज्ञात होता है कि वह कष्ट से नहीं डरता है पर समाज द्वारा मान-अपमान से उसे मानसिक दुःख प्राप्त होता है। मनुष्य इससे बचना चाहता है। सामाजिक प्रतिष्ठा को खोने के डर से लोग हानिकर प्रथाओं का भी निर्वाह करते चले आ रहे हैं। बिना अपनी निंदा-स्तुति की परवाह किए समाज में अच्छा बनने के लिए किसी प्रचलित प्रथा का पूरे आनंद से विरोध करने वाले लोगों को उत्साही के साथ बेशर्म कहा जाता है। इनसे बेहतर वे लोग हैं जो सामाजिक प्रथा में निहित सामाजिक विश्वास को मानते हैं और व्यर्थ ही प्रथाओं के खंडन-मंडन करनेवालों द्वारा उडाए जाने वाले मजाक सहित अपनी निंदा को सहन कर लेते हैं। कर्म के शुभ परिणाम को दृष्टि

में रखकर किया गया किसी भी प्रचलित प्रथा का विरोध उचित है और ऐसे लोग उत्साही कहे जाते हैं। उत्साह के भाव में भी मनोवृत्ति की पवित्रता प्रधान है। लोभरहित मानसिकता वाले व्यक्ति ही वास्तविक उत्साह को धारण करते हैं। कर्मवीर मनुष्य अन्याय और अत्याचार का विरोध करने के लिए जब कुछ प्रयत्न करता है तब उसमें उत्साह दिखाई देता है। किसी व्यक्ति या वस्तु के साथ उत्साह का सीधा संबंध नहीं होता है। सच्चा उत्साह कर्म से सीधे जुड़ा होता है। कर्म फल को ध्यान में रखकर किए गए काम असफलता की स्थिति में मन में अवसाद भर देते हैं। उत्साह प्रसन्नतापूर्वक साहस के साथ किया गया कर्म है। आत्म रक्षा, पर रक्षा, देश रक्षा आदि के निमित्त साहस की जो उमंग देखी जाती है उसके सौंदर्य के समकक्ष किसी को पीड़ा देने, डकैती इत्यादि का भाव कभी नहीं पहुँच सकता। पर डाकुओं के शौर्य और साहस की कहानियाँ सुनी-सुनाई जाती है। समाज सुधार की आड़ में भी लोग अपनी तुच्छ मनोवृत्ति का पोषण कर लेते हैं। ऐसे समाज सुधारकों का दया और साहस का भाव उत्साह नहीं है।

'श्रद्धा और भक्ति' संग्रह का तीसरा निबंध है। लोक में किसी के कल्याणकारी प्रभाव को देखते हुए उसके प्रति मन में पूज्य बुद्धि का संचार होता है, यही भाव श्रद्धा है। यह प्रेम से अलग है। प्रेम किसी के प्रभाव को देखकर उत्पन्न नहीं होता है। प्रेम के लिए किसी का अच्छा लगना पर्याप्त है। केवल अच्छा लगने से किसी के प्रति श्रद्धा उत्पन्न नहीं होती। श्रद्धा व्यक्ति के गुणों के प्रति होती है। व्यक्ति के जिन गुणों से संसार को लाभ पहुँचता है, उन गुणों से संपन्न व्यक्ति के प्रति मन में जो पूज्य बुद्धि संचारित होती है वही श्रद्धा है। वीर, गुणी, दानी, परोपकारी, सज्जन और धर्मात्मा व्यक्ति श्रद्धा के पात्र हैं। "श्रद्धा का व्यापार स्थल विस्तृत है, प्रेम का एकांत। प्रेम में घनत्व अधिक है और श्रद्धा में विस्तार। किसी मनुष्य से प्रेम रखनेवाले दो ही एक मिलेंगे, पर उस पर श्रद्धा रखनेवाले सैंकड़ों, हजारों, लाखों, करोड़ों मिल सकते हैं।" श्रद्धा भाव युक्त मनुष्य में ही धर्म कर्मों के प्रति महत्व का भाव होता है। श्रद्धा एक सामाजिक भाव है जिसमें श्रद्धावान व्यक्ति अपने श्रद्धेय से प्रतिदान में कुछ नही मांगता है। प्रेम में कोई मध्यस्थ नहीं होता है पर श्रद्धा में श्रद्धालु और श्रद्धेय के मध्य एक वस्तु का होना अनिवार्य है। श्रद्धालु व्यक्ति केवल श्रद्धेय को प्रसन्न करना चाहता है। "श्रद्धा के विषय तीन हैं- शील, प्रतिभा और साधन-संपत्ति।" साधन संपत्ति से शील और प्रतिभा दोनों का विकास होता है। शील से समाज की स्थिति बनी रहती है और प्रतिभा से समाज में आनंद की सृष्टि होती है। जब मनुष्य के मन का पूज्य भाव और हृदय का आंतरिक प्रेम मिलकर एक हो जाता है तब उत्पन्न होती है 'भक्ति'। जब श्रद्धेय के दर्शन और गुण श्रवण से मन में अनुराग और आनंद की धारा फूटती है तब अंतःकरण भक्ति के प्रकाश से प्रकाशित होता है। एक भक्त अपने आराध्य के अनुरूप अपने जीवन-शैली में परिवर्तन लाने का प्रयास करता है। मनुष्य की यह भक्ति मनुष्य के प्रति भी होती है और असीम तथा विराट ईश्वर के प्रति भी। दूसरे के प्रभाव के सामने स्वयं को बहुत छोटा (लघु) समझना मनुष्य का 'दैन्य' भाव है। इस भाव को धारण करने वाले मनुष्य में ही श्रद्धा की भावना जन्म लेती है। इसमें जब साहचर्य की भावना जुड़ती है तब प्रेम उत्पन्न होता है। श्रद्धा-प्रेम का समन्वित स्वरूप ही भक्ति है। ईश्वर (राम, कृष्ण) की ओर मनुष्य का मन उसके कर्म सौंदर्य को देखकर, उसपर रीझकर आकर्षित होता है। रामचंद्र शुक्ल की मान्यता है कि पाप का फल छिपानेवाला पाप छिपानेवाले

से अधिक अपराधी है पर ऐसे बहुत से लोग होते हैं जो किसी का घर जलाते हाथ जलता है तो कहते हैं कि होम करते जला है। दुराचारियों के जीवन का सामाजिक उपयोग करने के लिए ही- संसार में धर्म की मर्यादा स्थापित करने के लिए ही श्रीकृष्ण ने अर्जुन को युद्ध में प्रवृत्त किया। क्षात्र धर्म का पालन संसार की आवश्यकता है। इसमें कर्म का सौंदर्य विविध रूपों में अभिव्यक्ति पाता है, 'शक्ति के साथ क्षमा, वैभव के साथ विनय, पराक्रम के साथ रूप माधुर्य, तेज के साथ कोमलता, सुखभोग के साथ परदुख कातरता; प्रताप के साथ कठिन धर्म पथ का अवलंबन' इत्यादि। सभी रागात्मिका वृत्तियों को उत्कर्ष पर ले जाने का सामर्थ्य इसी क्षात्र धर्म में है।

अगला निबंध है करुणा। यह दुःख का एक भाव है जो मनुष्य में 'भलाई' की उत्तेजना का जनक है। 'भलाई' की उत्तेजना दुःख और आनंद, दोनों ही श्रेणियों में होती है। दुःख की श्रेणी में क्रोध करुणा का विपरीत भाव है। दुःख की श्रेणी में हानि पहुँचाने वाले भाव भी होते हैं पर आनंद कि श्रेणी में ऐसा कोई भाव नहीं है। मनुष्य अपने प्रियजनों के सुख से ही आनंदित होता है। अज्ञात लोगों के सुख वैभव से वह विशेष रूप से प्रभावित नहीं होता है। पर करुणा की प्रवृत्ति मन में अजनबी लोगों के लिए भी जागती है। रामचंद्र शुक्ल ने सामाजिक जीवन की स्थिति और पुष्टि के लिए करुणा के प्रसार को आवश्यक माना है। करुणा अपने स्वरूप में क्षोभ या विषाद से अलग है। क्षोभ और विषाद प्रिय के विरह से उपजा हुआ दुःख का भाव है। करुणा प्राप्त करने वाला व्यक्ति कृतज्ञता और श्रद्धा की भावना से करुणा करनेवाले को देखता है। क्रोध और प्रेम की भांति यहाँ किसी प्रकार के प्रतिदान की भावना काम नहीं करती है। एक भाव को व्यक्ति का दूसरा भाव ही नियंत्रित या प्रेरित करता है न कि अंतःकरण की कोई अन्य वृत्ति, स्मृति, अनुमान या बुद्धि। मनुष्य के मनोवेग और उसके परिणाम के तीन विरोधी तत्व हैं- आवश्यकता, नियम और न्याय। जीवन की विभिन्न परिस्थितियों में लोग आवश्यकता के अनुरूप अपने मनोवेगों पर संयम बरतते देखे जाते हैं। मनोवेग कार्यसिद्धि में बाधक न बने इसलिए व्यक्ति क्रोधी मनुष्य के अपमानजनक वाक्य को भी सह लेता है। यह आवश्यकता है। नियम पालन के लिए राजा हरिश्चंद्र के जीवन को होगा जो करुणा का अन्यतम उदाहरण है।

इसके अतिरिक्त भाव या मनोविकार की श्रेणी में निबंध के रूप में जो विषय रामचंद्र शुक्ल ने चुने हैं, वे इस प्रकार हैं- लज्जा और ग्लानि, लोभ और प्रीति, घृणा, ईर्ष्या, भय और क्रोध इत्यादि। लोभ और प्रीति निबंध का विशद विवेचन इकाई 22 के अंतर्गत किया गया है। इस निबंध में बताया गया है कि लोभ और प्रेम का मूल भाव एक ही होता है। प्रिय में प्रेम की प्रतीति का बोध कराने के लिए प्रेमी बहुत बार 'दैन्य' धारण करता है। अपनी दीनता से वह प्रिय के हृदय में दया और करुणा उत्पन्न करना चाहता है। लोभ और प्रीति की व्यापक संकल्पना का अध्ययन आप इकाई 22 में करेंगे।

लज्जा और ग्लानि निबंध में यह बताया गया है कि लज्जा होने के लिए व्यक्ति को उसके अपने अवगुणों से परिचित होना आवश्यक है। व्यक्ति के यही अवगुण जब परिचित या अपरिचित लोगों के सामने आता है तब उसमें लज्जा का भाव आता है। लज्जा का संबंध हमारे आचरण पर दूसरे व्यक्ति की प्रतिक्रिया से अधिक हमारे अनुमान पर निर्भर करती है। लज्जित होने के लिए अपने बुरे आचरण की निंदा सुनना आवश्यक नहीं है। कई बार ऐसा भी होता है कि

हमने अपने खराब आचरण से जिनका अहित किया है। वे हमारे सम्मुख आने पर भी हमसे बिना किसी शिकायत के हमसे प्रेमपूर्ण व्यवहार करते हैं और हमारे गुणों को उजागर करते हैं। उस क्षण से अधिक बड़ा लज्जा का और क्या क्षण होगा! केवल कोई निंदा करेगा इस से बचना वास्तविक रूप से लज्जित होना नहीं है। यह एक प्रकार का डर है, लज्जा नहीं। अपने विषय में दूसरों के विचार या भावना को जानकर ही लज्जा की प्रतीति होती है। संकोच इसका थोड़ा हल्का स्वरूप है। संकोच की अधिकता का त्याग श्रेयष्कर है। अधिक संकोच का स्वभाव व्यक्ति के व्यक्तित्व को कुंठित कर देता है। वह स्वाभाविक व्यवहार भी ठीक से नहीं निभा पाता है। भोजन और व्यवहार में लज्जा का न होना ही अच्छा है। लज्जा को स्त्री का आभूषण कहते-कहते पुरुष प्रधान समाज ने उसकी लज्जा को भी अपने विलास का साधन बना लिया है, यह रामचंद्र शुक्ल की मान्यता है। "अपनी बुराई, मुर्खता, तुच्छता इत्यादि का एकांत अनुभव करने से वृत्तियों में जो शैथिल्य आता है, उसे 'ग्लानि' कहते हैं।" इस भाव को वे लोग भोगते हैं जिनका मन निर्मल और अंतःकरण सात्विक होता है। कठोर और स्वार्थी लोगों के लिए लज्जा का भाव उपयुक्त है। ग्लानि में मनुष्य संताप से नहीं बच सकता है। इसका अनुभव एकांत में भी होता है। चित्रकूट में जब राम कैकेयी से मिले तब कैकेयी के मन में अपने किए गए काम के लिए ग्लानि का भाव था।

घृणा क्या है? संसार में जो विषय अरुचिकर प्रतीत होते हैं उन विषयों से बराबर दूरी साधे रहने की सचेतन प्रेरणा देने वाला जो दुःख होता है वह घृणा है। जिनके प्रति मन में घृणा का भाव है उनके साहचर्य से दुःख होता है। अरुचिकर विषय का संपर्क न होना ठीक रहता है। घृणा के दो विभाग हैं- स्थूल और मानसिक। स्थूल घृणा का संबंध आँख, कान और नाक के संपर्क क्षेत्र तक सीमित रहता है। मानसिक घृणा का क्षेत्र विस्तृत है। यह मन के व्यापार से संबंधित है। घृणा करनेवाला व्यक्ति अपने घृणा के विषय को नष्ट करना या हानि पहुँचाना नहीं चाहता है जबकि एक क्रोधी अपने क्रोध के विषय को नष्ट करना चाहता है। घृणा मन में संकोच उत्पन्न करता है जो व्यवहार में दिखाई देता है। साधारण व्यक्तियों को जिन विषयों पर क्रोध आता है साधु लोग उनसे उदासीन रहते हैं या अपनी प्रारंभिक अवस्था में उसे घृणा से देखते हैं। उदासीनता सभ्य समाज की घृणा के लिए प्रयुक्त किया जानेवाला शब्द है। वन में सैनिक समाज के साथ भरत को आते देख कर उनका प्रयोजन जानने से पूर्व निषादराज गुह के मन में भरत के प्रति घृणा का भाव आया जो प्रयोजन जानने के बाद दूर हो गया। सुगंध-दुर्गंध, सुंदरता-कुरूपता इत्यादि घृणा के स्थूल विषय हैं। घृणा के मानसिक हैं – वेश्यागमन, जुआ, मद्यपान, स्वार्थपरता, कायरता, आलस्य, लंपटता, पाखंड, अनधिकार-चर्चा, मिथ्याभिमान इत्यादि।

ईर्ष्या का भाव मन में दूसरों के सुख-समृद्धि और उत्कर्ष को देखकर आता है। रामचंद्र शुक्ल के शब्दों में, " जैसे दूसरे के दुःख को देख दुःख होता है वैसे ही दूसरे के सुख या भलाई को देखकर भी एक प्रकार का दुःख होता है, जिसे ईर्ष्या कहते हैं। यह एक संकर भाव है जिसकी संप्राप्ति आलस्य, अभिमान और नैराश्य के युग्म से होती है।" आलस्य अभिमान और निराशा का भाव मनुष्य में ही प्रबल रूप में रहता है इसलिए इस प्रकृति के मनुष्य ही स्वभाव से ईर्ष्यालु होते हैं। दूसरे की उन्नति देखकर उनके हृदय पर साँप लोट जाता है। यहाँ पाने की ललक नहीं

होती। उसकी जगह ईर्ष्यालु व्यक्ति यह चाहता है कि अमुक उन्नत मनुष्य गर्त में चला जाए। उसके सुख के साधन किसी प्रकार उससे छिन जाए। ईर्ष्या धारक मनुष्य के शरीर और आत्मा को उसकी ईर्ष्यालु चेतना निगल जाती है। 'ईर्ष्या इतनी कुत्सित वृत्ति है कि सभा-समाज में, मित्रमंडली में, परिवार में, एकांत कोठरी में, कहीं भी स्वीकार नहीं की जाती।" कोई मुझसे घृणा करता है, यह जानकर व्यक्ति में भी बदला लेने या उससे घृणा करने की भावना जागती है। इस भाव की परिणति क्रोध में भी हो सकती है यदि अपने प्रति दूसरे की ईर्ष्या भावना से अपना कुछ अहित साधन हो जाए। क्रोध विनाश का मूल है। ईर्ष्या व्यक्ति और समाज के विकास मार्ग का अवरोध है।

दुःख का कारण और स्वरूप जानने के बाद मनुष्य बिना क्रोध किए नहीं रह पाता है। यह मनुष्य की स्वाभाविक वृत्ति है। जब मनुष्य के स्वभाव में सामान्यतः भय शामिल हो जाता है तब यह भय कायरता के रूप में जाना जाता है। कायर होना पुरुषों के लिए निंदा का विषय है। यह उनकी कमजोरी को दिखाता है। स्त्री की कायरता को उनकी लज्जा के समान ही रसिकों के मनोरंजन की वस्तु माना गया है। कायरता को इस प्रकार विश्लेषित करते हुए रामचंद्र शुक्ल ने इसे पुरानी चाल की भीरुता (कायरता) कहा है। कायरता की नई चाल क्या है? अपनी शक्ति में विश्वास की कमी और सहनशक्ति की कमी- ये दो तथ्य कायरता से जुड़े हुए हैं। इस अर्थ में व्यापारी और पंडित भी कायर कहे जाते हैं यदि उन्हें अपने व्यापार कौशल और विद्याबल पर पूर्ण विश्वास न हो। यदि उनमें धनहानि और मानहानि सहने की क्षमता न हो। भीरुता के स्तर पर केवल धर्मभीरु तनिक प्रशंसा के अधिकारी माने गए हैं। धर्म के भय से बुराई न करने की इच्छा रखने वाले से कहीं अधिक प्रशंसनीय वे हैं जो बुराई को अच्छा ही नहीं समझते। 'किसी आती हुई आपदा की भावना या दुःख के कारण के साक्षात्कार से जो एक प्रकार का आवेगपूर्ण अथवा स्तंभ-कारक मनोविकार होता है उसी को भय कहते हैं।' दुःख की संभावना के अनुमान से जो आवेग शून्य भय होता है, उसे आशंका कहते हैं। दुःख और बाधाओं से भरे इस संसार में न हम किसी को भय दें और ना किसी को इतना अधिकार ही कि वह हमें भयभीत कर सके। फिर भी यदि कोई भयभीत करता है तो उस भय से ट्रस्ट होने के बजाय उससे मुक्त होना मानव का अधिकार है। भय का प्रसार रुके और निर्भयता स्थापित हो।

क्रोध सभी मनोविकारों से अधिक फुर्तीला है। यह सभी भावों के साथ जुड़कर उसके साध्य को साधने में सहायक हो जाता है। सामाजिक जीवन में सात्विक क्रोध अनिवार्य हो जाता है। इसके न होने पर कष्ट पहुँचाने की प्रवृत्ति वाले लोग निरंकुश हो जाएँगे। क्रोध के विधान का उद्देश्य आनेवाली विपत्ति से अपनी रक्षा करना है। दुःख के कारण का सही ज्ञान न होने की अवस्था में किए गए क्रोध में धोखे की पूर्ण गुंजाइश होती है। क्रोध की सीमा जब अपने दुःख तक सीमित रहती है तब तक उसका स्वरूप पूरा विकसित नहीं होता है लेकिन जब यह दूसरों के दुःख से जुड़कर, लोककल्याण की भावना से भावित होता है तब क्रोध का सौंदर्य अपनी चरम स्थिति को छूता है। क्रोध का यही रूप सात्विक क्रोध है जिसे राम के चरित्र में देखा गया, जो क्रौंच वध से दुखी वाल्मीकि के हृदय में उपजा, जो कृष्ण के चरित में समाया हुआ है।

बोध प्रश्न

- रामचंद्र शुक्ल के निबंधों के वर्गीकरण के संदर्भ में विद्वानों की क्या राय है?
- भाव या मनोविकार से आप क्या समझते हैं?

13.3.4 समीक्षात्मक निबंध

विचारात्मक निबंधों में समाज के साथ जोड़ते हुए मनुष्य के भाव-व्यापार का सूक्ष्म विवेचन किया गया है। समीक्षात्मक निबंध की दो श्रेणियाँ हैं- सैद्धांतिक निबंध और व्यावहारिक निबंध। सैद्धांतिक निबंध के अंतर्गत इन्होंने साहित्य-सिद्धांतों की स्थापना की। कविता क्या है, काव्य में लोकमंगल की साधनावस्था, साधारणीकरण और व्यक्ति वैचित्र्यवाद, रसात्मक बोध के विविध स्वरूप, काव्य में रहस्यवाद, काव्य में अभिव्यंजनावाद इत्यादि रामचंद्र शुक्ल के सैद्धांतिक निबंध हैं। भारतेंदु हरिश्चंद्र, तुलसी का भक्तिमार्ग, मानस की धर्मभूमि इत्यादि निबंध व्यावहारिक निबंध के अंतर्गत आते हैं।

कविता क्या है निबंध में रामचंद्र शुक्ल ने कविता को भावयोग कहा है। कर्मयोग और ज्ञानयोग के समकक्ष यह भावयोग अवस्थित है। इस संसार में जब तक व्यक्ति संसार की एक इकाई के रूप में रहकर संसार के दुःख-सुख की अनुभूति करता है तब तक वह संसार की सत्ता में बंधा रहता है। जब वह संसार में अपनी अलग स्थिति को भूल जाता है तब सुख-दुःख की ये अनुभूतियां भी समाप्त हो जाती हैं। उसका व्यक्तित्व ही एक अनुभूति बन जाता है। यह अवस्था मुक्त हृदय की अवस्था है। 'जिस प्रकार आत्मा की मुक्तावस्था ज्ञानदशा कहलाती है, उसी प्रकार हृदय की यह मुक्तावस्था रसदशा कहलाती है। हृदय की इस मुक्ति की साधना के लिए मनुष्य की वाणी जो शब्द-विधान करती आई है, उसे कविता कहते हैं।' कविता अनुभूति योग है जिसमें व्यक्ति अपनी रोज के झंझटों से पल्ला झाड़कर लोक की अनुभूतियों के संसार में विचरण करता हुआ संसार के वैविध्य भरे स्वरूप के मर्म को जानता-समझता हुआ, उसी में तल्लीन हो जाता है। लोक सामान्य की भाव भूमि का यह स्पर्श भावों और मनोविकारों को परिष्कृत करता हुआ सारी सृष्टि से नेह का नाता जोड़ता है। कविता की आधार भूमि यही है। सृष्टि के कण-कण में कविता का विषय होने का सामर्थ्य है। पर काव्य दृष्टि के अभाव में कविता रचना संभव नहीं है। काव्य दृष्टि के विकास के लिए हृदय की इस मुक्तावस्था तक आना आवश्यक है। कविता मनुष्य में राग को जगाती है। यह सारी सृष्टि के साथ मनुष्य के हृदय का संबंध बनाती है। इसकी आवश्यकता को बताते हुए रामचंद्र शुक्ल ने लिखा है, "मनुष्य अपने ही व्यापारों का ऐसा सघन और जटिल मंडल बाँधता चला आ रहा है जिसके भीतर बंधा-बंधा वह शेष सृष्टि के साथ अपने हृदय का संबंध भुला रहता है। इस परिस्थिति में मनुष्य को अपनी मनुष्यता खोने का डर बराबर रहता है। इसी से अंतःप्रकृति में मनुष्यता को समय-समय पर जगाते रहने के लिए कविता मनुष्य जाति के साथ लगी चली आ रही है और चली चलेगी। जानवरों को इसकी जरूरत नहीं।"

बोध प्रश्न

- कविता के संबंध में रामचंद्र शुक्ल ने क्या कहा?

13.3.5 भाषा-शैली

किसी भी रचना की भाषा-शैली का गहरा संबंध लेखक के व्यक्तित्व से होता है। रामचंद्र शुक्ल ने अपने निबंधों में विषय का विश्लेषण बहुत सूक्ष्मता से किया है। इन्होंने मूल विषय को परिभाषित किया है। उसे कोटियों में बाँट कर सामाजिक परिप्रेक्ष्य में देखा है तथा अन्य पक्षों के साथ तुलना करते हुए उसकी प्रतिष्ठा की है। उनके साहित्य में लोकमंगल की दृष्टि प्रधान रही है। भाषा के स्तर पर इनमें लोकभाषा और शास्त्रीय भाषा का समन्वित रूप देखने को मिला है। शास्त्रीय भाषाओं की कठिनता को इनकी विवेचन पद्धति ने हर लिया है।

सूत्रबद्ध तरीके से विषय का विस्तार किया गया है। हर सूत्र की व्याख्या तब तक की गई है जब तक वह साधारण के समकक्ष नहीं आ जाती। शास्त्रीयता और साधारणता के बीच की दूरी को पाटने के लिए उन्होंने कई उद्धरण जीवन से और साहित्य से उठाकर रखा है। तुलसी और रसखान की कविता, फारसी साहित्य, आमजीवन के उदाहरण, कुछ अपने संस्मरण और कुछ सबकी अनुभूतियाँ इन सबको अपने निबंध में उन्होंने पिरोया है। विषय की गंभीरता को हल्का करने या रोचक बनाने के लिए हास्य और व्यंग्य की शैली अपनाई गई है। इनके निबंधों में प्रयुक्त हास्य और व्यंग्य भाव की अभिव्यंजना करते हुए हल्के प्रतीत नहीं होते। हाँ इनसे विषय की रोचकता बरक़रार रहती है। लोकभाषा के साथ मुहावरों और लोकोक्तियों का भी प्रयोग यहाँ बहुलता में किया गया है, जैसे- किसी को धूल में मिला डालना, चटनी कर डालना, किसी का घर खोदकर तालाब बना डालना इत्यादि। विषय को स्पष्ट करने में लेखक द्वारा अपनाई गई प्रविधि ही शैली कहलाती है। उनके निबंध में विचार, भाव, वर्णन, विवरण और सिद्धांत - ये सभी समाहित हैं। भाषा भावों को अभिव्यक्त करने में सक्षम है और वाक्य प्रयोग लालित्यपूर्ण है।

बोध प्रश्न

- रामचंद्र शुक्ल के साहित्य में कौन सी दृष्टि प्रधान रही?

13.4 पाठ सार

निबंध गद्य साहित्य की एक विधा है। इसके द्वारा किसी भी विषय पर गंभीर विवेचन या उसका विश्लेषण किया जाता है। निबंध के लिए किसी भी विषय को चुना जा सकता है। इसका स्वरूप हमेशा गंभीर नहीं होता है। व्यंग्य, हास्य, संवाद और अनुभूतियों के समावेश से निबंध को रोचक स्वरूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। हास्य और व्यंग्य का पुट देकर भी गंभीर विषयों की सार्थक व्यंजना की जा सकती है। निबंध के दो स्वरूप होते हैं- व्यक्तिनिष्ठ और वस्तुनिष्ठ। व्यक्तिनिष्ठ निबंध में विचारात्मक और भावात्मक निबंध आते हैं। वर्णनात्मक और विवरणात्मक निबंध वस्तुनिष्ठ निबंध की श्रेणी में आते हैं। व्यक्तिनिष्ठ निबंध मनोवैज्ञानिकता प्रधान होते हैं। रामचंद्र शुक्ल के सभी निबंध चिंतामणि के चार खंडों में संकलित हैं। अपने विचारात्मक निबंधों में मनोभावों का गहन विश्लेषण करते हुए इन्होंने सामाजिकता को सम्मुख रखा। मनोविज्ञान की समझ से व्यक्ति के मानसिक स्तर की टोह लेते हुए, इन्होंने समाज में व्यक्ति के भावों की अभिव्यक्ति के स्वरूप को विवेचित किया है। व्यक्तिगत मनोभावों से समाज प्रभावित होता है

और समाज से व्यक्ति का अस्तित्व है। व्यक्ति समाज की महत्वपूर्ण इकाई है। उसके सुखद और दुखद अनुभव समाज को प्रभावित करते हैं और समाज की प्रतिक्रिया मनुष्यता के जीवन को प्रभावित करती है। उसके भावों को नियंत्रित करती है। रामचंद्र शुक्ल की निबंध यात्रा न कोरी बौद्धिक यात्रा है न कोरी भावुकता की यात्रा। उनके निबंधों की विषयवस्तु और प्रतिपादन शैली में बुद्धि और हृदय का सम्यक प्रसार दिखाई देता है। एक अनुभव सिद्ध निबंधकार के रूप में अपने निबंध के संदर्भ में उनकी स्वयं की उक्ति का विशेष महत्व है, "अपना रास्ता निकालती हुई बुद्धि जहाँ कहीं मार्मिक या भावाकर्षक स्थलों पर पहुँची है, वहां हृदय थोडा-बहुत रमता अपनी प्रवृत्ति के अनुसार कुछ कहता गया है। इस प्रकार यात्रा के श्रम का परिहार होता रहा है। बुद्धि पथ पर हृदय भी अपने लिए कुछ-न-कुछ पाता रहा है।" साहित्य समीक्षा और सिद्धांत के क्षेत्र में स्थापित इनकी मान्यताएँ शिक्षा जगत में अपना विशिष्ट महत्व रखती हैं।

13.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं -

1. आचार्य रामचंद्र शुक्ल हिन्दी में साहित्य के इतिहासकार और प्रमुख आलोचक के साथ-साथ युग प्रवर्तक निबंधकार के रूप में प्रतिष्ठित हैं।
2. साहित्य में सैद्धांतिक समीक्षा का आरंभ रामचंद्र शुक्ल के निबंधों से ही हुआ।
3. निबंध लेखन की इनकी लालित्यपूर्ण शैली को देखते हुए इन्हें कलात्मक निबंध का भी जनक माना जाता है।
4. मानव जीवन के गंभीर भावों और मनोविकारों पर लिखते हुए आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने साहित्य को मनोवैज्ञानिक आधार प्रदान किया। रस-मीमांसा में रस का विवेचन भी इसी दृष्टि से किया गया है।

13.6 शब्द संपदा

1. अपना उल्लू सीधा करना = अपना काम निकालना
2. टोह लेना = वस्तु और स्थिति को जानना-समझना
3. भावानुभूति = भावों को अनुभूत करना
4. भावाभिव्यक्ति = भावों की अभिव्यक्ति, भावों को प्रकट करना
5. श्रद्धालु = जिनमें श्रद्धा की भावना रहती है, श्रद्धावान
6. श्रद्धेय = जिनके प्रति किसी के मन में श्रद्धा का भाव उत्पन्न होता है
7. समन्वित = मिला हुआ
8. साहचर्य = साथ

13.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

13.7.1 सही विकल्प चुनिए –

1. आचार्य रामचंद्र शुक्ल के निबंध लेखन के प्रौढ़ समय (1920-1940) को किस नाम से संबोधित किया जाता है?

A. छायावाद युग B. भारतेंदु युग **C. शुक्ल युग** D. द्विवेदी युग

2. रामचंद्र शुक्ल का प्रथम निबंध 'साहित्य' किस वर्ष और किस पत्रिका में प्रकाशित हुआ था?

A. 1903, आनंद कादंबिनी B. 1912, नागरी प्रचारिणी पत्रिका

C. 1904, सरस्वती D. 1909, सरस्वती

3. चिंतामणि भाग-3 का संपादन किसके द्वारा किया गया है?

A. आचार्य रामचंद्र शुक्ल स्वयं B. डॉ. नगेन्द्र

C. नामवर सिंह D. कुसुम चतुर्वेदी और ओम प्रकाश सिंह

4. रामचंद्र शुक्ल के अनुसार 'श्रद्धा और प्रेम' के समन्वित (योग) स्वरूप को क्या कहा जाता है?

A. भक्ति B. करुणा C. लोभ D. उत्साह

5. साहस और धीरता के साथ किस तत्व का मिलना 'उत्साह' कहलाता है?

A. भय B. लोभ C. क्रोध **D. आनंद**

6. शुक्ल जी के अनुसार 'श्रद्धा' के तीन मुख्य विषय कौन से हैं?

A. भय, लज्जा और ग्लानि B. सुख, दुःख और क्रोध

C. प्रेम, ईर्ष्या और घृणा **D. शील, प्रतिभा और साधन-संपत्ति**

7. आत्मा की मुक्तावस्था 'ज्ञानदशा' कहलाती है, तो हृदय की मुक्तावस्था क्या कहलाती है?

A. भावदशा **B. रसदशा** C. कर्मदशा D. साधनावस्था

8. ईर्ष्या किन तीन भावों के मेल से बना एक 'संकर भाव' है?

A. लोभ, प्रेम और करुणा B. भय, क्रोध और घृणा

C. आलस्य, अभिमान और नैराश्य D. लज्जा, संकोच और ग्लानि

9. दुःख की संभावना के अनुमान से जो 'आवेग शून्य' भय होता है, उसे क्या कहते हैं?

A. आशंका B. कायरता C. धोखा D. भीकता

10. रामचंद्र शुक्ल ने 'एडविन अर्नाल्ड' के 'लाइट ऑफ एशिया' का किस नाम से पद्यानुवाद किया?

A. आदर्श जीवन B. विश्व प्रपंच C. कल्पना का आनंद **D. बुद्धचरित**

खंड (ब)

13.7.2 लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. रामचंद्र शुक्ल के भाव और मनोविकार संबंधी निबंध पर प्रकाश डालिए।
2. करुणा और प्रेम लोक का मंगल करने वाले भाव हैं। क्या क्रोध में भी लोकमंगल (मनुष्यों के समूह का हित साधन) की क्षमता है? अपने पक्ष को तर्क सहित सिद्ध कीजिए।

खंड (स)

13.7.3 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. रामचंद्र शुक्ल के साहित्यिक अवदान पर चर्चा कीजिए।
2. रामचंद्र शुक्ल के निबंधों का परिचयात्मक अवलोकन प्रस्तुत करें।
3. रामचंद्र शुक्ल के निबंध की भाषा शैली पर प्रकाश डालिए।
4. क्या रामचंद्र शुक्ल के निबंध में आप इन्हें पाते हैं- प्रकृति चित्रण, राष्ट्रीय भावना, मानवता की उच्चभूमि, प्रेम की उच्च भूमि? यदि हाँ तो उदाहरण सहित उल्लेख करें।

13.8 पठनीय पुस्तकें

1. त्रिवेणी : रामचंद्र शुक्ल
2. चिंतामणि भाग-1 : रामचंद्र शुक्ल
3. चिंतामणि भाग-2 : विश्वनाथ प्रसाद मिश्र
4. चिंतामणि भाग-3 : नामवर सिंह
5. चिंतामणि भाग-4 : कुसुम चतुर्वेदी, ओम प्रकाश सिंह
6. आचार्य रामचंद्र शुक्ल और हिन्दी आलोचना : रामविलास शर्मा
7. निबंध निलय : सत्येंद्र

इकाई 14 : 'लोभ और प्रीति' (रामचंद्र शुक्ल) की विवेचना

रूपरेखा

14.1 प्रस्तावना

14.2 उद्देश्य

14.3 मूल पाठ : 'लोभ और प्रीति' (रामचंद्र शुक्ल) की विवेचना

14.3.1 लोभ और प्रीति : अर्थ, परिभाषा और स्वरूप

14.3.2 लोभ और प्रीति के अवयव और विषय

14.3.3 लोभ की अवधारणा : सामाजिक परिदृश्य

14.3.4 प्रीति का व्यापक स्वरूप

14.3.5 लोभ और प्रीति निबंध की भाषा-शैली

14.4 पाठ सार

14.5 पाठ की उपलब्धियाँ

14.6 शब्द संपदा

14.7 परीक्षार्थ प्रश्न

14.8 पठनीय पुस्तकें

14.1 प्रस्तावना

विश्व साहित्य में निबंध विधा के प्रवर्तन का श्रेय फ्रांस निवासी 'मॉनटेन' (Montaign) को दिया जाता है। हिन्दी साहित्य में इसका आरंभ हिन्दी के आधुनिक काल से माना जाता है। निबंध का आरंभिक स्वरूप भारतेंदु युग के लेखन में देखने को मिलता है। इसके बाद आचर्य महावीर प्रसाद द्विवेदी का युग आता है। इस युग में हिन्दी निबंध का स्वरूप परिष्कृत हुआ। निबंध लेखन में भावाभिव्यक्ति के साथ व्याकरण प्रयोग पर भी विशेष ध्यान दिया गया। इस विधा को जीवंत बनाने के द्विवेदी युग के सुप्रयास से निबंध का आयाम विस्तृत हुआ। निबंध की इस विकास यात्रा में आचार्य रामचंद्र शुक्ल का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण है। द्विवेदी युग से जिस समीक्षात्मक निबंध का विकास हुआ उसमें मनोवैज्ञानिकता के समावेश का श्रेय आचार्य शुक्ल को जाता है। इन्होंने मनुष्य जीवन के सूक्ष्म जगत (मनोवेगों) के साथ साहित्य के सूक्ष्म सिद्धांतों को अपने निबंध का विषय बनाया। 'लोभ और प्रीति' आचार्य शुक्ल का विचारात्मक निबंध है। निबंध संग्रह चिंतामणि भाग-1 में संकलित यह निबंध 'भाव और मनोविकार' संबंधी निबंधों की श्रेणी में आता है।

14.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रों! इस इकाई में आप 'लोभ और प्रीति' निबंध का अध्ययन करेंगे। इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप-

- लोभ और प्रीति के संकुचित और व्यापक स्वरूप को जान सकेंगे।
- लोभ और प्रीति संबंधी आचार्य शुक्ल की अवधारणा को स्पष्ट कर सकेंगे।
- लोभ और प्रीति के अवयव तथा उसके विषय से परिचित हो सकेंगे।
- लोभ और प्रीति संबंधी आचार्य रामचंद्र शुक्ल की मान्यताओं का समीक्षात्मक विवेचन कर सकेंगे।

14.3 मूल पाठ : 'लोभ और प्रीति' (रामचंद्र शुक्ल) की विवेचना

14.3.1 लोभ और प्रीति : अर्थ, परिभाषा और स्वरूप

लोभ का आश्रय मन-मस्तिष्क है। प्रीति का आश्रय हृदय है। लोभ कोरी बुद्धि के संग से उत्पन्न होता है और प्रीति विशुद्ध भावना से जन्म लेती है। प्रीति में सत्व गुण की अधिकता होती है जबकि लोभ में तमोगुण और रजोगुण प्रधान होते हैं। लोभ का सामान्य अर्थ है 'लालच'। प्रीति का सामान्य अर्थ है 'प्रेम'।

आचार्य शुक्ल के शब्दों में लोभ की परिभाषा

- "जिस प्रकार का सुख या आनंद देनेवाली वस्तु के संबंध में मन की ऐसी स्थिति को जिसमें उस वस्तु के अभाव की भावना होते ही प्राप्ति, सानिध्य या रक्षा की प्रबल इच्छा जग पड़े, लोभ कहते हैं।"
- "मन की ललक यदि वस्तु के प्रति है तो लोभ" है।
- "जहाँ लोभ सामान्य या जाति के प्रति होता है वहाँ वह लोभ ही रहता है।
- "लोभ सामान्योन्मुख होता है।"
- "कहीं कोई अच्छी चीज सुनकर दौड़ पड़ना लोभ है।"
- दो कोटि (सजीव, निर्जीव) की दो सत्ताओं का बाह्य संपर्क लोभ है।

आचार्य शुक्ल के शब्दों में प्रीति की परिभाषा

- "विशिष्ट वस्तु या व्यक्ति के प्रति होने पर लोभ वह सात्विक रूप प्राप्त करता है जिसे प्रीति या प्रेम कहते हैं।"
- "मन की ललक यदि ...किसी प्राणी या मनुष्य के प्रति होती है तो प्रीति कहलाती है।"
- लोभ "जहाँ पर किसी जाति के एक ही विशेष व्यक्ति के प्रति होता है वहाँ 'रुचि' या 'प्रीति' का पद प्राप्त करता है।"
- "प्रेम विशेषोन्मुख" होता है।
- किसी विशेष वस्तु पर इस प्रकार मुग्ध रहना कि उससे कितनी अच्छी-अच्छी वस्तुओं के सामने आने पर भी उस विशेष वस्तु से प्रवृत्ति न हटे, रुचि या प्रेम है।
- प्रेम में एक कोटि की दो सत्ताओं के अंतःकरण का मेल होता है।

- प्रेम सृष्टि के बीच सौन्दर्य विधान की प्रेरक दिव्य शक्ति है।

ये परिभाषाएँ लोभ और प्रीति के स्वरूप को स्पष्ट कर रही हैं। जिस किसी भी वस्तु से मनुष्य को सुख मिलता है या जो उसके ऐश्वर्य को बढ़ाकर उसे आनंद प्रदान करता है उन वस्तुओं के प्रति उसमें घोर आसक्ति की भावना पाई जाती है। पर उसे अपनी इस आसक्ति और उस वस्तु के दूर होने से उत्पन्न दुःख का ज्ञान तब होता है जब कोई आकर उससे वह वस्तु ले जाना चाहता है। उस स्थिति में उस वस्तु से सुखोपभोग करने वाला व्यक्ति वस्तु को मांगने वाले व्यक्ति से व्याकुल होकर कहता है, "अभी रहने दो"। सुखोपभोग की अपनी इच्छा की महत्ता से भी मनुष्य तब परिचित होता है जब कोई उससे उसके सुख के साधन को ले जाना चाहता है। मनुष्य में निहित वासना उसकी लोभ वृत्ति है। लोभ में मनुष्य-चरित्र के दो गुण दिखाई देते हैं-

1. वह दूसरे की उस वस्तु को पाना चाहता है जिससे वह अपनी वासना की पूर्ति कर सके।
2. जिस वस्तु द्वारा वह स्वयं सुख का उपभोग कर रहा है उससे अलग होने की कल्पना या आशंका मात्र से वह दुखी हो जाता है।

जिस सुख का भोग मनुष्य कर रहा है उसके दूर होने की कल्पना मात्र से वह दुखी हो जाता है। सुख के जो साधन मनुष्य के पास नहीं हैं, उसकी अप्राप्ति की स्थिति में वह दुखी रहता है। यह लोभ का दुखात्मक पक्ष है। लोभ का स्वरूप इसी पक्ष में पूर्ण रूप से अभिव्यक्त होता है। अपनी वस्तु के प्रति लोभ की भावना ही मनुष्य में उसे किसी को न देने की भावना भरती है। लोभ का सुखात्मक पक्ष दूरगामी परिणामों से अनजान प्रत्यक्षतः त्वरित आनंद की अनुभूति करानेवाला होता है।

इस लोभवृत्ति में जब सात्विकता के साथ एकनिष्ठता घर कर लेती है तब इसका स्वरूप प्रीति, रुचि या प्रेम में परिणत हो जाता है। एकनिष्ठ प्रेम को स्पष्ट करने के लिए आचार्य शुक्ल ने रूप-लोभी का उदाहरण दिया है। किसी भी व्यक्ति की रूप की प्रशंसा सुनते ही मन में पहला भाव लोभ का आता है। यह लोभ मुग्धता सुंदर-से-सुंदर व्यक्ति को देखकर अपना पाला बदलता रहता है। इस परिवर्तनशील वृत्ति को 'प्रवृत्ति का व्यभिचार' की संज्ञा दी गई है। जब यह लोभ की वृत्ति किसी एक व्यक्ति के निमित्त स्थिर हो जाती है तब मनुष्य रूप-लोभी की श्रेणी से प्रेमी की श्रेणी में आ जाता है।

बोध प्रश्न

- लोभ और प्रीति से आप क्या समझते हैं?
- लोभ की स्थिति में मनुष्य के चरित्र में कौन से गुण परिलक्षित होते हैं?

14.3.2 लोभ और प्रीति के अवयव और विषय

लोभ और प्रीति के दो अवयव हैं- संवेदनात्मक और इच्छात्मक। इन दोनों अवयवों की उपस्थिति में ही लोभ और प्रीति पूर्ण रूप से प्रकट होते हैं। संवेदनात्मक अवयव की उपस्थिति से किसी वस्तु से व्यक्ति सुख और आनंद की अनुभूति प्राप्त करता है। इस अवस्था में वह उस वस्तु को लेने की या स्वयं से दूर न होने देने की चेष्टा नहीं करता है ना ही वह उसके न नष्ट होने की इच्छा करता है। किसी वस्तु का अच्छा लगना और उससे सुख एवं आनंद की अनुभूति प्राप्त

करना संवेदनात्मक अवयव है। यहाँ व्यक्ति का इंद्रिय सुख इच्छारहित है। इच्छात्मक अवयव इच्छाएँ प्रकट होती हैं। ये प्रकट होनेवाली इच्छाएँ हैं- सुखप्रद वस्तु को प्राप्त करना, सुखप्रद प्राप्त वस्तु को स्वयं से दूर न होने देना और उसे नष्ट न होने देना। केवल किसी वस्तु के अच्छे लगने से मन-ही-मन प्रमुदित होने की अवस्था या उसका सुखोपभोग करने से व्यक्ति को लोभी नहीं कहा जा सकता है। उसके लोभ में जब इच्छात्मक अवयव का संयोग होता है तभी उसका लोभ बाहरी दुनिया पर प्रकट होता है। 'इच्छा' लोभ और प्रीति का आवश्यक अंग है। प्रेमी का प्रेम भी ऐसे ही जगजाहिर होता है। जब किसी व्यक्ति के संदर्भ में कोई यह संकेत देता है कि वह उसे 'बहुत अच्छा और प्रिय लगता है तो लोग कहते हैं कि 'वह उसे चाहता है।''

व्यक्ति की अभिरुचि भिन्न होती है। आचार्य शुक्ल ने इसके लिए चौबे जी का उदाहरण दिया। 'भूखे रहने पर पेड़ा सबको अच्छा लगता है पर चौबेजी पेट भर भोजन के ऊपर भी पेड़े पर हाथ फेरते हैं।' पेड़े को देखकर चौबे जी के सब्र का बाँध टूट जाता है और वे पेट भरे रहने पर भी उसे ग्रहण करते हैं जबकि सामान्यतया लोग भूखे होने पर भोजन की ओर ध्यान देते हैं। यहाँ चौबे जी की रुचि मिठाई में है और मिठाइयों में भी उनका प्रिय पेड़ा है। ज्ञातव्य है कि सभी इंद्रियों का विषय अलग होता है जिसके अनुरूप लोगों की अभिरुचि के विषय भी अलग-अलग हो सकते हैं। लोगों की अपनी रुचि ही उन्हें लोभ की प्रेरणा देती है। रुचि के विभिन्न विषय के कुछ उदाहरण देखें- कमल का फूल, रमणी का सुंदर मुख, वीणा की तान, अपनी तारीफ, जूही और केसर की गंध, रबड़ी और मालपुआ, मुलायम गद्दा। ये विभिन्न अच्छे लगनेवाले विषय क्रमशः इन इंद्रियों से संबंधित हैं- आँख, कान, नाक, जिह्वा और त्वचा। रुचि के इन विषयों के प्रति मनुष्य का आकर्षण आचार्य शुक्ल के अनुसार सीधी-सादी और स्वाभाविक है क्योंकि इन वस्तुओं से मनुष्य को आनंद मिलता है। इन आनंदप्रद वस्तुओं की प्राप्ति के स्रोत जो पूर्णतया आनंदरहित हैं, उन्हें पाने की मनुष्य की इच्छा उसका लोभ है। वर्तमान समय में 'लोभी' शब्द का विशेष अर्थ रुपये-पैसे और धन के लोभी के रूप में ही किया जाता है। रुपये-पैसे और धन की ओर मनुष्य का आकर्षित होने का कारण क्या है? रूप, रस और गंध रहित उस धातुखंड से प्राप्त किए जा सकनेवाले सुख और आनंद भी मनुष्य की समझ से अब बाहर हैं। उसके बृहत्तर प्रयोग की ओर उसका ध्यान नहीं है। धन संचय की प्रवृत्ति पूरे जोर पर है। मनुष्य की इस प्रवृत्ति को ही लक्ष्य करके आचार्य शुक्ल ने लिखा है, जिस वेग से मनुष्य उस पर टूटते हैं उस वेग से भौंरे कमल पर और कौए मांस पर भी न टूटते होंगे। धन मनुष्य के जीवन की एक आवश्यकता है। पर आज यह मनुष्य का जीवन बन गया है। पहले मनुष्य धन जुटाता था सुख-साधन की पूर्ति के लिए पर अब धन जुटाना उसका लक्ष्य हो गया है। अपने दुःख के निवारण के लिए भी धन को खर्च करने से मनुष्य हिचकता है। अभूतपूर्व सुख को वह प्राप्त करना चाहता है पर उसे पाने में धन-खर्च की बात आते ही वह अपना हाथ रोक लेता है। मनुष्य के जीवन का मुख्य लक्ष्य धन संचय करना बन गया है। धन का साधन से साध्य बन जाना मनुष्य के परिवर्तित होते मनोविज्ञान की ओर इशारा कर रहा है। मानव जीवन में व्याप्त हो रहा यह परिवर्तन सकारात्मक नहीं कहा जा सकता।

बोध प्रश्न

- लोभ और प्रीति के कितने अवयव होते हैं? विस्तार से बताएँ।
- 'व्यक्ति की रुचि और लोभ का विषय'- ये दोनों आपस में किस प्रकार संबंधित हैं?

14.3.3 लोभ की अवधारणा : सामाजिक परिदृश्य

जब कोई वस्तु अच्छी लगती है तब लोभ होता है। व्यक्ति के लोभ की सीमा वस्तु के स्थिति पर निर्धारित होती है। वह अच्छी लगनेवाली वस्तु यदि व्यक्ति के पास है तो वह चाहेगा कि उसकी वह प्रिय वस्तु उससे दूर नहीं हो या कोई उसे नष्ट न कर सके। यदि उसे अच्छी लगनेवाली वस्तु उसके पास नहीं है तो वह उसे पाना चाहेगा। जिस प्रकार प्रिय वस्तु के संबंध में मनुष्य में ये दो प्रकार की इच्छाएं उत्पन्न होती हैं उसी प्रकार संपर्क की इच्छा भी दो प्रकार की होती है। व्यक्ति चाहता है कि उसका संपर्क इतना गहरा हो जितना किसी का नहीं हो या जितना संपर्क बहुत सारे लोग एक साथ मिलकर रखते हैं, उतना वह अकेले ही रखे।

किसी वस्तु में केवल अपनी प्रियता की प्रतीति से समाज का ध्यान उस ओर नहीं जाता। लेकिन जब मनुष्य उस वस्तु को लेने के लिए प्रयत्नशील होता है या दूसरों को उसे प्राप्त करने से रोकने की कोशिश करता है तब समाज की नजर में व्यक्ति का लोभ दिखाई देने लगता है। इनमें से कुछ लोग हमारे लोभ के पक्ष में खड़े हो जाते हैं और कुछ निंदारत हो जाते हैं। एक लोभी के लोभकर्म की निंदा एक लोभी से अधिक अच्छे तरीके से कोई नहीं कर सकता है। जो मांगने पर अपनी वस्तु औरों को न दे वह लोभी है। जो किसी से कुछ माँगता है वह भी लोभी है। यहाँ दो व्यक्ति हैं पर उनका प्रिय वस्तु एक ही है जिसे लेने और न देने के अपने संकल्प से दोनों एक-दूसरे को व्याकुल करते हैं। इसी संदर्भ में आचार्य शुक्ल ने कवि रहीम के दोहे का प्रयोग करते हैं-

"रहिमन वे नर मर चुके जे कहुं माँगन जाहिं।
उनसे पहले वे मुए जिन मुख निकसत नाहिं।।"

'किसी वस्तु को प्राप्त करने की प्रतिषेधात्मक इच्छा सदोष है या निर्दोष यह लोभ के विषय पर निर्भर करता है।' इस प्रकार के लोभ को विरोध का सामना करना पड़ता है।

लोभ के विषय दो प्रकार के होते हैं- सामान्य और विशेष। सामान्य लोभ के विषय का संबंध मानव की मूलभूत आवश्यकताओं (भोजन, वस्त्र, आवास, धन) से है। इसकी प्राप्ति के स्रोत को सभी प्राप्त करना चाहते हैं। सभी मनुष्यों के इस सामान्य लोभ की ओर बहुत से लोगों का ध्यान जाता है। यदि किसी को कोई विशेष वस्त्र या विशेष मिठाई पसंद है और वह उसको पाना या दूसरे को न देना चाहता है तो इस ओर बहुत कम लोग का ध्यान जाएगा। जिनका ध्यान जाएगा उनके मन में भी विरोध की भावना नहीं होगी क्योंकि यह व्यक्ति विशेष की अपनी रुचि है। सभी लोगों की रुचियाँ भिन्न-भिन्न होती हैं। रुचि की भिन्नता से लोभ का लक्ष्य भी भिन्न हो जाता है।

यदि सभी मनुष्य अलग-अलग वस्तुओं (गाय, घोड़ा, कपड़ा, ईंट, सोना, चाँदी, तांबा इत्यादि) का लोभ करते तो किसी में भी परस्पर विरोध नहीं होता। यही नहीं व्यवस्था यह भी होती कि इन वस्तुओं में से किसी के पास इतनी शक्ति न होती जिससे अन्य वस्तुओं की प्राप्ति की जा सके तब भी विरोध की भावना नहीं जन्म लेती। ये व्यवस्थाएँ स्वप्न की शोभा हैं यथार्थ पर

इनका कोई ठिकाना नहीं है। अर्थ विनिमय की प्रणाली के अंतर्गत रुपये-पैसे या कीमती धातु के बदले अन्य सामानों की प्राप्ति की जाती है। इससे और अधिक प्राप्त करने की मनुष्य की ललक बढ़ी है। वह सभी साधनों को पाने का स्रोत 'टके' को मानता है जो है भी; और उसे पाने के लिए असंतोषी हो गया है। वह संसार का सारा धन बटोर लेना चाहता है। उसे इसके 'ठीकरा' होने का अहसास ही नहीं है।

समाज में आज धन का बोलबाला है। न्याय, शिक्षा और राज सम्मान भी टके के गुलाम हैं। संसार में पूर्वनियत सभी प्रकार के कर्तव्य और धर्म टके की चाकरी करने लगे हैं। समाज में केवल बनिया रह गए हैं मानो क्षत्रिय और ब्राह्मण लुप्त हो गए हैं। वीर अपनी वीरता दिखाने के लिए अपना मोल लगाते हैं। आचार्य धनहीन विद्यार्थियों को शिक्षा देने से मुकरते हैं। पैसे के बल पर कोई कमजोर और कायर अपने को बलवान साबित कर लेता है। शासन और सत्ता पर भी पैसे का ही जोर है। राजनीति अब केवल शब्द और व्यवस्था भर है। राजनीति अब केवल अपने देश की प्रजा का विकास नहीं चाहती। वह अपनी वैश्विक पहचान बनाना चाहती है और इसके लिए उसने व्यापार को अपना आश्रय चुना है।

अंतरराष्ट्रीय व्यापार व्यवस्था में मित्र कम प्रतिद्वंद्वी अधिक मिले। सामने से मुस्कुराकर जिसने एक हाथ मिलाया उसीने दूसरे हाथ से पाँव के नीचे से जमीन भी खींच ली। जब क्षात्रधर्म कायम था तब रण होता था और उसमें जय-पराजय का निर्णय होता था। अब घात लगाकर दूसरे का धनहरण करना ही श्रेयस्कर समझा जाता है। यह धन संचय की भावना का बृहत्तर दुष्परिणाम है। व्यापार का नशा भी इसी श्रेणी में आता है। आवश्यकता से अधिक माल की तैयारी करना और फिर उसे अन्य देशों में निर्यात करने की चिंता में पड़े रहना कहाँ तक ठीक है भला! पुनः क्षात्र धर्म की स्थापना होनी चाहिए और यह होगा- ऐसा आचार्य शुक्ल का विश्वास है।

लोभ के विशेष विषय के अंतर्गत एक सच्चा लोभी अपनी प्रिय वस्तु को पाने के लिए बड़ा-से-बड़ा त्याग भी सहर्ष करता है। जैसे महर्षि वशिष्ठ की गाय को पाने के लिए महर्षि विश्वामित्र अपना सारा राजपाट देने के लिए तैयार हो गए थे। 'अन्य का त्याग अनन्य और सच्चे लोभ की पहचान है।' लोभ का स्वरूप निर्विरोध भी होता है। लुटेरे या डाकू के दल की एकता के मूल में लोभ का यही निर्विरोध स्वरूप है। उस दल के सभी सदस्यों का लक्ष्य एक है क्योंकि उनकी रुचि एक है। उनका लोभ भी एक ही वस्तु पर रहता है जिसे पाने के लिए वे आपस में सद्भावना बनाए रखते हैं।

आपसी सद्भाव के अभाव में उनका दल टूट सकता है। इस स्थिति में परस्पर विरोध का सामना भी करना पड़ सकता है जिससे लक्ष्य को पाने में बाधा उत्पन्न होगी। पर डाकुओं के दल का हर सदस्य एक-दूसरे की इच्छापूर्ति के मार्ग में साधक बन कर आता है। व्यक्ति का जो लोभ दूसरे व्यक्ति की सुखशांति और स्वच्छंदता के मार्ग में बाधक बनता है वैसे लोभ की निंदा समाज के सहृदय सदस्य करते हैं। इन सहृदय सदस्यों का लोभ मनुष्य की सुखशांति और स्वच्छंदता में निहित है। इस लोभ से किसी को विरोध नहीं हो सकता। बगीचे की शोभा में सबको लोभ होता है और यह निर्विरोध है क्योंकि अभी तक यह अर्थ विनिमय प्रणाली से मुक्त है। यदि देखना भी

सशर्त होता तो इसमें भी विरोध की गुंजाइश होती। धन की कामना और कुछ लोगों का निषेध- इन दोनों ही सूरत में बगीचे की शोभा को देखना विरोधपूर्ण होता। सुंदरता को जितना सब निहारते हैं उतने तक ही हम भी रहें तो हमारा लोभ निर्विरोध होगा।

लोभ में रक्षा की इच्छा भी व्याप्त रहती है। इसके भी दो प्रकार हैं- जो वस्तु अच्छी लगी उसे स्वाधिकार में रखने की इच्छा या केवल उसे बने रहने देने की इच्छा। लोभ या प्रीति की अधिकता से मनुष्य में अविश्वास की भावना उत्पन्न होती है जिससे किसी साझे सामान को वह केवल अपने अधिकार में रखना चाहता है। किसी मीठे आम के पेड़ की रखवाली सब लोग मिलकर करते हैं और फल खाते हैं तो यहाँ कोई बाधा नहीं है। यदि फल के सामूहिक उपभोग को बाधित किए बिना कोई अकेला व्यक्ति उस वृक्ष को अपने अधिकार में रखेगा तब भी कोई बाधा उत्पन्न नहीं होगी। बाधा तब उत्पन्न होगी जब सामूहिक उपभोग बाधित होगा। एक दूसरा उदाहरण आचार्य शुक्ल ने मंदिर का लिया जिसमें सबका आनंद और सुख निहित है और सभी इसके निमित्त किए जानेवाले कार्यों में स्वेच्छा से योगदान देते हैं। यह लोभ निर्विरोध है और सबको एकता के सूत्र में बाँधता भी है।

लोभ का सबसे प्रशंसनीय स्वरूप वह है जिसमें किसी चीज के केवल बने रहने की कामना होती है। उस वस्तु की रक्षा की यह भावना उसके उपयोगिता को ध्यान में रखकर उत्पन्न नहीं होती। इसके लिए आचार्य शुक्ल ने एक बच्चे को अपना कहने वाली दो माँओं का दृष्टांत दिया है। दोनों बच्चे को अपना कह रही थी। काजी ने फैसला किया कि ठीक है बच्चे को काटकर आधा-आधा बाँट दिया जाएगा। यह सुनकर दोनों में से एक स्त्री ने कहा बच्चा उसी को दे दीजिए, मुझे नहीं चाहिए। यह कहनेवाली स्त्री के मन में बच्चे की रक्षा की लाभरहित भावना थी। वही उसकी माँ थी। यह सच्चे लोभ का उदाहरण है। माँ को 'पक्का लोभी' कहा जा सकता है। इसी प्रकार घर, गाँव (पुर) और देश की रक्षा की भावना में भी लोभ का यही पवित्र स्वरूप निहित है।

बोध प्रश्न

- लोभ के अंतर्गत मनुष्य में वस्तु की प्राप्ति के अतिरिक्त संपर्क की इच्छा और रक्षा की इच्छा भी जागती है। इन्हें स्पष्ट करें।
- किस प्रकार के लोभ को विरोध का सामना करना पड़ता है और किस प्रकार के लोभ को विरोध का सामना नहीं करना पड़ता है? उदाहरणसहित समझाएँ।
- लोभ के विषय कितने प्रकार के होते हैं? स्पष्ट करें।

14.3.4 प्रीति का व्यापक स्वरूप

एक प्राणी के प्रति दूसरे प्राणी का लोभ 'प्रीति' (प्रेम) है। परिचय और सानिध्य प्रीति के मूल कारक तत्व हैं। मनुष्य के अंतःकरण में कई भाव पलते हैं। प्रेम भी उनमें से एक है। यह प्रेम स्थान से भी हो सकता है जिसका उदाहरण देशप्रेम या मातृभूमि से प्रेम है। किसी स्थान से मनुष्य का लोभ स्थायी तब होता है जब उस स्थान से वह परिचित होता है। परिचय ही प्रेम का प्रवर्तक है। परिचय होना यानी हिल-मिल जाना जिसे आचार्य शुक्ल ने 'परच जाना' कहा है।

स्थान से प्रेम करना यानी उस स्थान से जुड़े हर प्राकृतिक वस्तु से प्रेम करना है। किसी स्थान के पेड़-पौधे, लता-झाड़ी, वन, पर्वत, नदी, पशु-पक्षी और मनुष्य- इन सबसे प्रेम करना ही देशप्रेम है। इनसे प्रेम करना यानी इनका हितचिंतन करना है। लोभ या प्रेम ही व्यक्ति में त्याग की भावना को जगाता है और अनायास व्यक्ति सर्वहित साधन की ओर उन्मुख हो जाता है। यह देशप्रेम कितनों में होता है? क्या हममें है? क्या हममें अपनी मातृभूमि और वहाँ के वासियों के प्रति सच्चा अनुराग है? क्या हमें अपने अतीत की याद है? क्या वह हमें प्रिय है? यदि इनका उत्तर नहीं है तो हमें यह सब 'हाँ' में परिणत करना होगा। यह विडंबना है कि वर्तमान समय में अपने देश से नजदीक का परिचय होना बाबूपन की शान घटाता है। महुआ की मिठास को जानने और उसे अभिव्यक्त करने का काम केवल देहातियों का है। एक शहरी व्यक्ति इनसे जितना अनजान रहे उतना ही बेहतर। यह आचार्य शुक्ल को एक लखनवी महाशय ने बताया। यह संस्मरण इस निबंध का हिस्सा है।

स्थान का लोभ वस्तु-लोभ की श्रेणी में ही आएगा क्योंकि स्थान जीवित प्राणी नहीं है। उसका हृदय भी नहीं होता पर वह हृदययुक्त प्राणी का निवास स्थान है। मनुष्य के अतिरिक्त कई प्रकार के जीव उसकी सुंदरता बढ़ाते हैं। वह निवासी मनुष्य उस स्थान के हर चीज को चाहता है। उससे प्रेम करता है पर प्रत्युत्तर में प्रेम की प्राप्ति किसी स्थान से संभव नहीं है। इस लोभ को धारण किए बिना देशप्रेम की बात करना केवल डींग हाँकना है जिसे आचार्य शुक्ल ने 'कोरा बकवाद' कहा है। व्यक्ति-लोभ को आचार्य शुक्ल वस्तु-लोभ से विलक्षण मानते हैं। कारण कि यहाँ दोनों पक्ष में मनस्तत्व उपस्थित है। व्यक्ति का व्यक्ति के प्रति प्रेम में हृदय का साथ दोनों तरफ से रहता है। प्रेमी अपने प्रिय के अंतर्मन पर छाने के लिए व्यग्र रहता है। वह प्रिय में अपने प्रेम की प्रतीति देखना चाहता है और प्रिय को उसके प्रेम का अहसास है इसकी पुष्टि चाहता है। इसे आचार्य शुक्ल ने 'तुष्टि का विधान' कहा है। इस विधान की पूर्ति के लिए प्रेमी और प्रिय का संपर्क आवश्यक है। यह संपर्क तभी संभव है जब प्रिय के मन में प्रेमी से संपर्क की इच्छा जगे। बलपूर्ण चेष्टा से यह नहीं होगा यह होगा हृदय के आपसी मेल से। यही प्रेम की पूर्णता या उसका चरम विकास है।

'वस्तु' लोभ की चेतना से मुक्त रहता है। निर्जीव वस्तु इच्छा से मुक्त रहता है। प्रभावी होने की इच्छा सजीवों में होती है। 'जब किसी नवयुवक का चित्त किसी युवती की ओर आकर्षित होता है, तब ऐसे स्थानों पर जाते समय जहाँ उसके दिखाई पड़ने की संभावना होती है, उसका ध्यान कपड़े-लत्ते की सफाई और सजावट की ओर कुछ अधिक हो जाता है। सामने होने पर बातचीत और चेष्टा में भी एक खास ढब देखा जाता है। अवसर पड़ने पर चित्त की कोमलता, सुशीलता, वीरता, निपुणता इत्यादि का भी प्रदर्शन होता है।' प्रिय को रिझाने की हरसंभव कोशिश की जाती है। प्रिय का मन भी प्रेमी पर मोहित हो रहा है; इसका पता चलते ही प्रेमी का प्रिय के प्रति लोभ जो प्रेमलोक के ऊपरी सतह पर तैर रहा था अब उसकी गहराई में उतर जाता है और प्रेमी अपने उस आनंदलोक में मग्न हो जाता है। हृदय के ऐक्य की अनुभूति से उत्पन्न आनंद जीवन में नया रस भरती है।

जीवन का हर क्षण दुगुने आनंद और उत्साह से भर जाता है। प्रिय से विरह की दशा में सारा संसार दुखदायक बन जाता है। हर चीज से अरुचि उत्पन्न हो जाती है। प्रेमी स्वत्व को भी भूल कर प्रिय की याद में रम जाता है। प्रिय का आनंद ही उसका अपना आनंद हो जाता है। 'दो हृदयों की यह अभिन्नता अखिल जीवन की एकता के अनुभव पथ का द्वार है। प्रेम का यह रहस्यपूर्ण महत्व है।'

प्रेम के दो स्वरूप हैं। एक अंतर्मुखी और दूसरा बहिर्मुखी। अंतर्मुखी प्रेम की परिणति प्रेम के ऐकांतिक स्वरूप में होती है। यह प्रेम जब दो सामान्य मनुष्यों के मध्य होता है तब उनका संसार सिमट जाता है। मनुष्य जीवन के सामान्य कार्य व्यापार जो केवल उन प्रेम करने वाले दो प्राणियों तक सीमित हैं, वे बस उनमें ही निमग्न रहते हैं। उनके सारे सद्‌गुण और सद्भाव निजी प्रेम का मार्ग प्रशस्त करने में व्यर्थ हो जाते हैं। साहस, धैर्य, दृढ़ता और कष्ट-सहिष्णुता ये सभी मानवीय गुण बस प्रेम के उन्माद को जीवित रखने में खर्च हो जाते हैं। यह प्रेम प्रेमी जोड़े में समाज और परिवार के प्रति वैराग्य उत्पन्न कर देता है। उन्हें न घर सूझता है न समाज। पर यही प्रिय के अतिरिक्त कुछ न सूझनेवाला प्रेम यदि परमात्मा से किया जाए तो इसका स्वरूप दिव्य माना जाएगा, जैसे गोपियों का प्रेम कृष्ण के लिए। भक्तिमार्ग में संसार के प्रति वैराग्य की भावना और इष्ट से अनन्य प्रेम करने का सबसे सुलभ साधन ऐकांतिक प्रेम को माना गया है।

प्रेम का दूसरा स्वरूप लोकबद्ध है जो लोक को आनंद देनेवाला है इसलिए इसे लोकरंजनकारी भी कहा जाता है। इसमें अंतःकरण का विशुद्ध प्रेम अपने बहिर्मुखी स्वरूप में रहता है। वह लोक से जुड़ता है और अपने पवित्र प्रकाश से पूरे लोक को आलोकित करता है। प्रेमी अपने प्रेम की मधुरिमा से पूरे संसार को व्याप लेता है। अपने भीतर का आह्लाद वह सारे जीवों पर आरोपित भरता है। प्रेम के इस स्वरूप को वही धारण कर सकता है जो अपने अस्तित्व से प्रेम करता हो। प्रेमी का हृदय इस संसार की सुंदरता से अभिभूत रहता है और वह इसकी अनुभूति अपने प्रिय को भी कराना चाहता है। सुंदरता का दर्शन प्रेम का दिव्य प्रभाव है। मानव जीवन में सौंदर्य के कई रूप हैं- प्रेम, वस्तु, कर्म, वाक और भाव। सौंदर्य के इन रूपों को सभी देखना और दिखाना चाहते हैं। प्रिय के समक्ष अपने इन गुणों का प्रदर्शन करने के लिए प्रेमी का मन उमंग और उत्साह से भरा होता है। पुराने ज़माने में रणभूमि में युवक योद्धा के उत्साह के पीछे भी प्रेम भावना कार्य करती थी। उन्हें लगता था कि उनकी प्रेयसी उन्हें ऊँची अट्टालिकाओं से झाँक रही होंगी। कर्म का सबसे मुश्किल क्षेत्र युद्ध है पर वीरों का कर्म-सौंदर्य यहीं दिखाई देता है। यह वीरगाथा काल के साहित्य में भी नजर आता है जहाँ युद्ध और प्रेम के संयुक्त प्रसंग वाली कविताएँ उपलब्ध हैं।

हिन्दी के प्रबंध काव्यों में भी प्रेम का विस्तार लोक के अंग-प्रत्यंग में दिखाई देता है। इसका सबसे सुलभ उदाहरण 'सीता और राम का प्रेम' है। उनके प्रेम का विस्तार आदिकवि वाल्मीकि ने मिथिला और अयोध्या के महल और बगीचे से बाहर दंडकारण्य के उनके कर्मक्षेत्र में दिखाया। इनका प्रेम लोकजीवन को भयमुक्त करता है। 'सीता-हरण होने पर राम का वियोग जो सामने आता है वह भी चारपाई पर करवटें बदलनेवाला नहीं है, समुद्र पार कराकर पृथ्वी का भार उतारनेवाला है।' आचार्य शुक्ल की मान्यता में इस प्रेम का मान ऐकांतिक प्रेम से अधिक

है। यह प्रेम व्यक्ति के जीवन का दायरा विस्तृत करता है। उसे कर्मपथ पर अग्रसर करता है। यह प्रेम संजीवनी के सामान है। इस रंजनकारी प्रेम का स्वरूप बहुत विस्तृत है। सृष्टि का हर कोना इसकी सीमा है। यह लोकबद्ध प्रेम विद्वान की बुद्धि, कवि की प्रतिभा, चित्रकार की कला, उद्योगी की तत्परता और वीरों के उत्साह को समान रूप से प्रभावित करता है। यह समता भगवान के अनुग्रह के अतिरिक्त कहीं और से नहीं प्राप्त हो सकता। अतः भगवद्भक्ति के लिए भी यह लोकबद्ध प्रेम ही अधिक उपयुक्त है।

'जगत के बीच हृदय का सम्यक प्रसार ही भक्ति है।' यहाँ किसी प्रकार का वैराग्य भी नहीं चाहिए। यह भक्ति रागनुमा है। सबसे राग का संबंध जोड़ना ही सच्ची भक्ति है। चराचर जगत को राममय देखते हुए 'नेह का नाता' निभाना ही परम प्रेम रूपी भक्ति है। इस संबंध को निभाने में जो अवरोध उत्पन्न करे वह अवश्य ही त्यागने योग्य है। आचार्य शुक्ल कहते हैं, 'मेरे देखने में तो वही रामभक्त-सा लगता है जो अपने पुत्र-कलत्र, भाई-बहिन, माता-पिता से स्नेह का व्यवहार करता है, रास्ते में चींटियाँ बचाता है, किसी प्राणी का दुःख देख आँसू बहाता हुआ रुक जाता है, किसी दीन पर निष्ठुर अत्याचार होते देख क्रोध से तिलमिलाता हुआ अत्याचारी का हाथ थामने के लिए कूद पड़ता है, बालकों की क्रीड़ा देख विनोद से पूर्ण हो जाता है, लहलहाती हुई हरियाली देख लहलहा उठता है और खिले हुए फूलों को देख खिल जाता है।' इन सबको देखकर जो उदासीन रहता है वह भक्त नहीं हो सकता। जिसके लिए अखिल ब्रह्मांड प्रेम का पात्र है वही सच्चा भक्त है।

बोध प्रश्न

- वस्तु लोभ से व्यक्ति लोभ विलक्षण है। सिद्ध करें।
- 'परच जाना' से क्या तात्पर्य है?

14.3.5 'लोभ और प्रीति' निबंध की भाषा-शैली

'लोभ और प्रीति' विचारात्मक निबंध है। इसमें लोकभाषा, हिन्दी, संस्कृत और उर्दू भाषा के शब्द प्रयुक्त हुए हैं। व्यास शैली को अपनाकर निबंधकार ने लोभ और प्रीति के संकुचित और व्यापक स्वरूप को बहुत प्रकार से स्पष्ट करते हुए समझाया है। यह स्पष्टीकरण क्रमबद्ध तरीके से किया गया है। इसलिए कह सकते हैं कि यहाँ क्रमसंवर्धन शैली का प्रयोग हुआ है। भाषा प्रवाहमयी है अतः यहाँ धारा शैली भी है। देश से परिचय के क्रम में और अन्य कई जगहों पर लेखक की शब्द योजना और वाक्य प्रयोग इतने प्रभावी हैं कि जिस दृश्य या स्थिति का वे वर्णन कर रहे हैं; उनका चित्र हमारे सामने उपस्थित हो जाता है। अतः यहाँ चित्रांकन शैली का भी प्रयोग हुआ है। निजी जीवन के अनुभव और लोकजीवन की विशिष्टता दोनों का संयोग देखने लायक है। निबंध की विषयवस्तु गंभीर है। इसका विवेचन भी गंभीर है जिसमें रोचक दृष्टान्तों, साहित्यिक उद्धरणों और व्यंग्य वाक्यों का पुट देकर सामान्य समझ के स्तर को छूने का प्रयास किया गया है। भाषा हृदयंगम करने लायक और ओजपूर्ण है।

14.4 पाठ सार

इस निबंध के माध्यम से आचार्य शुक्ल ने मनुष्य की स्वाभाविक प्रवृत्तियों की छानबीन की है। लोभ और प्रेम मनुष्य की स्वाभाविक प्रवृत्ति है। साहित्य में लोभ विशेष रूप से रूपलोभी के लिए प्रयुक्त होता है। समाज में लोभ का अर्थ धन के लोभ से किया जाता है। धन का लोभ मनुष्य में असंतोष की भावना को जगाता है और उसकी अन्य स्वाभाविक प्रवृत्तियों का दमन करता है। ये अन्य दमित प्रवृत्तियां इस प्रकार हैं- क्रोध, दया, घृणा, लज्जा इत्यादि। लोभी का साध्य धन रहता है। उसे जमा करने के लिए वह मान और अपमान में समान भाव रखता है। न्याय-अन्याय से उसे फर्क नहीं पड़ता है। वह अपने इंद्रिय सुख के लिए भी धन खर्च नहीं करता है। एक शुद्ध धनलोभी का आचरण विवेकहीन होता है। जो कष्ट मिटाने, सुख पाने या सुख के अभाव की आशंका से धन संचय की ओर प्रवृत्त होते हैं; वे लोभी नहीं हैं। इन तीन स्थितियों से विलग धनसंचय में रत मनुष्य जघन्य लोभी है। प्रेम संबंधी स्वीकृति के आधार पर प्रेम में भी तीन प्रकार की संभावित स्थितियाँ होती हैं-

1. प्रेम यदि प्रेमी और प्रिय के मध्य आरंभ से ही सम रूप से है तो प्रेम की यह स्थिति युगपद कहलाती है।
2. यदि प्रेम पहले एक में होकर फिर दूसरे में होता है या एक में ही उत्पन्न होकर रह जाता है, दूसरे में होता ही नहीं तो यह प्रेम की विषम स्थिति है।
3. तुल्यानुराग की प्रतिष्ठा की भावना के तहत प्रेमी अपने प्रेम से अनजान प्रिय को अपने प्रेम की जानकारी देना चाहता है ताकि उसे भी बराबर का प्रेम मिले और यह प्रेम बना रहे। तुल्यानुराग की प्रतिष्ठा के लिए प्रेमी दया और करुणा जैसे भावों का भी सहारा लेता है।

प्रेम के निर्मल स्वरूप में आत्मतुष्टि की भावना नहीं रहती। यहाँ प्रिय बना रहे भले ही वह प्रेमी से प्रेम न करे- यह भाव ही प्रबल रहता है। प्रेमी अपने प्रिय के लिए यह कामना ईश्वर से करता है। प्रिय का सुख और आनंद ही प्रेमी का भी सुख और आनंद है। यदि प्रेमी प्रेम के इस उच्च भूमि को नहीं समझता है तो वह प्रिय से सानिध्य की इच्छा का त्याग नहीं कर पाएगा। फलतः उसका मन अशांत होगा और प्रतिक्रिया स्वरूप उसमें क्रोध, ईर्ष्या और वैर भाव जैसी दुर्भावनाओं का समावेश हो जाएगा जिससे जीवन नरक बन जाएगा।

14.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं -

1. आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार लोभ और प्रीति का मूल भाव एक ही है। दोनों की उत्पत्ति रुचि से होती है पर उनकी चरम परिणति भिन्न है। लोभ जब तक क्षुद्र स्वार्थ में लिपटा रहता है तब तक वह लोभ रहता है लेकिन जब वह बृहत्तर देश-काल से जुड़ जाता है तब वह प्रेम बन जाता है। लोभ का जुड़ाव वस्तु से होता है और प्रेम का व्यक्ति से।
2. इच्छात्मक और संवेदनात्मक अवयवों के संयोग से ही लोभ और प्रीति का पूर्ण स्वरूप प्रकट होता है। इच्छा लोभ और प्रीति का एक आवश्यक अंग है।

3. अधिकांश मनुष्यों के जीवन का लक्ष्य धन संचय करना बन गया है। दुनिया टके (रुपया-पैसा) पर टिकी है। जब लोगों के मन से व्यापार का उन्माद दूर होगा तभी पृथ्वी पर शांति होगी।
4. लोभ या प्रेम या प्रेम की सबसे बड़ी विलक्षणता यह है कि यही एक ऐसा भाव है जिसकी व्यंजना हँसकर भी की जाती है और रोकर भी; जिसके व्यंजक दीर्घ निःश्वास और अश्रु भी होते हैं तथा हर्षपुलक और उछलकूद भी।

14.6 शब्द संपदा

1. अवयव = अंग, हिस्सा
2. घर करना = जगह बनाना
3. ठीकरा = फोड़ना = दोष मढ़ना
4. त्वरित = तेजी से
5. मुकरना = इनकार करना
6. सुखोपभोग = सुख का उपभोग करना

14.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

14.7.1 सही विकल्प चुनिए -

1. विश्व साहित्य में निबंध विधा के प्रवर्तन का श्रेय किस लेखक को दिया जाता है?

A. महावीर प्रसाद द्विवेदी
B. भारतेंदु हरिश्चंद्र
C. आचार्य रामचंद्र शुक्ल
D. मॉनटेन (Montaigne)

2. आचार्य शुक्ल के अनुसार 'लोभ' और 'प्रीति' का मुख्य अंतर उनके आश्रय स्थल के आधार पर क्या है?

A. लोभ का आश्रय हृदय है और प्रीति का मन-मस्तिष्क
B. लोभ का आश्रय मन-मस्तिष्क है और प्रीति का हृदय
C. दोनों का आश्रय केवल इंद्रियाँ हैं
D. लोभ का आश्रय समाज है और प्रीति का व्यक्ति

3. आचार्य शुक्ल ने 'लोभ' की परिभाषा में किस भावना को मुख्य माना है?

A. सुख देने वाली वस्तु के अभाव की भावना पर उसे पाने की इच्छा
B. केवल धन संचय करने की प्रवृत्ति

C. किसी व्यक्ति के प्रति अगाध श्रद्धा

D. संसार की सभी वस्तुओं का त्याग

4. लोभ और प्रीति के दो अनिवार्य अवयव कौन से हैं?

A. संवेदनात्मक और इच्छात्मक B. आर्थिक और राजनीतिक

C. शारीरिक और मानसिक D. धार्मिक और सामाजिक

5. चौबे जी द्वारा पेट भरा होने पर भी पेड़ा खाने का उदाहरण किस बात को स्पष्ट करता है?

A. अत्यधिक भूख की स्थिति B. भोजन की बर्बादी

C. मिठाई की पौष्टिकता **D. व्यक्ति की विशिष्ट अभिरुचि**

6. आचार्य शुक्ल के अनुसार आज के समय में 'धन' का साधन से साध्य बन जाना क्या दर्शाता है?

A. देश की बढ़ती हुई आर्थिक प्रगति को

B. व्यापारिक कुशलता के विकास को

C. मनुष्य के परिवर्तित होते नकारात्मक मनोविज्ञान को

D. समाज में बढ़ती हुई दानशीलता को

7. सच्चे लोभ या रक्षा की भावना का उदाहरण देने के लिए शुक्ल जी ने किस कथा का प्रयोग किया है?

A. डाकुओं के दल की एकता का उदाहरण B. वशिष्ठ की गाय और विश्वामित्र का प्रसंग

C. राम और सीता के वनवास की कथा **D. दो माँओं और एक बच्चे का दृष्टांत**

8. आचार्य शुक्ल ने 'देशप्रेम' के लिए किसे अनिवार्य शर्त माना है?

A. स्थान से गहरा परिचय और साहचर्य B. केवल राजनीतिक नारों का ज्ञान

C. युद्ध में वीरता का प्रदर्शन D. विदेशी वस्तुओं का पूर्ण बहिष्कार

9. निबंध में 'ऐकांतिक प्रेम' और 'लोकबद्ध प्रेम' में क्या अंतर बताया गया है?

A. दोनों में कोई अंतर नहीं है, केवल शब्द अलग हैं

B. लोकबद्ध प्रेम केवल ईश्वर से किया जा सकता है

C. ऐकांतिक प्रेम श्रेष्ठ है क्योंकि इसमें समाज का दखल नहीं होता

D. ऐकांतिक प्रेम सीमित होता है जबकि लोकबद्ध प्रेम संसार को मंगलकारी प्रकाश देता है

10. आचार्य शुक्ल के अनुसार 'सच्चा भक्त' वह है जो:

A. केवल मंदिर और तीर्थों की यात्रा करता है

B. संसार से विरक्त होकर केवल माला जपता है

C. चराचर जगत के सभी प्राणियों के प्रति करुणा और स्नेह रखता है

D. अपराधियों को दंड देने में विश्वास नहीं रखता

खंड (ब)

14.7.2 लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. लोभ और प्रीति को परिभाषित करते हुए उनकी समानता और असमानता पर प्रकाश डालें।
2. पक्के लोभी और सच्चे प्रेमी की आचार्य शुक्ल की मान्यता को स्पष्ट करें।
3. समकालीन परिप्रेक्ष्य में यह निबंध प्रासंगिक है। सिद्ध करें।
4. अर्थ विनिमय प्रणाली से लोभ किस प्रकार जुड़ा हुआ है और समाज इससे किस तरह प्रभावित है, स्पष्ट करें।

खंड (स)

14.7.3 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. लोभ और प्रीति संबंधी आचार्य शुक्ल की अवधारणा को स्पष्ट करें।
2. लोभ और प्रीति निबंध वस्तुनिष्ठ है या व्यक्तिनिष्ठ। इस विषय पर अपना विचार स्पष्ट करें।
3. लोभ और प्रीति मनुष्य के अन्य मनोविकारों से किस प्रकार संबंधित हैं?
4. लोभ और प्रीति निबंध की भाषा-शैली पर सोदाहरण प्रकाश डालें।

14.8 पठनीय पुस्तकें

1. चिंतामणि भाग-1 : आचार्य रामचंद्र शुक्ल

2. आचार्य रामचंद्र शुक्ल निबंध-यात्रा : कृष्णदेव झारी

3. साहित्यमनीषी आचार्य रामचंद्र शुक्ल : रामचंद्र तिवारी

इकाई 15 : हजारीप्रसाद द्विवेदी : एक परिचय

रूपरेखा

15.1 प्रस्तावना
15.2 उद्देश्य
15.3 मूल पाठ : हजारीप्रसाद द्विवेदी : एक परिचय
15.3.1 जीवन परिचय
15.3.2 विचारधारा एवं व्यक्तित्व
15.3.3 साहित्यिक परिचय
15.3.4 हिन्दी निबंध साहित्य और हजारीप्रसाद द्विवेदी
15.3.5 द्विवेदी जी के निबंध
15.3.6 द्विवेदी जी के निबंधों का संक्षिप्त विश्लेषण
15.3.7 द्विवेदी जी के निबंधों में भाषा
15.3.8 द्विवेदी जी के निबंधों में शैली
15.5 पाठ का सार
15.6 पाठ की उपलब्धियाँ
15.7 शब्द संपदा
15.8 परीक्षार्थ प्रश्न
15.9 पठनीय पुस्तकें

15.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो! आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी हिन्दी साहित्य के मूर्धन्य साहित्यकार माने जाते हैं। हिन्दी साहित्य के लिए उनकी देन अपरिमित है। वे उच्चस्तरीय निबंधकार, उपन्यासकार, आलोचक, चिंतक एवं अनुसंधानकर्ता थे। मानवीय मूल्यों की स्थापना पर आचार्य द्विवेदी ने विशेष बल दिया है। अपनी रचनाओं के माध्यम से साहित्य, संस्कृति, प्रकृति-सौंदर्य, लोकजीवन और समसामयिक समस्याओं का समवेत रसास्वादन करवाने की उनमें अद्‌भुत क्षमता है। उनके निबंधों में उनके व्यक्तित्व की झलक मिलती है। उनके साहित्य में एक ओर भारतीय दर्शन और शास्त्रीय ज्ञान की गहराई है तो दूसरी ओर लोक जीवन के अनुभवों का संसार। जटिल गंभीर बातों को भी सरल-सुबोध भाषा और मनोरंजक शैली में प्रस्तुत करना द्विवेदी जी की विशेषता है।

15.2 उद्देश्य

हजारीप्रसाद द्विवेदी और उनके निबंध-साहित्य से संबंधित इस पाठ के अध्ययन से आप:

- आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के जीवन और व्यक्तित्व से परिचित हो सकेंगे।
- द्विवेदी जी के रचना-संसार के बारे में जान सकेंगे।
- द्विवेदी जी के निबंधों की विशेषताएँ जानकारी सकेंगे।

- द्विवेदी जी की सांस्कृतिक चेतन से अवगत हो सकेंगे।
- द्विवेदी जी के निबंधों की भाषा-शैली के बारे में जान सकेंगे।

15.3 मूल पाठ : हजारीप्रसाद द्विवेदी : एक परिचय

15.3.1 जीवन परिचय

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी (19 अगस्त 1907-19 मई 1979) का जन्म श्रावण शुक्ल एकादशी संवत 1964 अर्थात 19 अगस्त सन 1907 ई. को उत्तर प्रदेश के बलिया जिले के आरत दुबे का छपरा, ओझवलिया नामक गाँव में हुआ था। इनके पिता का नाम श्री अनमोल द्विवेदी और माता श्रीमती ज्योतिष्मती था। इनका परिवार ज्योतिष विद्या के लिए प्रसिद्ध था। इनके पिता संस्कृत के प्रकांड पंडित थे। द्विवेदी जी के बचपन का नाम व्योमकेश द्विवेदी था। उनके जनम के बाद उनके नाना जी को एक लंबी लड़ाई के बाद विजय प्राप्ति हुई थी और उसे उन्होंने नाती को दे दी। इस घटना के बाद उनका नाम बदलकर हजारीप्रसाद द्विवेदी कर दिया गया। पिताजी की प्रेरणा से द्विवेदी संस्कृत एवं ज्योतिष शास्त्र के प्रति आकृष्ट हुए। बचपन में घर में ही उन्होंने संस्कृत सीखा।

उसी गाँव के स्कूल में उनकी प्रारंभिक पढ़ाई संपन्न हुई। 1920 में बसरिकापुर के मिडिल स्कूल से प्रथम श्रेणी में मिडिल की परीक्षा उत्तीर्ण की। इसके बाद उन्होंने गाँव के निकट ही पराशर ब्रह्मचर्य आश्रम में संस्कृत का अध्ययन प्रारंभ किया। आगे की पढ़ाई के लिए सन 1923 में वे बनारस गए। वहाँ रणवीर संस्कृत पाठशाला, कमच्छा से प्रवेशिका परीक्षा में प्रथम श्रेणी प्राप्त की। 1927 में काशी हिंदू विश्वविद्यालय से हाईस्कूल की परीक्षा उत्तीर्ण की। इसी वर्ष भगवती देवी से उनका विवाह संपन्न हुआ। 1929 में इण्टरमीडिएट और संस्कृत साहित्य में शास्त्री की परीक्षा उत्तीर्ण की। 1930 में ज्योतिष विषय में आचार्य की उपाधि प्राप्त की। 8 नवंबर 1930 में द्विवेदीजी शांतिनिकेतन चले गए और वहाँ पर हिन्दी का अध्यापन करने लगे। गुरुदेव रवींद्रनाथ और आचार्य क्षितिमोहन सेन के प्रभाव से साहित्य का गहन अध्ययन किया तथा लेखन कार्य में लगे रहे। लगभग बीस वर्षों तक शांतिनिकेतन में हिन्दी का अध्यापन और हिन्दी की सेवा करने के बाद जुलाई 1950 में काशी हिंदू विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग में प्रोफ़ेसर और अध्यक्ष के रूप में उन्होंने कार्यभार संभाला। 1950-53 तक विश्वभारती विश्वविद्यालय की एक्जीक्यूटिव कौंसिल के सदस्य के रूप में योगदान दिया। 1952 में हिन्दी साहित्य का आदिकाल विषय पर बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, पटना में आचार्य की पाँच व्याख्यान माला का आयोजन किया गया था। 1954 में साहित्य अकादमी से प्रकाशित नेशनल बिब्लियोग्राफ़ी के निरीक्षक बने। 1955 में अखिल भारतीय हिन्दी परिषद के अध्यक्ष पद पर मनोनीत हुए। 1957 में राष्ट्रपति द्वारा पद्मभूषण की उपाधि से सम्मानित हुए। 1960 में पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ में हिन्दी के प्रोफ़ेसर व अध्यक्ष रहे। 1967 में पुन: काशी हिंदू विश्वविद्यालय में हिन्दी विभागाध्यक्ष रहे। 1968 में विश्वविद्यालय के रेक्टर पद पर उन्हें नियुक्त किया गया। लगभग दो वर्ष बाद अर्थात 25 फ़रवरी 1970 को इस पद से वे मुक्त हुए। इसी दौरान कुछ समय के लिए हिन्दी का ऐतिहासिक व्याकरण योजना के निदेशक, उत्तरप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी के अध्यक्ष

भी बने रहे। 1972 से आजीवन उत्तरप्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ के उपाध्यक्ष पद पर निरंतर अपनी सेवाएँ देते रहे। लखनऊ विश्वविद्यालय ने आचार्य द्विवेदी को डी.लिट की सम्मानित उपाधि से विभूषित किया। 1973 में आलोक पर्व निबंध संग्रह के लिए उन्हें साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया। 4 फ़रवरी 1979 को पक्षाघात के शिकार हुए और 19 मई 1979 को ब्रेन ट्यूमर से दिल्ली में उनका निधन हो गया।

द्विवेदी जी ने बाल्यकाल से ही श्री व्योमकेश शास्त्री से कविता लिखने की कला सीखी। शांतिनिकेतन में इनकी प्रतिभा निखरने लगी। रवींद्रनाथ ठाकुर के संपर्क में आने से बांग्ला साहित्य का भी इन पर भरपूर असर पड़ा। सिद्ध साहित्य, जैन साहित्य एवं अपभ्रंश साहित्य को प्रकाश में लाकर तथा भक्ति साहित्य पर उच्चस्तरीय समीक्षात्मक ग्रंथों की रचना कर द्विवेदी जी ने हिन्दी साहित्य की गरिमा को बढ़ाया है।

बोध प्रश्न

- हजारीप्रसाद द्विवेदी जी का जन्म कहाँ हुआ?
- द्विवेदी जी के माता-पिता का नाम लिखिए।
- द्विवेदी जी शांतिनिकेतन किस वर्ष गए ?
- शांतिनिकेतन में द्विवेदी जी किनसे प्रभावित हुए थे?
- अपने बाल्यकाल में द्विवेदी जी ने किनसे कविता लिखने की कला सीखी थी?

15.3.2 विचारधारा एवं व्यक्तित्व

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी भारतीय संस्कृति और प्राचीन इतिहास के प्रति आस्थावान हैं। उनकी दृष्टि में भारतीय संस्कृति अत्यंत विशाल तथा कालातीत है, किसी धर्म, जाति या दल के दायरे में उसे सीमित नहीं किया जा सकता, वह संपूर्ण भारत में विद्यमान हैं। मानव एकता और मानवता के ज्योतिर्मय भविष्य के प्रति आश्वस्त आचार्य द्विवेदी जी विचारों से एक प्रकाण्ड विद्वान और जीवन के सही रूप के अन्वेषक दिखाई देते हैं। चिंतक, उन्मुक्त प्रवृत्ति और विनोदी स्वभाव उनके व्यक्तित्व की विशेषताएँ हैं। मानवीय मूल्यों की स्थापना पर उन्होंने विशेष बल दिया है। धोति और कुर्ता में उनका सादगीपूर्ण व्यक्तित्व बडा ही आकर्षक लगता है। उनकी बातचीत एवं व्यवहार में इतनी सादगी थी कि हर व्यक्ति उनका परमभक्त बन जाता। बातचीत के दौरान हँसी के फ़व्वारे छूटते। विद्वान होने का गर्व उनमें कतई नहीं था। सौम्य, सरल और शिष्ट व्यवहार में उनकी विद्वत्ता झलकती थी।

उनकी लेखनी से इतिहास अपनी जड़ता खोकर सतत प्रवाहित जीवनधारा लगती है। रवींद्रनाथ टैगोर के दृष्टिकोण एवं विचाराधारा से वे काफ़ी प्रभावित थे। आचार्य रामचंद्र शुक्ल की परंपरा के अध्ययन और चिंतन पक्ष को आगे बढ़ाने का स्तुत्य प्रयास किया है। विभिन्न विधाओं को समेटे उनके निबंध, इतिहास, संस्कृति, साहित्य और ज्ञान-विज्ञान की धारा को प्रवाहित करते हैं। उनके बहुआयामी साहित्यकार व्यक्तित्व को स्पष्ट करते हुए डॉ. इंद्रनाथ मदान ने लिखा है- “आचार्य द्विवेदी ने भारतीय इतिहास का दोहन किया है, भारतीय साहित्य का मंथन किया है, रवींद्र साहित्य को आत्मसात किया है, कालिदास-साहित्य में रसपान किया है, आदिकालीन तथा मध्यकालीन साहित्य का अनुशील किया है और डॉ. द्विवेदी ने पाश्चात्य

साहित्य, ज्ञान-विज्ञान तथा भाषा विज्ञान का परिशीलन किया है, जिसके फ़लस्वरूप उनका दृष्टिकोण आचार्य शुक्ल की अपेक्षा अधिक व्यापक है। आचार्य शुक्ल की जीवन दृष्टि के मूल में भी समाज मंगल की भावना तथा समाज कल्याण की धारणा है जो कि काव्य सिद्धांतों को प्रभावित करती है, परंतु आचार्य द्विवेदी की समाज-मंगल-संबंधी जीवन दृष्टि पर रोमांटिक जीवन-बोध का कहीं गहरा प्रभाव पड़ा है।" (उद्धृत- हिन्दी निबंध का इतिहास, मृत्युंजय उपाध्याय)। द्विवेदी जी ने निरंतर मानवीय मूल्यों की खोज की है जिसकी झलक उनकी रचनाओं में मिलती है ।

बोध प्रश्न

- आचार्य द्विवेदी जी किसके प्रति आस्थावान थे?
- द्विवेदी जी को प्रकाण्ड पंडित क्यों माना जाता है?
- द्विवेदी जी के व्यक्तित्व में समाज-मंगल की दृष्टि झलकती थी। सही कथन या गलत कथन? यदि सही है तो तर्क के साथ सिद्ध कीजिए।

15.3.3 साहित्यिक परिचय

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी जी का रचना संसार बहुपक्षीय, बहुआयामी और विस्तृत है। उपन्यास, आलोचना, निबंध, इतिहास, कविता आदि अनेकों विधाओं में लेखन कार्य किया है । उनकी प्रमुख रचनाएँ इस प्रकार हैं : सूर साहित्य (1936), हिन्दी साहित्य की भूमिका (1940), प्राचीन भारत में कलात्मक विनोद (1940), साहित्य का मर्म (1941), कबीर (1942), बाणभट्ट की आत्मकथा (1947), नाथ सिद्धों की बानियाँ-संपादित (1947), अशोक के फूल (1948), नाथ संप्रदाय (1950), कल्पलता (1951), हिन्दी साहित्य का आदिकाल (1952), हिन्दी साहित्य (1952), मेघदूत : एक पुरानी कहानी (1957), विचार प्रवाह (1959), मृत्युंजय रवींद्र (1962), रवींद्रनाथ ठाकुर, आलोक पर्व, चारु चंद्रलेख, विचार विमर्श, काव्य में लालित्य भावना (1963), नाट्यशास्त्र की भारतीय परंपरा और दशरूपक : संपादन (1963), कालिदास की लालित्य योजना (1965) पुनर्नवा, लाल कनेर-अनुवाद (1973), कुटज (1974), अनामदास का पोथा (1976) आदि। इनके अतिरिक्त कई संपदित किताबें, ज्योतिष संबंधी अनेक निबंध, डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी के साथ संदेश रासक (1960), पं. जगन्नाथ तिवारी के साथ अभिनंदन ग्रंथ काव्य शास्त्र, डॉ. नामवर सिंह के साथ संक्षिप्त पृथ्विराज रासो (1952) आदि। द्विवेदी जी का यह रचना संसार हिन्दी साहित्य जगत के लिए अमूल्य निधि हैं।

बोध प्रश्न

- आचार्य द्विवेदी जी ने सूर साहित्य की रचना किस वर्ष की?
- द्विवेदी जी की किन्हीं चार रचनाओं के नाम लिखिए।
- द्विवेदी जी की रचनाओं की विषयवस्तु किस पर आधारित हैं?

15.3.4 हिन्दी निबंध साहित्य और हजारीप्रसाद द्विवेदी

प्रिय छात्रो! अब तक आप आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी जी का परिचय, व्यक्तित्व तथा साहित्यिक लेखन की जानकारी प्राप्त कर चुके हैं। इस पाठ का मुख्य उद्देश्य आप छात्रों को द्विवेदी जी के निबंधों से अवगत कराना है, अत: इस पाठ के अध्ययन से आप द्विवेदी जी के

निबंध लेखन, उसकी विशेषताएँ, भाषा-शैली आदि के संबंध में विस्तृत जानकारी प्राप्त कर पाएँगे।

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी छायावादोत्तर काल के प्रसिद्ध निबंधकार हैं। वैसे, यदि देखा जाय तो हिन्दी साहित्य में निबंध साहित्य का विभाजन आचार्य रामचंद्र शुक्ल को केंद्र में रखकर किया गया है जैसे शुक्ल पूर्व युग, शुक्ल युग तथा शुक्लोत्तर युग। इस दृष्टि से यदि देखें तो आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी जी शुक्लोत्तर युग के सशक्त, प्रौढ़ तथा अद्वितीय निबंधकार कहे जा सकते हैं। शुक्लोत्तर युग में सांस्कृतिक, साहित्यिक, समीक्षात्मक, ललित निबंध लिखने वालों में से द्विवेदी जी अग्रणी थे। वैसे देखा जाय तो आचार्य रामचंद्र शुक्ल की निबंधकला से प्रभावित होकर कई प्रतिभाशाली लेखक निबंधकार बने जिनमें से आचार्य नंददुलारे वाजपेयी, पं.विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल आदि उल्लेखनीय हैं। इसी श्रृंखला में आगे आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी, शांतिप्रिय द्विवेदी, डॉ.नगेंद्र, डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल, डॉ.विनयमोहन शर्मा, प्रभाकर माचवे आदि उल्लेखनीय हैं।

द्विवेदी जी के निबंधों में विषय वैविध्यता देखी जा सकती है। संस्कृति, साहित्य से लेकर दैनंदिन जीवन की गतिविधियों, क्रिया-व्यापारों और अनुभूतियों को विषय वस्तु के रूप में द्विवेदी जी स्वीकार कर लेखनी करने में द्विवेदी जी सिद्धहस्त थे। वे निबंध को व्यक्ति की स्वाधीन चिंतन की उपज मानते थे। आचार्य शुक्ल के निबंधों में आत्मपरक संकेत यत्र-तत्र मिलेंगे किंतु द्विवेदी जी व्यक्तिगत बात की भी विषयगत व्याख्या करते हैं। जैसे कि- आम फ़िर बौरा हो गए, नाखून क्यों बढते हैं?, अशोक के फूल, शीरीष के फूल, मेरी जन्मभूमि, क्या आपने मेरी रचना पढ़ी?, जबकि दिमाग खाली है, व्योमकेश शास्त्रि उर्फ़ हजारीप्रसाद द्विवेदी शीर्षक निबंध देखे जा सकते हैं। उनके निबंधों की विशेषता पर डॉ.बच्चन सिंह जी का यह कथन है- "द्विवेदी जी छायावादोत्तर काल के सबसे महत्वपूर्ण निबंधकार हैं। उनके निबंधों में सांस्कृतिक विरासत के वर्चस्व के साथ नवीन जीवन बोध, उत्कृष्ट जिजीविषा और नई सामाजिक समस्याओं के बीच राह पाने की ललक सर्वत्र दिखाई पडती है। द्विवेदी जी का व्यक्तित्व लचीला और निरंतर विकासमान है। देश के नई से नई गत्यात्मकता विचारधारा से वे अपने को ही जोड लेते हैं और इस प्रकार अपनी ऐतिहासिक दृष्टि को नए सिरे से समंजित करते रहते हैं। विद्वत्ता और सहृदयता का जो संयोग उनके निबंधों में मिलता है, वह सामान्यत: विरल होता है।" (हिन्दी साहित्य का इतिहास, सं.डॉ. नगेंद्र)। उपरोक्त कथन से द्विवेदी जी के निबंधों की विशेषता एवं विषयवस्तु का हम अंदाजा लगा सकते हैं। उनके निबंध हिन्दी निबंध साहित्य के गौरवपूर्ण निधि है।

बोध प्रश्न

- हिन्दी निबंध साहित्य को किसके नाम से और कैसे बाँटा गया है?
- शुक्लोत्तर युग के किन्हीं चार निबंध लेखकों के नाम लिखिए ।
- नाखून क्यों बढ़ते हैं किसका निबंध है?

15.3.5 द्विवेदी जी के निबंध

ऊपर यह बताया गया है कि द्विवेदी जी के निबंधों में विषय की वैविध्यता देखने को मिलती है। भारतीय संस्कृति, साहित्य, इतिहास, मानवीय अनुभूति आदि अनेकों वैविध्यमयी विषयों से उनका निबंध लेखन परिपूर्ण है। इस दृष्टि से उनके निबंधों को विवरणात्मक, वर्णनात्मक, भावात्मक, विचारात्मक आदि के अंतर्गत विभाजित किया जा सकता है।

विवरणात्मक निबंध के अंतर्गत ऐसे निबंध आते हैं जिसमें ऐतिहासिक सामग्री प्रस्तुत किया जाता है। जैसे- कलाओं की प्राचीनता, मुख प्रच्छालन और दातून, स्नान भोजन, दोलाविलास आदि। भारत का इतिहास, भारत के जन-जीवन की झांकी भी इस प्रकार के निबंधों में मिलेगी।

वर्णनात्मक निबंधों के अंतर्गत उनके सांस्कृतिक विषयों पर लिखे निबंध आते हैं। जैसे- भारतवर्ष की सांस्कृतिक समस्या, शव साधना, भारतीय फ़लित ज्योतिष, मेरी जन्म भूमि, शकुन-सूक्ति, दीपावली-मंगलेच्छा का पर्व आदि। भारतीय संस्कृति की उज्ज्वल परंपरा इन निबंधों में दिखती है। ये निबंध सांस्कृतिक मान्यताओं और धारणाओं के प्रदर्शक हैं और जीवंत संस्कृति का भी रेखांकन करते हैं।

भावात्मक निबधों में उनके वैयक्तिक या ललित निबंध आते हैं- जैसे आम फ़िर बौरा गए, शिरीष के फूल, बसन्त आ गया, अशोक के फूल, कुटज आदि। इन निबंधों में भावना, कल्पना और अनुभूति का समन्वय देखने को मिलता है। द्विवेदी जी का कवि हृदय इन्हीं निबंधों में मुखरित हुआ है।

विचारात्मक निबंधों में साहित्य समीक्षा विषयक निबंध आते हैं, जैसे समीक्षकों की समीक्षा, सहज भाषा का प्रश्न, भक्तों की परंपरा, कविता का भविष्य, रीतिकाव्य, हिन्दी को पंजाब की देन, हिन्दी में शोध का प्रश्न, कवि प्रसिद्धियाँ, जैन साहित्य आदि। इस प्रकार के निबंधों में व्यावहारिक एवं शास्त्रीय समीक्षा का भव्यरूप विद्यमान है। स्वाधीन चिंतन के अतिरिक्त इन निबंधों में द्विवेदी जी का आलोचक रूप भी देखने को मिलता है।

द्विवेदी जी का लेखन सोद्देश्य है। वे साहित्य-मात्र को मनुष्य के संदर्भ में देखते हैं। उनके अनुसार साहित्य वस्तुत: मनुष्य का वह उच्छलित आनंद है जो उसके अंतर में अँटाए नहीं अँट सका था। इस आनंद का आधार वे एकत्व की अनुभूति को मानते हैं। उनके अनुसार मनुष्य की चरम मनुष्यता-एकत्व की अनुभूति, संवेदना के आधार पर ही संभव है। यही संवेदना ललित कलाओं का प्राण है। उनका दृढ़ विचार है कि मनुष्य ही साहित्य का लक्ष्य है। वे समस्त मानवीय चेतना को लक्षित करते हैं। और उनके निबंध में वे जिस मनुष्य की प्रतिष्ठा दिखाते हैं, वह सामाजिक मनुष्य है।

द्विवेदी जी के अनुसार व्यक्ति की स्वाधीन चिंता की उपज है निबंध। इसे स्पष्ट करते हुए वे लिखते हैं-"निबंधों के व्यक्तिगत होने का अर्थ यह नहीं कि उसमें विचार श्रृंखला न हो। ऐसा होने से तो वे प्रलाप कहे जाएंगे।' उनका यह भी कहना है कि निबंध लेखक विषय के संबंध में अपने विचार प्रस्तुत करते हुए वैज्ञानिक तटस्थता का पालन नहीं कर सकता है। वह अपनी 'निजता' बनाए रखता है। यही कारण है कि उनके निबंधों में वार्तालाप, व्याख्यान, गप्प और

स्वगत चिंतन आदि के अतिरिक्त सामाजिकता, मनुष्य की असीम शक्ति और आस्था का समावेश भी है। शैली की मोहकता है। द्विवेदी जी की इन्हीं विशेषताओं पर प्रो. शिवनाथ ने लिखा है- "उनका मानववाद उपनिषदों का मानववाद है, रवींद्रनाथ का मानववाद है, जो मानव समाज में किसी प्रकार का भेद या वर्ग मानकर नहीं चलता, जो मानव कहने से सभी वर्गों के मानव को ग्रहण करता है। उनकी मानवता मानव समाज में जहाँ भी उत्पीडन देखती है, ढुलक पडने की पक्षपातिनी है, क्योंकि मानव-समाज के मध्य संचरित होने वाली एक ही आत्मा पर उनका विश्वास है, यह आत्मा आर्थिक दृष्टि से किए गए उच्च वर्ग में भी है, मध्य वर्ग में भी है और निम्नवर्ग में भी है। मानववाद की यह परिकल्पना ही जन-जन को जोडती है, मिलाती है, संवाद की स्थिति लाती है और भारतीयता को प्रोत्साहन देती है।"

आम के बौर, शिरीष के फूल, कुटज और अशोक के फूल को देखकर द्विवेदी जी के मन में जो विचार प्रवाह होता है, उसे कभी वे लोक परंपरा प्राप्त प्रवाद से संबंधित करते हैं, कभी भारतीय इतिहास के अधखुले भाग को कथाओं, सभ्यता और संस्कृति के विकास तंतुओं से संबंद्ध करके धर्म और साहित्यशास्त्र का विश्लेषण करते हैं। कालिदास और कबीर की मस्ती तथा फ़क्कड़पन से तुलना करते हुए वे कहते हैं-"कबीर बहुत कुछ इस शिरीष के समान ही थे मस्त और बेपरवाह पर सरस और मादक कालिदास भी जरूर अनासक्त योगी रहे होंगे। शिरीष के फूल फ़क्कडाना मस्ती से ही उग सकते हैं और मेघदूत का काव्य उसी प्रकार के अनासक्त, अनाविल, उन्मुक्त हृदय से उमड़ सकता है। जो कवि अनासक्त नहीं रह सका, जो फ़क्कड नहीं बन सका, जो किराए का लेखा-जोखा मिलाने में उलझ गया, वह भी क्या कवि है।" इसी प्रकार लोक परंपरा प्राप्त लोकतत्व का मूल्यांकन उन्होंने लोकदृष्टि से किया है, उस पर शास्त्र को हावी होने नहीं दिया है।

उनके ललित निबंधों में वाग्वैचित्र्य की सघनता है। वे सर्वत्र वक्रभंगिमा, हास्य, व्यंग्य और विनोद का सफ़लतापूर्वक निर्वाह करते हैं। ऋतुओं, पुष्पों, पादपों, पर्वों और स्थानों के पीछे सहस्त्रों वर्षों का मानव-इतिहास छिपा हुआ है, इन सबकी चर्चा वे बडे ही शिद्दत से करते हैं। जब वे इस प्रकार की चर्चा करते हैं तो कभी आर्द्र चित्त से, कभी उदास होकर, कभी विह्वलता से, कभी क्षोभ से तो कभी इतिहास के खंडहरों में पाठक को साथ लेकर रमने लगते हैं और पाठक कभी उसके ज्ञान से चकित होकर कभी अतीत में खोकर कभी उनकी व्याख्याओं और अनुमानों से तुष्ट होता हुआ अद्‌भुत आनंद का अनुभव करता है।" (डॉ.रामचंद्र तिवारी) द्विवेदी का कथन है- मनुष्य थका है, वह रुका नहीं है। इस वाक्य मात्र से द्विवेदी जी के मनुष्य के प्रति जो विचार है उसका पता चलता है। इस प्रकार मानव-सत्य को प्रतिष्ठित करने वाले साहित्यकार हैं आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी।

बोध प्रश्न

- द्विवेदी जी के निबंधों को किस प्रकार विभाजित किया जा सकता है?
- द्विवेदी जी के ललित निबंधों की क्या विशेषता है?
- द्विवेदी जी ने निबंधों में मानव-सत्य को कैसे प्रतिष्ठित किया है?

15.3.6 द्विवेदी जी के निबंधों का संक्षिप्त विश्लेषण

अशोक के फूल, कुटज, शीरीष के फूल, देवदास, नाखून क्यों बढ़ते हैं, आम फ़िर बौरा गए, वसंत आ गया, वर्षा घनपति से घनश्याम तक आदि द्विवेदी जी के निबंधों में बहुज्ञता दिखाई देती है। कहीं वे कालिदास से तादात्म्य स्थापित करते हैं तो कहीं रहीम की बेकद्रदानी पर उनकी मन:स्थिति का विवेचन करते हुए, कहीं सिलवा लेवी के कथनों पर विचार करते हुए तो कहीं संस्कृत के पंडितों का हवाला देते हुए, कहीं अपनी ओर से वर्ण्य विषय से प्राप्त जीवन दृष्टि की मीमांसा करते हुए तो नज़र आते हैं। इस विवरण को स्पष्ट करने के लिए कुटज से कुछ उदारहरण प्रस्तुत है -

"जीना चाहते हो? कठोर पाषाण को भेदकर, पाताल की छाती चीर कर अपना भोग्य संग्रह करो, वायुमंडल को चूसकर, झंझा तूफ़ान को रगड़कर, अपना प्राप्य वसूल लो, आकाश को चूमकर, अवकाश की लहरी झूमकर, उल्लास खींच लो।"

"याज्ञवल्क्य ने जो बात धक्कामार ढंग से कह दी थी, वह अंतिम नहीं थी"

"जो समझता है कि वह दूसरों का अपकार कर रहा है, वह अबोध है, जो समझता है कि दूसरा अपकार कर रहा है, वह भी बुद्धिहीन है? मनुष्य जी रहा है, केवल जी रहा है, अपनी इच्छा से नहीं, इतिहास विधाता की योजना के अनुसार।"

अशोक के फूल निबंध में अशोक के फूल के माध्यम से द्विवेदी जी ने हजारों वर्ष पुरानी सांस्कृति यात्रा का दर्शन करवाते हैं। वे कहते हैं- "मुझे मानव-जाति की दुर्दम-निर्ममधारा के हजरों वर्ष का रूप साफ़ दिखाई दे रहा है। मनुष्य की जीवन शाक्ति बडी निर्मम है, वह सभ्यता और संस्कृति के वृथा मोहों को रौंदती चली आ रही है। न जाने कितने धर्माचारों, विश्वासों, उत्सवों और व्रतों को धोती-बहाती यह जीवन-धारा आगे बढ़ी है। संघर्षों से मनुष्य ने नई शक्ति पाई है। हमारे सामने समाज का आज जो रूप है, वह न जाने कितने ग्रहण और त्याग का रूप है।" अशोक का वृक्ष जितना भी मनोहर हो, जितना भी रहस्यमय हो, जितना भी अलंकारमय हो, किंतु है तो वह सामंती सभ्यता का प्रतीक।

द्विवेदी जी कभी-कभी बहुत ही सामान्य लगने वाली बात पर भी प्रश्न कर बैठते हैं। और उसके माध्यम से संपूर्ण मानवता के विकास की यात्रा करते हुए यह दिखाते हैं कि आज के युग में भी मनुष्य की मूल प्रवृत्तियाँ जीवित हैं। नाखून क्यों बढ़ते हैं निबंध में उनका यह प्रश्न है- "नाखून क्यों बढते हैं? इस विषय पर चर्चा करते हुए अंत में बतौर समाधान कहते हैं - "नाखूनों का बढना मनुष्य की उस अंधसहजात वृत्ति का परिणाम है, जो उसके जीवन में सफ़लता ले आना चाहती है, उसको काट देना उस स्वनिर्धारित आत्म-बंधन का फ़ल है, जो उसे चरितार्थता की ओर ले जाती है।" इस निबंध में सफ़लता और चरितार्थता का अंतर स्पष्ट करते हुए वे कहते हैं - "सफ़लता और चरितार्थता में अंतर है। मनुष्य मारणास्त्रों के संचयन से, बाह्य उपकरणों के बाहुल्य से उस वस्तु को पा भी सकता है जिसे उसने बड़े आडंबर के साथ सफ़लता का नाम दे रखा है। परंतु मनुष्य की चरितार्थता प्रेम में है, मैत्री में है, त्याग में है, अपने को सबके मंगल के लिए नि:शेष भाव से दे देने में है।"

इस प्रकार द्विवेदी जी के निबंधों में मानव के लिए कोई न कोई संदेश अवश्य रहता है।

परंपरा और आधुनिकता निबंध में आधुनिकता पर गहराई से विचार करते हुए उसके तीन लक्षण निर्धारित करते हैं और कहते हैं- "संक्षेप में कहा जाए तो आधुनिकता के तीन लक्षण बहुत स्पष्ट हैं। ऐतिहासिक दृष्टि, इसी दुनिया में मनुष्य को सब प्रकार की नीतियों और पराधीनता से मुक्त करके सुखी बनाने का आग्रह और व्यक्ति-मानव के स्थान पर समष्टि-मानव या संपूर्ण मानव-समाज की कल्याण कामना।" वे परंपरा और आधुनिकता को परस्पर पूरक मानते हैं। विरोधी नहीं। वे कहते हैं- परंपरा आधुनिकता को आधार देती है, उसे शुष्क और नीरस बुद्धि-विलास बनने से बचाती है, उसके प्रयासों को अर्थ देती है, उसे असंयत और विशृंखल उन्माद से बचाती है। ये दोनों परस्पर विरोधी नहीं, परस्पर पूरक हैं। क्या कहा जाए इसे। एक ओर परोक्ष सत्ता में विश्वास दूसरी ओर आधुनिकता की बौद्धिक व्याख्या। इसे विरुद्धों का सामंजस्य ही कहा जा सकता है।"

कुलमिलाकर कहा जा सकता है कि द्विवेदी जी के निबंध जितने वैविध्यमयी उतनी ही गहरी और अर्थगर्भित है। पाठक के मन में अलग छाप छोड़ने तथा उसे सोचने पर मजबूर करती है।

द्विवेदी जी वर्तमान युग के मूर्धन्य रचनाकार एवं निबंधकार हैं। उनके साहित्य लेखन का केंद्र भाव मानव कल्याण है। उनकी लगभग सभी रचनाएँ मानव मात्र की भलाई एवं चिंतन से ओत-प्रोत रहते हैं। मनुष्य ही साहित्य का लक्ष्य है नामक निबंध में वे इस दृष्टिकोण को स्पष्ट करते हुए लिखते हैं- "मैं साहित्य को मनुष्य की दृष्टि में देखने का पक्षपाती हूँ।" वे मनुष्यता को सार्वभौम सत्ता मानते हैं और साहित्य का नियोजन मनुष्य मात्र की भलाई का साधन मानते हैं। इसी भाव को स्पष्ट करते हुए वे लिखते है- जो वाग्जाल मनुष्य को दुर्गति, हीनता परमुखापेक्षित से बचा न सके, जो उसके हृदय को पर दुख कातर और संवेदनशील न बना सके उसे साहित्य कहने में मुझे संकोच होता है।"

इस प्रकार उनकी सोच पूर्णतया मानवतावादी है। सामाजिक संबंधों को वे महत्व देते हैं और यह मानते हैं कि सामाजिक संबंधों का प्रतीक भाषा है। पर भारत वर्ष में भारतीय भषाओं की उपेक्षा, लोक भाषा, जन भाषा का तिरस्कार द्विवेदी जी को अत्यधिक व्यथित किया होगा इसलिए - "फिर से सोचने की आवश्यकता है" नामक निबंध में उन्होंने लिखा है कि- "क्या करोडों की उपेक्षा करके कुछ थोडे से लोगों की सुविधा को बहुत बडा लाभ माना जा सकता है? क्या सचमुच स्वभाषा की उपेक्षा से देश महान बनेगा?" मेरी जन्मभूमि नामक निबंध में गाँव का वर्णन करते हुए सामाजिक समरसता की वे बात करते हैं। दीपावली : सामाजिक मंगलेच्छा का प्रतिमा पर्व नामक निबंध में सामाजिक मंगलेच्छा को शाश्वत विधान में चित्रित करते हैं।

भारतीय साहित्य एवं संस्कृति को निबंधों में अभिव्यक्ति देने में द्विवेदी जी प्रख्यात हैं अत: ललित निबंधकार के रूप में उनकी गणना की जाती है। अपने निबंधों में द्विवेदी जी ने भारतीय संस्कृति एवं धर्म का विवेचन किया है। रामायण महाभारत के प्रसंगों की समीक्षा की गई है। कहीं वैदिक बौद्ध धर्म का निरूपण है तो कहीं योग मार्ग का गंभीर विवेचन। कहीं

ज्योतिष पर अपना अभिमत व्यक्त करते हैं तो कहीं केश-प्रसाधन, मुख प्रक्षालन, भोजनोत्तर विनोद पर टीका टिप्पणी करते हैं।

यही कारण है कि द्विवेदी जी के निबंधों में विविधता दृष्टिगोचर होती है। साहित्य, संस्कृति, राजनीति, क्रीडा, विलास, प्रसाधन, प्रकृति, कला, ऋतु-उत्सव, मनोविनोद आदि उनकी नजर से न बच पाए और इन सभी को समेटते हुए उन्होंने निबंधों की रचना की है। उनकी इतिहास दृष्टि जीवन दर्शन तथा सत्यान्वेषण से परिपूर्ण है। इस प्रकार के निबंधों में हृदय बुद्धि का संतुलन, मानवीय प्रेम का दर्शन होता है।

उन्होंने अपने निबंधों में संस्कृति के प्रश्न पर बडी गहराई से विचार किया है। उनका यह चिंतन भारतीय संस्कृति, हिंदू संस्कृति, आर्यसंस्कृति संबंधी दृष्टिकोण से ऊपर उठकर विश्वमानव संस्कृति से संबंध जोडता है। "संस्कृति किसी देश विशेष या जाति विशेष की अपनी मौलिकता नहीं" वे लिखते हैं- "मनुष्य की श्रेष्ठ साधनाएँ ही संस्कृति हैं।" सभ्यता और संस्कृति के संबंध पर विचार करते हुए वे लिखते हैं- ज्यों-ज्यों मनुष्य संघबद्ध होकर रहने का अभ्यस्त होता गया, त्यों-त्यों उसे सामाजिक संघटन के लिए नाना प्रकार के नियम कानून बनाने पडे। इस संघटन को दोषहीन और गतिशील बनाने के लिए उसने दण्ड और पुरस्कार की व्यवस्था भी की। इन बातों को एक शब्द में सभ्यता कहते हैं।"

इस प्रकार द्विवेदी जी की आप कोई भी रचना लें उसमें भारतीय संस्कृति, राष्ट्रप्रेम, मानवीय मूल्य की झलक आपको अवश्य मिलेगी।

निबंध के संबंध में द्विवेदी जी के विचार

प्रिय छात्रो! आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी जी ने अपनी रचना साहित्य सहचर में निबंधों के संबंध में अपना विचार व्यक्त किया है। उसी से कुछ अंशों को यहाँ प्रस्तुत किया गया है जिससे कि आप द्विवेदी जी के निबंध संबंधी विचारों को स्पष्ट रूप से समझ सकें। तो चलिए, द्विवेदी जी के निबंध संबंधी विचारों से अवगत हो लें -

निबंध क्या है? इस प्रश्न का समाधान वे इन शब्दों में करते हैं। प्राचीन संस्कृत साहित्य में निबंध नाम का एक अलग साहित्यांग है। इन निबंधों में धर्मशास्त्रीय सिद्धांतों की विवेचना है। विवेचना का ढंग यह है कि पहले पूर्वपक्ष में ऐसे बहुत से प्रमाण उपस्थित किये जाते हैं जो लेखक के अभीष्ट सिद्धांत के प्रतिकूल पड़ते हैं। इस पूर्वपक्ष वाली शंकाओं को एक-एक करके उत्तरपक्ष में जवाब दिया जाता है। सभी शंकाओं का समाधान हो जाने के बाद उत्तरपक्ष के सिद्धांत की पुष्टि में कुछ और प्रमाण उपस्थित किये जाते हैं। चूँकि इन ग्रंथों में प्रमाणों का निबंधन होता है इसलिए इन्हें निबंध कहते हैं। इस शंका- समाधान-मूलक पक्ष स्थापन में लेखक की रुचि-अरुचि का प्रश्न नहीं उठता। वह प्रमाणों और उनके पक्ष या विपक्ष में उठ सकने वाले तर्कों से बंधा होता है। इसलिए इन निबंधों में निस्संगता ही प्रधानता रूप से वर्तमान रहती है।

निस्संगता का यह तात्पर्य बताते हैं कि किसी भी वस्तु की विशेषता उसे देखने की दृष्टि पर निर्भर करता है। एक सुंदर फूल इसलिए सुंदर लगता है क्योंकि वह द्रष्टा को सामंजस्य की ओर उन्मुख करता है। वैज्ञानिक विवेचन से सिद्ध हो सकता है कि फू ल और कोयला दोनों ही वस्तुत: एक ही वस्तु हैं, क्योंकि दोनों ही विद्युत अणुओं के जिन्हें इलेक्ट्रान और प्रोटान कहते हैं,

समन्वय है। यह निस्संग बुद्धि का विषय है और द्रष्टा की रुचि-अरुचि पर निर्भर करता है कि वह किस वस्तु को किस नजरिए से देख रहा है। वैज्ञानिक और रचनाकार की सोच में यहीं से भिन्नता दिखाई देती है। वैज्ञानिक कोयले को वैज्ञानिक दृष्टि से देखता है, लेकिन रचनाकार कोयले में भी सुंदरता का दर्शन करवाता है। आगे वे कहते हैं कि निबंधों का प्रचलन नया नहीं है। पुराने जमाने में किसी प्रतिपाद्य सिद्धांत के विरुद्ध जितने प्रमाण हो सकते थे, उनको एक-एक करके उठाना और उनकी समीक्षा करते हुए अपने सिद्धांत पर पहुँचना यही उनका कार्य था, परंतु नए युग में तर्कमूलक की अपेक्षा व्यक्तिगत अधिक हैं। ये व्यक्ति की स्वाधीन चिंता की उपज है।

15.3.7 द्विवेदी जी के निबंधों में भाषा

विषयानुकूल भाषा लिखने में द्विवेदी जी सिद्धहस्त हैं। संस्कृत, अपभ्रंश, अंग्रेजी, हिन्दी, बांग्ला आदि भाषाओं पर अधिकार होने के कारण इनकी भाषा अत्यंत समृद्ध है। इनकी भाषा में संस्कृत की तत्सम शब्दावली, तद्भव, देशज तथा अन्य भाषाओं के शब्दों का प्रयोग अत्यंत कुशलता से हुआ है। भाषा को गतिशील और प्रवाहपूर्ण बनाने के लिए मुहावरे और लोकोक्तियों का खुलकर प्रयोग हुआ है। कहीं-कहीं संस्कृत शब्दों की अधिकता के कारण इनकी भाषा क्लिष्ट भी लगती है। किंतु शब्द चयन सार्थक एवं सटीक है। अरबी, फारसी तथा उर्दू के भी कई शब्द इनके निबंधों में मिलते हैं। भाषा में माधुर्य का समावेश करने के लिए उन्होंने देशज तथा ग्रामीण शब्दों का प्रचुरता से प्रयोग किया है।

15.3.8 द्विवेदी जी के निबंधों में शैली

द्विवेदी जी की रचनाओं में क्रमश: पाँच प्रमुख शैलियों को देखा जा सकता है जैसे-

अ) **विवेचन शैली** : द्विवेदी जी के विचारात्मक, साहित्य, समीक्षात्मक, निबंध विवेचन शैली में हैं। ऐसे निबंधों में तर्क-वितर्क, व्याख्या, निर्णय, परीक्षा सभी का समावेश मिलता है। विचारों की एक लंबी शृंखला क्रमबद्ध ढंग से नियोजित मिलती है। उदाहरण के लिए- "जो वस्तु हमें कला के नाम पर दी जा रही है वह हमारे भीतर मानवोचित गुणों को उद्‌बुद्ध करती है या नहीं। जो वस्तु हमारी मनुष्यता को उद्‌बुद्ध नहीं करती, वह कला हो ही नहीं सकती।" (सभ्यता और संस्कृति तथा अन्य निबंध, पृ. 87-88)

आ) प्रसाद शैली : ऐसे निबंधों में भाषा सरल और सीधे वाक्यों का प्रयोग होता है। अपनी बात सीधी-साधी ढंग से समझाई जाती है। इनमें द्विवेदी जी का व्यक्तित्व, प्यार, सहृदयता, अनुरोध उपस्थित हैं। उनके विवरणात्मक तथा वर्णनात्मक निबंध प्राय: इसी शैली के हैं। जैसे- " ज्योतिषी को सूर्यादि ग्रहाचार का खयाल रखना पडता था। कब कौन-सा ग्रह कैसा रंग पकड़ रहा है, उसकी प्रकृति, विकृति, प्रमाण, वर्ण, किरण, प्रकाश, संस्थान, अस्त, उदय, भिन्नपथ, वक्रता, ग्रहण, युति, आदि के शुभाशुभ फल को बताना पड़ता है।"

इ) व्यंग्य शैली : कुछ विचारात्मक तथा व्यक्तिपरक निबंधों में मीठी चुटकियाँ लेते हुए अत्यंत विनोदपूर्ण बातों का द्विवेदी जी ने प्रयोग किया है। एक उदाहरण प्रस्तुत है- "आसमान में निरंतर मुक्का मारने में कम श्रम नहीं है और मैं निश्चित जानता हूँ कि रहस्यवादी आलोचना

लिखना कुछ हंसी खेल नहीं है। पुस्तक को छुआ तक नहीं, और आलोचना ऐसी लिखी कि त्रिलोक्य विकम्पित। यह क्या कम साधना है।" (क्या आपने मेरी रचना पढ़ी है)

ई) प्रवाह शैली : कुछ निबंधों में भाव और विचार ज्वार-भाटे की तरह उतार चढ़ाव लिए हुए हैं। ऐसे निबंधों में प्रवाह शैली स्पष्ट झलकती है। जैसे- "हाय ! हतभाग्य भारतवर्ष, तू आज शोच्य है। तुझे वह रत्न मिला था, जो देवताओं को भी नहीं मिला।"

उ) विक्षेप शैली : कहीं-कहीं भाव-विचार धारा प्रवाह न बहकर खंड-खंड होकर, रुक-रुककर अग्रसर हुई है। ऐसे निबंधों में उनकी कल्पना शक्ति तथा काव्यत्व का परिचय मिलता है। इसका एक उदाहरण देखें :

पेड़ क्या है, किसी सुलझे हुए कवि के चित्र का मूर्तमन्त छंद है-धरती के आकर्षण को अभिभूत करके लहरदार वितानों की शृंखला को सावधानी से सम्हालता हुआ, विपुल व्योम की ओर एकाग्रीभूत मनोहर छंद है। कैसी शान है, गुरुत्वाकर्षण के जड़-वेग को अभिभूत करने की कैसी स्पर्धा है-प्राण के आवेग की कैसी उल्लासकार अभिव्यक्ति है'। (देवदास-कुटज से)

इनके अतिरिक्त द्विवेदी जी की शैली में गवेषणात्मक, आलोचनात्मक, हास्य आदि शैलियों का समावेश भी मिलता है। विषयानुकूल भाषा और शैली के प्रयोग में वे सिद्धहस्त हैं।

बोध प्रश्न

- द्विवेदी जी के निबंधों में किन-किन भाषाओं के शब्द मिलते हैं?
- द्विवेदी जी ने निबंधों में किन-किन शैलियों का समावेश हुआ है?

15.6 पाठ सार

हजारीप्रसाद द्विवेदी के निबंधों से संबंधित इस पाठ के अध्ययन से आपने द्विवेदी जी के रचना संसार तथा रचनाधर्मिता से अवगत हो चुके होंगे। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी हिन्दी साहित्य के मूर्धन्य साहित्यकार एवं पुरोधा हैं। भारतीय संस्कृति, इतिहास, धर्म, शास्त्र आदि सभी विषयों से संबंधित उनकी रचनाएँ हमें जीने की कला सिखाती हैं साथ ही मानवीय मूल्यों के बीज हमार अंतर्मन में बोते हैं। साहित्य का संबंध हृदय से होता है। द्विवेदी जी रचनाएँ पाठक के हृदय तंतुओं के अंदर अपना स्थान बनाने में सक्षम हैं। चूँकि द्विवेदी जी की रचनाएँ मानवीय मूल्यों से अनुप्राणित हैं। साहित्य के बारे में वे लिखते हैं- "हम किसी महान ग्रंथ को इसलिए महान नहीं कहते हैं कि किसी व्यक्ति ने उसे महान कह दिया है, बल्कि इसलिए कि उसके पढने से हम मानव जीवन को निविड़-भाव से अनुभव करते हैं। या तो हम उसमें अपने को ही पाते हैं या अपने इर्द-गिर्द के अनुभूत अर्थों की गाढ़ भाव से अनुभव करते हैं।" इस प्रकार के उच्च विचार तथा आदर्श भरे विचारों से द्विवेदी जी का रचना संसार भरा हुआ है। आदर्श मनुष्य, आदर्श जीवन, आदर्श समाज की स्थापना के लिए द्विवेदी जी की रचनाएँ सदा तैयार दिखेगी।

15.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं –

1. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी छायावादोत्तर काल के प्रमुख हिन्दी साहित्यकार है।

2. द्विवेदी जी ने आलोचना, साहित्येतिहास, उपन्यास और काव्य रचना सहित निबंधकार के रूप में बड़ी मात्रा में साहित्य सृजन किया।
3. द्विवेदी जी ने हिन्दी में व्यक्तिव्यंजक और आत्मपरक निबंध की एक नई श्रेणी के रूप में ललित निबंध विधा का सूत्रपात किया।
4. द्विवेदी जी मनुष्य को साहित्य का चरम लक्ष्य मानते थे। उनके निबंधों का मुख्य उद्देश्य भी मनुष्य ही है।

15.6 शब्द संपदा

1. आत्मपरक लेखन = वह लेखन जिसमें लेखक का आत्म अर्थात निजीपन प्रमुख होता है
2. जिजीविषा = जीने की इच्छा
3. दोहन करना = दुहना
4. पक्षाघात = एक वातरोग जिसमें शरीर का दाहिना भाग बेकाम हो जाता है
5. बहुज्ञता = बहुत सारे विषयों की जानकारी देना/ जानकार होना
6. मीमांसा = गंभीरतापूर्वक तत्व निर्णय और विवेचन करना
7. रसास्वादन = आनंद की अनुभूति प्रदान करना
8. वाग्वैचित्र्य = बोलने की क्षमता, भाषण झाडने की क्षमता
9. समवेत = संपूर्ण, भरपूर
10. सिद्धहस्त = माहिर

15.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

15.7.1 सही विकल्प चुनिए -

1. आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी का बचपन का नाम क्या था?

A. हजारीप्रसाद शास्त्री B. क्षितिमोहन द्विवेदी

C. व्योमकेश द्विवेदी D. अनमोल द्विवेदी

2. द्विवेदी जी को 'हजारीप्रसाद' नाम किस घटना के बाद दिया गया था?

A. उनके नाना को एक लंबी लड़ाई के बाद विजय प्राप्त होने पर

B. शांतिनिकेतन में प्रवेश लेने पर

C. ज्योतिष की आचार्य पदवी मिलने पर

D. उनके पिता द्वारा विद्वत्ता प्राप्त करने पर

3. शांतिनिकेतन में द्विवेदी जी पर किन दो महान व्यक्तित्वों का सबसे गहरा प्रभाव पड़ा?

A. रवींद्रनाथ ठाकुर और क्षितिमोहन सेन B. नामवर सिंह और विश्वनाथ त्रिपाठी

C. आचार्य रामचंद्र शुक्ल और डॉ. नगेंद्र D. महात्मा गांधी और जवाहरलाल नेहरू

4. द्विवेदी जी ने किस वर्ष 'आलोक पर्व' निबंध संग्रह के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार प्राप्त किया?

A. 1979 B. 1957 **C. 1973** D. 1930

5. द्विवेदी जी के अनुसार साहित्य का मुख्य लक्ष्य क्या है?

A. सिर्फ मनोरंजन प्रदान करना **B. मनुष्य की प्रतिष्ठा और भलाई**

C. शास्त्रीय ज्ञान का प्रदर्शन D. भाषा का शुद्धिकरण

6. द्विवेदी जी के 'ललित निबंधों' (जैसे अशोक के फूल, कुटज) की मुख्य विशेषता क्या है?

A. कठोर वैज्ञानिक तथ्यों का प्रस्तुतीकरण B. राजनीतिक विचारधारा का प्रचार

C. भावना, कल्पना और ऐतिहासिक अनुभूति का समन्वय D. केवल ग्रामीण शब्दों का प्रयोग

7. 'नाखून क्यों बढ़ते हैं' निबंध के माध्यम से द्विवेदी जी ने क्या संदेश दिया है?

A. नाखूनों के जैविक विकास का इतिहास

B. व्यक्तिगत साफ-सफाई का महत्व

C. हथियारों के संचयन की आवश्यकता

D. मनुष्य की चरितार्थता प्रेम, मैत्री और त्याग में है

8. द्विवेदी जी परंपरा और आधुनिकता के संबंध को किस रूप में देखते हैं?

A. दोनों एक-दूसरे के घोर विरोधी हैं

B. आधुनिकता को परंपरा की कोई आवश्यकता नहीं है

C. परंपरा और आधुनिकता परस्पर पूरक हैं

D. परंपरा आधुनिकता के विकास में बाधक है

9. द्विवेदी जी की किस शैली में विचारों की क्रमबद्ध श्रृंखला और तर्क-वितर्क की प्रधानता होती है?

A. व्यंग्य शैली B. प्रसाद शैली C. विक्षेप शैली D. विवेचन शैली

10. द्विवेदी जी के अनुसार प्राचीन संस्कृत साहित्य में 'निबंध' शब्द का क्या अर्थ था?

A. कविताओं का संकलन
B. धर्मशास्त्रीय प्रमाणों और सिद्धांतों का निबंधन
C. प्रकृति का सुंदर वर्णन
D. लेखक की स्वतंत्र भावनाओं का प्रकाशन

खंड (ब)

15.7.2 लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के रचनाओं का नाम लिखिए।
2. पठित पाठ के आधार पर आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी जी का परिचय दीजिए।
3. द्विवेदी जी के निबंधों में मानवीय मूल्य का दर्शन होता है। अपने शब्दों में विचार प्रस्तुत कीजिए।
4. द्विवेदी जी के निबंधों में प्रयुक्त भाषा की विशेषता पर प्रकाश डालिए।
5. प्रसाद शैली और व्यंग्य शैली की विवेचना कीजिए।
6. निबंध क्या है? द्विवेदी के विचारों को स्पष्ट कीजिए।

खंड (स)

15.7.3 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी का जीवन परिचय लिखिए।
2. द्विवेदी जी के निबंधों पर संक्षिप्त लेख लिखिए।
3. द्विवेदी जी के निबंधों की भाषा शैली पर प्रकाश डालिए।
4. द्विवेदी जी के निबंधों में भारतीय संस्कृति का चित्रण हुआ है। अपना विचार व्यक्त कीजिए।
5. द्विवेदी जी के निबंधों के अध्ययन करने के बाद द्विवेदी जी के बारे में आपके मन में उभरने वाले भाव को अपने शब्दों में लिखिए।

15.8 पठनीय पुस्तकें

1. प्रतिनिधि हिन्दी निबंधकार : हरिमोहन
2. हिन्दी निबंध का इतिहास : मृत्युंजय उपाध्याय
3. आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी - व्यक्तित्व और कृतित्व : सं. व्यासमणि त्रिपाठी
4. हिन्दी साहित्य का इतिहास : नगेंद्र
5. साहित्य सहचर : हजारीप्रसाद द्विवेदी
6. कुटज : हजारीप्रसाद द्विवेदी

इकाई 16 : 'कुटज' (हजारीप्रसाद द्विवेदी): तात्विक विवेचना

रूपरेखा

16.1 प्रस्तावना
16.2 उद्देश्य
16.3 मूलपाठ : 'कुटज' (हजारीप्रसाद द्विवेदी) : तात्विक विवेचना
16.3.1 'कुटज' की विषय वस्तु
16.3.2 ललित निबंध का स्वरूप
16.3.3 ललित निबंध के रूप में 'कुटज' का विश्लेषण
16.3.4 'कुटज' की भाषा एवं शैली
16.4 पाठ सार
16.5 पाठ की उपलब्धियाँ
16.6 शब्द संपदा
16.7 परीक्षार्थ प्रश्न
16.8 पठनीय पुस्तकें

16.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो! बी.ए. चतुर्थ सत्र के हिन्दी गद्य साहित्य से संबंधित पाठ्य पुस्तक के इकाई 16 के अंतर्गत आप आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी द्वारा रचित निबंध 'कुटज' की विवेचना का अध्ययन करेंगे। इससे पहले इकाई 15 में आपने हजारीप्रसाद द्विवेदी और उनके निबंध से संबंधित पाठ का अध्ययन कर चुके हैं और द्विवेदी जी के निबंध से संबंधित जानकारी प्राप्त कर चुके हैं। इस पाठ के अंतर्गत 'कुटज' का अध्ययन करेंगे जिससे प्रायोगिक स्तर पर आप हजारीप्रसाद द्विवेदी के निबंध साहित्य की विवेचना कर पाएँगे। आप जानते हैं कि आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी शुक्लोत्तर युग के प्रसिद्ध साहित्यकार हैं। निबंध, उपन्यास, आलोचना, चिंतनपरक, इतिहास, अनुसंधान आदि सभी विधाओं में द्विवेदी जी ने लेखनी चलायी है। अपनी लगभग सभी रचनाओं में द्विवेदी जी ने भारतीय संस्कृति को उजागर करते हुए मानवीय मूल्यों की स्थापना की है। जटिल गंभीर बातों को भी सरल-सुबोध भाषा और मनोरंजक शैली में प्रस्तुत करना द्विवेदी जी की विशेषता है।

'कुटज' के शीर्षक से द्विवेदी जी का एक निबंध संग्रह लोकभारती प्रकाशन से प्रकशित है। इसमें कुल 17 निबंध संकलित हैं जिनके शीर्षक क्रमश: इस प्रकार हैं - कुटज, राष्ट्रीय संकट और हमारा दायित्व, साहित्य में हिमालय की परंपरा, जीवेम शरद: शतम, अर्थार्षवाक, वैशाली, देवदारू, फिर से सोचने की आवश्यकता है, मानव धर्म, भारत की ऐक्य-साधना : साहित्य के क्षेत्र में, धार्मिक विप्लव और शास्त्र, गुरुनाक देव, हिन्दी को पंजाब की देन, आत्मदान का संदेशवाहक-वसंत, दीपावली-सामाजिक मंगलेच्छा का प्रतिमा पर्व, हिन्दी का वर्तमान और

भविष्य, भारतीय संस्कृति के मूल स्रोत-वेद। प्रस्तुत इकाई में आप इसके प्रथम निबंध 'कुटज' का अध्ययन करेंगे।

15.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! हजारी प्रसाद द्विवेदी के ललित निबंध 'कुटज' पर आधारित इस इकाई के अध्ययन से आप-

- 'कुटज' की विषय वस्तु को समझ सकेंगे।
- ललित निबंध की दृष्टि से कुटज की अंतर्वस्तु की विवेचना कर सकेंगे।
- कुटज शब्द की व्युत्पत्ति और अर्थ बता सकेंगे।
- निबंध के तत्वों के आधार पर 'कुटज' का विश्लेषण कर सकेंगे।
- 'कुटज' की भाषा तथा शैली की विवेचना कर सकेंगे।
- 'कुटज' के माध्यम से आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी की विचारधारा को समझ सकेंगे।

16.3 मूल पाठ : 'कुटज' (हजारीप्रसाद द्विवेदी) : तात्विक विवेचना

16.3.1 'कुटज' की विषय वस्तु

'कुटज' हजारीप्रसाद द्विवेदी का एक ललित निबंध है। हजारीप्रसाद द्विवेदी की यह विशेषता रही है कि सामान्य से सामान्य दिखने वाली वस्तु में भी जान भर देते हैं और उससे मानव को संदेश देते हैं। 'कुटज' वास्तव में इसी प्रकार का एक माध्यम है। वास्तविकता यह है कि इसके माध्यम से द्विवेदी जी मानव को जीने की कला सिखाते हैं। कुटज को जीवधात्री के रूप में वे चित्रित करते हैं। कुटज को जीवन का प्रतीक बनाकर द्विवेदी ने प्रस्तुत किया है। वे लिखते हैं- "चारों ओर कुपित यमराज के दारुण नि:श्वास के समान धधकती लू में यह हरा भी है और भरा भी है, दुर्जन के चित्त से भी अधिक कठोर पाषाण की कारा में रुद्ध अज्ञात जल-स्रोत से बरबस रस खींचकर अरस बना हुआ है और मूर्ख के मस्तिष्क से भी अधिक सूने गिरि कांतार में भी ऐसा मस्त बना है कि ईर्ष्या होती है, कितनी कठिन जीवन शक्ति है।" कठोर पाषाण सहकर भी कुटज शोभायमान है। जीने की प्रेरणा है।

कुटज के संघर्ष को दिखाते हुए वे मनुष्य को संघर्ष एवं कठिनाइयों का सामना करने के लिए प्रेरित करते हैं। वे लिखते हैं- शिवालिक की सूखी नीरस पहाडियों पर मुस्कुराते हुए ये वृक्ष द्वंद्वातीत हैं, अलमस्त हैं। इसमें उल्लिखित द्वंद्वातीत शब्द मनुष्य के लिए प्रेरणादायी है। लेखक यह संदेश देते हैं कि जब प्रकृति और वृक्ष के जीवन में द्वंद्व है तो मनुष्य का जीवन संघर्ष रहित कैसे हो सकता है। कुटज के नाम, रूप, उत्पत्ति आदि की शास्त्रीय अवधारणाओं पर विचार करते हुए लेखक कुटज के जीवंत रूप को प्रस्तुत करते हैं और उसके व्यक्तित्व का विश्लेषण करते नज़र आते हैं। अब कुटज केवल एक वृक्ष नहीं बल्कि व्यक्ति रूप में रूपांतरित एक व्यक्तित्व लगता है। कुटज का मानवीकरण किया गया है। जब पाठक की दृष्टि इस रूपांतरण से आत्मसात होती है तो फिर पाठक अवश्य ही भाव-विभोर हो उठता है।

कालिदास की इन पंक्तियों से निबंधकार कुटज की शुरुआत करते हैं- "कहते हैं, पर्वत शोभा-निकेतन होते हैं। फिर हिमालय का तो कहना ही क्या! पूर्व और अपर समुद्र-महोदधि और

रत्नाकर-दोनों भुजाओं से थाहता हुआ हिमालय 'पृथ्वी का मानदण्ड' कहा जाय तो गलत क्या है? इसी हिमालय के पाद पर जो शृंखला फ़ैली हुई है, उसे शिवालिक कहा जाता है।

निबंध के प्रारंभ में निबंधकार उस स्थान विशेष की चर्चा करते हैं जहाँ कुटज का जन्म हुआ है, आविर्भाव हुआ है, उस जगह का नाम शिवालिक शृंखला है। हिमालय की निचली पहाड़ियों को शिवालिक शृंखला कहा जाता है। शिवालिक शब्द के अर्थ पर भी विचार करते हुए वे बताते हैं- 'शिवालिक या शिव के जटाजूट का निचला हिस्सा।' शिव की लटियायी जटा ही इतनी सूखी, नीरस और कठोर हो सकती है। यह पर्वत शृंखला शिव के जटाजूट के निचले हिस्से का प्रतिनिधित्व करती है। इसी शिवालिक शृंखला में कुटज का जन्म होता है, जिसकी भूमि पर हरियाली नहीं है, दूब भी सूख गई है, काली-काली चट्टानों के बीच थोडी-थोडी रेती है। यहीं पर कुटज उगता है। इस प्रकार के नीरस वातावरण में उगने के बावजूद यह वृक्ष कुटज पुष्पों से भरा होता है, जो सबके मन को मोह लेता है।

कुटज के स्थान और वातावरण की चर्चा करते हुए द्विवेदी जी कहते हैं- "ये जो ठिगने से लेकिन शानदार दरख्त गर्मी की भयंकर मार खा खकर और भूख प्यास की निरंतर चोट सहकर भी जी रहे हैं, इन्हें क्या कहूँ? सिर्फ़ जी ही नहीं रहे हैं, हँस भी रहे हैं! पाठक के लिए दो प्रश्न छोडते हैं- बेहया हैं क्या? या मस्तमौला? कहते हुए द्विवेदी जी व्यंग्य भी करते हैं और पाठक को सोचने के लिए मजबूर भी करते हैं। "कभी-कभी जो लोग ऊपर से बेहया दिखते हैं, उनकी जडें काफी गहरी पैठी रहती हैं। ये भी पाषाण की छाती फ़ाडकर न जाने किस अतल गह्वर से अपना भोग्य खींच लाते हैं।" अर्थात कुटज ऊपर से बेहया नज़र आता है, उसकी जडें गहरी हैं।

कुटज का स्वरूप अद्‌भुत है। ये वृक्ष इतनी कठिनाई के बीच भी मुस्कुराते रहते हैं। वैसे देखा जाय तो कुटज कोई प्रसिद्ध, प्रख्यात जाना-पहचाना नाम भी नहीं है। "न नाम, न कुल, न शील, पर लगता है ये हमें अनादि काल से जानते हैं।" द्विवेदी जी उसके नाम-रूप की भी चर्चा करते हुए लिखते हैं- बड कौन है? रूप या नाम? इसके उत्तर में वे बताते हैं कि "नाम इसलिए बडा होता है कि उसे सामाजिक स्वीकृति मिली होती है।" "रूप व्यक्ति सत्य है, नाम समाज सत्य।"

इस प्रकार कुटज के माध्यम से द्विवेदी जी बहुत महत्वपूर्ण बिंदुओं की व्यंजना करते चलते हैं। यदि आपने कुटज शब्द के अर्थ को जाना है तो कुटज के अध्ययन से पहले आप यही सोचेंगे कि लेखक ने कुटज नामक एक वृक्ष का वर्णन किया होगा। किंतु जब आप कुटज को पढ़ना शुरु करेंगे तो आपकी यह धारणा बदल जाएगी। आप स्वयं कुटज के स्थान पर अपने-आप को महसूस करेंगे। फिर आप विश्वास करने लगेंगे कि कुटज तो बस बहाना है। उसके मध्यम से निबंधकार मनुष्य के बारे में, उसके जीवन, उसकी परंपरा, उसका इतिहास, उसका संघर्ष, उसका भविष्य आदि सभी के बारे में बात कर रहे हैं।

उन्हें इस बात का दुख भी है कि संस्कृत साहित्य में तथा कवियों ने इस वृक्ष की अवहेलना भी की है। इस संदर्भ में रहीम को याद करते हैं। वे लिखते हैं- "रहीम को मैं बडे आदर के साथ स्मरण करता हूँ। दरियादिल आदमी थे, पाया सो लुटाया। लेकिन दुनिया है कि मतलब से मतलब है, रस चूस लेती है, छिलका और गुठली फेंक देती है। सुना है, रस चूस लेने के बाद

रहीम को भी फेंक दिया गया। एक बादशाह ने आदर के साथ बुलाया, दूसरे ने फेंक दिया! इससे रहीम का मोल घट नहीं जाता। उनकी फक्कडाना मस्ती कहीं गई नहीं। अच्छे भले कद्रदान थे। लेकिन बडे लोगों पर भी कभी-कभी ऐसी वितृष्णा सवार होती है कि गलती कर बैठते हैं। मन खराब रहा होगा, लोगों की बेरूखी और बेकद्रदानी से मुरझा गए होंगे-ऐसी ही मन:स्थिति में उन्होंने बिचारे कुटज को भी एक चपत लगा दी। झुंझलाए थे, कह दिया-

वे रहीम अब बिरछ कहँ, जिनकर छाँ गंभीर।
बागन बिच-बिच देखियत, सेंहुड़, कुटज करीर॥

कुटज अदना सा बिरछ हो। छाँह ही क्या बडी बात है, फ़ूल क्या कुछ भी नहीं? छाया के लिए न सही, फ़ूल के लिए तो कुछ सम्मान होना चाहिए। उन्होंने यह भी लिखा है कि- कुटज के पुष्प यक्ष के तब काम आते हैं जब उन पथरीली पहाड़ियों पर और कोई फ़ूल का पौधा न था। द्विवेदी जी ने कुटज को एक व्यक्तित्व रूप में देखा है, अत: व्यक्तित्व चाहे किसी का भी उसका सम्मान तो होना ही चाहिए।

द्विवेदी यहाँ तक ही नहीं रखें वे आगे कुटज शब्द की व्युत्पत्ति के तह तक भी पहुँचते हैं। गिरिकूट पर उत्पन्न होने के कारण यह कुटज है। अर्थात गिरिकूट पर जन्म लेने वाला। एक दूसरी व्युत्पत्ति है, कुटज अर्थात जो कुट से पैदा हुआ है। कुट के दो अर्थ हैं : 1) घड़ा 2) घर। तब क्या कुट घडे से उत्पन्न हैं? घडा क्या गमका है? हो तो भी कुट का अर्थ इन दोनों से मेल नहीं खाता। संस्कृत में कुटहारिका और कुटकारिका दासी को कहते हैं। क्यों कहते हैं! कुटिया या अकुटीर शब्द भी कदाचित इसी शब्द से संबद्ध है। क्या इस शब्द का अर्थ घर ही है? घर में काम-काज करने वाली दासी कुटकारिका और कुटहरिका कही जा सकती है। एक जरा गलत ढंग की दासी कुटनी भी कही जाती है। संस्कृत में उसकी गलतियों को थोड़ा अधिक मुखर बनाने के लिए उसे कुट्टनी कह दिया गया। अगत्स्य मुनि भी नारदजी की तरह दासी के पुत्र थे क्या? घड़े में पैदा होने का तो कोई तुक नहीं है, न मुनि कुटज के सिलसिले में, न फूल; कुटज के। फूल गमले में होते अवश्य हैं, पर कुटज तो जंगल का सैलानी है। उसे घड़े या गमले से क्या लेना-देना?

द्विवेदी जी इसे आग्नेय भाषा परिवार का मानते हैं जो आस्ट्रो-एशियाटिक परिवार का नाम होगा। अब इसे कोल परिवार की भाषा कहते हैं। हो सकता है यह शब्द इस परिवार का हो। इस शब्द का अर्थ पूरी तरह से द्विवेदी भी नहीं बता पाए हैं। वे इतना अवश्य मानते हैं कि यह शब्द आर्य जाति का तो नहीं जान पड़ता। संस्कृत में दूसरी भाषा के शब्द के प्रवेश का कथन कहते हुए वे संस्कृतियों के समन्वय की स्वाभाविक प्रक्रिया का प्रमाण प्रस्तुत करते हैं।

कुटज शब्द की व्युत्पत्ति के बाद वे कुटज की विशेषताओं का बखान करते हैं। इस प्रकार के वर्णन में द्विवेदी जी का ललित भाव और ललित भाषा प्रवहमान हुई है। कुटज की पहली विशेषता है, उसकी अपराजेय जीवनी शक्ति। यह नाम-रूप दोनों में है। कितने ही नाम आए और चले गए पर संस्कृत साहित्य में यह नाम जम कर बैठा है। कालिदास को मेघ की अर्चना के लिए कुटज पुष्प ही तो मिले थे। इसीलिए द्विवेदी जी ने उसे गाढ़े का साथी कहा है। अर्थात मुसीबत में साथ देने वाला। कुटज एक ऐसा साथी है जो कठिन दिनों में साथ रहा है। कालिदास ने अपनी रचना में जब रामगिरी पर्वत पर यक्ष को बादल से अनुरोध करने भेजा था तो वहाँ कुटज का ही

पेड़ विद्यमान था। उस समय में कुटज के फूल ही उसके काम आए थे। ऐसे स्थान पर जहाँ दूब तक पनप नहीं पाती है। यक्ष ने कुटज के फूल चढ़ाकर ही मेघ को प्रसन्न किया था।

नाम के साथ रूप भी अपराजेय शक्ति के साथ विद्यमान है। द्विवेदी जी के शब्दों में- "चारों ओर कुपित यमराज के दारुण नि:श्वास के समान धधकती लू में यह हरा भी है और भरा भी है, दुर्जन के चित्त से भी अधिक कठोर पाषाण की कारा में अवरुद्ध अज्ञात जल-स्रोत से बरबस रस खींचकर अरस बना हुआ है और मूर्ख के मस्तिष्क से भी अधिक सूने गिरि कांतार में भी ऐसा मस्त बना है कि ईर्ष्या होती है, कितनी कठिन जीवन शक्ति है। प्राण को प्राण पुलकित करता है, जीवनी शक्ति ही, जीवनी शक्ति को प्रेरणा देती है।" अपराजेय जीवनी शक्ति की व्याख्या उपर्युक्त प्रसंग करता है। यह जीवनी शक्ति है जो गर्म हवाओं में भी रूप को मलिन नहीं होने देती। यह जीवनी शक्ति ही है जो पत्थर को फोड़कर बहुत गहराई से रस निकाल लाती है और तमाम विपदाओं और कठिनाइयों के बीच में जीवंत बनाए रखती है। यह सत्य कुटज के माध्यम से मनुष्य की अपराजेय जीवनी शक्ति की व्याख्या भी है। इसके कारण ही आनंद भी है और जीवन की प्रेरणा भी। यही कुटज की अभिव्यक्ति है।

कुटज के इस रूपांतरण को समझने पर ही निबंध के आशय को समझ पाएँगे। ऐसा प्रतीत होता है, मानो द्विवेदी जी सीधे मनुष्य से संबोधित कर रहे हों। वे पूछते हैं- जीना चाहते हो? कठोर पाषाण को भेदकर, पाताल की छाती चीरकर अपना भोग्य संग्रह करो, वायुमंडल को चूसकर झंझा तूफान को रगड़कर अपना प्राप्य वसूल लो, आकाश को चूमकर अवकाश की लहरी में झूमकर उल्लास खींच लो। यही कुटज का उपदेश है।

द्विवेदी जी का यह वर्णन तथा भाषा प्रयोग उनकी निजी विशेषता रही है। कुटज सिर्फ माध्यम है। यह द्विवेदी जी की आत्माभिव्यंजना ही है जो झरने की भाँति फूट रही है। वे जीवन को कला और तपस्या दोनों मानते हैं। जीवन की कला क्या है और तपस्या क्या है? वे इसे भी स्पष्ट करते हैं।

जीवन जीना अर्थात केवल जीवित रहना नहीं है। जियो तो प्राण ढाल दो जिंदगी में, ढाल दो जीवन रस के उपकरणों में। वे यह सवाल भी करते हैं - लेकिन क्यों? सारा संसार केवल स्वार्थ के लिए जीवित है। याज्ञवल्क्य का उदाहरण देकर इसे स्पष्ट करते हैं। "याज्ञवल्क्य बहुत बडे ब्रह्मवादी ऋषि थे। उन्होंने अपनी पत्नी को विचित्र भाव से समझाने की कोशिश की कि सब कुछ स्वार्थ के लिए है। पुत्र के लिए पुत्र प्रिय नहीं होता, पत्नी के लिए पत्नी प्रिय नहीं होती, सब अपने मतलब के लिए होते हैं- आत्मस्तुकामाय सर्व पियं भवति! यह तर्क कुछ विचित्र लगने पर भी पश्चिम के हाब्स और हेल्वेशियस जैसे विचारकों ने भी इस बात को स्वीकारा है। द्विवेदी जी स्वार्थ की शास्त्रगत चर्चा करते हुए दुखी होकर कहने लगते हैं- दुनिया में त्याग नहीं है, प्रेम नहीं है, परार्थ नहीं है, परमार्थ नहीं है- है केवल प्रचंड स्वार्थ। इसी स्वार्थ के साथ वे जिजीविषा की भी चर्चा करते हैं। भीतर की जिजीविषा - जीते रहने की प्रचण्ड इच्छा- ही अगर बडी बात है तो फिर यह सारी बडी अब्डी बोलियाँ, जिनके बल पर दल बनाए जाते हैं, शत्रुमर्दन का अभिनय किया जाता है, झूठ हैं। इसके द्वारा कोई-न-कोई अपना बड़ा स्वार्थ सिद्ध करता है। अपनी बात को स्वार्थ और जिजीविषा से भी आगे की ओर ले चलते हैं और कहते हैं कि इन

दोनों से भी बढ़कर कोई शक्ति है, जिसे वे समष्टि बुद्धि कहते हैं। अर्थात समष्टि का स्वार्थ ही सबसे बड़ी शक्ति है। समष्टि और सर्व के लिए अपने आपको पूरा दे देना ही पूर्ण सत्य है।

इसी पूर्ण सत्य की स्थापना के लिए वे कुटज को सामने लाते हैं। भावात्मकता और प्रवाहमयता के साथ वे कुटज की बात करते हैं- कुटज क्या केवल जी रहा है। वह दूसरे के द्वार पर भीख माँगने नहीं जाता, कोई निकट आ गया तो भय के मारे अधमरा नहीं हो जाता, नीति और धर्म का उपदेश नहीं देता फिरता, अपनी उन्नति के लिए अफसरों का जूता नहीं चाटता फिरता, दूसरों को अवमानित करने के लिए ग्रहों की खुशामद नहीं करता। आत्मोन्नति हेतु नीलम नहीं धारण करता, अंगूठियों की लड़ी नहीं पहनता, दाँत नहीं निपोरता, बगले नहीं झाँकता। जीता है और शान से जीता है, काहे वास्ते, किस उद्देश्य से? कोई नहीं जानता मगर कुछ बडी बात है। स्वार्थ के दायरे से बाहर की बात है। भीष्म पितामह की भाँति अवधूत की भाषा में कह रहा है, 'चाहे सुख हो या दुख, प्रिय हो या अप्रिय, जो मिल जाए उसे शान के साथ, हृदय से बिल्कुल अपराजित होकर सोल्लास ग्रहण करो। हार मत मानो।'

इस निबंध में 'दलित द्राक्षा की भाँति निचोड़कर दे देना' को ही 'कुटज का मूर्त रूप' के रूप में व्याख्यायित किया गया है। केवल जीना और स्वार्थ के साथ जीना नहीं चाहिए। स्वार्थ के कारण ही झुकना पड़ता है। खुशामद करनी पड़ती है, ढोंग करना पड़ता है। इस प्रकार के कई निंदनीय कार्य करना पड़ता है। कुटज इन सबसे विलग होकर जीता है। वह हृदय से अपराजेय होकर जीता है। वह अपने लिए नहीं जीता, सबके लिए जीता है, वह सुख में दुख में, प्रिय-अप्रिय में सब स्थितियों में जो भी मिल जाए-सुख मिले या दुख, प्रिय मिले या अप्रिय सबको आनंद के साथ ग्रहण करता है। यही अवधूत भाषा है। कुटज निर्भय है। कुटज की तीन विशेषताओं का उल्लेख करते हैं- अकुतोभया वृत्ति, अपराजित स्वभाव और अविचल जीवन दृष्टि।

इतना ही नहीं, वे कुटज को मिथ्याचारों से भी मुक्त मानते हैं। निबंध के अंतिम चरणों में द्विवेदी जी की मान्यताएँ प्रबल और स्पष्ट दिखाई देती हैं। ये मान्यताएँ भारतीय चिंतन के मुक्तकण हैं। प्रथम, व्यक्ति न किसी का उपकार कर सकता है, न अपकार। दूसरी, मनुष्य केवल जी रहा है। यह जीना इतिहास विधाता की इच्छा और योजना के अनुसार है। तीसरी, मनुष्य के द्वारा किसी को न सुख पहुँचाया जा सकता है न दुख। सुख पहुँच जाए यह अच्छी बात है, इस पर अभिमान नहीं करना चाहिए। सुखी वह है जिसका मन वश में है और दुखी वह है जिसका मन वश में नहीं है। सुख और दुख मन के विकल्प हैं। जिसका मन वश में नहीं है वह छल-छंद रचत है। धोखा देता है। कुटज इन सबसे मुक्त है। इसी बात को, यही संदेश द्विवेदी जी कुटज के माध्यम से पहुँचाते हैं। कुटज को प्रतीक के रूप में प्रस्तुत करते हुए लिखते हैं कि कुटज वैरागी है। राजा जनक की तरह संसार में रहकर भोगों को भोगकर भी उनसे मुक्त। कुटज अपने मन पर सवारी करता है, मन को अपने पर सवारी करने नहीं देता।

अंतत: यह कह सकते हैं कि द्विवेदी जी ने कुटज वृक्ष को केंद्र में रखकर मानव को जीवन की कला का पाठ पढ़ाते हैं। यह अपने आप में चिंतन का सिद्ध रूप है। इसकी प्राप्ति के लिए स्वचिंतन के साथ मन को वश में करना जरूरी है। मन पर लगाम डालना अनिवार्य है। स्वार्थ को

त्यागकर, व्यष्टि हित की परिधि से बाहर निकलकर समष्टि चेतना को सिंचित करना इस निबंध का परम उद्देश्य है। यही इस निबंध की विषय वस्तु है, यही सार है, यही प्रतिपाद्य है।

बोध प्रश्न

- कुटज क्या है?
- कुटज का जन्म कहाँ होता है?
- शिवालिक के बारे में द्विवेदी जी का क्या कथन है?
- कुटज मानव को क्या सिखाती है?
- कुटज किस पर सवारी करता है।
- कुटज के वृक्ष को रस कहाँ से मिलती है?
- कुटज के संबंध में रहीम की दो पंक्ति लिखिए।

16.3.2 ललित निबंध का स्वरूप

प्रिय छात्रो! 'कुटज' के विश्लेषण से पहले 'ललित निबंध' के बारे में कुछ जानकारी जरूरी है। हिन्दी में ललित निबंध विधा का सूत्रपात हजारीप्रसाद द्विवेदी जी ने ही किया। उन्हें इस विधा का जनक कहा जाता है। यह विधा वस्तुपरक निबंध से अलग है। ललित निबंध एक व्यक्तिप्रधान, व्यक्तित्व प्रधान अथवा व्यक्तिगत और आत्मपरक निबंध होता है, जिसमें काव्यात्मक भाषा का प्रयोग होता है। कल्पना प्रवणता और मन की उन्मुक्त भटकन आदि ललित निबंध की पहचान है। मन की मौज या फक्कड़पन, अखंड विश्व दृष्टि आदि इस प्रकार के निबंधों की विशेषता है। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के अतिरिक्त अज्ञेय, शिवप्रसाद सिंह, विद्यानिवास मिश्र, कुबेरनाथ राय, विवेकी राय और विश्वनाथ अय्यर आदि लेखकों का इस विधा को समृद्ध करने में प्रमुख योगदान है। एक समर्थ निबंधकार की यही विशेषता होती है कि वह अपने विचारों में से बहुत कुछ स्वयं छांट देता है। प्रस्तुत के विषय में सब कुछ न कहकर अप्रस्तुत से उसको जोडने के लिए केवल उन्हीं अंशों को उभारता है, जो व्यापक और गहराई लिए हुए हैं।

ललित निबंध लेखक की प्रेरणा का बहुत बडा आधार है उसका बहुश्रुत होना। बहुश्रुत का अर्थ किताबी कीड़ा या शास्त्रों का जानकार मात्र होना नहीं है, वरन ज्ञान के विविध स्रोतों से रस ग्रहण करने वाला हो और उन विभिन्न प्रकार के रसों एवं प्रवाहशीलता के दर्शन का अभ्यासी हो। ऐसे निबंध में अनुभव की यात्रा के दर्द हों और उनसे जुडे अपरिहार्य संदर्भ सूत्र भी। फलत: कहीं वह समसामयिकता से जुडेगा और कहीं लोकधुन, लोक संस्कृति, ऐतिहासिक, पौराणिक आदि। कुलमिलाकर कह सकते हैं कि भावना और विचार का एक सहज समन्वय ललित निबंध का वैशिष्ट्य है। यह समन्वय पाठक के हृदय को द्रवीभूत भी करता है और उसकी बुद्धि को प्रेरित भी करता है। कुटज में द्विवेदी जी शास्त्र और भाव दोनों का अश्रय लेकर ललित शैली में तथ्य और सत्य को आत्मीयता के साथ प्रस्तुत करते हैं। कुटज एक फ़ूलों वाला वृक्ष है पर उसका मानवीकरण करते हुए, द्विवेदी जी ने उसे मित्र, सखा और उससे भी अधिक एक आदर्श के रूप में प्रस्तुत करते हैं।

बोध प्रश्न

- ललित निबंध से आप क्या समझते हैं?

- ललित निबंध में बुद्धि पक्ष को अधिक महत्व दिया जाता है। यह कथन सही है या गलत?
- कुटज निबंध में द्विवेदी जी ने तथ्य और सत्य का उद्घाटन किया है। यह सही है या गलत?

16.3.3 ललित निबंध के रूप में कुटज का विश्लेषण

छात्रो! ऊपर ललित निबंध पर जो चर्चा की गई है, उसके अध्ययन से आप जान चुके होंगे कि ललित निबंध एक विशेष प्रकार का निबंध है जिसमें भाव एवं विचार दोनों का समावेश होता है। द्विवेदी जी के निबंधों में भाव और विचार दोनों का समावेश बराबर रहता है। द्विवेदी जी का पांडित्य भी बराबर उनके साथ रहता है। निबंध लेखन में आत्मीयता, स्वच्छंदता, सरलता, आडम्बरहीनता, घनिष्ठता आदि के साथ लेखक का वैयक्तिक दृष्टिकोण झलकता है। निबंध एक ऐसी कलाकृति है जिसके नियंमों का निर्माता स्वयं लेखक ही होता है। इसके लिए लेखक को परिपक्व, विचारशील तथा गंभीर व्यक्तित्व का होना अवश्यक है तभी निबंध लेखक की निकटता और आत्मीयता वास्तविक होती है। वस्तुत: ललित निबंध चिंतन प्रधान होते हैं, किंतु लेखक अपनी प्रकृति, स्वभाव, परिस्थिति के अनुकूल भावना को प्रधानता देते हैं। हजारीप्रसाद द्विवेदी जी शास्त्र और भाव दोनों का आश्रय लेकर निबंधों का लेखन करते हैं। कुटज भी इसी प्रकार का एक ललित निबंध है जिसमें शास्त्र,भाव तथ्य सत्य को आत्मीयता के साथ प्रस्तुत करते हैं। कुटज जैसे फूलों से लदे वृक्ष का मानवीकरण करते हुए उसे मित्र सखा और उससे अधिक आदर्श रूप में प्रस्तुत करते हुए मानव को जीवन का संदेश देते हैं।

लेखक कुटज की विशेषताओं को बताने से पहले उस भूमि पर प्रकाश डालते हैं जहाँ वह उगता है। यह स्थान हिमालय की पर्वत शृंखलाएँ जिन्हें शिवालिक कहा जाता है। शिवालिक के विश्लेषण में लेखक ने स्थूल वर्णन न करते हुए भावमूलक वर्णन किया है। शिवालिक पर एक आत्मीय विश्लेषण लेखक ने किया है। भाषा भी रोमांचक और प्रवाहमयी है। शिवालिक की चर्चा करते हुए वे कुटज के अस्तित्व को भी मजबूत करते जाते हैं इसलिए वे कहते हैं- "शिवालिक की सूखी नीरस पहाड़ियों पर मुस्कुराते हुए ये वृक्ष द्वंद्वातीत है।" इस वर्णन के माध्यम से लेखक इस बात पर बल देते हैं कि इस वृक्ष का जीवन सामान्य नहीं है वरन कठोर परिस्थितियों में भी वह जीवंत है, सिर्फ़ जी नहीं रहा है, बल्कि हँस भी रहा है।

स्थान वर्णन के बाद लेखक नाम और रूप की सैद्धांतिक व्याख्या प्रस्तुत करते हैं, कुटज शब्द की भाषाशास्त्र के अनुसार व्याख्या भी करते हैं। यह विश्लेषण शुष्क और नीरस न होकर भाव को भी समन्वित करती हुई चलती है। हृदय और बुद्धि का समन्वय इस निबंध की विशेषता है। ऊपर बताया गया है कि द्विवेदी जी ने इस निबंध में कुटज का मानवीकरण किया है। यह पुरुष विशेष है। कुटज के वर्णन करने हेतु वे संस्कृत साहित्य का भी सहारा लेते हैं। संस्कृत के कालिदास का मेघदूत और कुटज के पुष्पों का अर्घ्य के बीच के संबंध को बड़े ही मनोहारी ढंग से द्विवेदी जी ने अभिव्यक्त किया है। उनका कहना है कि जिस पुष्प को कालिदास ने उपयोग किया उसको तो ज्यादा सम्मान एवं इज्जत मिलनी चाहिए। इस संदर्भ में निबंधकार रहीम को याद करते हुए कहते हैं कुछ कवियों ने इसे न सम्मान दिया, छाँव न सही इसके पुष्पों को तो सम्मान मिलनी ही चाहिए। यहाँ पर द्विवेदी जी इस सत्य का उद्घाटन करते दिखते हैं कि मनुष्य को हर

हाल में जो सम्मान मिलना है, उसे मिलना ही चाहिए। लेकिन दुनिया है कि मतलब से मतलब है, रस चूस लेती है, छिलका और गुठली फ़ेंक देती है।

इस प्रकार निबंधकार कुटज के साथ निकटता से जुडते जाते हैं और पाठक को भी सम्मोहित किए जाते हैं। कुटज से उनके संतप्त चित्त को सांत्वना मिलती है। बड़भागी फ़ूल है यह! धन्य हो कुटज, तुम गाढ़े के साथी हो आदि वर्णनों से कुटज के महत्व का प्रतिपादन करते हैं।

भाषाशास्त्री होने के कारण वे कुटज के आविर्भाव और व्युत्पत्ति के तह तक चर्चा करते हैं। उसकी प्राचीनता, उसका भाषा परिवार, उसकी व्युत्पत्ति उसके विविध आयामों पर शास्त्रोक्त मीमांसा करते हुए द्विवेदी जी प्रकृति लालित्य के मध्य उसकी पुन: प्रतिष्ठा करते प्रतीत होते हैं। वे लिखते हैं- मगत कुटज है कि संस्कृत की निरंतर स्फ़ीयमान शब्द राशि में जो जमके बैठा सो बैठा ही है। चारों ओर कुपित यमराज के दारुण विश्वास के समान धधकती लू में यह हरा भी है और भरा भी है, दुर्जन के चित्त से भी अधिक कठोर पाषाण की कारा में अवरुद्ध अज्ञात जलस्रोत से बरबस रस खींचकर सरस बना हुआ है और मूर्ख के मस्तिष्क से भी अधिक सूने गिरि कांतर में भी ऐसा मस्त बना है कि ईर्ष्या होती है। कितनी कठिन जीवन शक्ति है। कुटज को जीवन शक्ति के महत्तम प्रतीक के रूप में भी द्विवेदी जी चित्रित करते हैं। इस प्रकार गंभीर चिंतन को भी हृदय के धरातल पर प्रस्तुत करना उनकी विशेषता रही है।

स्वच्छंदता ललित निबंध का एक वैशिष्ट्य है। स्वच्छंदता का अर्थ निबंध के संदर्भ में अनियंत्रित होना नहीं है वरन वह लेखक की निजता के मुक्त सन्निवेश से संबंधित है। मुक्ताभाव में हजारीप्रसाद द्विवेदी अपने विचारों को इस निबंध में स्थान देते हैं। आत्मीयता और आडंबरहीनता भी ललित निबंध की विशेष पहचान है। कुटज में लेखक कुटज के साथ अत्यंत आत्मीय हो जाते हैं। यहाँ तक कि यही अत्मीयता पाठक के साथ भी रहती है। इस निबंध में भी आडंबरता कहीं नज़र नहीं आती है। कुटज में द्विवेदी जी ने कथावस्तु एवं वर्णन का इस प्रकार ताना बाना बुनते हैं कि पाठक अपने आप को परकाय प्रवेश की स्थिति में पाता है क्योंकि लेखक ने भी लेखनी के दौरान परकाय प्रवेश शायद की होगी। अत: कुटज के साथ आत्मसात होने में न लेखक और न पाठक पीछे रहता है।

यह कुटज न केवल दुर्गम परिस्थितियों में जीता है बल्कि जीने की प्रेरणा भी देता है। कुटज के साथ मिलकर लेखक का व्यक्तिगत जीवन, उपदेश, जीवनादर्श प्रतिबिंबित होती है। कुटज द्वंद्वातीत है, अनादिकाल से जानता है, मैं भी कुटज को पहचानता हूँ, अवश्य पहचानता हूँ आदि से द्विवेदी जी के एकात्मता औउर भाव स्पष्ट होते हैं। इसलिए वे उसे दोस्त मानकर चिर परिचित दोस्त भी कहते हैं। इस प्रकार कुटज के जीवन संघर्ष के विभिन्न रूपों का चित्रण करते हुए द्विवेदी जी यह दिखाना चाहते हैं कि मैं सबके लिए और सबकुछ दे देना अर्थात व्यष्टि की स्वार्थपरक चिंताओं को समष्टि चिंता और समष्टि हित में बदल देना ही जीवन का लक्ष्य होना चाहिए। कुटज में सरसता, सहजता, प्रवाह सभी प्रकार के गुण विद्यमान हैं। यह निबंध अपने लघु आकार में एक महाकाव्य की गरिमा को समेटे जीवन को जीवनशक्ति प्रदान करना तथा निस्वार्थ होकर व्यक्ति का समाज के लिए नि:शेष हो जाना इसका उद्देश्य है।

बोध प्रश्न

- कुटज का निबंधकार ने मानवीकरण किया है। आपका क्या विचार है?
- कुटज जीवन की कला सिखाता है। लेखक के इन विचारों से क्या आप सहमत हैं? यदि हैं तो तर्क के साथ अपना विचार रखें।
- कुटज में समष्टि से व्यष्टि की यात्रा को दिखाया गया है। क्या यह वाक्य उचित है या नहीं? आपके उत्तर की पुष्टि कीजिए।

16.3.4 कुटज की भाषा एवं शैली

कुटज निबंध की भाषा अत्यंत सरल, सहज तथा प्रवाहशील है। उसमें लालित्य एवं काव्यमयता भी है। निबंध की शुरू की पंक्तियों को ही लीजिए- कहते हैं,पर्वत शोभा-निकेतन होते हैं। फिर हिमालय का तो कहना ही क्या! इस वाक्य में लेखक पर्वतों के बारे में तो बात कर रहे हैं और पहली ही पंक्ति में वे हिमालय पर्वत की महत्ता को सिद्ध कर देते हैं। कहना ही क्या! इस वाक्य से वे अपनी बात को एवं विचारों को पूरे बल के साथ रखते हैं। यह उनकी भाषिक विशेषता है। तत्सम, तद्भव, अंग्रेजी आदि शब्दों का प्रयोग अवश्यकतानुसार मिलता है। तत्सम शब्दों की बहुलता होने पर भी निबंध की भाषा बोझिल नहीं लगती। इसमें प्रयुक्त कुछ तत्सम शब्द हैं-पर्वत, शोभा-निकेतन, समुद्र, रत्नाकर, पृथ्वी, महोदधि, शृंखला, भयंकर, अंतर्निरुद्ध, रक्ताभ, द्वंद्वातीत, गिरिगौरव, गिरिकूट, स्मृति, शिक्षित, व्याकुल, विशेष, अरविन्द, नीलोत्पल, पौरुष-व्यंजक, शुभ्रकिरीटिनी, उत्पन्न, विचारोत्तेजक, अग्निकोण, दक्षिण-पूर्व, पण्डितों, कमल, कुण्डल, हिमाच्छादित, परमार्थ, शत्रुमर्दन आदि।

देशज शब्द : थाहना, लोटी हुई, लटियाई, जटाजूट, झाड़-झंखाड़, छाती फ़ाड़कर, छितराया, कचरा-निचोडा, झाँकता रहा, झबराया, बड़भागी, काहे वास्ते?, बिचारे, झुंझुलाये, खेती-बागवानी, छानबीन, लहराया, धधकती लू, बरबस, पथरीली, छाती चीरकर, चूसकर, रगडकर, चूमकर, झूमकर, धक्कामार, निचोड़कर, निछावर,

अरबी-फ़ारसी : मालगुजारी, इज़हार करना, बेहया, इलाका, काफी दूर, मस्तमौला, शानदार, अदा, हाजिर, मल्लिका, इज्जत, दरियादिल, नसीब, ज्यादा, दुनिया, बादशाह, खराब, गलतबयानी, शामिल, हैरानी, अफ सर, खुशामद

विदेशी : ह्वाट्स देर इन ए नेम, सोशल सेक्शन, आस्ट्रो-एशियाटिक,

इस निबंध वाक्य रचना विषय के अनुरूप है जिसमें कहीं छोटे-छोटे और कहीं बडे-बडे वाक्यों की रचना की गई है। अवश्यकतानुसार जिज्ञासा उत्पन्न करने के लिए प्रश्नवाचक वाक्यों की रचना की गई है। जैसे- रूप मुख्य है या नाम? नाम बड़ा है या रूप? पद पहले या पदार्थ? भाषा कहीं-कहीं विवरण के साथ, व्याख्यानपरक है तो कहीं व्याख्यात्मक, कहीं चित्रात्मक तो कहीं शास्त्रीय, जैसे-

'इन्हीं में से एक छोटा-सा बहुत ही ठिगना पेड है, पते चौडे भी हैं, बडे भी हैं। फ़ूलों से तो ऐसा लदा है कि कुछ पूछिए नहीं! अजीब सी अदा है, मुस्कुराता जान पड़ता है।

कुटज अर्थात जो कुट से पैदा हुआ हो। 'कुट' घडे को भी कहते हैं, घर को भी कहते हैं। कुट अर्थात घडे से उत्पन्न होने के कारण अगस्त्य मुनि भी कुटज कहे जाते हैं।

उपर्युक्त उदाहरणों में प्रथम में विवरण तो है साथ ही चित्रात्मकता है और चित्रात्मकता के साथ लेखक की आत्मीयता प्रकट हुई है। मानवीकरण तो है ही। दूसरे में शास्त्र-चर्चा है अत: भाषा सपाट है किंतु बुद्धिमूलक। बुद्धि के द्वारा विषय के अर्थ को सुस्पष्ट करते समय वे संस्कृत, हिन्दी और देशी-विदेशी विद्वानों के गद्य पद्य के मिले जुले उद्धरण भी प्रस्तुत करते हैं जिसके द्वारा विषय की प्रामाणिकता की पुष्टि तो होती है पर साथ ही भाषा भी समर्थ और बहुआयामी बन जाती है।

इसके विपरीत द्विवेदी जी जब विषय को आत्मीय दृष्टि प्रदान करते हैं तब भाषा में प्रवाह, लालित्य तथा काव्यात्मकता का सन्निवेश हो जाता है। एक उदाहरण प्रस्तुत है- "बहरहाल यह कुटज-कुटज है, मनोहर कुसुम-स्तबकों से झबराया, उल्लास लोल चारुस्मित कुटज। कालिदास ने आषाढस्य प्रथम दिवसे रामगिरि पर यक्ष को जब मेघ की अभ्यर्थना के लिए नियोजित किया तो कम्बख्त को ताजे कुटज पुष्पों की अंजलि देकर ही संतोष करना पडा-चंपक नहीं, बकुल नहीं, नीलोत्पल नहीं, अरविंद नहीं-फ कत कुटज के फूल।" इस उदाहरण में कितने ही बिंब बने हैं, चाक्षुष बिंब, दृश्य बिंब, मानस बिंब आदि। इसमें बुद्धि भी है, भावात्मकता भी और आत्मीयता भी।

इतना ही नहीं आवश्यकतानुसार पुनरुक्ति शब्द, मुहावरे, व्यंग्य आदि भी मिलते हैं। उदाहरण के लिए "अपनी उन्नति के लिए अफ सरों का जूता नहीं चाटता फिरता, दूसरों को अवमानित करने के लिए ग्रहों की खुशामद नहीं करता। आत्मोन्नति हेतु नीलम नहीं धारण करता, अंगूठियों की लड़ी नहीं पहनता, दाँत नहीं निपोरता, बगलें नहीं झाँकता। जीता है और शान से जीता है-काहे वास्ते, किस उद्देश्य से?'

पहचानता हूँ, उजाड़ के साथी, तुम्हें अच्छी तरह पहचानता हूँ, मनस्वी मित्र, तुम धन्य हो- इस वार्तालाप में कुटज का मानवीकरण हुआ है। वार्तालाप की सहजता और अपनापन कुटज की एक शैली है।

व्याख्यान शैली का एक नमूना : "जो समझता है कि वह दूसरों का उपकार कर रहा है वह अबोध है, जो समझता है कि दूसरे उसका उपकार कर रहे हैं, वह बुद्धिहीन है। कौन किसका अपकार कर रहा है? मनुष्य जी रहा है, केवल जी रहा है, अपनी इच्छा से नहीं, इतिहास विधाता की योजना के अनुसार। किसी को उससे सुख मिल जाए बहुत अच्छी बात है, नहीं मिल सका कोई बात नहीं, परंतु उसे अभिमान नहीं होना चाहिए। सुख पहुँचाने का अभिमान यदि गलत है तो दुख पहुँचाने का अभिमान तो नितांत गलत है।"

गप्पमूलक शैली (कथा कहने की शैली) का एक नमूना : याज्ञवल्क्य बहुत बड़े ब्रह्मवादी ऋषि थे। उन्होंने अपनी पत्नी को विचित्र भाव से समझाने की कोशिश की कि सब कुछ स्वार्थ के लिए है। पुत्र के लिए पुत्र प्रिय नहीं होता, पत्नी के लिए पत्नी प्रिय नहीं होती-सब अपने मतलब के लिए प्रिय होते हैं-आत्मनस्तु कामाय सर्वं प्रियं भवति! विचित्र नहीं है यह तर्क? संसार में जहाँ कहीं प्रेम है सब मतलब के लिए।"

कुटज के पूरे निबंध में स्वगत चिंतन शैली व्याप्त है। नाम की विशेषता, रूप की बात, मानवता का संदेश, जीवन की कला आदि सभी के पीछे लेखक का स्वगत चिंतन ही है। पूरे

निबंध में विचार, आत्माभिव्यंजना, भावाभिव्यंजना आदि सभी तत्वों का समावेश हुआ है और यह ललित निबंध का उत्कृष्ट उदाहरण है।

बोध प्रश्न

- द्विवेदी जी की भाषा में प्रवाहमयता की कमी है। क्या आप इस बात को स्वीकार करते हैं? आपके उत्तर की पुष्टि कीजिए।
- कुटज में प्रयुक्त किन्हीं पाँच देशज शब्द लिखिए।
- द्विवेदी जी की रचनाओं में तत्सम शब्दों की भरमार होने पर भी भाषा बोझिल नहीं लगती है। आपके अनुसार इसका क्या कारण हो सकता है?

16.4 पाठ सार

प्रिय छात्रो! आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी हिन्दी साहित्य के मूर्धन्य साहित्यकार एवं पुरोधा हैं। 'कुटज' उनका प्रतिनिधि ललित निबंध है। इस निबंध में लेखक ने भारतीय संस्कृति, इतिहास, धर्म, शास्त्र आदि से संबंधित प्रसंगों की सहायता से 'कुटज' नामक वृक्ष के माध्यम से जीने की कला का मर्म समझाया है। यह रचना पाठक के मन में मानवीय मूल्यों के बीज बोने में सक्षम है। एक सामान्य से पहाडियों पर उगने वाले वृक्ष का मानवीकरण करते हुए द्विवेदी जी मानव को जीने की कला सिखाते हैं और इस वर्णन-विश्लेषण के लिए उन्होंने जिस भाषा-शैली का प्रयोग किया है, उसमें उन्हें अत्यंत सफलता मिली है। कुटज संघर्षों का सामना करते हुए न केवल अपने लिए, बल्कि समष्टि के हित के लिए जीने की प्रेरणा देता है।

16.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं -

1. आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी हिन्दी में 'ललित निबंध' विधा के जनक हैं।
2. 'कुटज' हजारीप्रसाद द्विवेदी का एक प्रतिनिधि ललित निबंध है।
3. द्विवेदी जी की निबंध कला का विशेषता है कि वे सामान्य से सामान्य दिखने वाली वस्तु में भी जान भर देते हैं और उसके माध्यम से मानव को संदेश देते हैं। 'कुटज' भी वास्तव में इसी प्रकार का एक माध्यम है।
4. 'कुटज' के माध्यम से लेखक ने मानव को जीने की कला का मर्म सिखाया है।
5. कुटज के संघर्ष को दिखाते हुए लेखक मनुष्य को संघर्ष एवं कठिनाइयों का सामना करने के लिए प्रेरित करते हैं।
6. 'कुटज' निबंध की भाषा अत्यंत सरल, सहज तथा प्रवाहशील है। उसमें लालित्य एवं काव्यमयता भी है।

16.6 शब्द संपदा

1. अनुसंधान = शोध, खोज, रिसर्च
2. अपरिपक्व = अनुभव की कमी, दक्षता न होना

3. अवगुण्ठनरहित = छिपाना नहीं, बिना आवरण के
4. उद्भावना = कल्पना, मन की अद्भुत सूझ-बूझ
5. जिजीविषा = जीने की इच्छा
6. तत्संबंधी = किसी तथ्य या बात से संबंध रखने वाला, विषयक
7. बहुज्ञता = बहुत सारे विषयों की जानकारी होना
8. विवेचना = व्याख्या, विश्लेषण करना
9. व्यष्टि = एक मात्र मानव, वैयक्तिक, व्यक्तिगत
10. समष्टि = सामूहिकता, समवेत सत्ता, समाज में लोगों का एक साथ रहना

16.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

16.7.1 सही विकल्प चुनिए -

1. आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के अनुसार 'कुटज' किस प्रकार का निबंध है?

A. ललित निबंध B. सूचनात्मक निबंध C. वैज्ञानिक निबंध D. ऐतिहासिक निबंध

2. लेखक ने 'शिवालिक' शब्द का क्या अर्थ बताया है?

A. पर्वतों का राजा B. शिव का निवास स्थान
C. हिमालय की सबसे ऊँची चोटी **D. शिव की जटाजूट का निचला हिस्सा**

3. द्विवेदी जी के अनुसार 'नाम' और 'रूप' में क्या मौलिक अंतर है?

A. रूप व्यक्ति सत्य है और नाम समाज सत्य B. नाम व्यक्ति सत्य है और रूप समाज सत्य
C. नाम रूप से अधिक महत्वपूर्ण होता है D. दोनों केवल भ्रम मात्र हैं

4. रहीम ने अपने दोहे में कुटज की उपेक्षा क्यों की थी?

A. कुटज में फूलों की कमी के कारण B. कुटज के विशाल आकार के कारण
C. मानसिक झुंझलाहट और बेरुखी के कार D. कुटज के औषधीय गुणों के अभाव के कारण

5. लेखक के अनुसार 'कुट' शब्द के दो संभावित अर्थ क्या हैं?

A. पर्वत और पत्थर B. फूल और पत्ती
C. आकाश और पाताल **D. घड़ा और घर**

6. द्विवेदी जी ने कुटज को 'गाढ़े का साथी' क्यों कहा है?

A. औषधि के रूप में प्रयोग होने के कारण
B. अत्यधिक घना होने के कारण
C. कालिदास का मित्र होने के कारण
D. मुसीबत में यक्ष का साथ देने के कारण

7. कुटज शब्द को किस भाषा परिवार का माना गया है?

A. कोल (आस्ट्रो-एशियाटिक) परिवार
B. यूरोपीय भाषा परिवार
C. द्रविड़ भाषा परिवार
D. अरबी-फारसी परिवार

8. निबंध के अनुसार 'सुखी' व्यक्ति कौन है?

A. जिसके पास अपार धन-संपत्ति है
B. जिसका मन अपने वश में है
C. जो सदा महलों में रहता है
D. जो दूसरों पर शासन करता है

9. कुटज की 'अकुतोभया वृत्ति' का क्या अर्थ है?

A. दूसरों को डराने वाला
B. भय रहित स्वभाव
C. भाग्य के भरोसे रहना
D. अत्यधिक क्रोधित होना

10. द्विवेदी जी के अनुसार जीवन का लक्ष्य क्या होना चाहिए?

A. व्यष्टि के स्वार्थ को समष्टि हित में बदलना
B. केवल मोक्ष की प्राप्ति करना
C. अधिकतम धन का संग्रह करना
D. विद्वान बनकर दूसरों को उपदेश देना

खंड (ब)

16.7.2 लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. हिमालय और शिवालिक का वर्णन निबंधकार किस प्रकार करते हैं?
2. नाम और रूप के बारे में द्विवेदी जी के क्या विचार हैं?
3. कुटज की व्युत्पत्ति के संबंध में द्विवेदी जी क्या-क्या तर्क प्रस्तुत करते हैं?
4. कुटज के वर्णन में रहीम का प्रसंग क्यों आया है?
5. कुटज निबंध के अंत में निबंधकार क्या सिद्ध करने का प्रयास करते हैं?
6. कुटज को गाढे का साथी क्यों कहा गया है?
7. कुटज की भाषिक विशेषता पर प्रकाश डालिए।

खंड (स)

16.7.3 दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. 'कुटज' निबंध का सारांश लिखिए।
2. ललित निबंध की कसौटी पर कुटज की व्याख्या कीजिए।
3. कुटज के माध्यम से निबंधकार व्यष्टि से समष्टि हित तथा मानव को जीवन की कला की अनुभूति करवाते हैं। निबंध के आधार पर इसका विश्लेषण कीजिए।
4. कुटज का जीवन संघर्षमय है। निबंधकार किस प्रकार से इस बात का बोध कराते हैं?

16.8 पठनीय पुस्तकें

1. प्रतिनिधि हिन्दी निबंधकार : हरिमोहन
2. हिन्दी निबंध का इतिहास : मृत्युंजय उपाध्याय
3. आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी - व्यक्तित्व और कृतित्व : सं. व्यासमणि त्रिपाठी
4. हिन्दी साहित्य का इतिहास : सं. नगेंद्र
5. साहित्य सहचर : हजारीप्रसाद द्विवेदी
6. कुटज : हजारीप्रसाद द्विवेदी

परीक्षा प्रश्न पत्र का नमूना

MAULANA AZAD NATIONAL URDU UNIVERSITY

PROGRAMME: B.A – HINDI(Core)

IV – SEMESTER EXAMINATION

TITLE & PAPER CODE : हिन्दी गद्य साहित्य (BNHN401DCT)

TIME: 3 HOURS TOTAL MARKS: 70

यह प्रश्न पत्र तीन भागों में विभाजित हैं- भाग -1, भाग -2 और भाग - 3 प्रत्येक प्रश्न के उत्तर निर्धारित शब्दों में दीजिए।

भाग – 1

1. निम्न लिखित विकल्पों में से सही विकल्प चुनिए। 10X1=10

i. भारतेंदु हरिश्चंद्र का जन्म स्थान है। ( )

(A) काशी (**B**) जबलपुर (C) जयपुर (D) पटना

ii. 'मैला आँचल' किस प्रकार का उपन्यास है? ( )

(अ) कथावस्तु प्रधान (आ) परिवेश प्रधान

(इ) इतिहास प्रधान (ई) चरित्र प्रधान

iii. इनमें से एक जैनेंद्र का उपन्यास नहीं है? ( )

(अ) सुनीता (आ) त्यागपत्र (इ) परख (ई) चित्रलेखा

iv.मृणाल की सहेली का नाम है – ( )

(अ) प्रियदर्शिनी (आ) शीला (इ) राजनंदिनी (ई) मीना

v. निबंध किस काल की रचना है? ( )

(अ) मध्य काल (आ) आधुनिक काल (इ) रीति काल (ई) आदिकाल

vi.प्रसाद जी का परिवार किस वस्तु का व्यापार करता था? ( )

(अ) सुँघनी (आ) सिगरेट (इ) पान (ई) इनमें से कोई नहीं

vii. 'टोकरी भर मिट्टी' कहानी के रचनाकार कौन हैं? ( )

(अ) चंद्रधर शर्मा गुलेरी (आ) माधव सप्रे (इ) कमलेश्वर (ई) इनमें से कोई नहीं

viii. 'परदा' कहानी के लेखक हैं? ( )

(अ) प्रेमचंद (आ) जयप्रकाश कर्दम (इ) यशपाल (ई) असग़र वजाहत

ix. हिमाद्रि तुंग शृंग से' यह गीत किस नाटक का अंग है? ( )

(अ) स्कन्दगुप्त (आ) जनमेजय का नागयज्ञ (इ) चंद्रगुप्त (ई) ध्रुवस्वामिनी

x. कालिदास ने कुटज के पुष्पों को मेघ पर अर्पित किया। ( )

अ) सही कथन आ) गलत कथन इ) दोनों ही ई) कोई नहीं

भाग – 2

निम्न लिखित आठ प्रश्नों में से किन्हीं पाँच प्रश्नों के उत्तर दीजिए। प्रत्येक प्रश्न का उत्तर 200 शब्दों में देना अनिवार्य है। 5X6 =30

2. भारतेंदु युग के गद्य लेखकों पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
3. स्वातंत्र्योत्तर युग के प्रमुख गद्य-लेखकों पर प्रकाश डालिए।
4. मृणाल के जीवन से क्या संदेश मिलता है?
5. प्रेमचंद युग के कहानीकारों का परिचय दीजिए।
6. 'नमक का दरोगा' कहानी का मुख्य पात्र का परिचय देते हुए चरित्र चित्रण कीजिए।
7. 'कहानी' के विविध पर्यायों की चर्चा करते हुए इस नाम की सटीकता सिद्ध कीजिए।
8. यशपाल के कहानियों की भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।
9. 'आकाशदीप' कहानी के संवाद योजना पर प्रकाश डालियें।

भाग- 3

निम्न लिखित पाँच प्रश्नों में से किन्हीं तीन प्रश्नों के उत्तर दीजिए। प्रत्येक प्रश्न का उत्तर 500 शब्दों में देना अनिवार्य है। 3X10=30

10. 'त्यागपत्र' उपन्यास के नारी पात्र मृणाल का चरित्र चित्रण कीजिए।
11. मिथकीय और ऐतिहासिक उपन्यासों से क्या अभिप्राय है?
12. कहानी के तत्वों पर विस्तार से प्रकाश डालिए।
13. नई कहानी आंदोलन को विश्लेषित कीजिए।
14. रामचंद्र शुक्ल के निबंध की भाषा शैली पर प्रकाश डालिए।

****